अनुक्रमणिका/Index

01. अनुक्रमणिका /Index 01

02. क्षेत्रीय सम्पादक मण्डल/सम्पादकीय सलाहकार मण्डल 05/06

03. निर्णायक मण्डल 07

04. प्रवक्ता साथी 09

(Science / विज्ञान)

05. Reduction Of Pyridinium Dicromate By 2-Chloro Benzaldehyde: Kinetics & Mechanism 11
(Dr. Bhupendra Kumar Amb)

06. Study Of Correlation Cofficient And Significance Levels Of Physicochemical And 14
Biotic Data For Surface Water Of Benisagar Lake Panna (M.P.) (Archana Nigam, R.S. Nigam)

07. Effect Of Antibiotics On The Infectivity Of Groundnut Mosaic Virus in vitro 16
(Dr. Madhu Mishra)

08. आध्यात्मिक प्रश्नों के समाधान में क्वाण्टम यांत्रिकी का उपयोग (डॉ. आर.के. गुप्ता) 18

(Computer Science / कम्प्यूटर विज्ञान)

09. Development In Field of Optical Fibre Communication: An Analytical Consideration 19
(Asad Ali khan, Dr. V.K. Sharma)

10. विद्यार्थियों के शैक्षिक उन्नयन हेतु सूचना प्रौद्योगिकी का योगदान (विनिता मेहता) 21

(Home Science / गृह विज्ञान)

11. Internet Addiction In Relation To Personality Trait 23
Among Adolescents (Priyanka Singh, Dr. Chandra Kumari)

12. पर्यावरण प्रदुषण एवं चिंतनीय मुद्दें (कृष्णा शर्मा) 31

(Commerce & Management / वाणिज्य एवं प्रबंध)

13. Creative Accounting - A New Management Technique Leading To Scandals 33
(Dr. Nuzhat Sadriwala)

14. How International Monetary Fund's Statistical Standards Affecting 36
The International Accounting Standards (IAS) (Dr. Pradeep Chaurasia)

15. International Tourism In The Contemporary Scenario - A global Perspective (Dr. Anil Kumar) 39

16. Impact Of Leverages On Profitability A Case Study Of Hero Moto Corp. Ltd. 41
(Aasif Khaliq Shaksaz)

17. Role Of Technology And Micro-Finance (Dr. Prabhakar Pandey, Jobert V Joseph) 46

18. Global Trends In Human Resource Management (Dr. Trilochan Sharma) 48

19. ग्लोबल इन्वेस्टर मीट : दिशा, दशा व परिणाम (चतुर्थ मीट के विशेष संदर्भ में) (डॉ. प्रवीण शर्मा) 51

20. पूंजी संरचना का विश्लेषणात्मक अध्ययन हिन्दुस्तान कॉपर लिमिटेड के विशेष संदर्भ में (दीप्ति जोठे) 55
21. मध्यप्रदेश में सोयाबीन उत्पादन की अनुकूल दशाऐं – एक तुलनात्मक अध्ययन (डॉ. प्रीति गुप्ता) 60
22. मालनपुर औद्योगिक क्षेत्र में श्रम संघों की भूमिका का अध्ययन (डॉ. लारेन्स कुमार बौद्ध) 63
23. कृषि एवं आदिवासी विकास हेतु विभिन्न योजनाऐं एवं उपाय (किरण अग्रवाल) 65
24. भारत के आर्थिक विकास में पर्यटन की भूमिका (डॉ. सीता चतुर्वेदी) 68
25. मारुति सुजुकी इंडिया लिमिटेड की वित्तीय स्थिति का अध्ययन एवं विश्लेषण (बंदना खरे, डॉ. संजय जैन) 70
26. ई–गवर्नेंस के माध्यम से ग्रामीण स्वशासन का बदलता स्वरूप – मनरेगा के विशेष संदर्भ में (प्रकाश चन्द्र, तरन्नुम हुसैन) 72
27. युवाओं के स्वरोजगार में एस.जी.एस.वाय.एवं ग्रामीण स्वरोजगार का योगदान – खरगोन (म.प्र.) जिले के विशेष संदर्भ में (डॉ. टी. आर. ब्राहम्णे, संजय खाण्डेकर) 75

(Economics / अर्थशास्त्र)

28. भारत में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश – संभावनाऐं एवं चुनौतियां (डॉ. ए.के. पाण्डेय) 77
29. मध्य प्रदेश में कृषि विकास : उद्यानिकी फसलों के सन्दर्भ में (सुनील शर्मा, डॉ. के. के. श्रीवास्तव) 81
30. विकास का यथार्थ और लाभों की भागीदारी में गरीबी (डॉ. लता जैन) 86
31. राजस्थान में जनांकिकी लांभाश और आर्थिक विकास –एक अध्ययन (परस राम तैली, डॉ. शशी सांचीहर) 91
32. भारत में ग्रामीण आधारभूत संरचना के विकास का विश्लेषणात्मक अध्ययन (प्रदीप कुमार डामोर, प्रो. फरीदा शाह) 94

(Political Seience / राजनीति विज्ञान)

33. प्राचीन भारतीय परराज्य सम्बन्ध में षाड्गुण्यमंत्र (मूलमंत्र) की उपयोगिता – वर्तमान सन्दर्भ में (डॉ. जे.के. संत) 98
34. लोकतंत्र का सुदृढ़ आधार–संसदीय प्रणाली (डॉ. जी. एस. ध्रुवे) 102
35. पर्यावरण एवं नदी प्रदूषण (डॉ. सुरेखा रेगे) 105
36. सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक न्याय की अवधारणा (डॉ. अनिल कुमार जैन) 108

(Sociology / समाजशास्त्र)

37. Role Of Women Representative In Urban Development Of Banswara (Rajasthan) (Devender Singh Sarangdevot) 110
38. सामाजिक विधानों का महिलाओं पर प्रभाव एक समाजशास्त्रीय अध्ययन (ग्वालियर शहर के संदर्भ में) (अर्चना सेन) 114
39. जनसंख्या वृद्धि के प्रमुख कारण – एक अध्ययन (लाजवन्ती सावदे) 117
40. भारत में महिलाओं के विकास में रूढ़िवादी प्रथाओं की चुनौतियां (डॉ. पूनम बजाज) 119
41. द्वितीय विवाह वैयक्तिक आवश्यकताएँ सामाजिक परिप्रेक्ष्य (प्रो. सुशीला गायकवाड़, डॉ. श्रद्धा मालवीय) 121

(Psychology / मनोविज्ञान)

42. Wild Life Conservation : Issue And Policies (Dr. Mamta Barman) 123
43. जनजातीय समूह (वंचित समूह) – शासकीय प्रयास एवं सुझाव (सुधा शाक्य) 125

(History / इतिहास)

44. Reconstructing The Indian Indenture Experience: Problem, Method And Scope Of Study (Dr. Siba Barkataki) 128

45. भारतीय संस्कृति का विश्व में संचार: एक रोमांचकारी गाथा (डॉ. नितिन सहारिया, डॉ. उमाशंकर पटले) 131

46. प्रेस की आजादी के लिए संघर्ष (राष्ट्रीय आन्दोलन के सन्दर्भ में) (डॉ. पदमा सक्सैना) 139

(Geography / भूगोल)

47. उदयपुर जिले की गरासिया जनजाति का भौगोलिक अध्ययन (श्वेता मिश्रा, डॉ. धीरसिंह शेखावत) 141

(Hindi Literature / हिन्दी साहित्य)

48. कबीर धार्मिक दृष्टिकोण की प्रासंगिकता (डॉ. वन्दना अग्निहोत्री, भावना बर्वे) 144

49. समकालीन हिन्दी कविता में दलित चेतना (डॉ. स्वामीराम बंजारे 'सरल') 147

50. हमीदुल्ला के नाटकों में प्रतिबिम्बित राजनीतिक परिदृश्य (अन्नू यादव) 150

51. पत्रकारिता के विविध आयाम–सामाजिक सन्दर्भ में (प्रो. डी.पी. चन्द्रवंशी) 153

52. हिन्दी कहानी की विकास गाथा (डॉ. कल्पना मिश्रा) 156

(English Literature / अंग्रेजी साहित्य)

53. Text To Screen : A Study Of The Differences Between Original And Adaptation (Dr. Mukta Sharma, Shweta Maheshwari) 158

54. Spiritual Love portrayed by Shakespeare in Romeo & Juliet (Sehba Jafri) 160

55. An Analytical Study Of The Theme Of Love In Nicholas Spark's Novels- 'The Notebook' And 'A Walk To Remember'- Two Marvelous Tales On Love, Tragedy, And Positivity (Apurva Upadhyay) 162

(Sanskrit / संस्कृत)

56. कालिदास कृत ऋतुसंहार में पर्यावरण (डॉ. वेदप्रकाश मिश्र, सिद्धि तिवारी) 164

57. वेणीसंहार में त्रासदीय तत्त्वों का अरस्तू विषयक दृष्टिकोण (एकता चौधरी) 168

58. वाल्मीकीय रामायण में प्रतिपादित तप मानव जीवन के आनन्द का मूलाधार (नित्यानन्द चतुर्वेदी) 171

(Music / संगीत)

59. संगीत में विभिन्न छात्रवृत्तियों का योगदान (गुन्जन शर्मा) 173

60. संगीत में स्वर साधना (डॉ. जितेन्द्र शुक्ला) 175

(Drawing / चित्रकला)

61. मानवीय संवेदनाओ के सृजनशिल्पी डॉ. जगमोहन माथोड़िया (डॉ. अन्नपूर्णा शुक्ला, प्रिया बापलावत) 177

62. प्रकृति की संवेदनाओं के चितेरे लालचन्द मारोठिया (डॉ. अन्नपूर्णा शुक्ला, पारूल बापलावत) 180

(Law / विधि)

63. कमजोर वर्गों के मानव अधिकारों के संरक्षण में छत्तीसगढ़ खाद्य सुरक्षा अधिनियम 2012 एक विधिक अध्ययन 183
(जैनेन्द्र कुमार पटेल, विजय यादव)

64. विकासशील देशों में सहकारिता कानून का उद्‌भव एवं विकास (डॉ. ए. बी. सोनी, आर. पी. चौधरी) 185

(Education / शिक्षा)

65. विद्यार्थियों की सामाजिक अध्ययन में रूचि व शैक्षिक उपलब्धि का अध्ययन (डॉ. दीपिका गुप्ता) 187

66. मंदसौर शहर के शासकीय विद्यालय के कक्षा 7 वीं की 'हिन्दी' बाल भारती पुस्तक में अंकित नैतिक मूल्यों का विद्यार्थियों 190
के दैनिक जीवन पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन (डॉ. निशा महाराणा, निशा शर्मा)

67. बच्चों के अकादमिक उन्नयन पर संशोधित गतिविधि आधारित शिक्षण सामग्री का प्रभाव – एक शोध अध्ययन 193
(प्रमोद कुमार सेठिया, डॉ. महेश कुमार तिवारी)

68. नैतिक शिक्षा – एक राष्ट्रीय आवश्यकता (कृष्णा घोष) 196

(Sports / खेलकूद)

69. Sports & Physical Education In India - An Theoretical Analysis 198
(Dr. B. K. Choudhary, Sheikh Sharik Ahmed)

70. खेलकूद गतिविधियां(बड़वानी जिले के सन्दर्भ में) (अंजुबाला ठाकरे, डॉ. विनिता भालसे) 200

(Others / अन्य)

71. Managing The Causes Of Work-Related Stress (Namita Sethi, Mansi Sethi, Pragya Tiwari) 202

72. Transcending self and benefactions to Indian writing in English: A significant contribution 205
by Kamala Das (Haroon Bashir Kar)

73. Lift Irrigation in Samrat Ashok Sagar Project Command Area (R.N. Shrivastava) 207

****

क्षेत्रीय सम्पादक मण्डल अन्तर्राष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय (Regional Editor Board- International & National) मानद्

(01) डॉ. मनीषा ठाकुर ..... फुल्टन कॉलेज, एरिजोना स्टेट यूनिवर्सिटी, अमेरिका
(02) श्री अशोककुमार ..... एम्प्लॉयब्लिटी ऑपरेशन्स मैनेजर, एक्शन ट्रेनिंग सेन्टर लि. लन्दन, यूनाईटेड किंगडम
(03) प्रो. डॉ. सिलव्यू बिस्यू ..... वाईस डीन (वाणिज्य एवं प्रबन्ध) कृषि एवं ग्रामीण विकास महाविद्यालय, बूचारेस्ट, रोमानिया
(04) श्री खगेन्द्रप्रसाद सुबेदी ..... सीनियर सॉयकोलॉजिस्ट, पब्लिक सर्विस कमीशन, सेन्ट्रल ऑफिस, अनामनगर, काठमाँडू, नेपाल
(05) प्रो. डॉ. ज्ञानचंद खिमेसरा ..... प्राचार्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.) भारत
(06) प्रो. डॉ. प्रमोद कुमार राघव ..... शोध निदेशक, ज्योति विद्यापीठ महिला विश्व विद्यालय, जयपुर (राज.) भारत
(07) प्रो. डॉ. एन.एस.राव. ..... संचालक, जनार्दनराय नागर राजस्थान विद्यापीठ विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
(08) प्रो. डॉ. अनूप व्यास. ..... (पूर्व) संकायाध्यक्ष, वाणिज्य, देवी अहिल्या विश्व विद्यालय, इंदौर (म.प्र.) भारत
(09) प्रो. डॉ. पी.पी. पाण्डे ..... संकायाध्यक्ष, वाणिज्य (डीन), अवधेश प्रतापसिंह विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत
(10) प्रो. डॉ. संजय भयानी. ..... अध्यक्ष, व्यवसाय प्रबंध विभाग, सौराष्ट्र विश्व विद्यालय, राजकोट (गुजरात) भारत
(11) प्रो. डॉ. प्रताप राव कदम ..... अध्यक्ष, वाणिज्य, शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खण्डवा (म.प्र.) भारत
(12) प्रो. डॉ. बी.एस. झरे . ..... प्राध्यापक वाणिज्य विभाग, श्री शिवाजी महाविद्यालय, आकोला (महाराष्ट्र) भारत
(13) प्रो. डॉ. राकेश शर्मा ..... अध्यक्ष, अर्थशास्त्र विभाग, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गुड़गांव (हरियाणा) भारत
(14) प्रो. डॉ. संजय खरे ..... प्राध्यापक, समाजशास्त्र विभाग, शास. स्वशासी कन्या स्नात. उत्कृष्टता महा., सागर (म.प्र.) भारत
(15) प्रो. डॉ. आर.पी. उपाध्याय ..... परीक्षा नियंत्रक, शासकीय कमलाराजे कन्या स्वशासी स्नातकोत्तर महा., ग्वालियर (म.प्र.) भारत
(16) प्रो. डॉ. प्रदीप कुमार शर्मा ..... प्राध्यापक, वाणिज्य विभाग, शासकीय हमीदिया कला एवं वाणिज्य महा., भोपाल (म.प्र.) भारत
(17) प्रो. अखिलेश जाधव ..... प्राध्यापक, भौतिकी, शासकीय जे. योगानन्दम् छत्तीसगढ़ महाविद्यालय, रायपुर (छत्तीसगढ़) भारत
(18) प्रो. डॉ. कमल जैन ..... प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.) भारत
(19) प्रो. डॉ.डी.एन. खड़से ..... प्राध्यापक, वाणिज्य, धनवते नेशनल कॉलेज, नागपुर (महाराष्ट्र) भारत
(20) प्रो.डॉ. वन्दना जैन ..... प्राध्यापक, हिन्दी, शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
(21) प्रो. डॉ. हरदयाल अहिरवार ..... प्राध्यापक, अर्थशास्त्र, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शहडोल (म.प्र.) भारत
(22) प्रो. डॉ. शारदा त्रिवेदी ..... सेवानिवृत्त प्राध्यापक, गृहविज्ञान, इंदौर (म.प्र.) भारत
(23) प्रो. डॉ. उषा श्रीवास्तव ..... अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, आचार्य इंस्टीट्यूट ऑफ ग्रेच्यूट स्टडी. सोलदेवानली, बैंगलुरू (कर्ना.) भारत
(24) प्रो. डॉ. गणेशप्रसाद दावरे ..... प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय महाविद्यालय, बड़वाह (म.प्र.) भारत
(25) प्रो. डॉ. एच.के. चौरसिया ..... प्राध्यापक, वनस्पति, टी.एन.वी. महाविद्यालय, भागलपुर (बिहार) भारत
(26) प्रो. डॉ. विवेक पटेल ..... प्राध्यापक, वाणिज्य, शासकीय महाविद्यालय, कोतमा, जिला अनूपपुर (म.प्र.) भारत
(27) प्रो. डॉ. दिनेशकुमार चौधरी ..... प्राध्यापक, वाणिज्य, राजमाता सिन्धिया शासकीय कन्या महविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत
(28) प्रो. डॉ. आर.के. गौतम ..... प्राध्यापक ,वाणिज्य, शासकीय मानकुंवर बाई कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.) भारत
(29) प्रो. डॉ. जितेन्द्र के. शर्मा ..... प्राध्यापक, वाणिज्य एवं प्रबंध, महर्षि दयानन्द विश्वविद्यालय केन्द्र, पालवाल (हरियाणा) भारत
(30) प्रो. डॉ. आर.पी. सहारिया ..... प्राध्यापक, अर्थशास्त्र, शासकीय जे.एम.पी. महाविद्यालय तख्तपुर जिला,बिलासपुर (छ.ग.) भारत
(31) प्रो. डॉ. गायत्री वाजपेयी ..... प्राध्यापक, हिन्दी, शासकीय महाराजा स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.) भारत
(32) प्रो. डॉ. अविनाश शेन्द्रे ..... विभागाध्यक्ष, अर्थशास्त्र, प्रगति कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, डोम्बीवली, मुम्बई (महाराष्ट्र) भारत
(33) प्रो. डॉ. जी.सी. मेहता ..... अध्यक्ष, अध्ययन मण्डल वाणिज्य, देवी अहिल्या विश्वविद्याय, इंदौर (म.प्र.) भारत
(34) प्रो.डॉ. बी.एस. मक्कड़ ..... अध्यक्ष, अध्ययन मण्डल वाणिज्य, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
(35) प्रो.डॉ. पी.पी. मिश्रा ..... विभागाध्यक्ष, गणित, छत्रसाल शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, पन्ना, (म.प्र.) भारत
(36) प्रो.डॉ. सुनील कुमार सिकरवार.... प्राध्यापक, रसायन, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, झाबुआ (म.प्र.) भारत
(37) प्रो.डॉ. के.एल. साहू..... प्राध्यापक, इतिहास, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत
(38) प्रो.डॉ. मालिनी जॉनसन ..... प्राध्यापक, वनस्पति, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, महू (म.प्र.) भारत
(39) प्रो.डॉ. विशाल पुरोहित ..... एम.एल.बी. शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, किला मैदान, इन्दौर (म.प्र.) भारत

सम्पादकीय सलाहकार मण्डल (Editorial Advisory Board, INDIA) मानद्

(01) प्रो. डॉ. नरेन्द्र श्रीवास्तव ..... प्रसिद्ध वैज्ञानिक 'इसरो' बैंगलुरू (कर्नाटक) भारत
(02) प्रो. डॉ. आदित्य लूनावत ..... निदेशक, स्वामी विवेकानंद कॅरियर मार्गदर्शन प्रकोष्ठ उच्च शिक्षा विभाग, म.प्र. शासन, इंदौर (म.प्र.) भारत
(03) प्रो. डॉ. संजय जैन ..... सहायक नियंत्रक, म.प्र. व्यावसायिक परीक्षा मंडल भोपाल (म.प्र.) भारत
(04) प्रो. डॉ.एस.के. जोशी ..... प्राचार्य, शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय रतलाम (म.प्र.) भारत
(05) प्रो. डॉ. जे.पी.एन. पाण्डेय ..... प्राचार्य, शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्ता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.) भारत
(06) प्रो. डॉ. सुमित्रा वास्केल ..... प्राचार्य, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.) भारत
(07) प्रो. डॉ. पी.आर. चन्देलकर ..... प्राचार्य, शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.) भारत
(08) प्रो. डॉ. मंगल मिश्र ..... प्राचार्य, श्री क्लॉथ मार्केट, कन्या वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत
(09) प्रो. डॉ.आर.के. भट्ट ..... प्राचार्य, शासकीय महिला महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत
(10) प्रो. डॉ. अशोक वर्मा ..... प्राचार्य एवं संकायाध्यक्ष, वाणिज्य (डीन) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सेंधवा (म.प्र.) भारत
(11) प्रो. डॉ. टी.एम. खान ..... प्राचार्य, शासकीय महाविद्यालय, धामनोद, जिला–धार (म.प्र.) भारत
(12) प्रो. डॉ. राकेश ढण्ड ..... संकायाध्यक्ष, विद्यार्थी कल्याण विभाग विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.) भारत
(13) प्रो. डॉ. अनिल शिवानी ..... अध्यक्ष, वाणिज्य एवं प्रबंध विभाग श्री अटल बिहारी वाजपेयी हिंदी विश्वविद्यालय भोपाल (म.प्र.) भारत
(14) प्रो. डॉ. पद्मसिंह पटेल ..... अध्यक्ष, वाणिज्य विभाग शासकीय महाविद्यालय महिदपुर (म.प्र.) भारत
(15) प्रो. डॉ. मंजु दुबे..... संकायाध्यक्ष (डीन), गृह विज्ञान संकाय, जीवाजी विश्वविद्यालय ग्वालियर (म.प्र.) भारत
(16) प्रो. डॉ.ए.के. चौधरी ..... प्राध्यापक, मनोविज्ञान, राजकीय मीरा कन्या महाविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
(17) प्रो. डॉ. के.एल. जाट..... प्राध्यापक एवं अध्यक्ष, भौतिकी विभाग शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.) भारत
(18) प्रो. डॉ. प्रदीप सिंह राव ..... प्राध्यापक एवं अध्यक्ष, राजनीति विभाग शासकीय महाविद्यालय, सैलाना, जिला–रतलाम (म.प्र.) भारत

****

निर्णायक मण्डल (Referee Board) मानद्

✻✻✻ विज्ञान संकाय ✻✻✻

गणित:- .... **(1) प्रो. डॉ.वी.के. गुप्ता,** संचालक वैदिक गणित एवं शोध संस्थान, उज्जैन (म.प्र.)

भौतिकी:- .... **(1) प्रो. डॉ. आर.सी. दीक्षित**, शासकीय होल्कर विज्ञान महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)

(2) प्रो.डॉ. रवि कटारे, शासकीय आदर्श विज्ञान महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

कम्प्यूटर विज्ञान:- .... **(1) प्रो. डॉ. उमेश कुमार सिंह** अध्यक्ष कम्प्यूटर अध्ययनशाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

रसायन:- .... **(1) प्रो. डॉ. मनमीत कौर मक्कड़,** शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

वनस्पति:- .... **(1) प्रो. डॉ. सुचिता जैन,** राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कोटा (राज.)

(2) प्रो.डॉ. अखिलेश आयाची, शासकीय आदर्श विज्ञान महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

प्राणिकी:- .... **(1) प्रो.डॉ. मंजुलता शर्मा,** एम.एस.जे., राजकीय महाविद्यालय, भरतपुर (राज.)

(2) प्रो. डॉ. अमृता खत्री, माता जीजाबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.)

सांख्यिकी:- .... **(1) प्रो. डॉ. रमेश पण्ड्या,** शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)

सैन्य विज्ञान:- .... **(1) प्रो. डॉ. कैलाश त्यागी,** शासकीय मोतीलाल विज्ञान महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

जीव रसायन:- .... **(1) डॉ. कंचन डींगरा,** शासकीय एम.एच. गृह विज्ञान महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

भूगर्भ शास्त्र:- .... **(1) प्रो. डॉ. आर.एस. रघुवंशी,** शासकीय मोतीलाल विज्ञान महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. सुयश कुमार, शासकीय आदर्श महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)

चिकित्सा विज्ञान:- .... **(1) डॉ. एच.जी. वरूधकर,** आर.डी. गारड़ी मेडिकल महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

✻✻✻ वाणिज्य संकाय ✻✻✻

वाणिज्य :- .... **(1) प्रो. डॉ. पी.के. जैन,** शासकीय हमीदिया महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. शैलेन्द्र भारल, शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

(3) प्रो. डॉ. लक्ष्मण परवाल, शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)

(4) प्रो. डॉ. सीता चतुर्वेदी, शा. महारानी लक्ष्मी बाई कन्या स्नातकोत्तर (स्वशासी)महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

✻✻✻ प्रबंध एवं व्यवसाय प्रशासन संकाय ✻✻✻

प्रबंध :- .... **(1) प्रो. डॉ. रामेश्वर सोनी**, अध्यक्ष अध्ययन शाला, विक्रम विश्वविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. आनन्द तिवारी, शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर कन्या उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

मानव संसाधन:- .... **(1) प्रो. डॉ. हरविन्दर सोनी**, पैसेफिक बिजनेस स्कूल, उदयपुर (राज.)

व्यवसाय प्रशासन:- .... **(1) प्रो. डॉ. कपिलदेव शर्मा**, राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कोटा (राज.)

✻✻✻ विधि संकाय ✻✻✻

विधि:- .... **(1) प्रो. डॉ. एस.एन. शर्मा,** प्राचार्य, शासकीय माधव विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. नरेन्द्र कुमार जैन, प्राचार्य श्री जवाहरलाल नेहरू स्नातकोत्तर विधि महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)

✻✻✻ कला संकाय ✻✻✻

अर्थशास्त्र:- .... **(1) प्रो. डॉ. पी.सी. रांका,** श्री सीताराम जाजू शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. जे.पी. मिश्रा, शासकीय महाराजा स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.)

(3) प्रो. डॉ. अंजना जैन, एम.एल.बी. शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, किला मैदान, इन्दौर (म.प्र.)

राजनीति:- .... **(1) प्रो. डॉ. रवींद्र सोहोनी,** शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)

(2) प्रो. डॉ. अनिल जैन, शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)

(3) प्रो. डॉ. सुलेखा मिश्रा, मानकुंवर बाई शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

दर्शनशास्त्र:- .... **(1) प्रो. डॉ. हेमन्त नामदेव,** शासकीय माधव कला-वाणिज्य-विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)

समाजशास्त्र:– ..... **(1) प्रो. डॉ. आशुतोष व्यास,** राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, चित्तौड़गढ़ (राज.)
(2) प्रो. डॉ. एच.एल. फुलवरे, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.)
(3) प्रो. डॉ. इन्दिरा बर्मन, शासकीय गृह विज्ञान महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)
(4) प्रो. डॉ. उमा लवानिया, शासकीय कन्या महाविद्यालय, बीना, जिला-सागर (म.प्र.)

हिन्दी:– ..... **(1) प्रो. डॉ. चन्दा तलेरा जैन,** अध्यक्ष अध्ययन मण्डल, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र)
(2) प्रो. डॉ. जया प्रियदर्शनी शुक्ला, वनस्थली विद्यापीठ (राज.)
(3) प्रो. डॉ. कला जोशी, श्री अटल बिहारी वाजपेयी शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(4) प्रो. डॉ. रमेश टण्डन, महात्मा गाँधी शासकीय महाविद्यालय, खरसिया, जिला - रायगढ़ (छ.ग.)

अंग्रेजी:– ..... **(1) प्रो. डॉ. प्रशांत मिश्रा**, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. अजय भार्गव, शासकीय महाविद्यालय, बड़नगर (म.प्र.)
(3) प्रो. डॉ. मंजरी अग्निहोत्री, शासकीय कन्या महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.)

संस्कृत:– ..... **(1) प्रो. डॉ. भावना श्रीवास्तव,** शासकीय स्वशासी महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. बालकृष्ण प्रजापति, शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, गंजबासौदा जिला विदिशा (म.प्र.)

इतिहास:– ..... **(1) प्रो. डॉ. नवीन गिडियन,** शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)

भूगोल:– ..... **(1) प्रो. डॉ. राजेन्द्र श्रीवास्तव** शासकीय महाविद्यालय, पिपलियामण्डी, जिला मंदसौर (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. अर्चना भार्गव, शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.)

मनोविज्ञान:– ..... **(1) प्रो. डॉ. कामना वर्मा,** प्राचार्य, शासकीय राजमाता सिंधिया कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिन्दवाड़ा (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. सरोज कोठारी, शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)

चित्रकला:– ..... **(1) प्रो. डॉ. अल्पना उपाध्याय,** शासकीय माधव कला-वाणिज्य-विधि महाविद्यालय उज्जैन (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. रेखा श्रीवास्तव, महारानी लक्ष्मीबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)

संगीत:– ..... **(1) प्रो. डॉ. भावना ग्रोवर (कथक),** सुभारती विश्व विद्यालय मेरठ (उ.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. श्रीपाद अरोणकर, राजमाता सिन्धिया शासकीय कन्या महाविद्यालय, छिन्दवाडा (म.प्र.)

****** गृह विज्ञान संकाय ******

आहार एवं पोषण विज्ञान:– .... **(1) प्रो.डॉ. प्रगति देसाई,** शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. मधु गोयल, स्वामी केशवानन्द गृह विज्ञान महाविद्यालय, बीकानेर (राज.)
(3) प्रो. डॉ. संध्या वर्मा, शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, रायपुर (छ.ग.)

मानव विकास:– ..... **(1) प्रो. डॉ. मीनाक्षी माथुर,** अध्यक्ष, जयनारायण व्यास विश्वविद्यालय, जोधपुर (राज.)
(2) प्रो. डॉ. आभा तिवारी, अध्यक्ष अध्ययन मण्डल रानी दुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.)

पारिवारिक संसाधन प्रबंध:– ... **(1) प्रो. डॉ. मंजु शर्मा,** माता जीजाबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इंदौर (म.प्र.)
(2) प्रो. डॉ. नम्रता अरोरा, वनस्थली विद्यापीठ (राज.)

****** शिक्षा संकाय ******

शिक्षा ..... **(1) प्रो. डॉ. मनोरमा माथुर,** प्राचार्य, अरावली शिक्षा महाविद्यालय, फरीदाबाद (हरियाणा)
(2) प्रो. डॉ. एन.एम.जी. माथुर, प्राचार्य एवं डीन पेसेफिक शिक्षा महाविद्यालय, उदयपुर (राज.)
(3) प्रो. डॉ. अर्चना श्रीवास्तव, बी.सी.जी. शिक्षा महाविद्यालय, देवास (म.प्र.)

****** शारीरिक शिक्षा संकाय ******

शारीरिक शिक्षा ..... **(1) प्रो. डॉ. अक्षयकुमार शुक्ला,** अध्यक्ष शारीरिक शिक्षा पेसेफिक विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.)

****** ग्रन्थालय विज्ञान संकाय ******

ग्रन्थालय विज्ञान ..... **(1) डॉ. अनिल सिरौठिया,** शासकीय महाराजा महाविद्यालय, छतरपुर (म.प्र.)

प्रवक्ता साथी (मानद्)

(01) प्रो. डॉ. आर.के. गुजेटिया ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(02) प्रो. श्रीमती विजया वधवा ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, नीमच (म.प्र.)
(03) डॉ. सुरेंद्र शक्तावत ..... ज्ञानोदय इंस्टीट्यूट ऑफ मेनेजमेंट एंड टेक्नोलॉजी, नीमच (म.प्र.)
(04) प्रो. डॉ. देवीलाल अहीर ..... शासकीय महाविद्यालय, जावद, जिला नीमच (म.प्र.)
(05) श्री आशीष द्विवेदी ..... शासकीय महाविद्यालय, मनासा, जिला नीमच (म.प्र.)
(06) प्रो. डॉ. मनोज महाजन ..... शासकीय महाविद्यालय, सोनकच्छ, जिला देवास (म.प्र.)
(07) श्री उमेश शर्मा ..... कृष्णा शिक्षा महाविद्यालय, जावी, जिला– नीमच (म.प्र.)
(08) प्रो. डॉ. एस.पी. पंवार ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(09) प्रो. डॉ. पूरालाल पाटीदार ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(10) प्रो. डॉ. क्षितिज पुरोहित ..... जैन कला–वाणिज्य–विज्ञान महाविद्यालय, मंदसौर (म.प्र.)
(11) प्रो. डॉ.एन.के. पाटीदार ..... शासकीय महाविद्यालय, पिपलियामंडी, जिला मन्दसौर (म.प्र.)
(12) प्रो. डॉ. वाय.के. मिश्रा ..... शासकीय कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(13) प्रो. डॉ. सुरेश कटारिया ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(14) प्रो. डॉ. अभय पाठक ..... शासकीय वाणिज्य महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.)
(15) प्रो. डॉ. मालसिंह चौहान ..... शासकीय महाविद्यालय, सैलाना, जिला रतलाम (म.प्र.)
(16) प्रो. डॉ. गेंदालाल चौहान ..... शासकीय विक्रम महाविद्यालय, खाचरौद, जिला उज्जैन (म.प्र.)
(17) प्रो. डॉ. प्रभाकर मिश्र ..... शासकीय महाविद्यालय, महिदपुर, जिला उज्जैन (म.प्र.)
(18) प्रो. डॉ. प्रकाश कुमार जैन ..... शासकीय माधव कला वाणिज्य विधि महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(19) प्रो. डॉ. कमला चौहान ..... शासकीय कालिदास कन्या महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(20) प्रो. डॉ.आभा दीक्षित ..... शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, उज्जैन (म.प्र.)
(21) प्रो. डॉ. पंकज माहेश्वरी ..... शासकीय महाविद्यालय, तराना, जिला उज्जैन (म.प्र.)
(22) प्रो. डॉ. डी.सी. राठी ..... स्वामी विवेकानंद कॅरियर मार्गदर्शन प्रकोष्ठ, उच्च शिक्षा विभाग, म.प्र. शासन, इंदौर
(23) प्रो. डॉ. अनिता गगराड़े ..... शासकीय होलकर विज्ञान महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(24) प्रो. डॉ. संजय पंडित ..... शासकीय एम.जे.बी. कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मोती तबेला, इन्दौर (म.प्र.)
(25) प्रो. डॉ. रामबाबू गुप्ता ..... शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(26) प्रो. डॉ. अंजना सक्सैना ..... शासकीय महारानी लक्ष्मीबाई कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(27) प्रो. डॉ. सोनाली नरगुन्दे ..... पत्रकारिता एवं जनसंचार अध्ययनशाला देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर (म.प्र.)
(28) प्रो. डॉ. भारती जोशी ..... अजीवन शिक्षण विभाग देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(29) प्रो. डॉ. एम.डी. सोमानी ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, महू, जिला इन्दौर (म.प्र.)
(30) प्रो. डॉ. प्रीति भट्ट ..... शासकीस एन.एस.पी. विज्ञान महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(31) प्रो. डॉ. संजय प्रसाद ..... शासकीय महाविद्यालय, सांवेर, जिला इन्दौर (म.प्र.)
(32) प्रो. डॉ. मीना मटकर ..... सुगनीदेवी कन्या महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.)
(33) प्रो. मोहन वास्केल ..... शासकीय महाविद्यालय, थांदला, जिला – झाबुआ (म.प्र.)
(34) प्रो. डॉ. नितिन सहारिया ..... शासकीय महाविद्यालय, कोतमा, जिला अनूपपुर (म.प्र.)
(35) प्रो. डॉ. मंजु राजोरिया ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, देवास (म.प्र.)
(36) प्रो. डॉ. शहजाद कुरैशी ..... शासकीय नवीन कला एवं विज्ञान महाविद्यालय, मूंदी, जिला खण्डवा (म.प्र.)
(37) प्रो. डॉ. शैल वाला गाँधी ..... महारानी लक्ष्मीबाई शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(38) प्रो. डॉ. प्रवीण ओझा ..... श्री भगवत सहाय शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)
(39) प्रो. डॉ.ओमप्रकाश शर्मा ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, श्योपुर (म.प्र.)
(40) प्रो. डॉ. एस.के. श्रीवास्तव ..... शासकीय विजया राजे कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)
(41) प्रो. डॉ. अनूप मोघे ..... शासकीय कमलाराजे कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.)
(42) प्रो. डॉ. हेमलता चौहान ..... शासकीय महाविद्यालय, बड़नगर (म.प्र.)
(43) प्रो. डॉ. महेशचन्द्र गुप्ता ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.)
(44) प्रो. डॉ. मंगला ठाकुर ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वाह, जिला खरगोन (म.प्र.)
(45) प्रो. डॉ. के.आर. कुम्हेकर ..... शासकीय महाविद्यालय, सनावद, जिला खरगोन (म.प्र.)
(46) प्रो. डॉ. आर.के. यादव ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, खरगोन (म.प्र.)
(47) प्रो. डॉ. आशा साखी गुप्ता ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बड़वानी (म.प्र.)

(48) प्रो. डॉ. हेमसिंह मण्डलोई ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, धार (म.प्र.)
(49) प्रो. डॉ. प्रभा पाण्डेय ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मैहर, जिला– सतना (म.प्र.)
(50) डॉ. राजेश कुमार ..... शासकीय महाविद्यालय अमरपाटन, जिला–सतना (म.प्र.)
(51) प्रो. डॉ. रावेन्द्रसिंह पटेल ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सतना (म.प्र.)
(52) प्रो. डॉ. मनोहरलाल गुप्ता ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, राजगढ़ ब्यावरा (म.प्र.)
(53) प्रो. डॉ. मधुसुदन प्रकाश ..... शासकीय महाविद्यालय, गंजबासोदा, जिला–विदिशा (म.प्र.)
(54) प्रो. युवराज श्रीवास्तव ..... सी.वी. रमन विश्वविद्यालय, कोटा–बिलासपुर (छ.ग.)
(55) प्रो. डॉ. सुनील वाजपेयी ..... शासकीय तिलक स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कटनी (म.प्र.)
(56) प्रो. डॉ. ए.के. पाण्डे ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, सतना (म.प्र.)
(57) प्रो. डॉ. यतीन्द्र महोबे ..... शासकीय महिला महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.)
(58) प्रो. डॉ. शशि प्रभा जैन ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, आगर–मालवा (म.प्र.)
(59) प्रो. डॉ. नियाज अंसारी ..... शासकीय महाविद्यालय,सिंहावल, जिला सीधी (म.प्र.)
(60) प्रो. डॉ. अर्जुनसिंह बघेल ..... शासकीय महाविद्यालय, हरदा (म.प्र.)
(61) डॉ. सुरेश कुमार विमल ..... शासकीय महाविद्यालय, भैंसादेही, जिला बैतूल (म.प्र.)
(62) प्रो. डॉ. अमरचन्द्र जैन ..... शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)
(63) प्रो. डॉ. रश्मि दुबे ..... शासकीय स्वशासी कन्या स्नातकोत्तर उत्कृष्टता महाविद्यालय, सागर (म.प्र.)
(64) प्रो. डॉ. ए.के. जैन ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, बीना, जिला– सागर (म.प्र.)
(65) प्रो. डॉ. संध्या टिकेकर ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, बीना, जिला– सागर (म.प्र.)
(66) प्रो. डॉ. राजीव शर्मा ..... शासकीय नर्मदा स्नातकोत्तर महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)
(67) प्रो. डॉ. रश्मि श्रीवास्तव ..... शासकीय गृह विज्ञान महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.)
(68) प्रो. डॉ. लक्ष्मीकांत चंदेला ..... शासकीय स्वशासी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, छिंदवाड़ा (म.प्र.)
(69) प्रो. डॉ. बलराम सिंगोतिया ..... शासकीय महाविद्यालय सौंसर, जिला–छिन्दवाड़ा (म.प्र.)
(70) प्रो.डॉ. विम्मी बहल ..... शासकीय महाविद्यालय, काला पीपल, जिला – शाजापुर (म.प्र.)
(71) प्रो. डॉ. अमित शुक्ल ..... शासकीय ठाकुर रणमतसिंह महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)
(72) प्रो. डॉ. मीनू गजाला खान ..... शासकीय महाविद्यालय, मक्सी, जिला–शाजापुर (म.प्र.)
(73) प्रो. डॉ. पल्लवी मिश्रा ..... शासकीय महाविद्यालय, नई गढ़ी, जिला– रीवा (म.प्र.)
(74) प्रो. डॉ. एम.पी. शर्मा ..... शासकीय महाविद्यालय, दतिया (म.प्र.)
(75) प्रो. डॉ. जया शर्मा ..... शासकीय कन्या महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.)
(76) प्रो. डॉ. सुशील सोमवंशी ..... शासकीय महाविद्यालय, नेपानगर, जिला बुरहानपुर (म.प्र.)
(77) प्रो. डॉ. इशरत खान ..... शासकीय महाविद्यालय, रायसेन (म.प्र.)
(78) प्रो. डॉ. कमलेशसिंह नेगी ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सीहोर (म.प्र.)
(79) प्रो. डॉ. भावना ठाकुर ..... शासकीय महाविद्यालय रेहटी, जिला सीहोर (म.प्र.)
(80) प्रो. डॉ. केशवमणि शर्मा ..... पंडित बालकृष्ण शर्मा नवीन शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, शाजापुर (म.प्र.)
(81) प्रो. डॉ. रेणु राजेश ..... शासकीय नेहरु अग्रणी महाविद्यालय, अशोक नगर (म.प्र.)
(82) प्रो. डॉ. अविनाश दुबे ..... शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, खण्डवा (म.प्र.)
(83) प्रो. डॉ. वी.के. दीक्षित ..... छत्रसाल शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, पन्ना (म.प्र.)
(84) प्रो. डॉ. राम अवेधश शर्मा ..... एम.जे.एस. शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भिण्ड (म.प्र.)
(85) प्रो. डॉ. मनोज कुमार अग्निहोत्री ..... सरोजिनी नायडू शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.)
(86) प्रो. डॉ. समीर कुमार शुक्ला ..... शासकीय चन्द्र विजय महाविद्यालय, डिण्डोरी (म.प्र.)
(87) प्रो. डॉ. आर.सी. पान्टेल ..... शासकीय महाविद्यालय, धामनोद, जिला–धार (म.प्र.)
(88) प्रो. डॉ. अनूप परसाई ..... शासकीय जे. योगानन्दन छत्तीसगढ़ स्नातकोत्तर महाविद्यालय, रायपुर (छत्तीसगढ़)
(89) प्रो. डॉ. अनिलकुमार जैन ..... इन्दिरा गाँधी खुला विश्वविद्यालय, कोटा (राज.)
(90) प्रो. डॉ. अर्चना वशिष्ठ ..... राजकीय राजऋषि महाविद्यालय अलवर (राज.)
(91) प्रो. डॉ. कल्पना पारीख ..... एस.एस.जी. पारीख पी.जी. कॉलेज, जयपुर (राज.)
(92) प्रो. डॉ. गजेन्द्र सिरोहा ..... पेसिफिक विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.)
(93) प्रो. डॉ. कृष्णा पैन्सिया ..... हरिश आंजना महाविद्यालय, छोटीसादड़ी, जिला– प्रतापगढ़ (राज.)
(94) प्रो. डॉ. प्रदीप सिंह ..... केंद्रीय विश्व विद्यालय हरियाणा, महेंद्रगढ़ (हरियाणा)
(95) प्रो. डॉ. स्मृति अग्रवाल ..... शोध सलाहकार, नई दिल्ली

Reduction Of Pyridinium Dicromate By 2-Chloro Benzaldehyde: Kinetics & Mechanism

Dr. Bhupendra Kumar Amb *

Abstract - Kinetics of the reduction of pyridinium dichromate (PDC) by 2-chloro benzaldehyde have been studied in aquo-acetic acid medium. The main product of it is 2-chloro benzoic acids. The reaction is first order with respect to PDC and substrate and second order with respect to [H^+]. The rate of reaction decreases with increase in dielectric constant of solvent shows that cation-dipole interaction. Activation energies and related thermodynamic parameters have been determined. The various kinetic parameter were calculated and suitable explanations have been given.
Keywords - kinetics, reduction, oxidation, 2-chlorobenzaldehyde, PDC, aquo-acetic acid medium.

Introduction - A large number of complexed Cr(VI) compound as oxidizing agents have been reported. Pyridinium dichromate (PDC), has been recently reported. Only a few reports about the kinetics and mechanistic aspects of reduction of PDC are available in literature. Aromatic aldehydes were found to be smoothly oxidised by this reagent. We report here the kinetics of reaction of 2-chloro benzaldehyde in acetic acid-perchloric acid medium with PDC.

Kinetic measurements - The reactions were carried out under pseudo-first order conditions. A known volume of substrate, perchloric acid and acetic acid were mixed in reaction flask and kept in thermostat maintained at constant temperature (± 0.1K). The reaction was initiated by adding rapidly pre-determined volume of PDC solution into the above reaction mixture. The rate of reaction was followed by withdrawing aliquots of (5.0 ml) the reaction mixture at regular intervals of time and quenching in 10 ml of 10% potassium iodide solution. The liberated iodine was titrated against previously standardised sodium thiosulphate (hypo) using starch as an indicator. The pseudo first order rate coefficients were obtained by plotting log (a-x) values against time. The rate constants k_{obs} were computed from the linear plots of log [hypo] versus time by least-square method. The results were reproducible to ±3%.

Experimental

1. PDC solution was prepared in purified acetic acid. Solid PDC was prepared by reported method (by E. J. Corey, G. Schmidt : Synthetic & Kinetic Aspects of PDC. *Tetrahedron Letters*; 399,1979). All other chemicals used were of AnalaR grade (E. Merck) or were purified, and purity was checked by m.p. or b.p.
2. The products of reduction of PDC by 2-chloro benzaldehyde were confirmed as 2-chloro benzoic acid by m.p., tlc and spectral analysis. Stoichiometry investigation revealed that 3 mol of 2-chlorobenzaldehyde consume 1 mol of PDC.

$$3ArCHO + H_2O + PDC \{2Cr(VI) \rightarrow 3ArCOOH + 2Cr(III) + 6H^+ \quad \text{.....(1)}$$

Results And Discussion :

Effect of (PDC) concentration on rate - At fixed [H^+] with benzaldehyde in excess, the plot of log [PDC] vs, time was linear in individual runs up to 60-70% of the reaction indicating 1st order in PDC. The rate coefficients are independent of the initial concentration of PDC in the concentration range of 0.00333 - 0.00125 M, indicating that the reaction is first order in PDC.

Stability of pyridinium dichromate in solution. The rate of reaction does not change with increase in pyridine concentration. This shows that PDC is not hydrolysed & it is quite stable compound under aqueous kinetic conditions.

Effect of substrate concentration on rate - Graph of log k_{obs} against log [aldehyde] was straight line with a slope of ca. 1 (for 2-chlorobenzaldehyde is 0.826)**.** I found that it is 1st order with respect to substrate. The rate of reaction increases on increasing the concentration of benzaldehyde. Here Michaelis-Menten kinetics do not fit. This indecates that either the complex formed is very unstable or it is not formed. The order with respect to substrate is one.

Figure-1
variation of rate with substrate concentration o-chloro benzaldehyde log[substrte]v/s logk$_1$

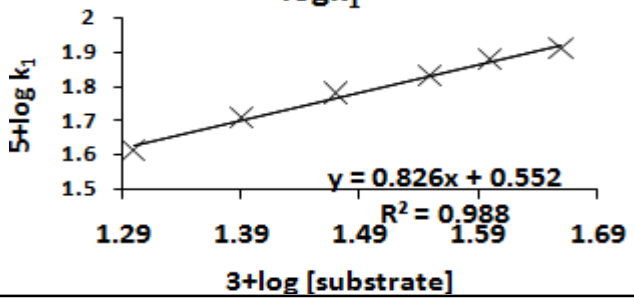

* Asst. Prof., Chemical Kinetics Laboratory (Chemistry) Govt. P. G. College, Neemuch (M.P.) INDIA

Perchloric acid concentration effect on rate - Rate of reaction increased with increse in [$HClO_4$]. It was found that the oxidation of aldehyde is catalysed by acid. A plot of log k_{obs} versus log [H^+] was a straight line in the range of [H^+] =0.1 to 1.5 mol dm^{-3} with a slope of two (for 2-chlorobenzaldehyde 2.062), i.e. the order with respect to [H^+] is two. The second order with respect to [H^+] shows an interaction between hydrated benzaldehyde and protonated PDC forming an cyclic ester, which then decomposes in a slow step forming the corresponding benzoic acids.

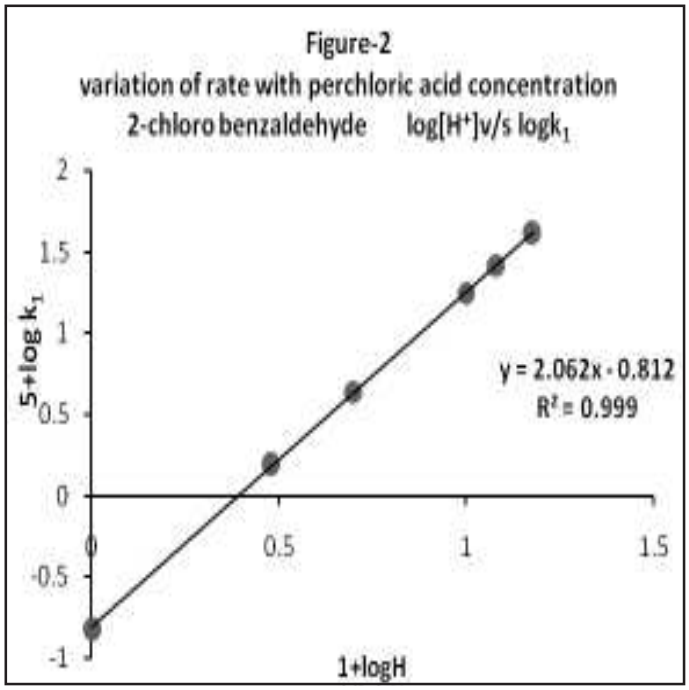

The Zucker Hammett was also applied but the slopes of the plots do not fit in the criterion. This shows that the water molecule is not acting as proton abstractor in the rate-determining step.

The rate law of the reaction process can be expressed as follows:

$$-\frac{d}{dt}[PDC]=k_1[PDC][aldehyde][H^+]^2 \quad \text{---------- (2)}$$

Effect of solvent composition on rate - At constant [H^+] the rate of reaction of 2-chlorobenzaldehyde increased with increase in percentage of (solvent) acetic acid in solvent composition. Decreasing dielectric constant of medium favours the reaction indicating that the reaction is of ion-dipole type. [E.S. AMIS: "Kinetics of Chemical Changes in Solution" *Macmillan, New York*; P,71 (1949)]. The plots of log k_{obs} versus 1/*D* (dielectric constant) with positive slopes > 20 (for 2-chlorobenzaldehyde it is +110.2) suggest cation-dipole type of interaction.

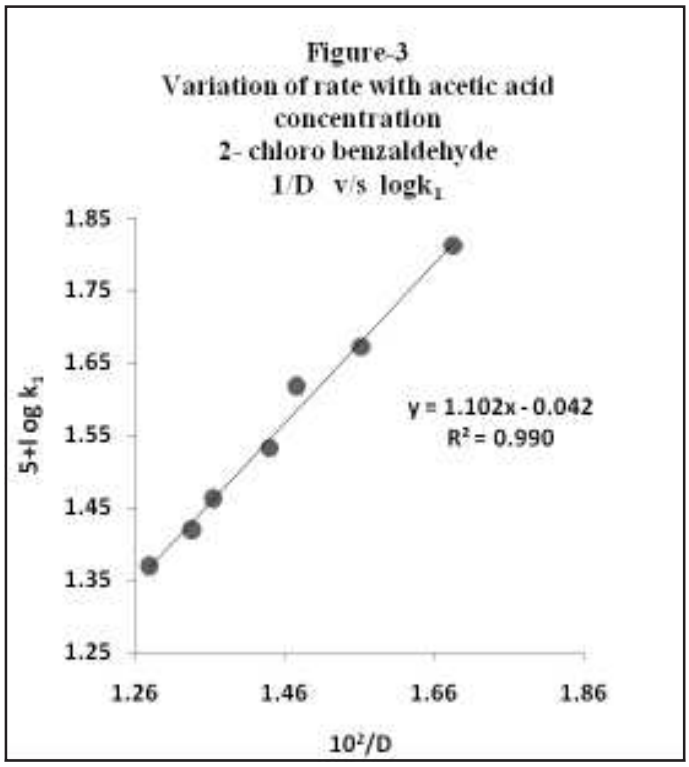

Effect of Mn(II) and Ce(III) ion on rate - The rate of reaction decreases gradually on the addition of Ce(III) and Mn(II) ions. This effect indicates that Cr(VI) acts as a two-electrons oxidant.

Effect of ionic strength on rate - Different concentration of sodium sulphate, sodium nitrate and sodium perchlorate did not alter the rate constant, giving additional evidence for ion-dipole type reaction. This also proves that opposite or similar charge species are not interacting in the rate-determining step.

Thermodynamic parameters - Experiment have been carried out at 303 to 328K under identical condition of reagents. The plot of log k_1 against 1/*T* is linear with slop -1.429. The activation parameters are reported in Table-1.

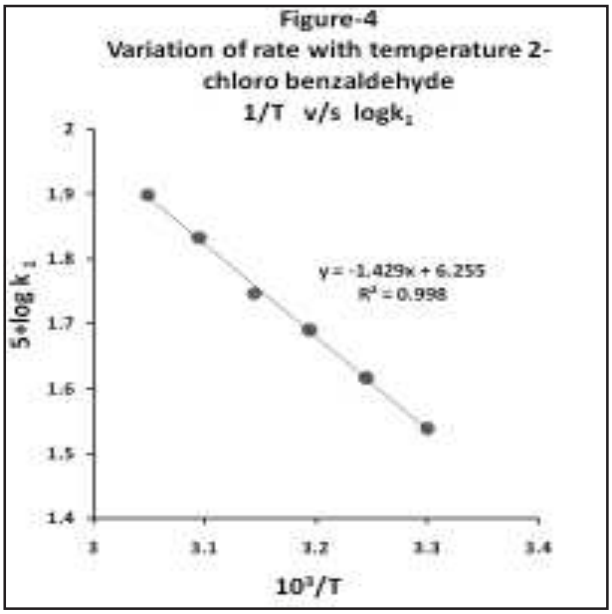

Table 1
Thermodynamic parameters

Benzaldehyde	Energy of activation ΔE_a^* (kJ mol^{-1})	Entropy of activation ΔS^* (J K^{-1} mol^{-1})	Free energy ΔG^* (kJ mol^{-1})
2-Chloro Benzaldehyde	27.361	-189.73	85.797

The –ve entropy of activation shows that the reaction is slow. The higher rate of reaction of 2-chlorobenzaldehyde could be due to combined – I and +R effects, suggests more positive charge on carbonyl carbon atom. The rate of the reaction of benzaldehyde by PDC is accelerated by electron-releasing substituents. Similar effects has been observed by Lucchi in Cr(VI); Aruna et al. in QDC and Ramakrishan et al. in PFC.

Considering all these experimental data, the various kinetic parameter were calculated and suitable explanations have been given.

Solvent effect on rate suggests possibility of ion dipolar interaction. Here H^+ PDC ions and polar hydrated aldehyde interact to give the compound (C) & decomposition of (C) is slow i.e. rate determining step. : Althouh C-H bond breaking indicated by energy of activation take place in rate deteminig step but proton is not taken by solvent water rather it is removed.

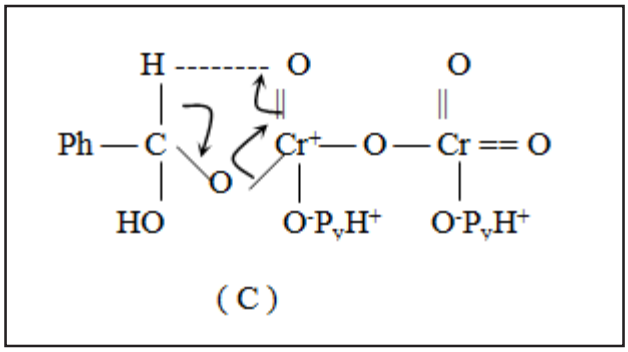

(C)

Negative entropy also suggest formation of cyclic compound from non cyclic. Involvement of hydration and formation of chromate ester will also decrease entropy.

Acknowledgements - The author is thankful to U.G.C., New Delhi, India, for providing financial assistance.

References :-

1. K.P. Elango and K.Karunakaran, Oxid.commun.9, 59 (1996)
2. K. Suganya, G. Baburao, S. Kabian : *Oxidation Communications*; 26,373,02 (2003).
3. B. L. Hiran, R. K. Malkani, P. Chaudhary, P. Verma, N. Shorger : *Asian J. Chemistry*; 18,4,3081 (2006).
4. L. Zucker, L. P. Hammatt: *J. American Chem. Soc*.; 61,2779 (1939).
5. A. Frost, Ralphg Pearson: Kinetics & Mechanism. *John Wiley & Sons, Inc Japan*.; P-150 (1961).

****

Study Of Correlation Cofficient And Significance Levels Of Physicochemical And Biotic Data For Surface Water Of Benisagar Lake Panna (M.P.)

Archana Nigam * R.S. Nigam **

Abstract - The statistical treatment of the data of secchi transparency indicates significance variation with months observations on physicochemical characteristics of benisagar lake.It suggests that the various physical and chemical characteristics are related to their seasonal changes.
Key words – Statistical treatment.correlation cofficient.

Introduction - District Panna lies in the heart of vindhya.It is situated in the eastern part of Madhya Pradesh.Correlation between different phytoplankton and physicochemical parameter were noted by some of the hydrobiologists. [biswas1924,Rao et al.1955,1980,Nayak1980].

Material and Method - Benisagar is a shallow lake and there were noted no differences in surface and bottom water qualities, therefore in present investigation only surface water parameters were detected. Light penetration or transparency of a lake is considerable physical factor that determine the vertical thermal stratification in deep water areas and in horizontal variation in different sides. Sacchi has suggested the disc method to detect the transparency[in.cm] that is used by most of the hydrobiologists.Temprature is one of the most valuable parameter in an aquatic environment. Welch[1952] have noted, if the water of lake were heated only by conduction from surface the whole thermal complex would be radically different. Lake water dirrectly receive the oxygen from the air while the carbondioxide is released by the decomposition of organic materials.

Nitrification and denitrification processes play an important role in the ecosystem of the lake and determine the amount of nitrogen and its compound.

Ammonia nitrogen is the product of denitrification or the decomposition of nitrogen compounds.

Observation - The obtained values of physicochemical and biotic parameters have been treated to detect the correlation cofficient[r]correlation between the physicochemical and biotic parameter are shown in table.

TABLE (See in the last page)

Results and discussion - Matrix shows clearly the positive correlation between the ph and water temprature, free carban dioxide and water temprature,ammonia nitrogen and water temprature, sacchi transparency and ph, carbondioxide and ph,dissolved oxygen and sacchi transparency.carbondioxide and ammonia nitrogen, in present investigations.

A positive correction were noted between phytoplankton secchi transparency and dissolved oxygen.

References :-

1 Biswas.k.1924 the sub arial algae of the Berkunda Island in the Chilka Lake,Ganjan district Madras, Presidency.J,Asiantic Soc, Bengal. 20; 359-369
2 Nayak.t.r.1980.hydrobiological studies of Dahlan Tal Panna MP, Ph.D. thesis approved A.P.S. University Rewa. M.P.
3 Rao et. al.1955 on the Distribution of algae in a group of six small ponds II Algaal productivity.3.ecol,43.291-308.
4 Welch1955 limnology, mcgraw. Hill book co.n.y. and landon I sted.

Table (See in next page)

* **Professor (Botany) Govt. P.G. College, Satna (M.P.) INDIA**
** **Dean (Education) AKS University, Satna (M.P.) INDIA**

Table - Matrix Showing Correlation Cofficients And Significance Levels Of Physico-Chemical And Biotic Data For Surface Water

Water temperature^{0}c	-						
pH	0.365	-					
Secchi Transparency(Cm.)	-0.431	0.587 *	-				
Dissolve oxygen (ppm)	-0.807 **	0.024	0.651 *				
Free Carbondioxide(ppm)	0.790 *	0.682 *	0.181	-0.376 *	-		
Ammonia Nitrogen(ppm)	0.428	0.837 **	0.206	-0.110	0.750 *	-	
Phytoplankton(/Lt.)	-0.453	0.203	0.6004 *	0.920 **	-0.276	0.25	-
	Water Temp.	pH	Secchi Transparaency	Dissolve O_2	FreeCo_2	Ammonia	Phytoplankton

****

Effect Of Antibiotics On The Infectivity Of Groundnut Mosaic Virus in vitro

Dr. Madhu Mishra *

Abstract - Groundnut Mosaic Virus infection is known to result in crop damage leading to financial loss to grower. Certain antibiotics are known to arrest the spread and severity of disease. Present paper attempts to see effect of four antibiotics on Groundnut Mosaic Virus (GMV). Out of four antibiotics tested viz, Chloramphanicol, Streptomycin, Vibramycin and Actinomycin D, three were found to be potent virus inhibitors while Vibramycin showed phytotoxic effect on the indicator host. Inhibition of the virus progressively increased with the increase in concentration of antibiotics.
Key Words - Arachis hypogaea L., Groundnut Mosaic Virus (GMV).

Introduction - Groundnut (Arachis hypogaea L.) is an economically important and widely cultivated crop. It is one of the most common oil seed and food crops in India. Many pathogenic organisms are reported to infect groundnut. The mosaic disease of groundnut is known is show different symptom expressions i,e, Chlorotic spots, mosaic, chlorosis,shortening of internodes and rosette. Review of literature reveals that certain antibiotics are known to inhibit the plant viruses. Lockhart and Semancik (1968) found that Actinomycin-D reduced the yield of Cowpea yellow mosaic virus when applied soon after inoculation in etiolated cowpea hypocotyls, but the inhibitory effect gone down with time after inoculation[3]. Maduewesi and Hagedorn (1986) observed that the multiplication of Wisconsin Pea Streak virus in inoculated leaf disks was completely inhibited by Actidione at 10 and 20 ppm.andreduced by Streptomycin at 50,100 and 200 ppm[4]. Kamel et al; (1982) used Chloramphanicol and Vibramycin to control the Tobacco mosaic virus disease. These antibiotics inhibited TMV infectivity in tobacco to some extent in green house tests[2]. Natsuaki et al; (1982) studied that when Myroridin-K was mixed with tobacco mosaic virus inoculum, it markedly inhibited the numbers of TMV induced local lesions on Chenopodium amaranticolor, Nicotiana glutinosa and Datura Stramonium[5]. Hayati and Varma (1985) observed that foliar application of 0.2% Validornycin-A suppressed tomato leaf curl virus symptoms in tomato and significantly increased yields[1].

Material and Methods -Four antibioticsviz; Actinomycin - D. Chloramphanicol, Streptomycin and Vibramycin were selected to study their effect on the infectivity of virus in vitro. Stock solutions of all the four antibiotics were prepared by dissolving them in distilled water. Different concentration grades viz, 10, 50, 100, 500 and 1000 ppm.were prepared by adding required amount of distilled water. The standard inoculum was mixed with each of the dilution of chemicals in 1:1 ratio. These solutions were allowed to incubate for 30 minutes at room temperature and then applied on indicator host. Corresponding controls were also maintained. Percentage inhibition was calculated by the formula as given under

$$\text{Percentage Inhibition} = 100 - \frac{\text{No. of lesions produced by Inoculum containing inhibitor}}{\text{No. of lesions produced by control Inoculum}} \times 100$$

Results and Discussion - Results are presented in Table-1. Out of the four antibiotics tested, except Vibramycin all the three acted as potent inhibitors for the Groundnut Mosaic Virus (GMV) Vibramycin was found to be phytotoxic at all concentrations. Maximum inhibition percentage was obtained with Actinomycin-D. It gave 100% inhibition at 500 and 1000 ppm. concentration. Streptomycin also showed 100% inhibition at 1000 ppm. While chloramphenicol inhibited the virus by 64.04% at 1000 ppm. At 10 ppm concentration Chloramphanicol, Streptomycin & Actiomycin-D gave 27.12%, 47.65% & 58.66% inhibition respectively. Inhibition of the virus progressively increased with the increase in concentration of antibiotics. These result are similar to those of yadav (1972)[7] and Singh (1986)[6].

It is concluded from the above experiment in vitro that antibiotics could be used to give direct protection to the crop against virus infection.

Table-1 (See in next page)

References :-

1. Hayati, J. and Varma, J.P. (1985) : Effect of some chemicals on tomato leaf curl virus infection of tomato. Indian Journal of Virology ; 1(2) : 152 - 156.
2. Kamel, A.S; EL - Mihi M.M; EL - Masry, M.A. and E.L-Gamal, A.S. (1982) :Antibiotics in the control of tobacco mosaic virus disease. Egyptian Journal of Phyto-pathology ;14(112): 129- 138

* **Principal, AnandVihar College for Women, Bhopal (M.P.) INDIA**

3. Lockhart, B.E.L. and Semancik, J.S. (1968): Inhibition of the multiplication of a plant virus by Actinomycin–D. Virology: 36: 504 -506.
4. Maduewesi, J.N.C. and Hagedorn, D.J. (1966);Theeffect of two antibiotics on the multiplication of pea streak virus. Jl. W. Afr.Sci . Ass; 11 (1 - 2): 73 - 76.
5. Natsuaki, J, Okuda, S; Kumara, J. and Teranaka, M. (1982): Inhibitory effect of Myroridin-K on the infectivity of plant virus. Bulletin of the College of Agriculture, UtSunomiaUniversity from Biological Abstracts .75, 67480.
6. Singh, R. (1986): Studies on Carnation (Dianth-uscaryophyllus) mottle virus in India. Ph.D. Thesis, Agra University, Agra.
7. Yadav, J.S. (1972): Studies on Sterility virus of black gram (Phaseolusmungo L.) Ph.D. Thesis, Agra University, Agra.

Table-1 Effect of antibiotics on the infectivity of groundnut mosaic virus in vitro

Name of antibiotics	Concentration of antibiotics in ppm.	Number of lesions per 20 leaves		% Inhibition
		Control	Treated	
Chloramphanicol	10	177	129	27.12
	50	173	111	35.84
	100	175	93	46.86
	500	174	70	59.77
	1000	178	64	64.04
Streptomycin	10	170	89	47.65
	50	175	66	62.29
	100	181	41	77.35
	500	179	20	88.83
	1000	177	Nil	100.00
Actinomycin - D	10	179	74	58.66
	50	181	50	72.38
	100	179	27	84.92
	500	180	Nil	100.00
	1000	182	Nil	100.00
Vibramycin	10	Phytotoxic effect		
	50	,,		
	100	,,		
	500	,,		
	1000	,,		

****

आध्यात्मिक प्रश्नों के समाधान में क्वाण्टम यांत्रिकी का उपयोग

डॉ. आर.के. गुप्ता *

शोध सारांश – क्वाण्टम यांत्रिकी का प्रयोग आध्यात्मिक अवधारणों को वैज्ञानिक आधार प्रदान करने के लिए किया जा सकता है। क्वाण्टम यांत्रिकी में द्वैतवाद का प्रयोग, इसे अध्यात्म से जोड़ने हेतु सेतु का कार्य करता है। विचार एवं इसके समाधान के लिए संभावित उपचार इसे तरंग अवधारणा से जोड़ती है। 'उद्देश्य, समझ, निर्णय' एवं 'स्नेह, विवेक, परिणाम' जैसे आध्यात्मिक प्रश्नो का क्वाण्टम यांत्रिकी के विविक्त स्तरो के सिद्धान्त के उपयोग से इसे वैज्ञानिक संवल प्रदान होता है। प्रस्तुत लेख का उद्देश्य अध्यात्म एवं क्वाण्टम यांत्रिकी में समरूपता प्रदर्शित करना है।

संकेताक्षर :– अध्यात्म , क्वाण्टम यांत्रिकी , विविक्त स्तर, तरंग , सीमा शर्त।

प्रस्तावना – विज्ञान जगत में एक धारणा दिनों–दिन प्रबल होती जा रही है कि आध्यात्मिक प्रश्नों का वैज्ञानिक समाधान प्रस्तुत किया जावे। आधुनिक भौतिक विज्ञान की एक शाखा क्वाण्टम यांत्रिकी का उपयोग इस हेतु दिनों–दिन बढ़ता जा रहा है। क्वाण्टम यांत्रिकी का सीधा सम्बन्ध आध्यात्मिक जगत से जोड़ना समय की आवश्यकता है।

भौतिक जगत में द्वैतवाद – आधुनिक भौतिकी में इलेक्ट्रान की खोज के साथ कण–यांत्रिकी की शुरूआत हुई। कण, निश्चित स्थान घेरनेवाला आकृतिविहीन पिण्ड है। इलेक्ट्रान व्यतिकरण चित्र की भॉति प्रकीर्णित होता है। इलेक्ट्रान क्रिस्टल पर, किनारो पर, झिर्रियो पर, विवर्तित होता है। ये सभी उदाहरण इलेक्ट्रान जिसे हम निश्चित स्थान घेरने वाला पिण्ड मानते है, इलेक्ट्रान के तरंग व्यवहार की भॉति यह परावर्तित भी होता है। इलेक्ट्रान के कण एवं तरंग दोनों व्यवहार के कारण भौतिक जगत में द्वैतवाद का जन्म हुआ।

इलेक्ट्रान के तरंग व्यवहार के कारण हम यह नहीं कह सकते कि इलेक्ट्रान एक निश्चित स्थान पर है, इससे प्रायिकता वितरण धारणा का जन्म हुआ। प्रायिकता वितरण एवं कण का सम्बंध स्थापित होने पर क्वाण्टम यांत्रिकी के सिद्धान्तों का उपयोग संभव हो सका, इससे सटीक संभावना व्यक्त की जा सकती है। क्वाण्टम यांत्रिकी कण के पाये जाने के बारे में केवल संभावना व्यक्त कर सकती है, निश्चितता से नहीं कह सकती। यह अभी तक एक पहेली ही है कि कण क्यों और कैसे तरंग की भॉति व्यवहार करता है।

क्वाण्टम यांत्रिकी का उपयोग आध्यात्मिक प्रश्नो के समाधान में कैसे– प्रथम तरीका – मान लीजिए कि हमारे मन में एक विचार आया कि हमे कुछ अलग करना चाहिए ऐसा विचार आते ही हम संभावित उपचारो के बारे में विचार शुरू कर देंगे। ऐसा सोचना हमारे विवेक पर निर्भर करता है , नए–नए विचार नई–नई सम्भावना। क्वाण्टम यांत्रिकी की तरंग अवधारण एवं उससे जुड़ी संभावना गणित ऐसे संभावित उपचारो की उपादेयता के संदर्भ में ठोस हल प्रस्तुत करने लगते है। इस तरह तरंग एवं विचारो मे अनुरूपता है। इसी प्रकार भौतिक अवधारणा एक प्रकार का विचार होता है, न कि पहले से पूर्ण निष्कर्ष।

द्वितीय तरीका – 'उद्देश्य, समझ (बुद्धि , ज्ञान), निर्णय' क्वाण्टम यांत्रिकी द्वारा आध्यात्मिक प्रश्नों के समाधान के लिए द्वितीय तरीका हो सकता है। आध्यात्मिक जगत में से किसी एक प्रश्न को चुनना होगा, प्रश्न ऐसा होना चाहिए , जो कि निश्चित हो। निश्चितता यानि कि सीमा शर्तो के द्वारा उसे बांधा जा सकता है। सीमा शर्तो के साथ भौतिकी एवं गणितीय सिद्धान्तों का उपयोग करना शुरू हो जाता है। बुद्धि, विवेक के द्वारा प्रश्न के समाधान के लिए विभिन्न विकल्पो, संभावनाओं पर विचार करते है। संभावना, प्रायिकता के सिद्धान्तों का उपयोग कर निष्कर्ष प्राप्त करने का प्रयास करेगें। प्राप्त विभिन्न निष्कर्षो में से उपयुक्त निष्कर्ष पर विचार कर निर्णय पर पहुचेगें।

द्वितीय तरीका – प्रकृति एवं अध्यात्म में उत्पादक स्तर देखने को मिलते है। इन स्तरो की उत्पादकता गुणक की भॉति व्यवहार करती है। ये उत्पादक स्तर एक दूसरे से पृथक–पृथक , भिन्न होते है। परमाणुओं में इलेक्ट्रानो, प्रोट्रानो के मध्य पृथक–पृथक भिन्न स्तरो का समूह पाया जाता है। इस प्रकार प्रकृति एवं अध्यात्म के उत्पादक स्तर, क्वाण्टम यांत्रिकी में प्रतिपादित विविक्त स्तरो के समान है। एक उदाहरण के द्वारा इस समरूपता को समझा जा सकता है। अध्यात्म जगत में स्नेह (प्रेम, प्यार) का महत्वपूर्ण स्थान है। स्नेह को विवेक के साथ जोड़ दिया जाएँ तो विवेक युक्त स्नेह हमेशा सारगर्भित परिणाम देता है। स्नेह , विवेक, परिणाम तीनो के विविक्त(पृथक–पृथक) स्तर है। विविक्त स्तरों के विचार के साथ क्वाण्टम यांत्रिकी के सिद्धान्तो का उपयोग शुरू हो सकता है।

निष्कर्ष – आध्यात्मिक जगत में विचार एवं स्नेह का महत्वपूर्ण स्थान है विचारो के आते ही संभावित उपचार सामने आते है। संभावित उपचारों पर विवेक का इस्तेमाल करने पर संभावित समाधान आते है। संभावना से संदर्भित भौतिकी एवं गणितीय प्रावधानो का इस्तेमाल करने पर ऐसे प्रश्नो का वैज्ञानिक समाधान हो सकता है।

उत्पादकता, प्रकृति एवं अध्यात्म का महत्वपूर्ण पैरामीटर है। उत्पादकता के पृथक–पृथक स्तर होते है, जिनमें गुणक, गुणधर्म पाया जाता है। यह क्वाण्टम यांत्रिकी के विविक्त स्तर , सिद्धान्त के समरूप है। स्नेह को विवेक के साथ प्रयुक्त करने पर सारगर्भित परिणाम प्राप्त होता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. S. Malin Nature Loves to Hide, Oxford, 2001.
2. Satya Prakash , Advance Quantum mechanics.
3. J.B Rajan , Atomic Physics.

* सहायक प्राध्यापक (भौतिकशास्त्र) शासकीय कन्या महाविद्यालय, कटनी (म.प्र.) भारत

Development In Field of Optical Fibre Communication: An Analytical Consideration

Asad Ali khan * Dr. V.K. Sharma **

Abstract - This paper provides research and developments in the area of optical fibre communication. Optical fibre is used for transmit telephone signals, Internet communication, and cable television signals. Due to much lower attenuation and interference, optical fiber has large advantages over existing copper wire in long-distance and high-demand applications. The objective of optical fibre to provide a means of information interchanges between end users.

Introduction - Recently, optical fiber communication has revolutions the field of long, haul data communication by its immense information carrying capacity and long transmission losses as compared to its electrical counterpart the coaxial cable. Since the carrier frequency in optical fiber communication lies in the optical domain, bit rates in excess of 10 Gigabits / second (GBPS) can be supported with a single wavelength, which is equivalent to sending 150000 voice channels simultaneously through a single optical fiber. In this work we interested in long period grating (LPGs) having broad transmission spectra, which find applications in several in line fiber optic device.

Fiber-optic communication is a method of transmitting information from one place to another by sending pulses of light through an optical fiber. The light forms an electro-magnetic carrier wave that is modulated to carry information. First developed in the 1970s, fiber-optic communication systems have revolutionized the telecommunications industry and have played a major role in the advent of the Information Age. Because of its advantages over electrical transmission, optical fibers have largely replaced copper wire communications in core networks in the developed world. Optical fiber is used by many telecommunications companies to transmit telephone signals, Internet communication, and cable television signals. Researchers at Bell Labs have reached internet speeds of over 100 petabits per second using fiber-optic communication.[1]

Evolution Of Fiber Optics - In 1880 Alexander Graham Bell and his assistant Charles Sumner Tainter created a very early precursor to fiber-optic communications, the Photophone, at Bell's newly established Volta Laboratory in Washington, D.C. Bell considered it his most important invention. The device allowed for the transmission of sound on a beam of light. On June 3, 1880, Bell conducted the world's first wireless telephone transmission between two buildings, some 213 meters apart.[2] Due to its use of an atmospheric transmission medium, the Photophone would not prove practical until advances in laser and optical fiber technologies permitted the secure transport of light.[3] The Photophone's first practical use came in military communication systems many decades later.

In 1966 Charles K. Kao and George Hockham proposed optical fibers at STC Laboratories (STL) at Harlow, England, when they showed that the losses of 1000 dB/km in existing glass (compared to 5-10 dB/km in coaxial cable) was due to contaminants, which could potentially be removed.

The first wide area network fibre optic cable system in the world seems to have been installed by Rediffusion in Hastings, East Sussex, UK in 1978. The cables were placed in ducting throughout the town, and had over 1000 subscribers. They were used at that time for the transmission of television channels, not available because of local reception problems. The system is still in place, but disused.

The second generation of fiber-optic communication was developed for commercial use in the early 1980s, operated at 1.3 µm, and used In GaAsP semiconductor lasers. These early systems were initially limited by multi mode fiber dispersion, and in 1981 the single-mode fiber was revealed to greatly improve system performance By 1987, these systems were operating at bit rates of up to 1.7 Gb/s with repeater spacing up to 50 km.

Third-generation fiber-optic systems operated at 1.55 µm and had losses of about 0.2 dB/km.[5] This development was spurred by the discovery of Indium gallium arsenide and the development of the Indium Gallium Arsenide photodiode by Pearsall. Engineers overcame earlier difficulties with pulse-spreading at that wavelength using conventional In GaAsP semiconductor lasers. Scientists overcame this difficulty by using dispersion-shifted fibers designed to have minimal dispersion at 1.55 µm or by limiting the laser spectrum to a single longitudinal mode. These developments eventually allowed third-generation systems to operate commercially at 2.5 Gbit/s with repeater spacing in excess of 100 km.

The fourth generation of fiber-optic communication systems used optical amplification to reduce the need for repeaters and wavelength-division multiplexing to increase data capacity. These two improvements caused a revolution that resulted in the doubling of system capacity every 6 months starting in 1992 until a bit rate of 10 Tb/s was reached by 2001. In 2006 a bit-rate of 14 Tbit/s was reached over a single 160 km line using optical amplifiers.

* Teerthanker Mahaveer University, Moradabad (U.P.) INDIA
** Teerthanker Mahaveer University, Moradabad (U.P.) INDIA

The focus of development for the fifth generation of fiber-optic communications is on extending the wavelength range over which a WDM system can operate.[4] The conventional wavelength window, known as the C band, covers the wavelength range 1.53-1.57 µm, and *dry fiber* has a low-loss window promising an extension of that range to 1.30-1.65 µm. Other developments include the concept of "optical solitons, " pulses that preserve their shape by counteracting the effects of dispersion with the nonlinear effects of the fiber by using pulses of a specific shape.

Transmitting Light On A Fibre

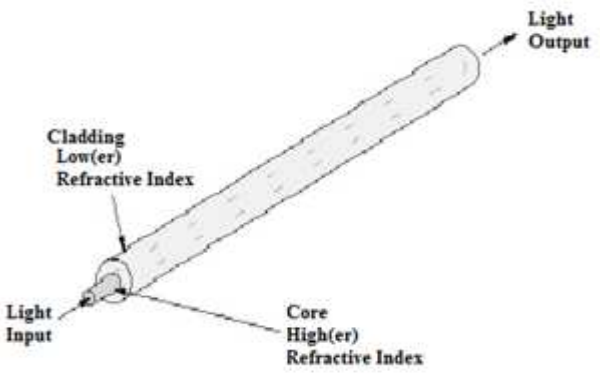

An optical fibre is a very thin strand of silica glass in geometry quite like a human hair. In reality it is a very narrow, very long glass cylinder with special characteristics. When light enters one end of the fibre it travels (confined within the fibre) until it leaves the fibre at the other end. As shown in Figure an optical fibre consists of two parts: the core and the cladding. The core is a narrow cylindrical strand of glass and the cladding is a tubular jacket surrounding it. The core has a (slightly) higher refractive index than the cladding. This means that the boundary (interface) between the core and the cladding acts as a perfect mirror. Light travelling along the core is confined by the mirror to stay within it - even when the fibre bends around a corner. When light is transmitted on a fibre, the most important consideration is "what kind of light?" The electromagnetic radiation that we call light exists at many wavelengths. These wavelengths go from invisible infrared through all the colours of the visible spectrum to invisible ultraviolet. Because of the attenuation characteristics of fibre, we are only interested in infrared "light" for communication applications. This light is usually invisible, since the wavelengths used are usually longer than the visible limit of around 750 nanometers (nm). If a short pulse of light from a source such as a laser or an LED is sent down a narrow fibre, it will be changed (degraded) by its passage down the fibre. It will emerge (depending on the distance) much weaker, lengthened in time ("smeared out"), and distorted in other ways. The reasons for this are as follows:

Attenuation - The pulse will be weaker because all glass absorbs light. More accurately, impurities in the glass can absorb light but the glass itself does not absorb light at the wavelengths of interest. In addition, variations in the uniformity of the glass cause scattering of the light. Both the rate of light absorption and the amount of scattering are dependent on the wavelength of the light and the characteristics of the particular glass. Most light loss in a modern fibre is caused by scattering. Typical attenuation characteristics of fibre for varying wavelengths of light are illustrated.

Maximum Power - There is a practical limit to the amount of power that can be sent on a fibre. This is about half a watt (in standard single-mode fibre) and is due to a number of non-linear effects that are caused by the intense electromagnetic field in the core when high power is present.

Polarisation - Conventional communication optical fibre is cylindrically symmetric but contains imperfections. Light travelling down such a fibre is changed in polarisation.

Application - Optical fiber is used by many telecommunications companies to transmit telephone signals, Internet communication, and cable television signals. Due to much lower attenuation and interference, optical fiber has large advantages over existing copper wire in long-distance and high-demand applications. However, infrastructure development within cities was relatively difficult and time-consuming, and fiber-optic systems were complex and expensive to install and operate. Due to these difficulties, fiber-optic communication systems have primarily been installed in long-distance applications, where they can be used to their full transmission capacity, offsetting the increased cost. Since 2000, the prices for fiber-optic communications have dropped considerably. The price for rolling out fiber to the home has currently become more cost-effective than that of rolling out a copper based network. Prices have dropped to $850 per subscriber in the US and lower in countries like The Netherlands, where digging costs are low and housing density is high.

Conclusion - The optical fibre communication has been discussed. The physics of its different parts has also been discussed. It has been concluded that the optical communication is totally based on the optical This acts as a breakthrough for the technological revolution in the optical fibre communication network by the increase of information carrying capacity and high speed devices.

References :-

1. Bell Labs breaks optical transmission record,100 Petabil Petabil persecond kilometre barrier phys.org,29 september 2009.
2. Mary Kay Carson (2007). *Alexander Graham Bell: Giving Voice To The World*. Sterling Biographies. New York: Sterling Publishing. pp. 76–78.
3. Alexander Graham Bell (October 1880). "On the Production and Reproduction of Sound by Light". *American Journal of Science, Third Series* **XX** (118): 305–324. also published as "Selenium and the Photophone" in *Nature*, September 1880.
4. Chi, S. & Dung, J. C. (1998), 'Gain flattened for WDM system by using fiber Bragg gratings in EDFA', *Proc. Optical Fiber Communication Conference p.* 135. Paper : WG2.
5. Auguste, J.L., Jindal, R. Blondy, J. M. Clapeau, M., Marcou, J., Dussardier, B., Mononom, G., Ostrtowsky, D.B., Pal, B.P. & Thyagarajan, K. (2000), '-1800 ps/ (nm. km) chromatic dispersion at 1.55 µm in dual concentric core fiber', *Electronics Letters 36*, 1689-1681.

विद्यार्थियों के शैक्षिक उन्नयन हेतु सूचना प्रौद्योगिकी का योगदान

विनिता मेहता *

प्रस्तावना – वर्तमान में विज्ञान के कारण ज्ञान की गति बहुत तेज हो रही है। ज्ञान भण्डार विभिन्न क्षेत्रों में इतनी गति से बढ़ रहा है कि शिक्षक व शिक्षार्थी उसे प्राप्त करने की चुनौती सदैव झेलता रहता है। अध्यापक प्रशिक्षण को अधिक प्रभावी एवं उपयोगी बनाने में शिक्षा का विकास, विस्तार एवं इसकी गुणवत्ता सुधारने में सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी की भूमिका बहुत महत्वपूर्ण है। इसका सही व संतुलित उपयोग अध्यापक शिक्षा के क्षेत्र में क्रांति ला सकता है। सूचना प्रौद्योगिकी शैक्षिक प्रक्रियाओं में विद्यार्थियों, शिक्षकों एवं अभिभावकों के सिखने की विषय-वस्तु तथा प्रविधि में गति एवं गुणवत्ता लाने की उपयुक्त तकनीक है। शिक्षण अधिगम प्रक्रिया में सूचना प्रौद्योगिकी के प्रयोग से अध्यापक व छात्र दोनों ही विषयों के परे मूल अवधारणाओं को तलाश करते हैं। सूचना एवं संचार प्रौद्योगिकी ने सेवारत अप्रशिक्षित व प्रशिक्षित अध्यापकों को उनके कार्य स्थल पर प्रशिक्षण देने का अच्छा विकल्प प्रस्तुत किया है। इसके द्वारा अध्यापक दूरस्थ काल्पनिक कक्षाओं में शिक्षण अधिगम के सजीव अनुभव प्राप्त कर सकते है। अध्यापक शिक्षा को अंत:क्रियात्मक बनाने के लिये सूचना प्रौद्योगिकी का उपयोग वर्तमान समय की आवश्यकता है।

सूचना प्रौद्योगिकी का अभिप्राय ऐसी सुविधा से है, जिसके उपयोग से विभिन्न क्षेत्रों की अनेकानेक सूचनाओं और जानकारियों का अलग-अलग ढंग से संग्रह, आदान-प्रदान, विवरण, प्रदर्शन, आकलन आदि सम्भव है। 21वीं सदी को यदि सूचना प्रौद्योगिकी की सदी कहा जाए तो कोई अतिश्योक्ति नहीं होगी। आज के समय ई-बिजनेस, ई-गवर्नेंस जिस प्रकार आम प्रचलन में है, वैसे ही ई-एज्युकेशन पर भी विशेष बल दिया जा रहा है। सूचना प्रौद्योगिकी हेतु कम्प्यूटर और कम्प्यूटरीकरण की देशव्यापी व्यापकता टेलिकम्यूनिकेशन, टेलिफोन एक्सचेंज, टेलीविजन प्रसारण और अंतरिक्ष में घूमते हुए संचार उपग्रहों के एक विस्तृत नेटवर्क की आवश्यकता है। सूचना तकनीकि को मल्टीमिडिया पैकेज, इंटरनेट, ई-मेल आदि ने बहुत व्यापक और बहुमूल्य बना दिया है। हम अभी तक विभिन्न क्षेत्रों में सूचना प्रौद्योगिकी का पर्याप्त मात्रा में प्रयोग कर रहे हैं, पर अध्यापक शिक्षा में इसके प्रयोग अपेक्षाक्रत सीमित है। शिक्षाविद् वर्तमान में अध्यापक शिक्षा में इसका अधिकाधिक प्रयोग महसूस कर रहे है। वर्तमान में इस सच्चाई को व्यावहारिक बनाने की आवश्यकता है।

सूचना प्रौद्योगिकी की तकनीक निम्न है –

कम्प्यूटर – कम्प्यूटर समस्त आधुनिक संचार प्रणालियों की आत्मा है। सही मायने में कम्प्यूटर द्वारा ही सूचना प्रौद्योगिकी क्षेत्र में नई क्रांति आई है। आज हर क्षेत्र में कम्प्यूटर की अनिवार्यता एवं गुणवत्ता प्रकाश में आ रही है, इसी अनिवार्यता को देखते हुए व्यापार, चिकित्सा, फिल्म, रोजगार, ज्योतिष की भांति शिक्षा का क्षेत्र भी इस तकनीक से अछूता नहीं रहा है। अब शिक्षा में सरकार द्वारा विद्यालय एवं विश्वविद्यालय ने सभी डिग्री स्तरों पर कम्प्यूटर विषय को अनिवार्य कर दिया है। पत्राचार एवं खुला विश्वविद्यालय ने भी कम्प्यूटर विषय सम्मिलित किया है। पुस्तकें पढने एवं एकत्र करने हेतु अध्यापक एवं विद्यार्थियों हेतु भी कम्प्यूटर बेहद सहायक है। इलेक्ट्रोनिक पुस्तक के माध्यम से अपनी पसन्द एवं चाही गयी पुस्तक को कम्प्यूटर स्क्रीन पर पढ सकते है। आज कम्प्यूटर विद्यार्थी हेतु एक डिजिटल डायरी के रूप में ही नहीं बल्कि कैलक्यूलेटर घडी, कैलेंडर तथा खेल के रूप में भी सहायक है। एक शिक्षक कक्षा में कम्प्यूटर का प्रयोग आसानी से कर सकता है एवं वांछित विषय सामग्री विद्यार्थियों को प्रदान कर सकता है। अध्यापक अपनी शिक्षण सामग्री (Notes) कम्प्यूटर के माध्यम से सुरक्षित रख सकता है एवं आवश्यकता पड़ने पर उनके प्रिंट निकालकर विद्यार्थियों को उपलब्ध कराये जा सकते हैं। इसके अतिरिक्त कोई भी गणितीय एवं सांख्यिकीय गणना कम्प्यूटर के माध्यम से अतिशीघ्र सम्पन्न की जा सकती है। विद्यालय के आवश्यक रिकार्ड्स भी कम्प्यूटर में फीड कर सुरक्षित रखे जा सकते हैं जिनसे फाइल बनाने एवं उनके रख-रखाव की समस्या से छुटकारा पाया जा सकता है।

ई-मेल – ई-मेल अर्थात इलैक्ट्रोनिक मेल। यह एक बहुत ही तीव्र प्रणाली है जिसके द्वारा सन्देश एक स्थान से दूसरे स्थान पर अतिशीघ्र पहुंच जाता है जिस प्रकार सामान्य सन्देश/जानकारी/पत्र आदि डाक द्वारा अन्य स्थान पर पहुंचाया जाता है ठीक उसी प्रकार यह पत्र एवं सन्देश कम्प्यूटर द्वारा भेजने एवं जानकारी आदान-प्रदान करना ई-मेल कहलाता है। विद्यालय में शिक्षण हेतु अध्यापक ई-मेल का प्रयोग कर विद्यार्थियों को नवीनतम जानकारी उपलब्ध करा सकते है। अध्यापक कक्षा में ई-मेल भेजकर नवीनतम आंकडे विद्यार्थियों को बता सकते है। इसके अतिरिक्त स्वयं हमारे देश, कला, संस्कृति, चिकित्सा, व्यापार की आवश्यक जानकारी ई-मेल द्वारा भेजी भी जा सकती है।

इंटरनेट – सूचना प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में सर्वाधिक शक्तिशाली तकनीक के रूप में इंटरनेट महत्वपूर्ण है। इंटरनेट सूचनाओं के कम्प्यूटरीकृत आदान-प्रदान का माध्यम तो है ही किन्तु शिक्षण में भी महत्व रखता है। वर्तमान समय में विद्यार्थियों को नवीनतम सूचना प्रदान करने एवं दूर बैठे विशेषज्ञों की राय प्राप्त कर विषय का ज्ञान प्रदान करने में इंटरनेट बहुत सहायक है। इंटरनेट द्वारा विषय के विशेषज्ञ जो हम से दूर स्थान पर हो या दूर देश में हो तो भी हम वांछित विषय पर नेट चैटिंग (Net Chatting) के माध्यम से जटिल विषयों पर विचार-विमर्श कर विद्यार्थियों को भी सुना सकते है,महत्वपूर्ण विषयों पर राय ले सकते है, जिससे विद्यार्थियों की अभिव्यक्ति क्षमता, तर्क शक्ति,

* प्राध्यापक (रसायन विज्ञान) मेवाड गर्ल्स टीचर्स ट्रेनिंग कॉलेज, गांधी नगर, चित्तौडगढ़ (राज.) भारत

विश्लेषण क्षमता एवं सुनकर ग्रहण करने की क्षमता का स्वत: विकास हो सकता है।

आवश्यक जानकारी भी सम्बंधित वैबसाईट के माध्यम से ले सकते है। देश विदेश के विश्वविद्यालयों में चलने वाले विभिन्न पाठ्यक्रमों की जानकारी प्राप्त कर विद्यार्थी भविष्य संवार सकते है। सीनियर सैकेण्डरी, स्नातक या अधिस्नातक शिक्षा के बाद कैरियर को नई दिशा देने में भी इंटरनेट विद्यार्थियों का विशेष सहायक बन सकता है।

विद्यार्थी घर बैठे ही विभिन्न विश्वविद्यालयों एवं संस्थान के नामांकन प्रक्रिया, प्रवेश प्रक्रिया, परीक्षा परिणाम एवं वहाँ चल रहे शोध कार्यो से सम्बंधित जानकारी प्राप्त कर सकते है। शिक्षा-जगत में अब धीरे-धीरे एक नई अवधारणा का विकास हो रहा है- ई-गुरु अर्थात इलैक्ट्रोनिक टीचर जो कि आज विद्यार्थियों में अत्यन्त लोकप्रिय हो गया है। इंटरनेट के माध्यम से संबंधित वेबसाईट का अध्ययन कर नवीनतम जानकारी प्राप्त की जा सकती है।

ई-कॉमर्स् – सूचना प्रौद्योगिकी के प्रयोग एवं इंटरनेट के तीव्र विस्तार के कारण मानव जीवन की विभिन्न गतिविधियों में क्रांतिकारी परिवर्तन आये हैं जिनका प्रभाव वाणिज्य एवं व्यवसाय पर भी पड़ा है। ई-कॉमर्स के प्रयोग के फलस्वरूप एक नई अर्थव्यवस्था का सूत्रपात हुआ है।

सूचना प्रौद्योगिकी सार्वभौमिकता, इंटरनेट एक्सट्रा नेट्, इंटरनेट को संयुक्त रूप से प्रयोग में लाकर ई-कॉमर्स ने आर्थिक जगत को एक नई दिशा प्रदान की है जिसके कारण आज वैश्वीकरण (Globalization) बढ़ रहा है तथा भौगोलिक सीमाएं पार कर व्यापार हेतु नये मापदण्ड स्थापित हो रहे है इस परिपेक्ष्य में ई-कॉमर्स की महत्ता बढ गई है। अध्यापक विद्यालय में वाणिज्य एवं अर्थशास्त्र विषय समझाने हेतु ई-कॉमर्स से बाजार व्यवस्था के निर्धारण्, बैंकिंग व्यवस्था आदि को स्पष्ट करने हेतु प्रयोग कर सकता है।

ब्रॉड बैंड – सूचनाओं के संचारण की आधुनिक तकनीक जिसमें मात्र एक केबल या तार के जरिये कई चैनल, इंटरनेट वर्क, कनेक्शन लेकर एक साथ कई वेबसाईटों का लाभ उठाया जा सकता है। इसके माध्यम से ज्ञान का संचार तीव्रता के साथ दो-तरफा भी हो सकता है अर्थात डिजिटल डाटा भेजना एवं प्राप्त करना दोनों संभव है। इस सुविधा से विद्यालय की सुरक्षा का भी खतरा कम हो गया है। विद्यालय के महत्वपूर्ण रिकार्ड, फाईल, परीक्षा पत्र को लीक होने से बचाया जा सकता है। ऑफिस में रखे कम्प्यूटर या टी.वी. पर सम्पूर्ण विद्यालय के कक्षा-कक्ष को देखा जा सकता है कि किस कक्षा में क्या क्रिया चल रही है ? कैसा शिक्षण कार्य हो रहा है ? विद्यालय की हर गतिविधि को नियंत्रित कर अनुशासन बनाये रखा जा सकता है। विद्यालय की आवश्यक मीटिंग, विचार-विमर्श भी एक ही स्थान पर बैठे-बैठे सम्पन्न किये जा सकते है क्योंकि इसमें दो तरफा अंत:क्रिया करना सम्भव हैं।

इंटरनेट पर उपलब्ध जानकारी भी ब्रॉडबैंड के माध्यम से शीघ्रता से प्राप्त की जा सकती है। इस प्रकार इंटरनेट की अपेक्षा या अन्य सूचना साधनों की अपेक्षा ब्रॉडबैण्ड की संचार गति पचास गुना अधिक है।

सूचना प्रौद्योगिकी की भविष्य में उपादेयता – अंत में सूचना के इस युग में सूचनाओं का कितना महत्व है, इसका अन्दाजा उपर्युक्त विवरण से हमें हो चुका है। क्योंकि जो कुछ 'मैनुअल' था अब 'ऑटोमेटिक' हो गया है, जो कुछ 'एनालोग' था वो अब 'डिजिटल हो गया है, जो कुछ पहले 'अकेला' था अब 'नेटवर्क' से जुड गया है। अमेरिका जैसे देश में 95 प्रतिशत सूचनाओं का सम्प्रेषण टेलिफोन एवं फैक्स लाईनों द्वारा होता है। वहॉ लगभग एक तिहाई अर्थव्यवस्था जो पिछले कुछ वर्षो में उभरी है, वह ई-कॉमर्स की देन है। सिर्फ अमेरिका ही नहीं विश्व के अनेक देशों में सूचना सम्प्रेषण कम्प्यूटर्स पर आधारित तंत्र पर ही टिका है। अपने दिमाग एवं दिमागी योग्यता से विश्व के सबसे धनी व्यक्ति माइक्रोसोफ्ट कम्पनी के मालिक एवं कम्प्यूटर क्रांति के जनक बिलगेट्स ने यह बखूबी सिद्ध कर दिया है कि ज्ञान व सूचना क्रांति की धारा ही आज हर क्षेत्र में मुख्य धारा बन चुकी है, इंटरनेट की ताकत जिसके हाथ लग जाएगी, वह पूरी दुनिया पर छा जाएगा।

इंटरनेट विश्वव्यापी कम्प्यूटर नेटवर्क है, जिसमें सूचनाओं का विशाल भंडार है, जिसे कम्प्यूटर पर उपलब्ध कराया जाता है। जिस व्यक्ति के पास इंटरनेट कनेक्शन होगा, वह किसी भी विषय पर तुरंत सूचना प्राप्त कर सकेगा। विभिन्न विषयों के विशेषज्ञों से जानकारी हासिल कर सकता है, उनके साथ पत्राचार कर सकता है और विश्व के किसी भी भाग में होने वाली घटना के बारे में सूचना, मात्र कुछ बटन दबाकर ही प्राप्त कर सकता है। वास्तव में सूचना प्रौद्योगिकी के बिना विद्यार्थियों का शैक्षिक उन्नयन असंभव है।

****

Internet Addiction In Relation To Personality Trait Among Adolescents

Priyanka Singh * Dr. Chandra Kumari **

Abstract -The purpose of this study was to identify addict and non addict adolescents and association (if any) with personality traits of adolescents from Jaipur city. Descriptive research design has been used for the present study. Sample size comprised of 432 adolescents (248 boys and 184 girls). Data was collected administering tools- internet addiction, internet usage pattern, and personality traits. Gender difference was found in internet addiction tendency among boys and girls. Boys showed higher internet addiction tendency than girls. Significant difference was found in personality trait of addict and non addict adolescents. It was found that addict adolescents were more introvert. Internet addiction has been found to be associated with a variety of psychological and physical health problems and may impact the developing adolescent in a variety of domains. Internet addiction should be considered as a serious public health problem among the adolescents. So, it is necessary for adolescents and young adults to be educated for the proper use of the internet in order to prevent from internet addiction and associated disorders whether physical or mental.
Keywords - internet addiction, internet usage pattern, personality trait.

Introduction - Adolescence is a crucial stage in human life span. They experience most challenging and complex transition during this stage. An integration of physical, cognitive and psychosocial growth shows a period of symbolic change. Significant developmental tasks of adolescents are:- a) exploration of personal identity and individualization b) exploration of relationship with peers c) development of self confidence and self esteem d) achievement of emotional independence from parents and other adults e) achievement of social responsible behaviour f) accepting one's physique and use one's body effectively g) achievement of masculine and feminine social roles h) preparing themselves for economic career and marriage i) development of an ideology. Adolescents are living in a media saturated society and they are dealing with dangerous issues like drugs, violence and internet addiction.

Today, computers are a familiar component in everyday lives of adolescents with wide range of learning and entertainment means. Computer usage among adolescents has grown exponentially. Adolescents are more susceptible to harmful influence of various addictive agents such as drugs or perhaps excessive internet use as they are in the stage of their personality development and psychological maturation. Moreover, adolescents usually adapt information and communication technologies very early and engage themselves actively in adopting the internet. Nowadays, internet represents adolescents. This could be likely because teenagers are easily fascinated to this medium. Adolescents are the digital genesis who is living in "media and technology saturated environment". They use internet commonly for their daily activities. Many adolescents prefer using internet in comparison to the other media like mobile and T.V. Usually teenager's internet use rate are much higher than people in their thirties. Adolescents are randomly exposed to the internet though they do not have the capability to evaluate its positive and negative aspects.

The internet being a source of communication and information has a significant role in academic and social life of students. Internet has become a new play ground for children to communicate and attain information. Familiar online activities used by adolescents include completing school work, reading and writing emails, engaging in real time chatting and playing online games. Adolescents use a range of internet applications such as bulletin boards, chat rooms, blogs and instant messaging to bond with their peers and to discover issues such as identity, partner selection and sexuality. It can be said that about 94.8 per cent teenagers use the internet and believe cyber space is a real world rather than virtual space. Factors like desires to communicate freely and easily, to create an identity without doubt and to develop social relationships raises adolescent's internet usage tendency. These factors escalate adolescents' internet use gradually and bring some problems with it. Possibly the main problem is "internet addiction". Excessive internet use is linked with problematic internet use (PIU) which creates psychological, social and academic problems in lives of adolescents. In the scientific literature, numerous terms have been proposed to explain pathological internet use, cyberspace addiction, internet addiction disorder, online addiction and internet addiction.

* Research Scholar (Home Hcience) Banasthali Vidyapith (Raj.) INDIA
** Associate Prof. (Home Science) Banasthali Vidyapith (Raj.) INDIA

Internet addiction is characterized as the failure of an individual in controlling their internet usage that causes distress and functional impairment in day to day life. It is usually characterized by anxiety, psychomotor agitation, withdrawal, depression, craving, substance expression, loss of control, hostility, impairment of function, reduced decision making ability, preoccupation and constant online surfing in spite of negative effects on psychological and social wellbeing. Internet addiction is marked in earlier ages between 12-18 years adolescents as they are classified as greatest risk group. Online communication applications like chatting and instant messaging bear a higher possibility of addiction than any other internet application. Instant messenger is the most popular internet activity among adolescents. Internet provides wide variety of information on topics building educational links and enhancing communication. However, excessive internet use is correlated with several psychological and social variables such as loneliness, anxiety, depression, lower self esteem, decline in the size of social circle and family function. Adolescents displace "real interactions" with family and friends due to internet use, thus substitute weak ties for strong ones.

The presence of computers with internet access increases the chances of developing pathological internet use among adolescents, which is related to internet addiction. The internet is nowadays more available in homes, internet cafes, schools and libraries; access is further aided with the rising affordability of home computers over the last decade. Most schools around the globe started having internet connections in their computer labs as they believe it to be an efficient educational tool. More and more adolescents get exposed to the internet and they slowly become addicted to it. The location of internet use varies in every adolescent. Some adolescents access the internet at home, while others choose school and internet café for internet access. Moreover, the location for accessing the internet has association with the development of internet addiction. Places where internet access is unrestricted with no guardian or parental control provides an opportunity for adolescents to remain on the internet.

Usage pattern of internet differs among male and female. Male uses the internet primarily for entertainment and leisure purpose whereas women use it particularly for social communication and educational benefit. Male students are normally considered more competent in computer games and programming in comparison to females. This could be because males are more encouraged from family members and friends and females are discouraged from using modern technologies. It is also predicted that the rate of internet addiction disorder is growing among females. However, this gender gap is expected to decline over the years because technology is easily accessible to all channels.

Internet use is beneficial if used in normal level, however excessive internet use creates many problems which interferes the daily life. Internet addict adolescents show more personality and emotional problems. Personality comprises those attributes of a person which consists of fixed thoughts, emotions, and behavioural patterns. Personality traits and psychological disorders play a crucial role in promoting internet addiction. Extraversion personality trait arbitrates the relationship between internet use and emotions. Extroverts are in benefit due to frequent internet use because adolescent shows less negative effects, not as much of loneliness and better self-esteem. Introvert adolescents show contrasting pattern of high negative effects, greater loneliness and lower self-esteem due to frequent internet use. Extraverts generally use internet for interpersonal communication motive.

The internet is most interesting and difficult research area than other media because it is a complex virtual world that most teenagers are involving. It is a world behind a small screen on which developmental issue come out in new ways, offering new thought, feelings and behaviours of adolescents. Hence, keeping in view the importance of the subject the present research paper entitled as **"Internet Addiction in Relation to Personality Trait among Adolescents"** has been undertaken with the following specific objectives-

Objectives -

- To identify addict and non addict adolescents
- To study the internet usage pattern of addict and non addict adolescents.
- To study the comparison between personality traits among addict and non addict adolescents
- To assess the degree of relationship (if any) between internet addiction and personality traits

Methods - In Jaipur, adolescent studying in 11th and 12th class in Mansarovar area were considered as population for the study. A list of schools (11th & 12th Class) was collected from the Shiksha Sankul office respectively. From the list of schools, 10 schools were selected randomly for the present study through chitfold method. Out of total strength, six hundred adolescents were selected randomly for further study. After seeking prior permission from the principals of schools, internet addiction test alongwith general information blank was distributed. On the basis of information a new list was prepared related to children who access internet in all the three places i.e., home, cybercafé and school. Out of these 600 students, final sample size comprised of 432 students and 168 students were dropped from the study.

The internet addiction tendency scale was administered on 432 respondents. Based on the assessment of internet addiction test, the subjects with the score of e" 47 were defined as the addict group (having significant problems with internet use) and those with the score d"46 as the non addict group. Hence, final sample size comprised of 273 adolescents as non addict and 159 adolescents as addict group. Further, test related to personality trait were administered to those two groups (addict and non addict adolescents).

Instruments –

Internet Addiction Scale - The scale was developed by developed by Dr. Kimberly Young (1998). It measure degree

to which internet use affect daily routine, social life, productivity, sleeping pattern, and feelings.

In our study, we defined the subjects with the score of e" 43 as the addict group (having significant problems with internet use) and those with the score d"42 as the non addict group.

Internet Usage Pattern - This part contains questions related to general adolescents internet usage pattern, including the location of online activity, average weekly hours spent on-line, regular internet activities (i.e., information, searching, online games, downloading etc).

Kundu Introversion Extraversion Inventory - This inventory was developed by Prof. Ramanath Kundu. It measures introversion and extroversion dimensions of behaviour.

Results of the study – The findings of the study have been divided and discussed under the following subheads-

A. Identification of addict and non addict adolescents.
B. Internet usage pattern among addict and non addict adolescents.
C. Comparison of personality traits among addict and non addict adolescents

A. Identification of addict and non addict adolescents

Table 1: Frequency and percentage distribution of internet addiction among respondents (Table See in the last page)

Table 1 depicts the frequency and percentage distribution of adolescents' internet addiction tendency. It is evident from the above table that 47.17 per cent boys and 22.82 per cent girls were found to be internet addict. These adolescents have significant problems due to internet use. Their daily routine, social life, productivity, sleeping pattern and feelings towards other is affected by their internet usage. On the other side, 77.17 per cent girls and 52.82 per cent boys were found to be non addicts. If we compare addict boys and girls, the finding reveals that more percentage of boys were addict as compared to girls.

Table 2 - Gender wise mean, SD scores, t values and p-value of internet addiction tendency among adolescents (Table See in the last page)

Table 2 demonstrates mean scores, SD scores, t values and p values of addict and non addict adolescent boys and girls. The mean and SD scores of addict boys was higher (61.16±9.16) than addict girls (49.83±4.10) whereas the mean and SD scores of non addict boys (31.88±7.44) and girls (31.82±7.45) are almost equal. Calculated't' value of addict boys and girls is 10.71 which is significant at .01 level of confidence. It indicates that there is significant difference between boys and girls in internet addiction tendency. It may, therefore, be said that boys exhibit higher addiction tendency as compared to girls.

B. Internet usage pattern among addict and non addict adolescents.

Table 3: Frequency and percentage distribution of respondents (addict and non addict) on their internet usage pattern (Table See in the last page)

Time duration per week on accessing the internet can be seen from Table 3. Majority of addict adolescents (88.05 per cent) use internet for more than 10 hours/week. The reason that is nowadays adolescent boys and girls are living away from parental monitoring and also fewer classes so they have extensive freedom to explore risky activities that might lead to internet addiction. Adolescents using the internet regularly on a daily basis have higher levels of internet addiction. On the other side, majority (50.18 per cent) non addict boys spend 5-10 hours/week on internet. The reason could be exposure of non addict adolescents to internet for shorter duration due to various reasons such as no internet connectivity at home, residing at hostel with no internet provisions or low level of interest in internet activities. The table indicates that accessing internet is a daily-routine activity for many addict and non addict adolescents.

In location of internet use it is clear from percentage distribution that majority of addict (57.23 per cent) and non addict (67.76 per cent) adolescents reported having access to the internet at their home. The second preferred place for addict adolescents for internet access is cyber café. A minimum of addict (8.17 per cent) and non addict (8.42 per cent) adolescents access internet at their school. Across all of the above categories, internet users are significantly more likely to utilize primarily their own home and secondarily an internet café, in order to access the internet, as compared to the controls. It is of importance to note that both locations allow for adolescents to freely surf the internet, most likely without the pressures of parental control or authority. Commercial places like cyber cafes provide somewhat unrestricted internet access at a reasonable cost. Such places also function as a popular entertainment and socialization outlet for youngsters because they can gather and use the internet together (e.g., playing multi–user games). The odds for such internet access increase logarithmically from the lowest to highest internet use categories, exhibiting peak values among high internet users. Thus, it appears that these locations serve as the gateway for initiating and continuing internet use among adolescents.

The internet activities performed by addict and non addict adolescent boys and girls were almost similar. Table shows that chatting is the preferred internet activity among addict and non addict adolescents followed by information searching. Other internet activities of addict adolescents involves receiving/sending emails (79.87 per cent) followed by playing online games (78.61 per cent), checking news (62.26 per cent), downloading mp3 (52.2 per cent), downloading software (42.76 per cent) and online games (32.07 per cent). On the other hand, within the non addict group internet activities involve checking for news (74.72 per cent), receiving/ sending emails (65.2 per cent), playing online games (32.6 per cent), downloading software (23.8 per cent), downloading mp3 (20.14 per cent) and online games (11.72 per cent). Entertainment is the major motivating factor for high school students in using the internet, followed by information searching. However, surfing

with social/ entertainment motivation and gratification is positively correlated with internet addiction. Notably, students classified as addicted have higher motivation on social and entertainment and thus higher gratification than non addicted students.

Overall calculation showed that internet addict adolescents spent more time on the internet than non addict group. In addition, the location for internet use was common to both groups i.e. home as the preferred location as it allows them to freely surf the internet most likely without the pressures of parental control or authority. The purpose of internet activities was also same for both groups. The main purpose of internet use was chatting. It seems that interactive activities on the internet such as games, chatting and shopping are key factors that may influence addictive internet use. It can be assumed that particular interactive functions are conducive to the development of internet addiction.

C. Comparison of personality traits of addict and non addict adolescents

Table 4: Gender wise frequency and percentage distribution of addict and non addict adolescents on personality trait (Table See in the last page)

Table 4 shows gender wise frequency and percentage distribution of addict and non addict adolescents on personality traits. The overall analysis of the table reveals that majority of addict boys (47.86 per cent) and girls (45.23 per cent) were found to be introvert. Introvert adolescents are quiet, reflective person who prefers their own company, they does not enjoy large social events, does not crave excitement, and may be seen by some as distant and remote. They are socially inhibited and so find difficulty in expressing themselves. They feel that it is only via the internet that they can communicate effectively.

It was also found that 31.44 addict boys and girls and 35.53 per cent non addict boys and girls were found to be extravert (enthusiastic, talkative, assertive, and gregarious like to enjoy time spent with people). Twenty one per cent adolescents from addict group and 28.57 per cent adolescents from non addict group have ambivert personality trait. These adolescents lie in the middle of extraverts and introvert. They are slightly comfortable in social interaction but also enjoy spending time alone. Overall findings show that higher percentage of addict is introvert in comparison to non addict adolescents.

Table 5 - Mean, SD, t values and p-value of addict and non addict adolescents on personality trait (Table see in the last page)

Table 4 indicate mean scores, standard deviation, t' value and p-value on personality trait among addict and non addict adolescents. Result shows that there is significant difference ($t=5.37$, $p<.01$) in the personality traits among addict and non addict adolescents. The mean scores reveals that addict adolescents has higher mean scores ($M=170.09$) in comparison to non addict adolescents (144.97). Hence, the null hypothesis that there is no significant difference in the personality traits among internet addict and non addict adolescents rejected.

The probable reason for this result might be that introverts are quite successful in social interactions online; they find it easier to express them online and, in turn, oftentimes prefer it. This is because introverts feel a need to control the amount of social interaction they subject themselves to and the online world is a place where they have this ability. It could be also that introverts may be drawn to the internet for the social interactions lacking in their offline or 'real' lives. In doing so, these introverts may adopt a more extroverted character online. Introverts are able to construct and reconstruct their identity in numerous ways on the internet, something not possible for the average individual offline. Consequently, it has been said that people, both introverts and extroverts, may have changed their personality in the process of social interaction online.

Table 6 - Correlation between internet addiction and personality trait

H_o : There is no significant relationship between internet addiction and personality traits among adolescents

Parameters	Pearson Correlation	'p' value
Internet addiction and personality trait	.23	.00**

** $p<.01$

Table 6 clearly shows that internet addiction has significant correlation with personality trait ($r = .23$, $p<.01$). As observed, the correlation is positive between internet addiction and personality trait. The result reveals that there is direct relationship between the two variables, which suggested that adolescents with introvert personality trait can be internet addict. Hence, the null hypothesis that there is no significant relationship between internet addiction and personality traits among adolescents was rejected.

Similar findings were reported by the study findings of Hamburger & Ben-Artzi (2000). They investigated and found that the internet users are anonymous, has no physical proximity or contact with the person with whom he/she interacts, and has complete control over the interactions, so that he/she feels him/herself to be in a protected environment. These factors may assist introverted and neurotic individuals to express themselves more freely on the net than they feel able to in an offline relationship. For women, introversion and neuroticism were found to be positively related to the use of internet social sites. These results are particularly interesting because they confirm earlier studies showing that women have higher self awareness and are more likely to use the social network for support (Leana & Feldman, 1991; Ptacek et al., 1994). It is however, suggested that, in time, introverted and neurotic males also come to realize that the internet social services may answer their social needs, since the protected net environment allows them to express themselves freely.

Discussion of the study - When an individual's psychological state, which includes both mental and emotional state, as

well as their scholastic and social interactions, is impaired by the overuse of the medium is known as Internet Addiction. Internet addiction comprises addict and non addict. Several interesting gender differences emerged from the study. Findings were reported by Brenner (1996), Chou & Hsiao (2000), Egger & Rauterberg (1996), Griffiths (1998), Morahan-Martin & Schumacker (1997), Tsai & Lin (2001) who found that more males than females were actually addicted. Contrary to these findings, Leung (2004) found that female internet users were more likely to be addicted to the internet.

Excessive and pathological internet users are inevitably led to make regular and intense use of the internet, with regard to both the frequency and duration of each internet session, especially for accessing e mail, chat rooms, and internet games, type of activities engaged on the Internet and location of internet use. Young (1996) stated that internet addicts spent an average of 39 hours per week online, whereas non addicts spent five hours per week.Chen and Chou (1999) elaborated that the "high risk" group for internet dependency spent about 20 hours per week online, while the "non high risk" group spent about 9 hours per week online. Time spent online appears to be a consequence of internet addiction rather than a symptom per se. Similarly, Chou (2001) reported that, on an average, addicts spent 25 hours per week online compared to the nine hours of non addicts. Later, Caplan (2005) stated, frequency of internet use, in and of itself, is not necessarily indicative of problematic use. Thus the present study finding confirms the literature concerning the influence of the amount of time spent on the Internet as a significant factor influencing internet addiction. The literature also reported that internet addicts tended to use interactive applications, such as chat rooms or online games, whereas non addicts use the information-gathering functions of the internet" (Chou, et al., 1999; Chou & Hsiao, 2000; Kandell, 1998; Young, 1998).

Yet another usage pattern is the place of Internet use. This is a necessary contributory cause for the subject to develop pathological internet use, which is similar to internet addiction. Some adolescents prefer to access the internet from home, while others prefer to go outside of their home to places such as the school library or an internet café. So, internet addiction tendency of adolescents can be affected by frequency and duration of internet use, regular internet activities and location of internet use.

It could be concluded that internet usage pattern is associated with internet addiction tendency. Hence, null hypothesis that internet addiction tendency among adolescents is independent of internet usage pattern (duration of internet use; location of internet use (home & cybercafé; internet activities (checking news, downloading software, downloading mp3, receiving/sending emails, playing games and online shpping) was rejected where as null hypothesis is accepted in certain internet usage pattern (location of internet use(school & friends home); internet activities(information searching, chatting). The results of the present study identified online games, emailing and entertainment as the most frequent purpose for internet use. Multiple reasons could be attributed to this behaviour. Moving away from family and home to a new environment could contribute to seeking online companionship. Apart from this academic pressures, boredom and the lack of time and opportunity to pursue hobbies could also contribute to the internet addiction behaviour.

The overall analysis of the table reveals that majority of addict boys (47.86 per cent) and girls (45.23 per cent) have introvert personality trait. This may be explained in terms of the social status youth have in offline contexts. It is very likely that introverted, low agreeable and emotionally unstable adolescents experience less social benefits in offline contexts, and is characterized by a relatively marginal position in the peer group (Newcomb and Bagwell 1995; Rubin et al. 1990). According to Kraut et al. (2002), people who differ in certain personality traits are likely to use the internet in different ways. For example, for introverted adolescents it will be more difficult to establish and maintain satisfying peer contacts in everyday life. Especially for these youths, internet use may be highly rewarding because many of the factors that make it difficult to communicate in "real life" interactions (i.e. ambiguity of non-verbal cues, the need to instantly react and assert oneself) are not present in online interactions" (Rubiner et al. 1990; Spears and Lea 1994). These adolescents will therefore be more motivated to develop social relationships online (McKhenna and Bargh 1998). The development and maintenance of these online social relationships may increase the likelihood of excessive internet use, and subsequently compulsive internet use, which, in turn, is more likely to lead to a further decrease in social off-line resources and thus lead to loneliness, or a low self esteem and depressive moods (McKhenna and Bargh 1998; Caplan 2003). In accordance with Davis (2001) and Caplan (2003) introverted, low agreebale, and emotional unstable adolescents are likely to end up in a vicious cycle in which adolescents who developed compulsive internet use uses the internet in a more and more excessive manner that leads to even higher levels of compulsive internet use which, in turn, worsen their problems more and more.

Conclusion -In conclusion, internet addiction is a growing problem and there exist a possibility that it is prevalent in our locality. This problem can be seen at any age group with higher incidence among adolescence. Somehow, there are a lot identified factors that contribute to the development of adolescent internet addiction and online behaviours are contributory factor in determining adolescent internet addiction. Internet addiction is associated with a variety of psychological and physical health problems and may impact the developing adolescent in a variety of domains. This study paves the way for future research into internet addiction. It highlights the risk of high frequency usage of specific internet applications, which, separately and in combination with particular personality traits, may foster the development of psychopathology. Similarly, it specifies personality traits which, in frequent users, may serve as protective factors.

Accordingly, vulnerability on the one hand and resilience on the other are important aspects that need to be taken into consideration in further studies. From a mental health perspective, it is of utmost importance to identify the factors that contribute to the risk for internet addiction and at the same time discern those that have a protective function. Ultimately, this will further a general understanding of why the excessive engagement in a behaviour leads to pathogenesis in one individual, but not in another. Internet addiction should be considered as a serious problem among the adolescents. So, it is necessary for adolescents and young adults to be educated for the proper use of the internet in order to prevent from internet addiction.

References :–

1. Brenner, V. (1996). An initial report on the online assessment of Internet addiction: the first days of the Internet usage survey [Online]. Available at http://www.ccsnet.com/prep/pap/pap8b/638b/012p.txt
2. Caplan, E.S. (2003). Preference for Online Social Interaction A Theory of Problematic Internet Use and Psychosocial Well-Being. Communication Research,30(6),625-648.
3. Caplan, E.S. (2005). A Social Skill Account of Problematic Internet Use. Journal of Communication, 55(4), 721-736.
4. Chen, S. H., & Chou, C. (1999). Development of Chinese Internet addiction scale in Taiwan. Poster presented at the 107th American Psychology Annual convention, Boston, USA.
5. Chou, C. (2001). Internet abuse and addiction among Taiwan college students: An online interview study. Cyberpsychology and Behavior, 4(5), 573–585
6. Chou, C., & Hsiao, M. C. (2000). Internet addiction, usage, gratifications, and pleasure experience–-The Taiwan college students' case. Computer Education, 35(1), 65–80.
7. Chou, C., & Hsiao, M. C. (2000). Internet addiction, usage, gratifications, and pleasure experience–-The Taiwan college students' case. Computer Education, 35(1), 65–80.
8. Chou, C., Chou, J., & Tyan, N. N. (1999). An exploratory study of Internet addiction, usage and communication pleasure: The Taiwan's case. Journal of Educational Telecommunications, 5(1), 47-64.
9. Davis, R.A. (2001).A cognitive-behavioural model of pathological Internet use. Computers in Human Behaviour, 17(2),187–195.
10. Egger, O., & Rauterberg, M. (1996). Internet behavior and addiction. Unpublished Master's thesis, Zurich: Swiss Federal Institute of Technology
11. Griffths, M.D. (1998). Internet addiction: does it really exist. In J. Gackenbach (Ed.), Psychology and the Internet: intrapersonal, interpersonal, and transpersonal implications. New York: Academic Press. 61-75.
12. Hamburger, Y. A., & Ben-Artzi, E. (2000). The relationship between extraversion and neuroticism and the different use of the Internet. Computers in Human Behavior, 16(4), 441–449.
13. Kandell, J. J. (1998). Internet addiction on campus: the vulnerability of college students. CyberPsychology and Behaviour, 1(1), 11-17.
14. Kraut, R., Kiesler, S., Boneva, B., Cummings, V. H., & Crawford, A. (2002). Internet paradox revisited. The Journal of Social Issues, 58, 49–74.
15. Leana, C.R., & Feldman, D.C. (1991). Gender differences in responses to unemployment. Journal of Vocational Behavior, 38, 65–77.
16. Leung, L. (2004). Net-generation attributes and seductive properties of the internet as predictors of online activities and internet addiction. CyberPsychology and Behaviour, 7(3), 333-348.
17. McKenna, K. Y. A., & Bargh, J. A. (1998). Coming out in the age of the Internet: Identity ''demarginalization'' through virtual group participation. Journal of Personality and Social Psychology, 75, 681–694. doi:10.1037/0022-3514.75.3.681.
18. Morahan-Martin, J. M., & Schumacker, P. (1997). Incidence and correlates of pathological Internet use. Paper presented at the 105th Annual convention of the American Psychological Association, Chicago, IL.
19. Newcomb, A. F., & Bagwell, C. L. (1995). Children's friendship relations: A meta-analytic review. Psychological Bulletin, 117, 306–347. doi:10.1037/0033-2909.117.2.306.
20. Ptacek, J.T., Smith, R.E., & Dodge, K.L. (1994). Gender differences in coping with stress: when stressor and appraisals do not differ. Personality and Social Psychology Bulletin, 20, 421–30.
21. Rabiner, D. L., Lenhart, L., & Lochman, J. E. (1990). Automatic versus reflective social problem solving in relation to children's sociometric status. Developmental Psychology, 26, 1010–1016. doi:10.1037/0012-1649.26.6. 1010
22. Rubin, K. H., LeMare, L. J., & Lollis, S. (1990). Social withdrawal in childhood: Developmental pathways to peer rejection. In S. R. Asher & J. D. Coie (Eds.). Peer rejection in childhood. New York: Cambridge University Press 217–249.
23. Spears, R., & Lea, M. (1994). Pancea or panopticon? The hidden power in computer-mediated communication. Communication Research, 21, 427–459. doi:10.1177/009365094021004001.
24. Tsai, C. C., & Lin, S. S. J. (2001). Analysis of attitudes toward computer networks and Internet addiction of Taiwanese adolescents. CyberPsychology and Behavior, 4(3), 373–376.
25. Young, K. (1998). Caught in the net: How to recognize the signs of internet addiction and a winning strategy for recovery. New York: John Wiley & Sons.
26. Young, K. S. (1996). Internet addiction: The emergence of a new clinical disorder. Cyber Psychology and Behaviour, 1(3), 237-244

Table 1- Frequency and percentage distribution of internet addiction among respondents

Score Range	Category	Boys (N=248)	Girls (N=184)
		f(%)	f(%)
More than 43	Addict	117(47.17)	42(22.82)
Less than 42	Non Addict	131 (52.82)	142(77.17)

*Figures in parenthesis indicates percentage

Table 2 - Gender wise mean, SD scores, t values and p-value of internet addiction tendency among adolescents

Category	Boys (N=248)	Girls (N=184)	't' value	p value
	Mean ± SD	Mean ± SD		
Addict	61.16±9.16	49.83±4.10	10.71	.00**
Non Addict	31.87±7.44	31.81±7.45	.068	.94NS

**p< 0.01, NS=Non Significant

Table 4 - Gender wise frequency and percentage distribution of addict and non addict adolescents on personality trait

Score Range	Personality Type	Addict (159)			Non Addict (273)		
		Boys (N=117)	Girls (N=42)	Total (N=159)	Boys (N=131)	Girls (N=142)	Total (N=273)
		f(%)	f(%)	f(%)	f(%)	f(%)	f(%)
Below 130	Extravert	39(33.33)	11(26.19)	50(31.4)	45(34.35)	52(36.61)	97(35.53)
131-171	Ambivert	22(18.80)	12(28.57)	34(21.38)	29(22.13)	49(34.50)	78(28.57)
Above 172	Introvert	56(47.86)	19(45.23)	75(47.16)	57(43.51)	41(28.87)	98(35.89)

*Figures in parenthesis indicates percentage

Table 5 - Mean, SD, t values and p-value of addict and non addict adolescents on personality trait

H_o: There is no significant difference in the personality traits among internet addict and non addict adolescents

Variable	Addict (159)	Non Addict (273)	't' value	p value
	Mean ± SD	Mean ± SD		
Personality trait	170.09±48.21	144.97±44.47	5.37	.00**

** p<0.01

Table 3 - Frequency and percentage distribution of respondents (addict and non addict) on their internet usage pattern

Variable			Internet Addiction Tendency	
			Addict (N=159)	Non addict (N=273)
			f(%)	f(%)
Duration of internet use	1-5 h/week	Yes	0	105 (38.46)
		No	159 (100)	168 (61.53)
	5-10 h/week	Yes	19 (11.94)	137 (50.18)
		No	140 (88.05)	136 (49.81)
	More than 10 h/week	Yes	140 (88.05)	31 (11.35)
		No	19 (11.94)	242 (88.64)
Location of Internet Use	School	Yes	13 (8.17)	23(8.42)
		No	146 (91.82)	250 (91.57)
	Home	Yes	91 (57.23)	185 (67.76)
		No	68 (42.76)	88 (32.23)
	Cyber cafe	Yes	31 (19.49)	27 (9.89)
		No	128 (80.50)	246 (90.10)
	Friend's Home	Yes	24 (15.09)	38 (13.91)
		No	135 (84.90)	235 (86.08)
Internet Activities	Information searching	Yes	127 (79.87)	216 (79.12)
		No	32 (20.12)	57 (20.87)
	Checking for news	Yes	99 (62.26)	204 (74.72)
		No	60 (37.73)	69 (25.27)
	Downloading software	Yes	68 (42.76)	65 (23.80)
		No	91 (57.23)	194 (71.06)
	Chatting	Yes	135 (84.90)	234 (85.71)
		No	24 (9.26)	39 (14.28)
	Downloading MP3	Yes	83 (52.20)	55 (20.14)
		No	76 (47.79)	218 (79.85)
	Receiving/ sending e mails	Yes	127 (79.87)	178 (65.20)
		No	32 (20.12)	95 (34.79)
	Playing online games	Yes	125 (78.61)	89 (32.60)
		No	34 (21.38)	184 (67.39)
	Online shopping	Yes	51 (32.07)	32 (11.72)
		No	108 (67.92)	241 (88.27)

* Figures in parenthesis indicates percentages

****

पर्यावरण प्रदुषण एवं चिंतनीय मुद्दें

कृष्णा शर्मा *

प्रस्तावना – बड़े ही मनोरम पर्यावरण में आंखे खोली होगी उस समय के मानव ने एक ओर धरती के विशाल सीने पर आकाश की ऊंचाईयों का नापते देवदार, चीड़ और ओक के जंगेलो की हरियाली, तो दूसरी ओर वर्फ की चादर ओढे चांदी से चमकते पहाड़, घाटियाँ, झरने, मैदान, लहरें।

देखते ही देखते इस दृश्य में बदलाव आने लगा। औद्योगिक भार से दबे शहरो का मिजाज गर्म और बदबूदार होने लगा घबराकर रितु चक्र ने अपना रास्ता बदलने की सोच ली। कहीं सूखा, कहीं असमय बाढ़, वर्षा, घरो के सीवेज परमाणु और ऊर्जा संयंत्रों तथा शहरो के कचरे और अधजली लोशों को ढोते-ढोते बीमार होने लगी। औद्योगिक कल कारखानों और ताप बिजली घरो विभिन्न वाहनों औद्योगिक भट्टियां और विद्युत जनरेटरों की बाढ़ बडी मात्रा में हानिकारक गैस (कार्बनमोनोआक्साइड, कार्बनडाईआक्साइड, सल्फर डाइआक्साइड, नाइट्रिक आक्साइड, हाइड्रोकार्बन और क्लोरोफ्लोरोकार्बन, धूल, धुंआ वायुमण्डल में उगलते जा रहे है। जिससे शहरो में सांस लेना दूभर होता जा रहा है। मानव श्वसन, शिरा नेत्र की अनेक बीमारियों से पीड़ित हो रहा है। सब प्रतिफल है पर्यावरण प्रदूषण का।

पर्यावरण प्रदूषण – वातावरण के अथवा जीवमण्डल के भौतिक रासायनिक व जैविक गुणों के ऊपर जो हानिकारक प्रभाव पड़ता है वह प्रदुषण कहलाता है, अर्थात् हमारे पर्यावरण की प्राकृतिक संरचना एवं संतुलन में उत्पन्न अवांछनीय परिवर्तन को प्रदूषण कह सकते है।

पर्यावरण प्रदूषण निम्न है –

1. वायु प्रदूषण – वायु के भौतिक रासायनिक या जैविक रूप में ऐसा कोई अवांछनीय परिवर्तन जिसके द्वारा स्वयं मनुष्य के जीवन या अन्य जीवों, जीवन परिस्थितियों हमारे औद्योगिक प्रक्रमों तथा हमारी सांस्कृतिक सम्पदा को हानि पहुंचे यह वायु प्रदूषण कहलाता है।

वायु प्रदूषण के स्त्रोत –

1. प्राकृतिक स्त्रोत

अ) ज्वालामुखी फटना
ब) दलदली भूमि

2. मानवीय स्त्रोत –

अ) दहन प्रक्रम
ब) औद्योगिक निर्माण प्रक्रम
स) कृषि कार्य
द) विलायकों का प्रयोग
ई) सामाजिक क्रियाकलाप

जल प्रदूषण – जल में किसी ऐसे बाहरी पदार्थ अथवा लक्षण की उपस्थिति को जल प्रदूषण कहते है।

अ) जल प्रदूषण को प्राकृतिक स्त्रोत पारा, सीसा, कैडमियम
ब) जल प्रदूषण के मानवीय स्त्रोत

1. घरेलू बहिस्त्राव (Domestic Effuent)
2. बहित मल (Sewage)
3. औद्योगिक बहि स्त्राव (Industrial Effuent)
4. कृषि बहि स्त्राव (Agriculturural Effuent)
5. उष्मीय या तापीय प्रदूषण (Thermal Pollution)
6. तेल प्रदूषण (Oil Pollition)
7. रेडियो एक्टिव अपशिष्ट (Radio Active Wastes)

मृदा प्रदूषण – (Land Polluation) - जब मिट्टी में भौतिक और रासायनिक तत्व मिलकर मिट्टी को कृषि के दृष्टिकोण से अनुपयुक्त बना देता है अथवा उसका समुचित उपयोग नहीं हो पाता है तो वह मिट्टी प्रदूषित मानी जाती है अथवा भूमि के भौतिक, रासायनिक या जैविक गुणों में ऐसा कोई भी अवांछनीय परिवर्तन जिसका प्रभाव मनुष्य तथा अन्य जीवों पर पड़े या जिससे भूमि की प्राकृतिक गुणवत्ता तथा उपयोगिता नष्ट हो भू-प्रदूषण कहलाता है।

भू-प्रदूषण के स्त्रोत – (Sources of land Pollution)

1. घरेलू अपशिष्ट (Domestic Wastes)
2. नगरपालिका अपशिष्ट (Municipal Wastes)
3. औद्योगिक अपशिष्ट (Indistrial Wastes)
4. कृषि अपशिष्ट (Agriculture Wastes)

महासागरीय प्रदूषण – बाहरी पदार्थो के आने से समुद्री पारिस्थितिक तंत्र में होने वाले हानिकारक परिवर्तनों को महासागरीय प्रदूषण कहा जाता है।

महासागरीय प्रदूषण के स्त्रोत –

1. आणविक अस्त्रों का समुद्र में परीक्षण।
2. औद्योगिकीकरण
3. जहाजों और टेंकरो का व्यापक परिवहन।
4. अत्यधिक कीटनाशक और उर्वरकों का उपयोग।
5. जहरीले अवशिष्ट।

ध्वनि प्रदूषण – (Noice Pollution) - एक दिन ऐसा आयेगा जब मनुष्य को स्वास्थ्य के सबसे बुरे शत्रु के रूप में निर्दयी शोर से संघर्ष करना पड़ेगा। लगता है कि वह दुखद दिन अब निकट आ रहा है। शोर की गिनती भी प्रदूषकों में होने लगी है।

ध्वनि प्रदूषण के स्त्रोत –

1. प्राकृतिक स्त्रोत – भूकंप, ज्वालामुखी की ध्वनि, तूफानी हवाएं।
2. कृत्रिम स्त्रोत – औद्योगिक ध्वनि, यातायात के साधन की ध्वनि, शहरी और घरेलू ध्वनि।

प्रदूषण में हानिकारक प्रभाव – प्रदूषण मनुष्य के स्वास्थ्य पर अनेक

* सहायक प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (गृहविज्ञान) शासकीय श्या. सुं. ना. मु. महिला महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत

हानिकारक प्रभाव डालता है। प्रदूषित वायु से मनुष्य का श्वसन तंत्र मुख्य रूप से प्रभावित होता है। दमा श्वसनशोथ (Brochitis), गले का दर्द, निमोनिया जैसे श्वसन रोग इसी के प्रतिफल है। इससे गले का कैंसर, गले का दर्द जैंसे रोग होते है।

जल प्रदूषण से हैजा, कॉलरा, टाइफाइड बुखार, शिशु प्रवाहिका(Infantile Diarrhea) पेचिस (Dysentry) जैसे रोग होते है। अमीबिका (Amoebic Liver Apsis) अतिसार, जियार्डियता (Giardiasis) आदि इन रोगों के उदाहरण।

प्रदूषण से जहां एक ओर भूमि अस्वच्छ होती है तथा दुर्गंध फैलती है वहीं दूसरी ओर मच्छर, मक्खी, कीड़े-मकोडें तथा चूहों का उत्पात भी बढ़ता है। पेचिश प्रवाहिका, आंत्रशोथ, हैजा, मोतीझिरा आंखो के रोग विशेषकर (Conjunctivitis), तपेदिक इत्यादि रोगों के कीटाणुओं के प्रसार से गंदगी को बढ़ावा मिलता है।

प्रदूषण का दानव वायुमण्डल थलमण्डल के साथ-साथ महासागरीय पारिस्थितिक तंत्र को भी नुकसान पहुंचाने लगा है। जिसके फलस्वरूप अनेक सागरीय जीव (पौधे तथा प्राणी) मृत्यु को प्राप्त हो रहे है और बहुमूल्य सागरीय सम्पदा को हानि पहुंचा रहे है।

नदियों के साथ आने वाले प्रदूषक समुद्री जल प्रदूषित होकर मछलियां और अन्य जीवों की मृत्यु का कारण बन रहे है।

ध्वनि प्रदूषण के कारण सामान्य वार्तालाप में बाधा व असुविधा होती है। हम जो बात सुनना चाहते है सुन ही नहीं पाते। निरंतर शोर के कारण हमारे कान कभी आराम नहीं कर पाते है। इससे श्रवण शक्ति प्रभावित होती है।

अत: पर्यावरण प्रदूषण पर नियंत्रण अत्यंत आवश्यक है ताकि इनसे होने वाले दुष्परिणाम सामने न आ सकें।

संदर्भित ग्रंथ सूची :-

1. पर्यावरण अध्ययन - प्रो. त्रिभुवननाथ शुक्ल।
2. पर्यावरण अध्ययन - डॉ. एस.एम. सक्सेना एवं डॉ. सीमा मोहन।
3. पर्यावरण चेतना - प्रो. धनंजय वर्मा।
4. पर्यावरण अध्ययन - डॉ. एन.के. तिवारी।

****

Creative Accounting - A New Management Technique Leading To Scandals

Dr. Nuzhat Sadriwala *

Abstract - Creative accounting is an art of manipulating the books of accounts in a manner that desired results can be drawn. The study has been conducted to have a detailed view on creative accounting. A very important question has been tried to be answered in this study that why managers do creative accounting and how they become successful in performing such practice in the presence of stringent rules and procedures. The objective of this paper is to analyze the major motivational factors and techniques of creative accounting practices. In the following paragraphs of article we will discuss the scandals and effects of creative accounting practices and how to prevent such accounts practices.

At the end, the paper concludes with the analysis of possible solutions for the creative accounting problem. I wish to propose today that creative accounting is a tool which is much like a weapon. If used correctly, it can be of great benefit to the user; but if it is mishandled or goes into the hands of the wrong person, it can cause much harm. Creative Accounting has helped more companies to get out of a crisis than land them into a crisis. The weapon is almost always innocent; the fault whenever it emerges lies with the user.

Keywords - Hollywood accounting, Creative, scandals and financial reporting .

Introduction - Creative accounting is purposeful intervention in the external financial reporting from with the intent of obtaining some exclusive gain. Creative accounting is taking undue advantage of loopholes of accounting system. Creative accounting is at the root of a number of accounting scandals, and many proposals for accounting reform—usually centering on an updated analysis of capital and factors of production that would correctly reflect how value is added. Using the flexibility within accounting to manage the measurement and presentation of the accounts so that they serve the interests of preparers is called creative accounting. Creative accounting can be used to manage earnings.

Creative accounting is a description of accounting practices that are not considered illegal, but may be somewhat out of the ordinary. Sometimes referred to as Hollywood accounting, earnings management, or cooking the books, the idea behind creative accounting practices is often to emphasize the positive aspects of the company's financial situation, while downplaying negative factors. To an extent, accounting irregularities can be misleading to potential investors, and thus are often considered to be unethical, even though the strategy may remain within the letter of the law.

The manipulation of financial numbers is prohibited by laws and accounting standards, they were against the spirit of not providing the "true and fair view" of a company that accounts are supposed to. The techniques of creative accounting charge over time. As accounting standard change, the techniques that will work also changes. Many changes in accounting standards are meant to block particular ways of manipulating account, which means that intent on creative accounting need to find new ways of doing things. kovanicová, D (2005) It is creative mainly because their primary mission does not follow accountants or tax laws but mostly a "clever" idea of the owners or in other words "creative attitude" where the imagination plays a decisive role. Tracy, J (2009) showed that creativity in the accounting therefore comes at a time when the true background, figures and results should reach the public. This transforms the actual financial statements to those which the owners would like to achieve as positive and favourable results of the company. At this there start internal processes in which the owners choose the way they will follow. For such a decision the experts on accounting and tax issues (auditors or tax advisors) are usually present.

Objective - The study will focus on following objectives:

(a) To understand the meaning and techniques of creative accounting.
(b) To review various motivational factors leading to creative accounting practices.
(c) To throw a light on major creative accounting scandals.
(d) To conclude by suggesting some measures for removing creative accounting practices.

Reasons of creative accounting - There are many reasons why a business would make use of creative accounting.The major among them are:

1. Investor– management relationship - The system of company type business where management act as representative of investors, give undue advantage to them to manipulate the accounts. "Separate entity concept"

* **Lecturer (Accountancy & Statistics) St. Gregorios College, Udaipur (Raj.) INDIA**

motivates board & management to get personal gain instead of economic advantage.

2. **Bonus and promotions** - System like income based bonus or target based promotions are also motivating management to construct the accounts in desired form.

3. **Competition** - In order to perform well they have to show higher profits which boost their market share and thus earn good rating from credit rating agencies.

4. **Tax** - In order to pay less tax, companies usually shows fictitious expenses in its accounts which lowers its profits and hence less tax will be levied on firm.

5. **Lack of information** - Investors are usually considered as layman which becomes their weak point and thus companies can manipulate data in their desired form, believing that people will not be able to understand them.

6. **Window dressing for an IPO or a loan** - The window dressing can be done before corporate events like IPO, acquisition or before taking a loan.

7. **Anticipation of rewards -** It may include higher share prices, improved credit rating resulting in lower borrowing costs, higher incentive compensation for executive management etc.

8. **Regulatory flexibility** - Accounting regulation allows various alternatives for one item in financial statement, availability of these alternatives facilitate the managers to adopt any one such alternative which can show their accounts in profitable manner.

Techniques of creative accounting - Amat, O (2003) report about a study that identified creative accounting practices in some of the 35 large Spanish listed companies. This is possible through following techniques -

1. **Big bath charges** - This application is applied when a company places large amounts of money into charges associated with company restructuring, this in turn, alleviates finances from the balance sheet giving them a so called big bath. The theory behind this on balance sheet technique is that when future earnings fall short, these conservative estimates miraculously become income and allow the company to achieve their expected earnings

2. **Creative Acquisition accounting** - This occurs when companies allocate a large portion of an acquisition price as "in process" Research and Development can also be used advantageously due to the fact that this allocation can be written off in a one-time charge.

3. **Cookie Jar Reserves** - This application is achieved when companies portray unrealistic assumptions when calculating estimates for sales returns, loan losses or warranty costs. These accruals are then hidden in "cookie jars" during good times and used up during bad times.

4. **Materiality** - This occurs when a company intentionally records errors within a defined percentage ceiling and when they are questioned or challenged on the implied errors they simply argue that the profits are too small to matter

5. **Revenue Recognition** - It is a method applied when companies increase their earnings by recognizing a sale prior to the completion of that sale, before the product is delivered to the customer or at a time when the customer still has the option to terminate the deal resulting in lower revenue being observed.

6. **Round trip technique** - It is a manipulation practice which misrepresents the number of transactions happening. This gives the company the ability to increase their revenues and expenses without changing the net income of the company Round tripping, are also known as "capacity swaps".

Adavantages of creative accounting - Although the present text refers rather to the disadvantage of creative accounting and identifies with not to use it, I'd like to add also the knowledge from my accounting practices that there are not always so catastrophic scenarios. There are situations where creative accounting and its impact are not let to go too far and are used in the short term and rather make the "gear" stone than some kind of permanent condition.

Mulford, Ch., Comiskey, E., (2005) Yes, there are also company owners who fully recognize the risks and impacts of fictional accounts, so they use creativity sparingly and then rearranged the facts so that their financial statements comply with its primary mission and the faithfully reflects the economic reality of company at the end.

Accounting scandals

COMPANY	YEAR	NATURE OF CREATIVITY
Enron	2001	Kept huge debts off balance sheets
Worldcom	2002	Underreported line costs by capitalizing rather than expensing and inflated revenues with fake accounting entries
American International Group(AIG)	2005	Allegedly booked loans as revenue, steered clients to insurers with whom AIG had payoff agreements, and told traders to inflate AIG stock price.
ONGC Ltd.	2004-05	Capitalization of interest as well asother intangible assets to show fixedassets value upward and understanding revenue expenses.
Bernie Madoff	2008	Investors were paid returns out of their own money or that of other investors rather than from profits.
Satyam	2009	Falsified revenues, margins and cash balances to the tune of 50 billion rupees.

ONGC Ltd. source: Global Data services of India Ltd., Accounting and analysis: the Indian express,2006.

Effects of creative accounting -

Aftermath (Short term)

- Loss of share price
- Company taken over or goes into liquidation
- Directors jailed or fined
- Auditors fined

Aftermath(Long Term)

- Regulations especially:
  - Changes in law

- New Codes of Corporate Governance
- Continual revisions
- Gradual increase in laws, regulations and political interference

Suggestions -

- More vigilant directors.
- Auditor rotation.
- Use of investigative audit techniques & Forensic auditors.
- Stricter norms for independent directors.
- Audit conduction in accordance with the Auditing and Assurance Standards (AAS).
- Identifying and assessing the risk of material misstatement in financial statement & contacting major customers/suppliers.
- Blacklisting of Chartered Accountants by ICAI for indulging in fraudulent accounting practices.

Conclusion -To sum up the discussion on creative accounting practices, we found that this problem may exist due to lack of awareness and information level of investors. Companies which are indulging itself in such practices are taking undue advantage of innocence of investors. Government need to take quick action in awareness of the investors. And most importantly investors need to understand their role and importance in motivating companies to indulge in such practices. The improper use of such creative accounting practices had fooled both auditors and regulators in the past and continues to do the same. It is an unfortunate situation that we cannot completely restrict or stop the misuse of creative accounting practices. Through the study we found that companies are forced and under pressure of performing well and this becomes the major motivator of creative accounting, to be competitive companies are trying to do anything although it is unethical. Thus, creative accounting becomes convenient way of sustainability.

In recent years, a number of nations have taken steps to minimize the incidence of creative accounting by implementing regulations that make it more difficult for businesses to cook the books and present a financial position that is does not tell the entire story. The hope is that by doing so, investors will be able to obtain all the data required to make an informed decision about their investment options, and prevent the economy from being adversely affected by misleading financial accounting practices at major corporations. Since there are a number of ways to engage in creative accounting, chances are it will take a number of years to craft regulations that will make those unorthodox accounting processes explicitly illegal.

References :-

1. Amat, O.: 2003 'Earnings management in Spain: an assessment of the effect on reported earnings of listed companies 1999-2001', Economic Working Paper Series, Universitat Pompeu Fabra.
2. "Creative Accounting". Investopedia. Retrieved 14 January 2014.
3. Kovanicova, D. a kol. Financní úcetnictví – svetový koncept. Polygon, 2005. 526 s. ISBN 80-7273 129-7. str. 58.
4. Mulford, Ch., Comiskey, E. The Financial Numbers Game: Detecting Creative Accounting Practices. Publisher: Wiley. 2005. 408 p. ISBN 978-047-177-073-2. p. 47
5. Tracy, J. How to Read A Financial Report. Publisher: Wiley. 2009. 216 p.ISBN 978-047-132-706-6. p. 26
6. www.wisegeek.com/what-is-creative-accounting.htm
7. www.investopedia.com/articles/fundamental-analysis/10/creative-accounting-balance-sheet.asp

****

How International Monetary Fund's Statistical Standards Affecting The International Accounting Standards (IAS)

Dr. Pradeep Chaurasia *

Abstract - This paper describes the relationship between the macroeconomic statistical standards of International Monetary Fund (IFM) and International Accounting Standards (IAS) and the on-going work of the Fund's Statistics Department to support further harmonization with IAS. The IMF encourages the harmonization of statistical and accounting standards, and convergence between them, as much as possible. In recent years, a number of discussions have been held with accounting standard setters in the context of developing statistical standards, such as the *Government Finance Statistics Manual 2001* and the *Compilation Guide on Financial Soundness Indicators*. These discussions are continuing in the context of the review of the *System of National Accounts 1993 SNA* and possible changes to accounting standards. To the extent that Differences remain, which is likely, it would be useful to develop standard reconciliation tables that explain these differences for users. The accounting rules and procedures in the national accounts are based on those long used in business accounting. However, the national accounts also draw heavily on economic theory. When business accounting practices conflict with economic principles, priority is generally given to the latter, as the national accounts are designed primarily for purposes of economic analysis and policy-making. Examples are the valuation of production costs at current rather than at historic prices, and the adoption of a different concept of depreciation. To avoid confusion, in these cases the national accounts statistics try to avoid using labels that may have a very specific meaning in business accounting. At the same time, it must be recognized that there will remain limits to the usefulness of general accounting standards. The national accounts cover not only corporations but units that do not normally keep accounts, such as most household units.

Introduction - The IMF Statistics Department (STA) is extensively involved in the development and application of macroeconomic statistical methodologies. In its own specific area, statistical and accounting data-setting systems each provide a framework to identify record, classify, and summarize economic activities of entities. These two data-setting systems differ in their scope, preparation, and use. Statistical guidelines, as embodied in national accounts for macroeconomic datasets, pertain to the economic behavior of all economic units in the economy, while accounting statements refer to the behavior of individual units in the corporate and government sectors. In the statistical data-setting system, third-party statisticians report the national accounts, whereas each unit reports on its own operations in financial statements.

The time seems ripe for such harmonization for at least four interrelated reasons:

a) First, the statistical guidelines and the accounting standards are undergoing major changes, with those in statistics led by the ongoing fifth revision of the System of National Accounts (SNA) to be finalized in 2008. From a diversity of accounting standards among countries, the increasingly global capital market has prompted the development in recent years of international accounting standards.

b) Second, recent research in finance, accounting, and macroeconomic statistics has helped, among other things, to enhance the understanding of the valuation of assets.

c) Third, accountants are increasingly adopting practices that are fundamental in statistics, such as fair value, performance reporting that distinguishes transactions from other economic events, and inflation accounting.

d) Fourth, with the globalization of economies, the financial crises of the 1990s, followed by the recent years' corporate scandals, took on an international dimension. This prompted policymakers to develop analytical, monitoring, and assessment tools that all call for more extensive and detailed information, including statistical information.

Selected Aspects Of Relationships Between Statistics And Accounting

Table -1

Topics	Aspects
Entity	Statistics: sectors made up of institutional units Accounting: reporting entity made up of controlling unit and its controlled units
Assets*	Statistics: defined as subject to ownership rights, and source of economic benefits Accounting: defined as resources controlled, and source of economic benefits/service potential

*Asst. Professor (Management Studies) AKS University, Satna (M.P.) INDIA

Balance sheet Financial equity	Statistics: subsidiaries at 50 percent and more ownership; associates at 10 to
assets: related	50 percent. Income: *dividends declared* for subsidiaries, associates, and other
entities	Accounting: subsidiaries at 50 percent and more ownership; associates at 20 to 50 percent. Income: *fully consolidated* for subsidiaries; *equity basis* for associates; and *dividends declared* other
Debt assets	Statistics: market value except for loans. Income on effective interest rate Accounting: different values. Income on effective and/or yield to maturity basis
Nonfinancial	Statistics and Accounting: mixture of expensing/capitalizing intangible and
assets	transaction costs; clarification required in specific areas (e.g., special purpose vehicles)
Contingent assets	Statistics and Accounting: clarification required for externalities, provisions, social security and assurance, and guarantees
Flows	
Recording of	Statistics: transactions and other changes clearly delineated
accounts	Accounting: transactions and other events mixed
Reporting	Statistics: accounts on transactions (current, capital, financial accounts), and on
statements	other changes Accounting: income/performance statement, changes in net assets, shareholders' equity, and cash flows

Entities Covered In Statistical And Accounting Statements - The definition of the entity/unit of reporting is crucial because it is the entity's economic activities, as recognized/accounted for by each system, that are reported in the statistical/accounting statements.

Statistical guidelines - The reporting unit of the statistical guidelines is the sector. Each sector comprises an institutional unit or a group of institutional units. An institutional unit is a resident (economic) entity that is capable, in its own right, of owning assets, incurring liabilities, and engaging in economic activities and in transactions with other entities, and that has or could compile a complete set of accounts (*1993 SNA*, par. 4.2). Residency is defined according to the economy, that is, the territory over which a national government has jurisdiction and provides for the laws under which the economic activities are carried out.

Accounting standards - In accounting, the reporting economic unit consists of an individual entity or a group of entities comprising a controlling unit and its controlled units. The notion of control is key to determining the reporting unit and, hence, whose economic activities are recorded. For instance, the government unit covers the "whole of government," that is, the fully consolidated economic activities of the government and its controlled units (at levels such as central government, state government, territory government, or local government). Controlled units include government business enterprises (GBEs).[14] The economic activities of the controlling unit are fully consolidated with those of controlled units in accounting reporting.

The financial statements of the controlling entity and its controlled entities are combined on a line-by-line basis by adding together like items of assets, liabilities, net assets/ equity, revenue and expenses. Balances and transactions between entities within the economic entity and resulting unrealized gains are eliminated in full. Unrealized losses resulting from transactions within the economic entity should also be eliminated unless cost cannot be recovered (IPSAS, p. 206).

Relationship between statistical and accounting entities - With the statistical "public sector" defined as comprising the government and public corporations, there should be equivalence with the accounting "whole of government." This is not always the case, and harmonization could be enhanced in at least two ways.

First, the two systems could cover the same units making up the public sector by relying on a common definition of control to define "public corporations" and "GBEs." In this endeavor, the use of the term "benefits" in IPSAS in defining control could be reviewed against that of the *1993 SNA* where benefits are referred to in a narrower sense (e.g., to define assets):

Whether an entity controls another entity for financial reporting purposes is a matter of judgment based on the definition of control in this Standard and the particular circumstances of each case. Definition includes powers (to govern the financial and operating policies of another entity) and benefits (from the activities of another entity)

Second, within the public sector (statistics) and whole of government (accounting), a common delineation of *market* and *nonmarket* activities could help the two systems distinguish "government" entities from the "other public" entities along the same lines. This could be made possible in accounting that recognizes the need for reporting of a grouping that may differ from the controlled grouping:

In the public sector many controlling entities that are either wholly owned or virtually wholly owned represent key sectors or activities of a government, and the purpose of this standard is not to exempt such entities from preparing consolidated financial statements. In this situation the information needs of certain users may not be served by the consolidated financial statements at a whole of government level alone. In many jurisdictions governments have recognized this and have legislated the financial reporting requirements of such entities

Methodology - The information is collected through the secondary data. The tools used to collect the secondary data are government reports, news on news papers, Journals and websites. The convenient types of sampling used to collect the all information.

Conclusion - This juncture, when both the macroeconomic statistics guidelines and accounting standards undergo development, provides a major opportunity to reap benefits from further harmonization of the two systems.

Some of the areas explored in this paper for harmonization include the following:

- In statistics, record income accrued on an equity basis for related units that operate in different sectors.
- In accounting, modify the definition of assets to show that benefits can be owned but not necessarily controlled, coming closer to that of statistics.
- Intangible assets, expensing versus capitalizing.
- Economic activities conducted jointly by units, such as special purpose entities (SPE), notably on government/private schemes.
- Employers' pension schemes.
- Contingent assets, notably externalities and loan guarantees across sectors/units.
- In accounting, use of fair valuation and performance reporting that separates transactions from other events, in particular holding gains/losses.

References :-

1. Bloem, Adriaan, and Cornelis Gorter, 2001, "The Treatment of Nonperforming Loans in Macroeconomic Statistics," IMF Working Paper 01/209 (Washington: International Monetary Fund).
2. Carson, Carol S., and Lucie Laliberté, 2001, "Manuals on Macroeconomic statistics: A Stocktaking to Guide Future Work," IMF Working Paper 01/183 (Washington: International Monetary Fund).
3. http://unstats.un.org/unsd/nationalaccount/snarev1.htm
4. http://www.imf.org/external/np/sta/tfhpsa/index.htm
5. http://www.imf.org/external/np/sta/umgmd/index.htm and
6. http://www.imf.org/external/standards/index.htm
7. International Accounting Standards Board, 2002, *International Financial Reporting*
8. International Monetary Fund, *Government Finance Statistics Manual 2001 (GFSM 2001)*, Washington, D.C., 2001, par. 2.20, p. 9.
9. IPSAS 6, pp. 200–205
10. IPSAS, p. 198
11. PricewaterhouseCoopers et al., 2000, *GAAP 2000: A Survey of National Accounting Rules in 53 Countries,* England.
12. Reich, Utz-Peter, 2001, *National Accounts and Economic Value: A Study in Concepts,*
13. Reilly, Frank, and Keith Brown, 2000, *Investment Analysis and Portfolio Management*, 6th ed., Dryden Press, Fort Worth.
14. Wellink, A.H.E.M., 2004, "*Business Accounting Standards and Statistical Standards*," Introduction to the Round Table Discussion, Second ECB Conference, Frankfurt, April 22–23.

✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻✻

International Tourism In The Contemporary Scenario - A global Perspective

Dr. Anil Kumar *

Abstract - Tourism industry is the largest and most assorted industry in the world. It is a dynamic industry for most of the nations and their main source for generating income, providing employment opportunity, growth in the public and private sector and development in infrastructure. Developing countriesare now encouraging the tourism development around the globe. Tourism development is the economic development of the country. Due to the emergence of the tech-nological development, people desire to travel around the world. Tourism is contributing to the emergence of the technological development, people desire to travel around the world. Tourism is to the powerful growth of nations.
Key words - Tourism, development, em-ployment, industry and economy

Introduction - At present, Tourism industry contributes nearly 5% of the world output. Tourism service export contributes maximum in the total export of commercial service. According to United Nation's World Tourism Organization (UNWTO) survey, tourism sector contributed 6% to 7% of the global employment and its contribution to Gross Domestic product (GDP) has varied from 2% to 10% in different countries. Currently, as per the UNWTO review, growth of international tourists is estimated to rise from 4% to 5% in the year 2011. Now-a-days travel is easier and cheaper. Many positive impacts of tourism and travel have been found on various countries throughout the world. The role of tourism in the global economy is looked upon at the rapid growth of industries.

Concepts and definitions - Travel defined as "the act of moving". According to WTO definitions are as fol
lows

1. **Tourism -** The activities of person traveling to and staying in places outside their usual environment for not more than one consecutive year for leisure, business and other pur-poses.
2. **Touris -** Visitor staying at least one night in a collective or private ac-commodation in the place visited.
3. **Same day visitor -** Visitor who does not spend the night in collective or private accommodation in the place visited.
4. **Visitor -** Any person traveling to a place other than that of his usual environment for less than 12 consecutive months and whose main purpose of travel is not to work for pay in the place visited.
5. **Traveler -** Any person on a trip be-tween two or more locations.

Recent development in international tourism - The term tourism and travel are some-times used interchangeably. In this framework, travel has similar meaning to the tourism, but implies a more purposeful journey.

International travel for short breaks is. com-mon in Europe. Tourists have high level of dis-posable income, leisure time, stylish tastes and preferences. Therefore, now there is a demand for better quality products and services, which has resulted in market for beach vacations; people wanting more focused sides, resorts, family oriented holidays or niche market targeted destination hotels.

The development in technological and infrastructural sectors in transport such as low cost airlines, extra large and availability of nearby airports has facilitated tourism growth. Due to changes in life styles and tastes and prefer-ences, people desire to go for round tourism. This is made easy by internet marketing of tour-ism products. Some of the websites started of-fering dynamic packaging, in inclusive price which is convenient for the people.

Growth and development of International tourism - International tourism is leaving one's country to tour another country. Many more people in many countries travel to another countries. International Tourism is more important than do-mestic tourism in warmer places. International tourism will continue to record the average growth rate of 4% in coming years. With the development of e-commerce, tourism products and services have become one of the most traded items on the internet. These products and services are made available on internet through manufactures, intermediaries, suppliers or dis-tributors. Sometimes tourism providers sell their products and services directly to the ultimate consumers such as hotels, airlines, other travel agents etc. Improvement in the technological development makes possible airships hotels, solar powered airplanes etc. In the year 2009, an under sea hotels Such as hydropolis was opened in Dubai Costing Rs 2,250crore.

Countries visited by international tourists - In 2010, there have been 940 million in-ternational tourist arrivals, with a

*Asst. Professor, Govt. V.A.B.L. College, Patharia, Mungeli (C.G.) INDIA

growth of 6.6% as compared to 2009. According to World Tour-ism Organization reports the following countries were visited by the international travelers. Most of the top visited countries continue to be on the European continent, followed by a growing num-ber, of Asian countries.

International tourist arrivals- 2010 (in millions)

Rank	Country	Market	International tourist arrivsls-2010(in millions)
1	France	Europe	76.8
2	United States	North America	59.7
3	China	Asia	55.7
4	Spain	Europe	52,7
5	Italy	Europe	43.6
6	UnitedKingdom	Europe	28.1
7.	Turkey	Europe	27
8.	Germany	Asia	26.9
9.	Malaysia	North	24.6
10.	Mexico	America	**22.4**

Cultures and behaviors in international tourism - Now a days, there has been a signifi-cant interest in the cultural aspect of tourism such as tourism planning, growth and develop-ment, management, marketing etc. Cultural aspects mainly focus on arts, music etc. Cross-cultural issues have been initiated among academicians in the last two decades. In this scenario, everything is going global and tourism environment is flattering increasingly internationally. Cultural differences are important in the tourism industry. Due to development in technology and improvement in the communication and transportation people travel to cultural different societies, culture interactions, contacts and relations are commonplace. It is important to measure the foreign tourists on a day, to realize influence of national cultures of the people. But it is difficult to measure the cultural difference between international tourists and locals.

Conclusion - Tourism sector mainly focuses on international in and out bound tourism volumes and expenditures. International tourism move ments are difficult to determine. Distance is the most important factor in the international air travel than domestic. International tourism is an extremely attractive proposition in terms of business as like foreign exchange earnings,economic growth, employment opportunity. and poverty alleviation. Tourism holds the key for cre-ation of rural wealth, opportunity for hitherto neglected segments of society and service providers in the backward areas.

References :-

1. Bendra, V.P. “Tourism in India” .Parimas Prakashan Publishers, Maharashtra, INDIA.
2. Chopra Suhita, “Tourism and Development in India”, Ashish Publications, New Delhi.
3. Das, Manoj “Tourist Paradise”, Sterling Publications, New Delhi.
4. International Tourism in India : Strategic significance, Gaps and vulnerabilities,Krishna Kumar, Indian Institute of Management, Lucknow.
5. Sigaux. G “History of Tourism”, Leisure Art, London.

****

Impact Of Leverages On Profitability A Case Study Of Hero Moto Corp. Ltd.

Aasif Khaliq Shaksaz *

Abstract - A firm can raise its required finance either equity or debt or both the sources, while constructing capital structure a firm can use fixed costs bearing securities for maximization of shareholder's wealth. Leverage is the action of a lever and mathematical advantages gained by it, leverage allows and accomplishing certain things that are otherwise not possible. If a company doesn't have sufficient rate of return and want to enjoy debt capital which is not worthwhile for the company. And opposite to it if the company has sufficient rate of return than company can enjoy more debt capital because in this situation company has good digesting power so leverage technique which controls the financial cost. In the study of leverage analysis of Hero Moto Corp Ltd, the researcher finds how leverage technique is helpful to control the financial costs and helps in deciding the capital mix. So that the value of the firm can be maximized or value of shareholder's can be increased.

Key words - Leverage, Operating Profit, Capital Structure.

Introduction - Leverage is an investment technique in which we can use a small amount of all money to make an investment of large value. It is borrowing money to supplement existing funds for investments in such a way that the potential positive or negative outcome is increased. It is the usage of borrowed funds or debts to increase the returns to equity. It is using debt of financing or property of raising or falling at a proportionally greater amount than comparable investment. Leverage provides the frame work for financing decisions of a firm; it may be defined as the employment of an assets or sources of funds for which the firm has to pay a fixed cost or fixed return. Leverage Analysis is a technique used by business firms to quantity a risky relationship of different capital structures as it represents the influence of one financial variable over some related variables, these variables may be costs, output, sales, revenue, EBIT, earning per share (EPS). In the leverage analysis the emphasis is on the measurement of relationship of two variables instead of measuring these variables.

Leverage is the amount of debt used to finance a firm's asset. A firm with significantly more debt than equity is considered to be highly leveraged. It helps both the investor and the firm to invest or operate. If an investor uses leverage to make an investment and the investment moves against the investor, his or her is much greater amount that it would have been if the investments were not leveraged. Leverage magnifies not only gains but also losses.

Justification of Research Study - Financial position of the company thus not depends on operating expenses of the business, some of the organisation have good control on operating expenses but there net profit has been negative or in a loss. Why there is decotism? These things happen due to only financial costs like interest and dividend. The capital structure of the company plays a vital role in the financial position of the business. If the company does not maintain adequate capital structure then they have to face adverse condition because most of the profit gone in interest and net result come in negative terms or in a loss. Now there are important challenges how to control these financial costs. Keeping this view we have to apply financial controlling techniques like leverage. In this regard we have taken this topic for the research study-"Impact of Leverages on Profitability a Case Study of Hero Moto Corp Ltd."

Review Of Literature - Once the problem is formulated next step is to undertake extensive literature survive, connected with the problem for this purpose, the abstracting and indexing journals and published or unpublished bibliographies are the first place to go to. Academic journals, conferences proceedings, government reports, books etc, must be tapped depending on the nature of the problem. In this process, it should be remembered that one source will lead to another, the earlier studies, if any, which are similar to the study in hand should be carefully studied.

A number of studies have been done in the field of leverage analysis by various researchers,some of them are given below:-

Author-Jensen and Mecking year (1976) - In his study he states that industries in which opportunities for assets distribution are more limited, will have higher levels of debt. Therefore regulated public entities, banks, and firms in mature industries with few growth opportunities will be more highly levered. They also maintain that firms for which slow or even negative growth is optimal and that have large cash inflows from operations should have more debt.

* **Research Scholar (Commerce) Barkatullah University, Bhopal (M.P) INDIA**

Author-Rajan and Zingales year (1995) - In his study they hold that there is a positive relationship between firm size and leverage. Firm risk agency and bank ruptcy costs are incentives for a firm not to exhaust the tax benefits presented by debt. The more likely a firm is to be exposed to such costs, the greater its incentives will be to reduce its level of debt. A firm's operating risk impacts on the likelihood of this exposure. Firm's with relatively higher operating risk have volatile earnings, and therefore a higher chance of defaulting. Such firms will have incentives to have a lower leverage than firm's with stable earnings. Empirical evidence supports this by postulating a negative relationship between risk and leverage.

Author-Powell's year (1996) - In his study he concludes that industry membership explains between seventeen to twenty percent of the financial performance variance amoungst firms. This supports his argument that industries compete for capital and other resources and that under certain conditions, firms in some industries could have a sustainable, albeit shared, advantage.

Author-Maio year (2005) - He concludes in his study that the industries with high technology growth have lower average debt. Industries with risk technology have lower average debt. Industries with high bank ruptcy costs have lower average debt. Industries with high fixed operating costs have lower average debt. Industries with high entry costs have higher average leverage.

Author-Ju and Ou-Yang year (2006) - In his study the authors find that in addition to the long-run mean of the interest rate process, the volatility of the interest rate process and the correlation between the interest rate process and a firm's asset value play minor roles in determing the debt maturity structure.

Author-Hyde year (2007) - He said in his study that changes in interest rates will alter a firm's financing costs, affecting the amount of loan interest and principle payments and ultimately impact a firm's cash flows. He investigate the sensitivity of bank share returns to market, interest and exchange rates and find that all significant interest rate betas are negative. Finally he concludes that the industrial sectors in France and Germany are exposed to significant levels of interest rate risk, while this is not the case in Italy. He also states that unexpected changes in real interest rates contain significant information about future cash flows and future excess returns.

Author-Schwartz and Aronson's year (1967) - In his study they concludes that the capital structures of firm's in different industries are different from each other. They also indicates that the capital structure in specific industry sectors over time is 19 dynamic, given a firm's pursuit to maximise value.

Author-Barclay, Smith, and Watts year (1995) - In his study they find that leverage is high for regulated firm's and firm's is low-tech industries, and is low in high-tech industries.

Author-Mackie-Mason year (1990) - In his study on the impact of tax on corporate finance decisions, provides evidence that tax has a significant influence on choice between debt and equity. He conludes that changes in the marginal tax rate should affect financing decisions. A firm with a high tax shield is less likely to finance with debt, since tax shields lower the effective marginal tax rate on interest deductions.

Objectives Of The Study - An objective is compulsory for the study of research because problem of research study is based on objectives:-

- To analyze the concept of leverage.
- To analyze the impact of leverage on profitability.
- To analyze the financial risk on the business.

Research Design - Every research have required data, either may be primary or may be secondary data. In this research study we have been using the secondary data; the sources of these data are annual reports, budgets, and statistical reports and published documents. In this study the major sources of data have been collected from annual reports and internet which has been directly related to our topic i.e. "Impact of Leverages on Profitability a Case Study of Hero Moto Corp Ltd." The data will also be collected through a comprehensive interviews, schedules and discussions with the top manager of the company. The published research reports and market studies will helped the researchers to gauge into the problem. This study we have been completed in several steps which are related to introduction, research methodology, leverage analysis of Hero Moto Corp Ltd and findings and suggestions. The objective of the study is also analyzed through various dates which are related to the topic of the study. On the basis of analysis of the study, objective of the study, observation of the study; we have been given suggestions for the betterment of the company or were made for company's welfare.

Limitations Of The Study - Every research has their own constraint pain & limitations, in this light this research study has also been some limitations which are given as below:-

- The study is based on five years annual report from 2010 to 2014, so the validity of data collection, observation, and suggestions have limited.
- The study is based on secondary data published or unpublished.
- The data has been grouped and sub-grouped as per requirement of the analysis.
- Research is a theory; many variables which are of utility in theory are not useful in practical life.

Table 1- Statement of Financial Leverage - Financial leverage is the ability of the firm to use fixed financial charges to magnify the effects of changes in EBIT on the firm's earning per share (EPS). It is also known as trading on equity. Financial leverage is caused due to fixed financial costs (interest) in firm. A financial leverage may be positive or negative. Favourable leverage occurs when this firm earns more on the assets purchased with this fund, than the fixed cost of their use and vice versa. High degree of financial leverage leads to high financial risk. Financial risk refers to the risk of the firm not being able to cover its fixed financial costs. Hence, the financial manager should take into

consideration, the level of EBIT and fixed charges while preparing the firm, financial plan. The formula for calculating Financial Leverage **=** (EBIT or Operating Profit / Earning After Interest-Before Tax)

(Rs in crores)

Year	EBIT	EBT	Times
2010	2552.18	2541.04	1.00
2011	2194.69	2166.49	1.01
2012	2550.68	2517.25	1.01
2013	2180.2	2168.29	1.00
2014	2432.69	2420.87	1.00

Source - Annual reports of Hero Moto Corp Ltd from 2010-2014

Interpretation - Table 1 indicates the statements of financial leverage. This table shows EBIT and EBT. The financial leverage in the year 2010 was 1.00, and then there are some variations in the year 2011 to 2014 which was 1.01, 1.01, 1.00, and 1.00 respectively. The situation is not satisfactory because of up and down in financial leverage up to the year 2014.

Table 2 - Statement of Degree of Financial Leverages

Financial leverage affects the EPS of the firm it acts as a double edged sword, If the economic conditions are favourable and EBIT is increasing, a higher financial leverage capture this relationship between EBIT and EPS. Degree of financial leverage is defined as percentage change in EBT for a given percentage change in EBIT. The extent of the presence of fixed financial cost in a firm's income stream is measured by the degree of financial leverage (DFL).The formula for calculating Degree of financial leverage = (Percentage Change in EPS/Percentage Change in EBIT)

OR

(EBIT / EBT (or, EBIT – I)

(Rs in crores)

Year	%Change in EPS	%Change in EBIT	Times
2010	-	-	-
2011	-0.13	-0.14	0.92
2012	0.20	0.16	1.25
2013	-0.13	-0.14	0.92
2014	-0.04	0.11	-0.36

Source - Annual reports of Hero Moto Corp Ltd from 2010-2014

Interpretation-Table 2 indicates the statement of degree of financial leverage. This shows the percentage change in EPS and EBIT, degree of financial leverage in the year 2011, 2012, and 2013 which was 0.92, 1.25, and 0.92 respectively. But in the year 2014, degree of financial leverage seems to be in a negative sign, which is not a satisfactory indication for the company.

Table 3 - Statement of Operating Leverage - Operating leverage refers to the extent to which the firm has fixed operating cost. A firm with high operating leverage will have relatively high fixed cost in comparison with a firm will low operating leverage. It reflects the extent to which fixed assets and associated fixed costs are utilized in the business. The formula for calculating Operating Leverage = Contribution / Operating Profit)

OR

(Sales – Variable Costs / Earnings before Interest Tax)

(Rs in crores)

Year	Contribution	EBIT	Times
2010	2743.65	2552.18	1.07
2011	2597.07	2194.69	1.18
2012	3647.22	2550.68	1.42
2013	3321.95	2180.2	1.52
2014	3540.06	2432.69	1.45

Source - Annual reports of Hero Moto Corp Ltd from 2010-2014

Interpretation - Table 3 indicates the statement of operating leverage. This table indicates the contribution and EBIT. The operating leverage was 1.07 in the year 2010 and it increases up to the year 2013, and also slowly decreases in the year 2014. This situation is not good for the company but satisfactory because operating leverage from 2010 to 2014 is positive.

Table 4 - Statement of Degree of Operating Leverage

The degree of operating leverage measures in quantitative terms, the extent of operating leverage. When proportionate change in EBIT as a result of a given change in sales is more than the proportionate change in sales, operating leverage exists. The greater the DOL, the higher is the operating leverage. The formula for calculating Degree of Operating Leverage = (% Change in Operating Profit / % Change in Sales)

OR

(%Change in EBIT / % Change in Sales)

(Rs in crores)

YEAR	%CHANGE IN EBIT	%CHANGE IN SALES	TIMES
2010	-	-	-
2011	-0.14	0.22	-0.63
2012	0.16	0.21	0.76
2013	-0.14	0.01	-14.00
2014	0.11	0.06	1.83

Source - Annual reports of Hero Moto Corp Ltd from 2010-2014

Interpretation - Table 4 indicates the statement of degree of operating leverage. It shows the percentage change in EBIT and percentage change in Sales. In the year 2011 and 2013 degree of operating leverage came down in a negative terms which is not good for the company and the overall situation is not good because of more fluctuations in the degree of operating leverage.

Table 5: Statement of Combined Leverage - Combined leverage measures the effects of a percentage change in sales on percentage change in EPS. If both operating and financial leverage allows us to magnify our returns then we will get maximum leverage through their combined use in the form of combined leverage. The formula for calculating Combined Leverage = (Operating Leverage*Financial Leverage)

OR

(Contribution/ EBIT * EBIT/EBT)

OR

(Contribution / EBT)

(Rs in crores)

Year	Contribution	EBT	Times
2010	2743.65	2541.04	1.07
2011	2597.07	2166.49	1.19
2012	3647.22	2517.25	1.44
2013	3321.95	2168.29	1.53
2014	3540.06	2420.87	1.46

Source - Annual reports of Hero Moto Corp Ltd from 2010-2014

Interpretation - Table 5 indicates the statement of combined leverage. The table shows the contribution and EBT. The combined leverage is on increasing trend from 2010 to 2013 as 1.07, 1.19, 1.44, and 1.53 respectively, which is good for the company but it must be on increasing trend continuously which will be favourable for the company.

Table 6 - Statement of Degree of Combined Leverage

Degree of combined leverage (DCL) uses the entire income statements and shows the impact of a change in sales or volume on bottom line earning per share. Degree of operating leverage and degree of financial leverage are in effect being combined. The formula for calculating Degree of Combined Leverage = (% Change in EBIT/% Change in Sales* % Change in EPS/%change in EBIT)

OR

(%Change in EPS / % Change in Sales)

(Rs in crores)

Year	%Change in EPS	%Change in Sales	Times
2010	-	-	-
2011	-0.13	0.22	-0.59
2012	0.20	0.21	0.95
2013	-0.13	0.01	-13.00
2014	-0.04	0.06	-0.66

Source: - Annual reports of Hero Moto Corp Ltd from 2010-2014

Interpretation- Table 6 indicates the statement of degree of combined leverage. This table shows the percentage change in EPS and percentage change in Sales. There is a continuous fluctuation in degree of combined leverage, in the year 2011, 2013 and 2014; it came down in a negative sign which is not a good for the company.

Conclusion / Findings - The findings data are extracted from the annual reports of Hero Moto Corp Ltd. The Leverage Analysis of Hero Moto Corp Ltd for five years is studied through, which we have concluded that:-

- The sales of the company from the year 2010 to 2014 have been increasing at high rate. And the operating expenses of the company are continuously increasing at faster rate. Thus the position of sales and operating expenses of the company are satisfactory.
- The EBIT of the company has also ups and downs from the period 2010 to 2014, their ups and downs lead to irregularity in the earnings of the industry.
- The reserves and surpluses of the company are almost increasing. It had reached up to 5559.93 crores, which is very good for the company. This indicates that the company has sufficient amounts to do more investments in future.
- The degree of financial leverage was 0.92, 1.25, and 0.92 times in the year 2011, 2012, and 2013. But in the year 2014 it came down in a negative term which was (0.36). These uncertain situations are not good for the company.
- The operating leverage was 1.07 times in the year 2010 and then it sometime increases and sometime decreases and all the operating leverage in that period are in positive terms. But still the situation is not satisfactory; there must be more increase in it.
- The degree of operating leverage is negative in the year 2011 and 2013. Again the situation is not satisfactory for the company.
- The combined leverage is on increasing trend from the year 2010 to 2013, and it came down slowly in the year 2014. The situation is satisfactory but it must be on increasing trend continuously which will be favourable for the company.
- The degree of combined leverage is negative in the year 2011, 2013, and 2014. The situation is not good for the company because it must be in positive terms.

Suggestions -

- The sales of the company are continuously increasing in the year 2010 to 2014. Also the operating expenses of the company have enormous increase in the same years, now it is suggested that company should make some more improvements in the future.
- There are ups and downs in EBIT from the year 2010 to 2104; it is suggested that the fluctuations in EBIT must be controlled for the well-being of the company in future.
- The company investments have been fluctuating from the year 2010 to 2014, and the operating profit has not been increased up to the mark. Hence, the company should make investments in better avenues or alternatives for increasing the profit.
- The company should proper utilize its current assets for the betterment of their business.
- The company should increase their profit as well as should have control their interest. In this light, there must be reduction in using the borrowing capital.
- The degree of financial leverage was not good. It is suggested that the company should maintain consistency and avoids ups and downs in the degree of financial leverages in the future.
- There are some fluctuations in operating leverage, it is suggested that company should maintain the operating leverages up to the level and make sure that the operating leverages must be in positive terms.
- The degree of operating leverage is positive in the year 2012 and 2014, but it is seen negative in the year 2011 and 2013. It is suggested that the company should

maintain consistency and avoids ups and downs in the degree of operating leverages in the future.

- Company should improve their contribution position and EBT position for the betterment of the combined leverages.

References :-

1. Jensen, M.C., and Meckling, W. (1976) The Theory of the firm: Managerial behaviour, agency costs and Capital Structure. Journal of Financial Economics, 3,305-360.
2. Powell, T.M. (1996) How much does industry matter? An alternative empirical test. Strategic Management Journal, 17(4), 323-334.
3. Maio, J. (2005) Optimal Capital Structure and industry dynamics. Journal of Finance, 60(6), 2621-2659.
4. Ju, N and Ou-Yang, H. (2006) Capital Structure, Debt Maturity, and Stochastic interest rates. Journal of business, 79(5), 2470-2502.
5. Hyde, S. (2007) the response of industry stock returns to market, exchange rate and interest rate risks. Managerial Finance, 33(9), 693-709.
6. Mackie- Mason, J.K. (1990) Do taxes affect corporate finance decisions? The Journal of finance, 45, 1471-1493.
7. Barclay, M.Smith, C.W., Watts, R.L. (1995) the determinants of corporate leverage and dividend policies. Journal of Applied Corporate Finance, vol. 7, 4-19.
8. R.G. and Zingales, L. (1995) what do we know about Capital Structure? Some evidence from international data. The Journal of Finance, 50(5), 1421-1460.
9. Sharma and Gupta, Management Accounting Eleventh Revised Edition, Kalyani Publication New Delhi.
10. Pandey, I.M, Financial Management, Vikas Publication House Pvt.Ltd. New Delhi, 1999.
11. Khan M.Y. and Jain P.K., Financial Management, Tata Mc Graw-Hill, Publication Pvt.Ltd, New Delhi, 1994.

****

Role Of Technology And Micro-Finance

Dr. Prabhakar Pandey * Jobert V Joseph**

Abstract - Microfinance has received increased attention among financial service providers as a good alternative in the rural credit market at present. Microfinance is recognized as a powerful instrument for poverty alleviation, enabling the poor to accumulate the assets, increase their income and improve their economic conditions. A conservative estimate presented by M- CRIL, a leading micro credit rating agency the annual demand at Rs 480 billion for 60-70 million poor families with an average annual demand at Rs 8000. In the growing demand there is need to put in place a technologically and managerially workable system, to Provide banking service to rural and urban poor at their doorstep.

Introduction - Generally it is understood that micro-finance only about credit. But this concept is not correct. It is much about thrift (saving), remittance services and micro-insurance. There is urgent need to introduce technology in the system. The use of technology will step up the collection saving from the rural poor in small amounts at regular interval and at their door steps. In the case of urban poor who suffer from high income and drain many be plugged and diverted to savings. The banks may introduce in the residential colony of the poor. At the same time NBFC-MFI could device a mechanism to deliver the money of wage earners to their separated rural families. There are many upcoming technologies could be explored which are suitable for rural poor such as 'Gramteller' a rural ATM, introduction (biometric) of smart card, which may revolutionise the micro finance sector and bring down the transaction costs.

Effective use of ICT - Although various web sites provide information regarding MFI and their services. But ICT can be used more effectively to more give information relational to terms and conditions on which MFI provide Micro-finance is still missing in web sites. These information can be provided in English as well as in other Indian languages. To monitoring of the various micro finance activities can be very effectively done trough ICT. At present various schemes implemented by department of rural development are moinitered physically to asses the impact. Although a software RURAL SOFT (http://ruralsoft.nic.in) is being used to remitter the schemes at district or block level on a monthly basis, and the data that truly reflects the success of the schemes are not collected due to non-availability of ICT and infrastructure in rural areas. The information about the schemes at grass root level can be collected through SHG and can be feed into RURAL SOFT to monitor the schemes.

ICT can also be used to providing access to wider market to beneficiaries for their products. This may enhance the economic returns for their micro finance activities. At present the information relating to global market needs of product and the produce of beneficiaries are provided through a application software RURAL BAZAR (http://ruralbazar.nic.in) .Some of the states like Tamilnadu, Goa and Tripura have successfully adopted the software. Other states should also be encouraged to adopt this software. However efforts should be made to ensure the quality of the product and logistic support, appropriate packaging and timely delivery be ensured.

Common service centre's - ICT can be used to empower the rural community and catalyze social change through modern technologies. Government of India has already taken initiative in the direction and has proposed to set-up more than 100000 internet enabled information and communication technology(ICT) access point which will be known as Common Service Centers. These centers will provide high quality and cost effective video voice and data relating to activities of MFI. It is certainly a very good efforts to provide economical access to information and service to rural population at cheaper cost and this will improve the governance. It is proposed a three tier structure of common service centres as at Village Level Entrepreneur(VLE – a franchise) at the middle service centre's agency (SCA franchise) and at the top State Level Agency. SLA which will facilitate the implementation of the scheme with the State Govt. though SCA and VLE.

Computer Munshi System - 'PRADAN' is an agency to monitor the activities of Self Help Group (SHG). 'PRADHAN' evolved a system to improve the book keeping system of SHG known as Computer Munshi System (CMS). The basic object of the this system is to improve the accounting and book keeping of SHG. A capable member from SHG is unanimously selected and trained in book keeping who is known group accountant (GA). The group accountants is

* H.O.D. (Commerce) Dr. C.V. Raman University, Bilaspur (C.G.) INDIA
** Research Scholar, Dr. C.V. Raman University, Bilaspur (C.G.) INDIA

provided a computer munshi a computer printer in central location with power connection .GA is expected to serve about 300 SHG who will deliver to the a regular monthly transaction statement which will include weekly saving and credit transaction balances, expenditure and income statement. These statement are computerized and its correctness is checked and warned for any discrepancies to SHG, every week. There after monthly trial balance is prepared and discussed in the Monthly group meetings. This system is cost effective help to timely preparation of accounts and can be identify the discrepancies at the initial stage. This system is in function with help of NABARD and SIDBI.
Conclusion

The sufficient information impedes the policy formulation, and access to credit by poor people may be significantly improved by introducing technology in the system. It will reduce the cost of fund; cost of delivery of credit, cost of collective and payment and consequently increase the profit margin. Absence of transparency in dealing with the borrowers and consumer can be solved with the use of information technology. ATMs and Gram Teller (Rural ATM) may be located in the post offices. Common Service Centre's developed by department of IT may also be linked to post offices which are experienced to handle financial products. The multipurpose unique ID 'AADHAR' card system can also be utilized for effective delivery of micro credit. This will help to provide credit linked subsidy to SHG and individuals.

The network of internet enabled information and communication technology (ICT) access point termed as Common Service Centre (CSC) implemented across the country will help to maintain system and increase the transparency in its working.

References :-

1. Planning Commission Report of the working group on agriculture credit, co-operation and crop insurance for the tenth five year plan (2002-07) New Delhi.
2. Planning commission, Approach paper to the Tenth Five Year Plan (2002-07) New Delhi
3. Ministry of Finance, Task force on revival of Co-operative credit institution (Draft Report) New Delhi 2004.
4. Ministry of Finance, Expert committee on consumption credit (Chairman B. Sivaran) New Delhi.
5. Department of Post (Ministry of Communication and Information Technology) Executive Summary, Seminar on Information of India Post for Vision, New Delhi 2005.
6. Department of Introduction Technology (Ministry of Communication and Information Technology) ICT for Micro Finance activities at Grass root level, New Delhi 2006.
7. Govt of India, Planning Commission (Development policy Division) report of steering Committee on Micro Finance and poverty Alleviation for the Eleventh Five Year Plan (2007-08 – 2011-12)

****

Global Trends In Human Resource Management

Dr. Trilochan Sharma *

Abstract - In this competitive scenario where there is immense demand for people and the talent pool is shrinking, Human Resource Management plays a vital role in an organization. Recruitment and Retention of employees is becoming a challenge as well as a concern area for all HR Managers. As Indian economy is booming, HR managers will be experiencing tough times ahead in hiring and retaining talent. As most organizations want to be globally aligned, we are witnessing a change in systems, global payroll solutions, management cultures and philosophy. Companies are employing people from across the globe. This situation has given rise to a global HRM keeping in mind the need for multi-skill development across a motivated workforce. Nowadays it is not possible to show a good financial or operating report unless your personnel relations are in order.

Over the years, highly skilled and knowledge based jobs are increasing while low skilled jobs are decreasing. This calls for future skill mapping through proper HRM initiatives.

Introduction - ***"Change is the law of life and those who look only to the past or present are certain to win the future***". John F Kennedy.

Success and failure of business depends upon the effective and efficient management of the organization. Neither the Great Wall nor the Parthenon would have been built without proper Management.

The contributed valuable ideas of Elton Mayo, Fredeic Taylor, Robert Owen, Charles Dupin, Mc Gregor, Henry Fayol and many more laid the foundation for subsequent, broader inquiries into the nature of management, which ultimately lead to the betterment of human resource. From workers to associates of the organization is a long journey that has taken place. The contributed valuable ideas of Elton Mayo, Fredeic Taylor, Robert Owen, Charles Dupin, Mc Gregor, Henry Fayol and many more laid the foundation for subsequent, broader inquiries into the nature of management, which ultimately lead to the betterment of human resource. From workers to associates of the organization is a long journey that has taken place. With the continuous increasing competition and countries becoming global, the Organization's concept for HR has changed. It's the need of the time to consider the employees as the resource. The organization which are working on the principle of **Attracting, Managing, Nurturing and Retaining** their employees are moving ahead with the competition and are having competitive advantage over other organizations. The organizations believe in having brains working for them and are giving them full space to explore experiment and exploit their ideas, creativity and innovativeness. The employees are being involved in the workings of the organizations, and their efforts are recognized and rewarded.

Companies no more believe in the tall hierarchical structures, and cubical with closed doors of the boss but have given way for **flat organizational structures** with more spans of control and less chain of command. The doors of the boss are open. In place of being the autocratic leaders or managers they play the role of **team builders, mentors, coach or counselors**. Following the principles of retaining the brains in the organization, the policies have become more and more flexible providing **alternative and flexible work schedule. Flexi time, compressed week, job sharing, tele- commuting is some of these**. It not only caters the need of the employees and help in retaining them rather 24 Hrs accessibility of manpower to the work is there. To be ahead in the competition and a step ahead with the expectations of the employee's work place is becoming **family friendly and employee friendly**. The companies emphasize in providing them all the facilities, statutory and non statutory. Training and development are the other areas where organizations are trying to take the lead over other organizations so that employees can be made multi skilled to handle multiple tasks. The new horizon has opened up where the organizations competing are clubbing together to form the network of talents.

Organizations today are not only making the structure and policies employee friendly rather are **trying to improve the quality of work life** where employees can enjoy their working and will be able to manage the balance between work life and personal life. **They provide them the in-house facility of health club, yoga, meditation, alternative work schedule, picnics, and family get together where they can reduce their stress and strains. They also provide educational facility, medical facility etc.** Some companies also provide the employees holiday package along with their family members. The idea behind is not only to have a happy workforce but to get extended to the families of the employees as well to develop a sense of belongingness in the employees.

Other areas where remarkable changes are being made are in **communication pattern**. Gone are the days when employees feared talking to their bosses and had to wait for

* **Lecturer, Institute of Business Studies, Ch. Charan Singh University (Campus) Meerut (U.P.) INDIA**

weeks to get their things reached to them. Every thing has changed. Things are replaced by **cross communication, gang plank mechanism, open door policy, internet, intranet, mentoring, counseling, coaching etc.** Communication is no more restricted to from top to bottom rather bottom to up is encouraged more in the organization to make functioning more smooth and to have grievance free, satisfied employees. With the continuous rise in competition, business cannot flourish if individualism is prevailing in the company. Therefore to meet the need of the time the growing organizations are following **collectivism culture**, where working in groups and teams are emphasized. The problems are not moved up for the solutions rather are tried to solve at the same level, opening the way for concepts of **Quality circles, Self Managed Teams Cross Functional teams** etc. These techniques make the employees work in group or team, upgrade them, empower them and sharpens their creativity and innovativeness

Objectives:

The following objective has set for this study.

1. To study the change in human resource management in present scenario of business.
2. To study the latest trends in human resource management.
3. To study the change comes in the HR manager's job after the new development in HRM.

Methodology - The study based on secondary data and basic issues discussed at different forum of the Human resource industry time to time. The fact collected from the magazines and research journals.

Human Resource Management Trends - In organizations, it is important to determine both current and future organizational requirements for both core employees and the contingent workforce in terms of their skills/technical abilities, competencies, flexibility etc. The analysis requires consideration of the internal and external factors that can have an effect on there sourcing ,development ,other hand internal influences are broadly within the control of the organization to predict ,determine and monitor, for example the organizational culture underpinned by management behaviours (or style), environmental climate and the approach to ethical and corporate social responsibilities. In order to know the business environment in which any organization operates, three major trends should be considered:

Demographics – It is the characteristics of a population/ workforce, for example, age, gender or social class. This type of trend may have an effect in relation to pension offerings, insurance packages etc.

Diversity – It refers to the variation within the population/ workplace. Changes in society now mean that a larger proportion of organizations are made up of "babyboomers" or older employees in comparison to thirty years ago. Advocates of" workplace diversity" simply advocate an employee base that is a mirror reflection of the make-up of society insofar as race, gender, sexual orientation, etc.

Skills and qualifications - As industries move from manual to more managerial professions, so does the need for more highly skilled graduates. If the market is "tight" i.e. not enough staff for the jobs), employers will have to compete for employees by offering financial rewards, community investment, etc. motivation and retention of employees and other workers. The external factors are those largely out-with the control of the organization and include issues such as the economic climate, current and future trends of the labor market e.g. skills, education level, government investment into industries etc.

HR Trends In Pre-Liberalization Phase - In 1990 due to liberalized government policies of various countries the human resource started floating from one country to another this led to diversification of workforce and cross culture took place as a result employees from one nation migrating to another nation and bringing their culture with them this led to mixed organization culture so the HR professional has to play major role in coordinating the workforce of different culture in an organization. Evolution of Personnel management started in 19th century at that time there was a boom in industrialization which leads to increase in franchising and influence of trade unions and harshness of industrial condition called for the better of industrial condition. Second World War increased the importance of having personnel department because of producing large war materials the ministry of labour and national services insisted to combine both personnel department and welfare officer work on a full time basis.

HR Trends In Post-Liberalization Phase - Corporate India has come a long way since Independence. Today Indian companies have spread themselves across the globe and are moving to a borderless world. Similarly post liberalization and globalization a large population of Indians have become a part of the multinational and foreign units. In short, the Indian workforce.Trends In Human Resource Management - Human resource management_is a process of bringing people and organizations together so that the goals of each other are met. The role of HR manager is shifting from that of a protector and screener to the role of a planner and change agent. Personnel directors are the new corporate heroes.The name of the game today in business is personnel. Nowadays it is not possible to show a good financial or operating report unless your personnel relations are in order. Over the years,highly skilled and knowledge based jobs are increasing while low skilled jobs are decreasing. This calls for future skill mapping through proper HRM initiatives. Indian organizations are also witnessing a change in systems, management cultures and philosophy due to the global alignment of Indian organizations. There is a need for multi skill development. Role of HRM is becoming all the more important.

Some of the recent trends that are being observed are as follows:

1. The recent quality management standards **ISO 9001** and **ISO 9004** of 2000 focus more on people centric organizations. Organizations now need to prepare themselves in order to address people centered issues with commitment from the top management, with renewed thrust on HR issues, more particularly on training.

2. Charles Handy also advocated future organizational models like **Shamrock**, **Federal** and **Triple I**. Such organizational models also refocus on people centric issues and

call for redefining the future role of HR professionals.

3. To leapfrog ahead of competition in this world of uncertainty, organizations have introduced **six- sigma practices**. Six- sigma uses rigorous analytical tools with leadership from the top and develops a method for sustainable improvement. These practices improve organizational values and helps in creating defect free product or services at minimum cost.

4. Human resource outsourcing is a new accession that makes a traditional HR department redundant in an organization. Exult, the international pioneer in HR BPO already roped in Bank of America, international players BP Amoco & over the years plan to spread their business to most of the Fortune 500 companies.

5. With the increase of global job mobility, recruiting competent people is also increasingly becoming difficult, especially in India. Therefore by creating an **enabling culture**, organizations are also required to work out a **retention strategy** for the existing skilled manpower.

New Trends In International HRM - International HRM places greater emphasis on a number of responsibilities and functions such as relocation, orientation and translation services to help employees adapt to a new and different environment outside their own country.

1. Selection of employees requires careful evaluation of the personal characteristics of the candidate and his/ her spouse.
2. Training and development extends beyond information and orientation training to include sensitivity training and field experiences that will enable the manager to understand cultural differences better. Managers need to be protected from career development risks, re-entry problems and culture shock.
3. To balance the pros and cons of home country and host country evaluations, performance evaluations should combine the two sources of appraisal information.
4. Compensation systems should support the overall strategic intent of the organization but should be customized for local conditions.
5. In many European countries - Germany for one, law establishes representation. Organizations typically negotiate the agreement with the unions at a national level.
6. In Europe it is more likely for salaried employees and managers to be unionized.

HR Managers should do the following things to ensure success-

1. Use workforce skills and abilities in order to exploit environmental opportunities and neutralize threats.
2. Employ innovative reward plans that recognize employee contributions and grant enhancements.
3. Indulge in continuous quality improvement through TQM and HR contributions like training, development, counseling, etc
4. Utilize people with distinctive capabilities to create unsurpassed competence in an area, e.g. Xerox in photocopiers, 3M in adhesives, Telco in trucks etc.
5. Decentralize operations and rely on self-managed teams to deliver goods in difficult times e.g. Motorola is famous for short product development cycles. It has quickly commercialized ideas from its research labs.
6. Lay off workers in a smooth way explaining facts to unions, workers and other affected groups e.g. IBM , Kodak, Xerox, etc.

HR Managers today are focusing attention on the following-

a) Policies - HR policies based on trust, openness, equity and consensus.

b) Motivation - Create conditions in which people are willing to work with zeal, initiative and enthusiasm; make people feel like winners.

c) Relations - Fair treatment of people and prompt redress of grievances would pave the way for healthy work-place relations.

d) Change agent - Prepare workers to accept technological changes by clarifying doubts.

e) Quality Consciousness - Commitment to quality in all aspects of personnel administration will ensure success.

Due to the new trends in HR, in a nutshell the HR manager should treat people as resources, reward them equitably, and integrate their aspirations with corporate goals through suitable HR policies.

Conclusion - Growth and development an organization depends upon the workforce it owns. **It is very much said that growth and development of the organization depends upon the growth and development of the employees and vis-à-vis**.The industrial revolution in eighteenth and nineteenth- century were in need to coordinate the efforts of large number of people in the production process. Britain provides more recent witness to the practice of management leaving written traces of concern for management. Those were the days when employees were considered as machines and were only to give maximum output. No facilities, no infrastructure, no relations, no group, no team. Only relations with the organization were to give maximum output. They were not trained; jobs were not specific and scientific. Charles Babbage, for example wrote about the need for the systematic study and standardization of work operations to improve productivity.

References :-

1. Ashwathapa K. (2005) 'Human Resource Management' Tata Mc Graw Hills, Fifthedition
2. Mamoria C.B and Gankar S.B (2005) 'Personnel Management' Himalaya Publishing House, Twenty Fifth edition.
3. Pareek, U and T.V.Rao, 1981, "Designing and Managing Human Resource Systems", Oxford and IBH Publishing Co., New Delhi.
4. Rao,T.V. and Abraham, E.A.," A Survey of HRD Practices in Indian Industry, in Rao, T.V. and Pereira, D.F., Recent Experiences in HRD, New Delhi, Oxford & IBH,1985.
5. http://www.articlesbase.com/authors/shiny-p-kumar/177340
6. http://www.hrsuccessmantra.com/2010/02/new-trends-in-internationalhrm.html
7. http://humanresources.about.com/

ग्लोबल इन्वेस्टर मीट : दिशा, दशा व परिणाम (चतुर्थ मीट के विशेष संदर्भ में)

डॉ. प्रवीण शर्मा *

प्रस्तावना – विगत् दशक (2002–2012) में मध्यप्रदेश ने बीमारु राज्य का चौला चमत्कारिक रूप से उतार फेंका है। अब यह देश के विकसित राज्यों की कतार में शामिल होने को है। 'सकल घरेलू उत्पाद' व 'आर्थिक वृद्धि' के ऑकड़ों का विश्लेषण करें तो हम यह पाते हैं कि मध्यप्रदेश ने देश में नए मानक स्थापित किए हैं। प्रदेश की 'विकास दर' 2011–12 में 12% 'कृषि विकास दर' अन्य राज्यों के मुकाबले सर्वाधिक प्रावधानित 24.99% रही। इसमें पशुपालन से प्राप्त आय भी शामिल है। यह लगातार तीसरा साल है जब प्रदेश के किसानों ने अपनी मेहनत से प्रदेश को इस मुकाम पर पहुँचाया है। दूसरी ओर प्रदेश की औद्योगिक विकास दर 2005–06 से 2013–14 तक औसतन 8.8% रही है।

प्रदेश शासन के औद्योगिक केन्द्र विकास निगम लि0 **(A.K.V.N. Ltd.)** व ट्राईफेक (म.प्र. ट्रेड एण्ड इन्वेटमेंट फेसिलिटेशन कार्पो0लि0) प्रदेश के विकास के लिए विगत वर्षों में औद्योगिक प्रगति को गति प्रदान करने के उद्देश्य प्रति दो वर्ष में एक बार ग्लोबल इन्वेसटर्स मीट आयोजित करती है। इस औद्योगिक महाकुंभ का प्रमुख उद्देश्य रोजगार ,घरेलू व विदेशी निवेश को आकर्षित करना व छोटे–छोटे उद्योगों की स्थापना को प्रोत्साहित करना है। इसके माध्यम से शासकीय कार्यवाहियों व उद्योगों से संबंधित नीतियों पर विचार मंथन करके, उसमें पारदर्शिता लाना भी एक उद्देश्य है। इस मंच के माध्यम से म.प्र. शासन एक ऐसा अवसर प्रदान करती है जिससे देश–विदेश के उद्योगपतियों, निवेशकों, नीति निर्धारकों, 'सलाहकारों को अपने 'दृष्टिकोण रखने का सुअवसर प्राप्त हो जिससे नए व्यवसायिक अवसर न केवल उभरकर सामने आएँ वरन् उन पर मंथन क्रियान्वयन भी हो। उपर्युक्त उद्देश्यों को लक्ष्य में रखकर प्रथम ग्लोबल इन्वेस्टर्स समीट इदौर में वर्ष 2007 में आयोजित की गई। चतुर्थ समींट हाल ही में इन्दौर में अक्टूबर 2014 में आयोजित की गई।

शोध का उद्देश्य – 2007 में प्रारंभ किए गए इन वैश्विक आयोजनों से 2014 तक अर्थात 7 वर्षों में मध्यप्रदेश की झोली कितनी समृद्ध हुई ? कितने नए उद्योग वास्तविकता के धरातल पर स्थापित हुए ? कितने व्यक्तियों को राजेगार प्राप्त हुआ ? आयोजनों के दौरान हुए समझौते किस सीमा तक क्रियान्वित हुए ? पूर्व में स्थापित उद्योगों की कौन–कौनसी समस्याएँ आज भी विद्यमान हैं ? शासन द्वारा इनके निवारण के लिए कौन–कौन से उपाय किए जा रहे हैं ? इन सबका सिंहावलोकन करना ही शोध के प्रमुख उद्देश्य हैं।

शोध प्रविधि

प्रस्तुत शोध को प्रकाशित एवं द्वितीयक संमकों व सूचनाओं की सहायता से निष्कर्ष निकालते हुए सम्पन्न किया गया है। प्रदेश में सीमेंट, टेक्सटाईल, सूचना प्रौद्योगिकी, अधोसंरचना विकास, नवकरणीय ऊर्जा, उद्यानिकी, खाद्य प्रसंस्करण, ऑटोमोबाईल इंजिनियरिंग फार्मास्युटिसिकल, कौशल विकास, सर्विस सेक्टर, बायोटेक्नोलॉजी, कौशल विकास, पर्यटन व वनोपज उद्योग के क्षेत्र में विकास की अनेक संभावनाएँ मौजूद हैं। 2022 तक 20 लाख से ज्यादा कुशल मानव शक्ति की आवश्यकता प्रदेश में होगी। प्रस्तुत तालिका क्र. 01 में 2007 से 2014 तक आयोजित विभिन्न 4 आयोजनों की उपलब्धियों को दर्शाया गया है –

तालिका क्रं0 –1 (देखे)

तालिका क्रं0 01 से स्पष्ट है कि प्रत्येक समीट में किए गए करारों की संख्या व राशियों में धनात्मक वृद्धि हुई है , दूसरी ओर 2014 के पूर्व के कुल 468 करारों में से कुल 84 करार निरस्त हुए जो कि कुल करार संख्या का 18% था जिसके परिणामस्वरुप प्रदेश को 77,371 करोड रु0 के बडे निवेश से वंचित होना पडा । यही कारण रहा कि इन्दौर समीट 2014 में एमओयु के स्थान पर अभिरूचि प्रदर्शन(एक्सप्रेशन आफ इंट्रेस्ट)करार की नवीन प्रक्रिया प्रारंभ की गई । पाँचवी समीट को 19 से 21 अक्टूबर 2016 में इन्दौर में आयोजित किया जाना प्रस्तावित किया गया है। समीटवार आयोजनों का संक्षिप्त ब्यौरा जानना भी उपयुक्त है ताकि उससे हुई उपलब्धि से अन्त में निष्कर्ष निकाले जा सकें। आयोजन वार ब्यौरा अग्र प्रकार है –

1. **प्रथम आयोजन (26–27 अक्टूबर 2007 इन्दौर) –** इस आयोजन में देश व विदेशों से 500 से अधिक उद्योगपतियों व विशेषज्ञ शामिल हुए। इस आयोजन में 1,20,541 करोड़ के 102 करारों पर हस्ताक्षर हुए जो मुख्य रूप से खाद्य प्रसंस्करण, खनिज आधारित उद्योग, टूयूरिज्म, फार्मा, स्वास्थ्य, टेक्सटाईल, ऑटोमोबाईल, इजिनियरिंग, अधोसंरचना विकास, पॉवर, सीमेन्ट, सूचना प्रौद्योगिकी व कृषि क्षेत्र से सम्बद्ध थे।
2. **स्थानीय आयोजन (अक्टूबर 2008)–** स्थानीय आयोजन का विवरण तालिका क्रं0–02 में दर्शाया गया है –

तालिका क्रं.–02 **(देखे)**

तालिका क्रं. 02 से स्पष्ट है कि प्रत्येक समीट में किए गए करारों की संख्या व राशियों में धनात्मक वृद्धि हुई है एवंब पॉवर, सीमेंट, आयरन, अलाय, कुर्किंग कोयला, लौहा, उपकरण, सूचना प्रौद्योगिक कृषि, खाद्य प्रसंस्करण उच्च उच्च शिक्षा, ग्रामीण विकास के क्षेत्र में संतोषजनक निवेश न केवल देश से वरन विदेशों से भी आकर्षित करने में सफलता मिली है।

3. **तृतीय आयोजन (28–30 अक्टूबर 2012)–** यह मुख्य रूप से कृषि खाद्य प्रसंस्करण, सामग्री आधारित उद्योगों, पर्यटन, दवाईयों का उद्योग, स्वास्थ्य, कपड़ा उद्योग, इंजिनियरिंग व ऑटोमोबाईल अधोसंरचना विकास,

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) श्री अटल बिहारी वाजपेयी शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

सूचना प्रौद्योगिकी, लघु व मध्यम उद्योगों के विकास को लक्षित रखते हुए आयोजित की गई थी। इस मीट में आई.आई.एम. इन्दौर के विद्यार्थियों को मेहमानों के साथ संलग्न किया गया था। टीसीएस (41 करोड़ रू. निवेश) 100 एकड़ के प्रस्ताव, इन्फोसिस (500 करोड़ रू.निवेश), 130 एकड़, टेवा (जर्मन फार्मा कं. 600 करोड़ रू.), भायलॉन अमेरिकन कं. के प्रस्ताव, नमकीन क्लस्टर (12 करोड़ रू.) की स्थापना व जमीन आबंटन, फार्मा कलस्टर (देपालपुर बीजेपुर) में जमीन आबंटन (160 करोड़ रू. का निवेश), फ्यूचर ग्रुप (2500 करोड़ रू.) के प्रमुख करारों के साथ शासन व उद्योगपतियों के मध्य 3.56 लाख करोड़ रू. के कुल 890 करार हुए।

4. चतुर्थ आयोजन (26-27 अक्टूबर 2014 इन्दौर) – ग्लोबल इन्वेस्टर्स समीट 2014 का ध्यानाकर्षण निवेश के क्षेत्र में समीट का एशिया पेसिफिक में नाम हो व हर निवेशक म.प्र. को उद्योग मित्र राज्य के रूप में देखे, पर ज्यादा रहा। अब तक सवा लाख करोड़ रूपए की पूंजी का निवेश राज्य में हो चुका है। इसी तरह इस बार सारा ध्यान निवेशकों से एमओयू साइन करने से ऊपर उठकर अभिरूचि प्रदर्शन पर हस्ताक्षर समीट पूर्व व उसके संपन्न होने के बाद भी करवाए जाएगें का महत्वपूर्ण निर्णय रहा। इसमें ऑस्ट्रलिया, कनाडा, मलेशिया, चेक गणराज्य, मैक्सिको, दक्षिण अफ्रीका, नीदरलैंड और स्पेन सहित 50 देशों की भागीदारी रही। तालिका क्रं0-3 में इन्दौर समिट 2014 के अभिरूचि प्रदर्शन (करारं) को दर्शाया गया है –

तालिका क्रं0- 03 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

इस प्रकार तालिका क्रं0 3 के अवलोकन से यह स्पष्ट है कि सर्वाधिक प्रस्ताव नवकरीणीय ऊर्जा के क्षेत्र में किये गए। किन्तु रोजगार अधोसंरचना व अप्रत्यक्ष रोजगार की दृष्टि से कृषि क्षेत्र के प्रस्ताव ज्यादा उम्मीद जगाते हैं, यह भी उल्लेखनीय है कि समीट में भले ही रिकार्ड तोड़ करार देखने को मिले हैं लेकिन जिन सेक्टरों में अधिक निवेश आया है, उसके कुशल मजदूर (जैसे - माईनिंग, फुड प्रोसेसिंग, मेटलर्जी एवं डेयरी उद्योग आदि) व उनकी कोर्स ट्रेनिंग दोनों का ही अभाव हमारे प्रदेश में है। अत: इस ओर भी ध्यान दिया जाना अपेक्षित है।

रियायतें व सुविधाएँ – 8 अक्टूबर 2014, 100 करोड़ के वेंचर फण्ड की घोषणा मुख्यमंत्री सूक्ष्म/लघु लघु उद्योग संवर्धन बोर्ड की घोषणा (मुख्यमंत्री समीक्षा स्वयं करेंगे) मुख्यमंत्री ने चीन, जापान, दक्षिण कोरिया की तर्ज पर सूक्ष्म/लघु उद्योग के विकास की बात कहीं केवल सर्विस से काम नहीं चलेगा। नवप्रवर्तनकारी विचार रखने वाले युवा उद्यामियों के लिए ,युवाओं को लोन दिया जाएगा। मंत्री कालराज मिश्र द्वारा 150 करोड़ से लघु मध्यम, व सूक्ष्म उद्योगों के लिए टूलरूम खोलने की घोषणा समीट में की। 1100 करोड़ का टर्न ओव्हर कर लेने पर भी लघु उद्यागों को उसी श्रेणी की सुविधाएँ मिलती रहे ऐसा प्रावधान लाया जाएगा। छोटे मझोले उद्योगों को मुख्यमंत्री के सकल घरेलु उत्पाद में 9.25% योगदान है। उद्योग लगाने के लिए आवेदन प्रक्रिया ऑनलाईन की जाएगी।

समस्याएँ –

1. एकल खिड़की प्रणाली (SWS) के बावजूद निवेशकों को स्वयं कई स्थानों पर जाना होता है जिससे समय अधिक लगता है।
2. परिवहन - पीथमपुर (इन्दौर) में रेल्वे नेटवर्क से न जुड़ने के कारण माल के निर्यात में परेशानी आती है। रतलाम से लोडिंग के कारण समय व पैसा ज्यादा लगता है। ऐसी ही रेल नेटवर्क की कमी प्रदेश के कई औद्योगिक क्षेत्रों की समस्या है।
3. टेक्नीकल लैब व आधारभूत सुविधाओं (जैसे - सड़क ड्रेनेज, पानी आदि) की कमी इन्दौर के सांवेर रोड़ व प्रदेशन के कई औद्योगिक क्षेत्रों की समस्याएँ है। टेक्नीकल लेब के अभाव में मटेरियल की जांच के लिए उद्योगपतियों को मशक्कत करना पड़ती है।
4. कुशल कर्मचारियों की कमी से प्रदेश के लगभग सभी औद्योगिक क्षेत्र जुझ रहे है।
5. दोहरा कर भी यहाँ के उद्योगों के लिए सिरदर्द बना हुआ है।
6. बिजली का मेन्टेनेंस व समय असमय कटौती भी प्रदेश के उद्योगों के लिए सिरदर्द बना हुआ है।

मध्यप्रदेश की पहचान अब निवेश मित्र राज्य के रूप में बन गई है। प्रदेश देश में तेजी से बढ़ती हुई अर्थव्यवस्था वाले राज्यों में शुमार हो गया है। प्रदेश का उद्योग विभाग वृहद परियोजनाओं के साथ सूक्ष्म, लघु एवं मध्यम श्रेणी के उद्योगों को प्रदेश में पूंजी निवेश कर रोजगार सृजन के लिए निवेशकों को आंमत्रित तथा आकर्षित कर रहा है।

सुझाव – समिट में दुनियाभर के कई देश आ रहे बड़े घराने आ रहे यह एक अच्छा संकेत हैं।सिंगलविंडों सिस्टम होने के बावजूद इसकी व्यवहारिकता को दुरूस्त करना चाहिए।जिससे निवेशकों को स्वयं ही कई स्थानों पर न जाना पड़े।

1. प्रदेश में विकास के लिए रियल एस्टेट के व्यवसाय को आगे बढ़ाना होगा।
2. सिर्फ पॉलिसी बनाना ही नहीं उसका सही क्रियान्वयन भी जरूरी है।
3. समीट इन्दौर के बजाय बुंदेलखण्ड भिंड या जबलपुर क्षेत्र में हो तो प्रदेश का समग्र विकास होगा। ग्रामीण विकास की बहुत जरूरत है।
4. म.प्र. में आज कनेक्टिविटी की आवश्यकता है। यहां पॉलिसी तो बन जाती है लेकिन उनका सही क्रियान्वयन नहीं होता।
5. म.प्र. में 20 हजार हेक्टेयर जमीन पर बीमार उद्योग हैं इन्हें पहले शुरू किया जाए। विकास सतत् प्रक्रिया है।
6. अग्निशमन केन्द्रों की कमी व कानून व्यवस्था (सुरक्षा इंतजाम) के अभाव में उद्योगों के बंद होने की स्थितियाँ निर्मित हो रही है। मालनपुर में ग्वालियर इसका ज्वलन्त उदाहरण है जहाँ उद्योगें की संख्या 175 घटकर 100 रह गई है।
7. जबलपुर के रिछाई औद्योगिक क्षेत्र में जो नए विशेष आर्थिक क्षेत्र(एसईजेड) विकसित होने वाले थे उन्होंने शुरू होने से पहले ही दम तोड़ दिया अर्थात जमीन के अभाव में यह स्थिति बनी है।
8. गंदे पानी की निकासी भी अधिकांश उद्योगों के लिए समस्या है।
9. कंपनियों का काम पूरे देश में होता है। टैक्स रियायत के दस्तावेज लेट होने से एसेसमेंट में देरी होती है। एसेसमेंट होने के बाद विभाग को इसका वेरीफिकेशन करना होता है। इसमें लंबा समय लगता है।
10. एसेसमेंट व वेरीफिकेशन की प्रक्रिया में ही ढाई साल से अधिक समय लग रहा है।
11. गुजरात, तमिलनाडु जैसे राज्यों में इलेक्ट्रॉनिक रिटर्न होने व अन्य सरकारी प्रक्रियाएँ कम होने से समय कम लगता है।

निष्कर्ष – ट्रायफेक के द्वारा वेबसाईट पर उपलब्ध ऑकड़ों के अनुसार शासन द्वारा 523 एम.ओ.यू. 6,49,083 करोड रू. के आज दिनांक तक किए एवं इनमें से 235 एम.ओ.यू. 178080 करोड रू. के क्रियान्वित करके वास्तविकता के धरातल पर लाए गए। 84 एम.ओ.यू. 77,641 करोड रू. के

निरस्त किए गए। इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि म.प्र. शासन राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर म.प्र. की ब्रोंडिंग में ही सफल तो हो गया है लेकिन निवेश प्राथमिकता में के रूझान को राज्य के पक्ष में करने में जितनी अपेक्षित सफलता मिलनी थी, उससे वह कोषों दूर है। कहीं न कहीं क्रियान्वयन व निगरानी में इच्छाशक्ति की कमी स्पष्ट दिखाई दे रही है कही ऐसा तो नहीं ये आयोजन केवल ध्यानाकर्षण तमाशा मात्र बनकर रह जाए। क्योंकि चौथी समीट में स्वयं मुख्यमंत्री ने निगरानी की जिम्मेदारी ली है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. दैनिक भास्कर समाचार पत्र 22.09.2104 से 13.10.214 के विभिन्न अंक।
2. http.www. mptrifac.org .pdf.moug.

तालिका क्रं0 -1
ग्लोबल इन्वेस्टर्स समीट के करार

(2007 से 2014 तक) (निवेश करोड़)

आयोजन वर्ष	आयोजन स्थल	एम.ओ.यू. की संख्या	एम.ओ.यू. की राशियाँ	निरस्त एम.ओ.यू. की संख्या व राशि करोड में	
2007	इन्दौर	102	1.20	45	27144
2010	खजुराहो	107	2.35	25	43470
2012	इन्दौर	259	4.31	14	6757
2014	इन्दौर	अभिरूचि प्रदर्शन 890	3.56	-	-

खस्त्रोत : **http//www.mptifac.org/pdf/mou**)

तालिका क्रं.-02
स्थानीय समीट 2008 के करार

तिथि	स्थान	निवेशक सहभागिता	एम.ओ.यू.	राशि (क0 रू. में)	क्षेत्र	विदेशी निवेशक
15-16 फरवरी (दो दिवसीय)	जबलपुर	300	62	59129	लोहा क्षेत्र, कृषि, खाद्य प्रसंस्करण, पॉवर, सूचना प्रौद्योगिकी व अन्य।	-
11 अप्रैल	सागर	600	36	30698	लोहा क्षेत्र, पॉवर, सीमेंट, आयरन, अलाय, कुकिंग कोयला।	यू.के. नीदरलैण्ड
29-30 जून (दो दिवसीय)	ग्वालियर	200	62	88018	सीमेंट, लौहा, पॉवर, उपकरण, सूचना प्रौद्योगिक कृषि, खाद्य प्रसंस्करण उच्च शिक्षा, ग्रामीण विकास।	-

(स्त्रोत : http//www.mptifac.org/pdf/mou)

तालिका क्रं0– 03

इन्दौर समीट 2014 के अभिरूचि प्रदर्शन(एक्सप्रेशन आफ इंट्रेस्ट)करार

(राशि करोड रु0 व रोजगार लाख में)

मद	करारों की संख्या	राशि	प्रत्यक्ष रोज. संख्या	अप्रत्यक्ष रोज, संख्या
कृषि	100	34766	66895	228333
सीमेंट उत्खनन खनिज	30	27491	17956	47152
आयरन स्टील	58	31045	30182	58815
पॉवर आईल गैस	22	15930	11693	27615
आवास नगरीय विकास	84	36618	82569	215920
सड़क	86	33544	67088	134175
औद्योगिक अधोसंरचना	194	88405	179115	362230
वेयर हाउसिंग/ लॉजिस्टिक	112	5016	5016	5016
इंजि./ऑटोमोबाईल	40	11852	20493	39997
फार्मा	17	6163	5950	11900
पर्यटन	03	1377	1750	3400
स्वास्थ्य सेवा	16	4877	20575	29439
नवीकरणीय ऊर्जा	153	20498	25713	34569
कुल	890	3.56	6.33	14.53

(स्त्रोत : दैनिक भास्कर समाचार पत्र 12.10.2104 अंक)

****

पूंजी संरचना का विश्लेषणात्मक अध्ययन हिन्दुस्तान कॉपर लिमिटेड के विशेष संदर्भ में

दीप्ति जोठे *

शोध सारांश – एक कंपनी को चलाने एवं कुशलतापूर्वक उसका संचालन करने के लिए धन की आवश्यकता होती है। कंपनी की सही दिशा निर्देशन में वित्त महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है। यदि किसी संगठन में धनराशि अपर्याप्त है, तब ऐसी स्थिती में व्यापार का संचालन ठीक से नहीं किया जा सकता है कई संगठन आज वित्त की कमी की समस्या का सामना कर रहे है। पर्याप्त वित्त, किसी संगठन के वर्तमान और भविष्य की जरूरतों का सही अनुमान लगाने एवं उसे सुचारू रूप से चलाने के लिए मद्द करेगा जो कि एक श्रेष्ठ पूंजी संरचना के लिए आवश्यक है। पूंजी संरचना के गठन के लिए पूंजी संरचना का आकलन करना महत्वपूर्ण है।

अध्ययन का प्रारम्भ, पूंजी संरचना की प्रस्तावना, साहित्य का पुर्नावलोकन और उद्देश्यों के साथ किया गया है। शोध प्रविधी, ऑकडों का विश्लेषण एवं निर्वचन, निष्कर्ष एवं सुझाव इस अध्ययन के अंतर्गत शामिल है जहॉ ऑकडों का विश्लेषण के आधार पर निर्वचन किया गया है एंव साथ साथ बताया गया है कि किस प्रकार से हम पूंजी संरचना में अनुपात विश्लेषण प्रबंध कर सकते है। इस अध्ययन के माध्यम से शोध से संबंधित कुछ आधारभूत सूचना हिन्दुस्तान कॉपर लिमिटेड की पूंजी संरचना के विश्लेषण के बारे में दी गई है।

शब्द कुंजी – लंबी अवधि के फण्ड, परिचालन लाभ, पूंजी संरचना ।

प्रस्तावना – एक व्यावसायिक संस्था में पूंजीकरण की राशि का निर्धारण करने के बाद पूंजी संरचना का निर्धारण करना आवश्यक होता है। पूंजी संरचना का अर्थ, पूंजीकरण राशि को किन किन प्रतिभूतियों द्वारा किस किस अनुपात में प्राप्त करने का निर्धारण करना होता है। पूंजी संरचना में पूंजी के विभिन्न साधनों का एक ऐसा अनुपात निर्धारित किया जाता है, जिससे वे कंपनी को एक ऐसी विशिष्ट पूंजी संरचना प्रदान करें जो कंपनी की आवश्यकताओं को पूरा करने में पूर्ण रूप से सक्षम हो। पूंजी संरचना अपने अपने गुण एवं दोष होते है किसी कंपनी की पूंजी संरचना में किसी एक विशिष्ट प्रकार की प्रतिभूतियों का भाग होना आगे चलकर कंपनी के लिए अधिक लाभदायक अथवा अधिक जोखिम पूर्ण हो सकता है उदाहरण के लिए यदि एक कंपनी अपनी पूंजी का प्रयोग नहीं करें तथा ऐसी कंपनी अपने अंशधारियों या स्वामियों के लिए अधिकतम लाभ अर्जित करने के उद्देश्य को प्राप्त करने में सफल नहीं होगी। इसके विपरीत एक कंपनी की अपनी आय में अत्याधिक उतार चढाव आते है तब यह माना जायेगा कि इस प्रकार की कंपनी अपने ऊपर बहुत अधिक जोखिम ले रही है इस प्रकार की पूंजी संरचना को पूंजी का उच्च गीयरिंग कहते है। यह पूंजी संरचना सम्पन्नता के वर्षो में यह न केवल समता अंशधारियों की आय को बहुत घटा देती है बल्कि यह कंपनी के ऊपर बड़ी जोखिम उत्पन्न कर देती है क्योंकि ऐसे वर्षो में कंपनी पूर्वाधिकार अंशो तथा ऋणपत्रो पर देय निश्चित भार को वहन करने में असमर्थ होती है अत: कंपनी की पूंजी संरचना का निर्धारण अत्याधिक सोच समझकर करना चाहिए।

किसी आदर्श पूंजी संरचना की कल्पना करना कठिन है जिसे सभी कंपनियों एवं सभी व्यवसायों में समान रूप में लागू किया जा सके अत: प्रत्येक व्यक्तिगत स्थिति में प्रत्येक कंपनी के लिए उसकी विशिष्ट आवश्यकताओं के अनुसार पूंजी संरचना का निर्धारण करना चाहिए।

पूंजी संरचना के अंतर्गत यह निश्चित किया जाता है कि कुल पूंजी एवं कितना भाग अंश के रूप में, अंशों का कितना भाग समता अंशों के रूप में कितना भाग पूर्वाधिकार अंशों के रूप में हो। जहॉ एक तरह पूर्वाधिकार अंशों पर एक निश्चित दर से लाभांश देना पडता है। वही समता अंशो पर लाभांश देना अनिवार्य नहीं होता वास्तव में समता अंश पूर्वाधिकार अंशों के बीच उचित अनुपात और समन्वय की जरूरत होती है ताकि पूंजी संरचना को सुदृढ़ बनाया जा सके। पूंजी संरचना के अंतर्गत स्थाई या दीर्घकालीन पूंजी का समावेश किया जाता है। प्रवंधकों के समक्ष सबसे बडी कठिनाई निर्णय लेने की होती है कि स्थाई पूंजी का प्रबंध स्वामित्व साधनों से किया जाए।

कंपनी की भावी प्रगति उसकी पूंजी संरचना पर ही निर्भर करती है अत: पूंजी संरचना का निर्माण करते समय अनेक तत्वों पर विचार करना अत्यन्त आवश्यक होता है।

शोध विषय के अध्ययन के औचित्य – किसी भी कंपनी का व्यवसाय के संचालन के लिए पूंजी का होना अनिवार्य है पूंजी दो प्रकार की होती है। ऋणपूंजी एवं क्षमता पूंजी।

कंपनी के लिए इन दोनों पूंजी का होना अनिवार्य है लेकिन ये मिश्रण कंपनी की लाभदायकता एवं पूंजी की लागत पर निर्भर करता है। यदि पूंजी की लागत अधिक है तो कंपनी को स्वामित्व पूंजी का उपयोग अधिक करना चाहिए और यदि पूंजी की लागत कम है एवं लाभ अधिक है तब ऐसी स्थिती में ऋणपूंजी का अधिक उपयोग करना चाहिए। अत: यह स्पष्ट है कि पूंजी ढॉचा कंपनी की लाभदायकता को प्रभावित करता है। इस शोध विषय के अध्ययन में मैंने हिन्दुस्तान कॉपर लिमिटेड कंपनी को चुना है कि इस कंपनी का पूंजी ढांचा लाभों को कहां तक प्रभावित कर रहा है।

पूंजी ढांचा अर्थात पूंजी का मिश्रण एक कपंनी में कितना होना चाहिए तथा यह लाभो को कहॉ तक प्रभावित कर रहा है इत्यादि का अध्ययन

* शोधार्थी (वाणिज्य) बरकतउल्ला विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

आसानी से किया जा सकता है।

शोध विषय के अध्ययन का पुर्नावलोकन – एक बार समस्या को सूत्रबद्ध करने के बाद अगला कदम समस्या से जुडे साहित्य का गहन सर्वे करना होता है इस कार्य के लिए बाह्य व सूचीबद्ध जर्नल्स किया तथा प्रकाशित अथवा अप्रकाशित पुस्तकों की सूचियों का सर्वप्रथम अवलोकन होता है शैक्षणिक जर्नल्स, सभाओं की कार्यवाही, सरकारी रिपोर्ट, किताबों आदि को समस्या के आधार पर टेप करना पडता है इस प्रक्रिया के अंतर्गत यह ध्यान रखा जाना चाहिए कि एक स्त्रोत, दूसरे की तरफ ले जाता है। पूर्व के अध्ययन, अगर कोई है जो कि वर्तमान अध्ययन के समान है तो उनका सावधानी से अध्ययन होना चाहिए। पूंजी ढांचे विश्लेषण के क्षेत्र में कई अध्ययन इस क्षेत्र में किए गए है जिन में से प्रमुख है।

मोदिग्लिानी एंव मिलर (1958) – इनके अध्ययन में यह प्रस्तुत किया है कि पूंजी संरचना के वित्त की लागत और निवेश के सिद्धांत का अध्ययन किया है इन्होंने अपने अध्ययन में बताया है कि किस तरह वित्त एक फर्म के निवेश की व्यवस्था में हम किस प्रकार वित्त का प्रयोग कर फर्म की गुणवत्ता में वृद्धि कर सकते है इन्होंने बताया है कि किस तरह विकास के सिद्धांत और वित्त की लागत के बीच संबंध बनाया जा सकता है। यह दोनों एक दूसरे के पूरक है। वित्त की लागत पूंजीकरण दर से अधिक है। शेयर के द्वारा वित्त पोषित एक निवेश चालू शेयर धारकों के लिए फायदेमंद है। ब्याज दर में कमी वित्त की लागत को हानि पहुंचाता है जिसके अनुसार एक कंपनी में स्थिति पर भी बुरा प्रभाव पड़ता है। वित्त की लागत और निवेश के सिद्धांतों का कुशलतापूर्वक संचालन करने से कंपनी की आय प्राप्ति साधनों में वृद्धि होती है।

केस्टर (1986) – इन्होंने अपने अध्ययन में बताया है कि पूंजी और स्वामित्व संरचना संयुक्त राज्य अमेरिका और जापानी विनिर्माण निगमों की तुलना, जापानी विनिर्माण कंपनी अमेरिकी कंपनियों की तुलना में अधिक उच्च उत्तोलक थे,इस हेतु परिकल्पना का परीक्षण किया। इन्होंने ध्यान में रखा कि पूंजी संरचना के निर्धारण तत्वो को बढ़ाने के लिए लाभ,जोखिम और आकार के हिसाब से उद्योगों का वर्गीकरण किया। इसमें उन्होंने नमूनों के रूप में 344 जापनी कंपनियों ओर 27 विभिन्न उद्योगों में,452 अमेरिकीय कंपनियों को शामिल किया इसे उत्तोलक (लेब) बाजार मूल्य और पुस्तकीय मूल्य के आधार पर मापा गया। प्रतिपगमन परिणाम में इन्होंने लाभ और उत्तोलक के बीच नकारात्मक संबंध बताया है उत्तोलक मापक होता है जब एक बाजार मूल्य के आधार पर अमेरिकी और जापानी विनिर्माण कंपनियों के बीच उत्तोलक में महत्वपूर्ण देश मतभेद लाभ और विकास के बीच विशेषताओं के लिए नियंत्रित करने का निष्कर्ष निकाला है।

मेहरान (1992) – इन्होंने अपने अध्ययन में कार्यकारी प्रोत्साहन योजना कॉरपोरेट नियंत्रण और पूंजी संरचना, फर्म की पूंजी संरचना और कार्यकारी प्रोत्साहन योजनाओं, प्रबंधकीय इक्कसवीं निवेश और की कागज अधिकारियों को कुल प्रोत्साहन योजनाओं में मुआवजा, प्रबंधको के स्वामित्व, इंक्विटी का प्रतिशत, निदेशक मंडल को निवेश और निर्देशको और प्रमुख शेयर धारको के बोर्ड द्वारा निगरानी के बीच संबंध की जॉच की है। बढे व्यक्तिगत निदेशकों द्वारा स्वामित्व के इंक्विटी का प्रतिशत कि फर्म का लाभ बढ़ाने के अनुपात और प्रतिशत के बीच एक सकारात्मक संबंध पाया प्रतिपगमन परिणाम के प्रभावी मानिटर थे। इनका अध्ययन तर्कसंगत था। व्यक्तिगत निवेशकों द्वारा स्वामित्व का प्रतिशत और फर्म का लाभ बढाने के बीच एक सकारात्मक संबंध का संकेत मिला। निष्कर्षो के माध्यम से फर्म पूंजी संरचना प्रंबधको और शेयरधारको के बीच एजेंसी लागत से संबंधित थे।

गेनावेट एवं कावेश (1986) – इन्होंने अपने अध्ययन में प्रस्तुत किया है कि पूंजी की प्रतिबद्धता एवं लाभप्रदता में एक आनुभविक जांच उत्पादन प्रक्रियाओं की स्थाई पूंजी की तीव्रता द्वारा माप की प्रतिबद्धता के अवसरो के लिए संपूर्ण क्षेत्र लाभ को प्रभावित करता है। उन्होंने सुझाव दिया कि कंपनियों में गलाकाट प्रतिस्पर्धा नमूना उत्तरी अमेरिका के मुख्य रूप से संचालन विनिर्माण कारोबार के 274 अवलोकनों के लिए प्रतिबंधित किया गया था। कंपनी की सुरक्षा के स्तर की निराशाजनक स्थिति से कंपनी का भावी लाभ खत्म हो सकता है क्योंकि यह काम को प्रभावित करता है इनके अध्ययन में लाभ (मुनाफा) के साथ गिरावट साबित हुआ है।

वार्टन और गार्डन (1988) – इनके मतानुसार, 25 कॉरपोरेट बड़ी अमेरिकी कंपनियों ने पूंजी संरचना की स्थिति समझाने के लिए परम्परागत वित्तीय परिप्रेक्ष्य की पूर्ण जांच की है कॉरपोरेट रणनीति और इक्विटी संरचना का संबंध कमाई जोखिम दृढ़ता से और ऋण से संबंधित होना बताया है लेकिन इसका परिणाम इन्होंने अपने अध्ययन में बताया है कि वृद्धि और कर्ज की बिक्री के बीच सकारात्मक संबंधों की धारणा प्रतिपादित की है। इन्होंने इसका उचित समर्थन भी किया है। इन्होंने कंपनियों और ऋण के बीच जो नकारात्मक संबंध पाया जाता है इन्होंने इसका समर्थन नहीं किया एवं लाभ को नकारात्मक ऋण से संबंधित होना बताया है वित्तीय चर का लाभ, लाभ – आकार, 279 कंपनियों में प्रयोग किया जिससे यह निष्कर्ष प्राप्त हुए कि लाभ का विश्लेषण विपरीत रूप से आकार एंव विपरीत रूप से ऋण से संबंधित थे। इनके अध्ययन में परिकल्पना महत्वहीन है।

शोध के उद्देश्य – शोध विषय अध्ययन के उद्देश्य निम्नलिखित है :–

1. हिन्दुस्तान कॉपर लिमिटेड के ऋण एवं समता पूंजी का अध्ययन करना।
2. हिन्दुस्तान कॉपर लिमिटेड के पूंजी ढॉचे का लाभो पर आने वाले प्रभाव का अध्ययन करना।
3. कंपनी के पूंजी ढॉचे की अवधारणा का अध्ययन करना।

शोध प्रविधि – प्रत्येक शोध अध्ययन के लिए ऑकडों की आवश्यकता होती है। चाहे वह प्राथमिक हो अथवा द्वितीयक इस शोध अध्ययन के अंतर्गत मैंने द्वितीयक ऑकडों का उपयोग किया है इन ऑकडों के स्त्रोत निम्न है वार्षिक रिपोर्ट बजट, सांख्यिकीय रिपोर्ट और प्रकाशित दस्तावेज है अपने अध्ययन में मैंने बडे पैमाने पर जो ऑकडे संग्रहित किए वहॉ वार्षिक आंकडो के आधार पर एवं इण्टरनेट के द्वारा किए है। जो कि मेरे अध्ययन से संबंधित है।

'कोल इंडिया लिमिटेड में पूंजी संरचना का विश्लेषण' यह अध्ययन मैंने कई चरणों में पूरा किया जिसमें शामिल है प्रस्तावना, शोध संरचना, पूंजी संरचना का विश्लेषण और निष्कर्ष एवं सुझावों के विश्लेषण से संबंधित है। अध्ययन के उद्देश्यों और भी विश्लेषित है जो कि मेरे अध्ययन के ऑकडों से संबंधित है। अध्ययन की परिकल्पना, वह इसमें उपयोगी नहीं है ऑकडों से संबंधित मैने अपने अध्ययन में जो सुझाव दिये है वह ऑकडों के विश्लेषण के आधार पर उद्देश्यों के अध्ययन के आधार पर एवं अवलोकन के अध्ययन के आधार पर है। जो मेरे अध्ययन विषय से संबंधित है जो कि कंपनी को मजबूत स्थिति में लाने एवं साथ साथ कंपनी की साख में वृद्धि हेतु सहायक है।

अध्ययन की सीमाएँ – शोध अध्ययन विषय की सीमाएँ निम्नलिखित है –

1. अध्ययन 2010–2014 पांच साल के वार्षिक प्रतिवेदन के आधार पर किया गया है इसलिए इस अध्ययन में ऑकडों का संग्रह, अवलोकन और सुझावों की वैधता सीमित है।

2. यह अध्ययन द्वितीयक ऑकडों पर आधारित है। द्वितीयक ऑकडों की विश्वसनीयता भारतीय परिदृश्य में लेखा परीक्षण पर निर्भर है।

3. समंकों के समूह का वर्गीकरण एवं समूहीकरण शोध विषय की आवश्यकतानुसार किया गया है।

टेबल नं. 1 – ऋण स्वामी पूंजी अनुपात का विवरण –

ऋण स्वामी पूंजी अनुपात समता अंशपूंजी तथा अधिमान अंशपूंजी एवं स्थायी ब्याज वाली ऋणपूंजी के बीच स्थित संबंध को पूंजी मिलान अनुपात कहते है।

ऋण स्वामी पूंजी अनुपात की गणना का सूत्र= (Outsider's fund/ shareholder's fund)

(Rs.in crores)

Year	Outsider's Fund	Shareholder's Fund	Times
2010	486.48	1122.25	0.43
2011	676.71	1238.96	0.54
2012	450.98	1397.64	0.32
2013	436.06	1645.03	0.26
2014	408.39	1829.27	0.22

Source: - Annual reports of HCL from 2010-2014.

निर्वचन : टेबल नं. 1 हिन्दुस्तान कॉपर लिमिटेड का ऋण स्वामी पूंजी अनुपात हमें यह बताता है कि वर्ष 2010 से 2014 तक ऋण स्वामी पूंजी अनुपात, क्रमश: 0.43, 0.54, 0.32, 0.26, 0.22 है वर्ष 2014 में कंपनी को ऋण स्वामी पूंजी अनुपात में कमि हुई है। अत: कंपनी को इसे बढाने का प्रयास करना चाहिए।

टेबल नं. 2 : स्वामित्व अनुपात का विवरण

यह अनुपात स्वामित्व कोष और कुल सम्पत्ति के मध्य संबंध को प्रकट करता है।

स्वामित्व पूंजी अनुपात की गणना का सूत्र =(Shareholder's Fund/ total Assets) x 100

(Rs in crores)

Year	Shareholder's Fund	Total Assets	Ratio (%)
2010	1122.25	1609.11	69.74
2011	1238.96	1915.68	64.67
2012	1397.64	1848.22	75.62
2013	1645.03	1829.27	89.92
2014	1829.27	2237.66	81.74

Source: - Annual reports of HCL from 2010-2014.

निर्वचन : टेबल नं. 2 हिन्दुस्तान कॉपर लिमिटेड का स्वामित्व अनुपात, में स्वामित्व कोष का प्रतिशत कुल संपत्ति पर क्रमश: 69.74, 64.67, 75.62, 89.92, 81.74 वर्ष 2011 में कंपनी को हानि हो रही है। अत: कंपनी को अपनी स्वामित्व अनुपात को बढाने का प्रयास करना चाहिए।

टेबल नं. 3 : स्थायी संपत्ति अनुपात का विवरण

सुद्रढ वित्त नीति के अनुसार स्थायी सम्पत्तियों का क्रय स्थायी या दीर्घ कालीन दायित्वों से ही किया जाना चाहिए। इस आधार पर निम्न सूत्र के द्वारा स्थायी सम्पत्ति अनुपात की गणना की जाती है।

स्थायी संपत्ति अनुपात की गणना का सूत्र= (Fixed Assets/Long-term Fund) x 100

(Rs in crores)

Year	Fixed Assets	Long-term Fund	Ratio (%)
2010	760.35	1378.31	55.16
2011	770.01	1514.99	50.82
2012	788.15	1589.01	49.60
2013	807.54	1861.85	43.37
2014	835.07	2033.36	41.06

Source: - Annual reports of HCL from 2010-2014.

निर्वचन : टेबल नं. 4.3 हिन्दुस्तान कॉपर लिमिटेड का स्थायी सम्पत्ति अनुपात हमें यह बताता है कि 2010 से 2014 तक स्थायी सम्पत्ति पर प्रतिशत क्रमश: 55.16, 50.82, 49.60, 43.37, 41.06 अत: वर्ष 2014 में कंपनी का स्थायी सम्पत्ति अनुपात कम पाया गया है। अत: कंपनी को इसे बढ़ाने का प्रयास करने चाहिए।

टेबल नं. 4 : कुल संपत्ति अनुपात

यह अनुपात कुल सम्पत्ति और दीर्धकालीन कोष में संबंध बताता है।

कुल सम्पत्ति अनुपात की गणना का सूत्र = (Total Assets/Long-term Fund) x 100

(Rs. in crores)

Year	Total Assets	Long-term Fund	Ratio (%)
2010	1609.11	1378.31	116.74
2011	1915.68	1514.99	126.44
2012	1848.22	1589.01	116.31
2013	1829.27	1861.85	98.25
2014	2237.66	2033.36	110.04

Source: - Annual reports of HCL from 2010-2014.

निर्वचन : टेबल नं. 4 हिन्दुस्तान कॉपर लिमिटेड का कुल सम्पत्ति अनुपात जिसका कुल सम्पत्ति अनुपात का प्रतिशत वर्ष 2010 से 2014 तक क्रमश: 116.74, 126.44, 116.31, 98.25, 110.04 है। कंपनी को वर्ष 2013 में कुल सम्पत्ति अनुपात में कमि हुई है बाकी के वर्षो की स्थिति सामान्य है। अत: कंपनी को बाकी के वर्षो की तरह वर्ष 2013 की स्थिति में सुधार करना चाहिए।

टेबल नं. 5 : शोधन क्षमता अनुपात का विवरण

यह अनुपात कंपनी की दीर्घकालीन शोधन क्षमता का मापन एवं विश्लेषण करने के लिए प्रयोग किया जाता हैं।

शोधन क्षमता अनुपात की गणना का सूत्र = (Total Liabilities to Outsider's/Total assets) x 100

(Rs in crores)

Year	Total liabilities to Outsider's	Total Assets	Ratio (%)
2010	486.48	1609.11	30.23
2011	676.71	1915.68	35.32
2012	450.98	1848.22	24.40
2013	436.06	1829.27	23.83
2014	408.39	2237.66	18.25

Source: - Annual reports of HCL from 2010-2014.

निर्वचन : टेबल नं. 5 हिन्दुस्तान कॉपर लिमिटेड का शोधन क्षमता अनुपात हमें यह बताता है कि कुल सम्पत्ति पर इसका प्रतिशत वर्ष 2010 से 2014 तक क्रमश: 30.23, 35.32, 24.40. 23.83, 18.25 है। वर्ष 2014 में

कंपनी के शोधन क्षमता अनुपात में कमी पाई गई है। अत: कंपनी को इसे बढ़ाने का प्रयास करना चाहिए।

टेबल नं. 6 – ब्याज प्राप्ति पूंजी अनुपात का विवरण

इस अनुपात के द्वारा हमें व्यापार में किस किस वस्तुओं पर कितना ब्याज दिया जाता है। और शुद्ध लाभ पर कितना ब्याज दिया जाता है इसका संबंध बतालाया है।

ब्याज प्राप्ति पूंजी अनुपात की गणना सूत्र = (Earnig before interest tax/interest)

(Rs in crores)

Year	EBIT	Interest	Times
2010	160.65	3.49	46.03
2011	194.45	2.42	80.35
2012	410.41	1.53	268.25
2013	341.39	4.28	79.76
2014	287.86	2.32	124.07

Source: - Annual reports of HCL from 2010-2014.

निर्वचन : टेबल नं. 6 हिन्दुस्तान कॉपर लिमिटेड का ब्याज प्राप्ति अनुपात से हमें ज्ञात होता है कि वर्ष 2010 से 2014 तक क्रमश: 46.03, 80.35, 268.25, 79.76, 124.04 है। वर्ष 2011 एवं वर्ष 2013 में कंपनी को ब्याज प्राप्ति अनुपात में कमि पायी गई है। अत: बाकी वर्षो की तरह कंपनी को इस स्थिती पर नियंत्रण कर अपने लाभ को बढाने का प्रयास करना चाहिए।

टेबल नं. 7 – पूंजीकरण अनुपात का विवरण

यह अनुपात बाजार से क्रय किए गए अंश का कितना भाग प्रतिशत आय के रूप में प्राप्त होता है, के संबंध को दर्शाता है।

पूंजीकरण अनुपात की गणना का सूत्र = (Earing per share (EPS)/ Market Price per share or Book value)

(Rs in crores)

Year	EPS	Market Price Per Share	Times
2010	1.67	12.13	0.13
2011	2.42	13.39	0.18
2012	3.50	15.11	0.23
2013	3.84	17.78	0.21
2014	3.10	19.77	0.15

Source: - Annual reports of HCL from 2010-2014.

निर्वचन : टेबल नं. 4.7 हिन्दुस्तान कॉपर लिमिटेड का पूंजीकरण अनुपात से ज्ञात होता है कि यह आय अर्जन मापन के बाजारी मूल्य को प्रदर्शित करता है। जिसमें कंपनी वर्ष 2010 से 2014 तक पूंजीकरण अनुपात क्रमश: 0.13, 0.18, 0.23, 0.21, 0.15 है। वर्ष 2010 में यह अनुपात बाकी के वर्षो की अपेक्षा कम पाया गया है अत: कंपनी को इसे बढ़ाने का प्रयास करना चाहिए।

टेबल नं. 8 – वित्तीय उत्तोलक अनुपात का विवरण

यह अनुपात परिचालन एवं कर के पहले अर्जित आय के बीच के संबंध को दर्शाता है।

वित्तीय उत्तोलक अनुपात का सूत्र= (Earning Before interest Tax / Earning Before Tax)

(Rs in crores)

Year	EBIT	EBT	Times
2010	160.65	157.16	1.02
2011	194.45	192.03	1.01
2012	410.41	408.88	1.00
2013	341.39	337.11	1.01
2014	287.86	285.54	1.00

Source: - Annual reports of HCL from 2010-2014.

निर्वचन : टेबल नं. 8 हिन्दुस्तान कॉपर लिमिटेड का वित्तीय उत्तोलक, प्रत्याय दर को प्रदर्शित करता है। जिसमें परिचालन लाभ क्रमश: 1.02, 1.01, 1.00, 1.01,1.00 है। वर्ष 2012 व वर्ष 2014 में कंपनी को घाटा हो रहा है। अत: कंपनी को इसे बढाने का प्रयास करना चाहिए।

टेबल नं. 9 : परिचालन लाभ अनुपात का विवरण

यह अनुपात परिचालन लाभ एवं शुद्ध विक्रय के बीच संबंध को बतलाता है।

परिचालन लाभ अनुपात की गणना का सूत्र= (Operating Profit/Net sales) ×100

(Rs in crores)

Year	Operating Profit	Net Sales	Ratio (%)
2010	160.65	1328.6	12.09
2011	194.45	1151.14	16.89
2012	410.41	1484.29	27.65
2013	341.39	1323.14	25.80
2014	287.86	1488.88	19.33

Source: - Annual reports of HCL from 2010-2014.

निर्वचन :टेबल नं. 9 हिन्दुस्तान कॉपर लिमिटेड का परिचालन लाभ अनुपात का प्रतिशत शुद्ध विक्रय पर वर्ष 2010 से 2014 तक क्रमश: 12.09, 16.89, 27.65, 25.80, 19.33 है। वर्ष 2010 में कंपनी को घाटा हो रहा है। अत: कंपनी को इसे बढ़ाने का प्रयास करना चाहिए।

निष्कर्ष : प्रस्तुत शोध अध्ययन में हिन्दुस्तान कॉपर लिमिटेड में दिए वार्षिक प्रतिवेदन में किए गयें ऑकडो को उचित मानकर पिछले पांच वर्षो का पूंजी संरचना अनुपात का अध्ययन किया है अध्ययन के दौरान जो निष्कर्ष सामने आए वह निम्न है।

1. कंपनी के ऋण स्वामी पूंजी अनुपात के अध्ययन से ज्ञात होता है कि लाभ अनुपात से प्राप्त होने वाली राशि से वर्ष 2014 में ऋण स्वामी पूंजी अनुपात में कमी आई है। अत: इस स्थिति को नियंत्रित किया जाना चाहिए।
2. हिन्दुस्तान कॉपर लिमिटेड में स्वामित्व अनुपात की स्थिति संतोषजनक नहीं है। कंपनी को वर्ष 2010 एवं 2012 में घाटा हो रहा है। जिससे कंपनी को लाभ नहीं हो पा रहा है। कंपनी के लाभ में कमियाँ आ रही है।
3. कंपनी का स्थायी सम्पति अनुपात के अध्ययन से ज्ञात हो रहा है कि वर्ष 2013 एवं 2014 में कंपनी को घाटा हो रहा है अत: इसकी स्थिति भी संतोषजनक नहीं है।
4. कंपनी के कुल सम्पत्ति अनुपात के अध्ययन से ज्ञात होता है कि वर्ष 2013 में कंपनी की स्थिति संतोषजनक नहीं हैं।
5. हिन्दुस्तान कॉपर लिमिटेड के शोधन क्षमता अनुपात के अध्ययन से ज्ञात होता है कि वर्ष 2014 में इसमें कमी आ रही है। जिससे कंपनी को हानि का सामना करना पड रहा है।

6. कंपनी के ब्याज प्रारित अनुपात से पता चलता है कि वर्ष 2010 में कंपनी की स्थिति ठीक नहीं है।
7. कंपनी के पूंजीकरण अनुपात के अध्ययन से ज्ञात होता है कि वर्ष 2010 एवं 2014 में कंपनी को घाटा हो रहा है।
8. कंपनी का वित्तीय उत्तोलक अनुपात वर्ष 2012 एवं 2014 में कम पाया गया है जिससे कंपनी को हानि हो रही है।
9. हिन्दुस्तान कॉपर लिमिटेड के परिचालन–लाभ अनुपात के विवरण से ज्ञात होता है कि वर्ष 2010 में इसकी संतोषजनक नहीं है।

सुझाव –

1. कंपनी का जो ऋण स्वामी पूंजी अनुपात है। वह वर्ष 2013 एवं 2014 में हानि की स्थिति में है इसिलिए हम सुझाव देते है कि इन वर्षो की स्थिति में कंपनी को सुधार करना चाहिए ताकि कंपनी को इससे लाभ अर्जित हो सके।
2. कंपनी के स्वामित्व अनुपात के विश्लेषण करते समय ज्ञात होता है कि वर्ष 2011 में यह 64.67 प्रतिशत है जो कि कम है। अत: हम सुझाव देते है कि कंपनी को इसे आगे बढाने का प्रयास करना चाहिए।
3. हिन्दुस्तान कॉपर लिमिटेड के स्थायी सम्पत्ति के अध्ययन से ज्ञात होता है कि यह वर्ष 2013 एवं 2014 में हानि की स्थिति में है। इसलिए हमारा सुझाव है कि अपनी स्थिति को सुधारे ताकि कंपनी को लाभ हो सके।
4. कंपनी के कुल सम्पत्ति अनुपात के अध्ययन के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि वर्ष 2013 में इसकी स्थिति संतोषजनक नहीं है। अत: हम सुझाव देते है कि कंपनी इस स्थिति को सुधारे ताकि कंपनी की कुल सम्पत्ति बढ सके।
5. कंपनी के शोधन –क्षमता अनुपात के अध्ययन से पता चलता है कि इसमें काफी उतार–चढाव हो रहा है। इसीलिए हम सुझाव देते है कि कंपनी अपनी इस कमी को दुर करने का प्रयास करें।
6. कंपनी के ब्याज प्रारित अनुपात के अध्ययन से ज्ञात होता है कि–वर्ष 2010 में कंपनी की स्थिति संतोषजनक नहीं है। इसीलिए हम सुझाव देते है कि कंपनी को इसे बढाने का प्रयास करना चाहिए।
7. कंपनी के पूंजीकरण अनुपात के अध्ययन से ज्ञात होता है कि इसमें वर्ष 2010 में 0.03 एवं 2014 में ;(–015) अत: कंपनी को में घाटा हो रहा है। अत: हमारा अध्ययन सुझाव देता है कि कंपनी अपनी इस स्थिति को सुधारे ताकि कंपनी को लाभ प्राप्त हो सके।
8. हिन्दुस्तान कॉपर लिमिटेड के वित्तीय उत्तोलक अनुपात के अध्ययन से ज्ञात होता है कि वर्ष 2012 एवं 2014 में यह एक समान स्थिति में है। अत: कंपनी को इस स्थिति में वृद्धि करने का प्रयास करना चाहिए।
9. कंपनी के परिचालन लाभ के अध्ययन से ज्ञात है कि वर्ष 2010 एवं 2011 में कंपनी की स्थिती संतोषजनक नहीं है। अत: हम सुझाव देते है कि इन दो वर्षो में कंपनी को अपने परिचालन लाभ अनुपात में वृद्धि करना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. मोदिग्लिानी, एफ और एम. एच. मिलर (1958) रावद्यानी निगम के वित्त की लागत और निवेश का सिंद्धांत, अमेरिकी अर्थशास्त्र की समीक्षा 48 (3), जून : 261 – 97
2. केस्टर, सी डब्ल्यू ;1986द्ध पूंजी और स्वामित्व संरचना संयुक्त राज्य अमेरिका और जापानी विनिर्माण निगमों की तुलना वित्तीय प्रबंधन 15 (1) : 5 – 16
3. मेहरान, एच (1992) कार्यकारी प्रोत्साहन योजना कॉपरोरेट नियंत्रण और पूंजी संरचना वित्तीय और मात्रात्मक विश्लेषण 27 (4), दिसम्बर के जर्नल 539–60
4. गेनावेट पी और आर ई कावेश, 1986 पूंजी प्रतिवद्धता और लाभ प्रदता एक आनुभविक जांच आक्सफोर्ड अर्थिक पेपर्स नई श्रृंखला 38(1):94–110
5. वार्टन, एस. एल. और पी. जे. गार्डन (1988) कॉपोरेट रणनीति पूंजी संरचना सामंरिका (नीति) प्रबंधन जर्नल 6 (6)(नवम्बर–दिसंबर) 623–32
6. अग्रवाल एम. डी. : वित्तीय प्रबंध, रमेश बुक डिपो जयपुर 1997

****

मध्यप्रदेश में सोयाबीन उत्पादन की अनुकूल दशाऐं - एक तुलनात्मक अध्ययन

डॉ. प्रीति गुप्ता *

प्रस्तावना – सोयाबीन को सुनहरे बीन या चमत्कार फसल के रूप में जाना जाता है। यह प्रोटीन और तेल का एक पूर्ण स्रोत है। सोयाबीन का जन्म प्राय: चीन में हुआ था और कई वर्ष पूर्व यह हिमालय पर्वत के पार भारत के लिए पेश किया गया था। सोयाबीन मुख्य रूप से उसके बीजों की वजह से उगाया जाता है और भारत में मूंगफली के बाद दूसरा बड़ा तेल बीज है। अत: इसे वनस्पति तेल के रूप में प्रयोग के साथ, सोयाबीन से दूध, आटा आदि के लिए भी प्रयुक्त होता है। सोयाबीन स्वास्थ्य के लिए लाभदायक माना जाता है। कोलेस्ट्रॉल वसा को तो कम करता ही है बल्कि यह कैल्शियम व विटामिन-12 का भी अच्छा स्रोत माना जाता है। यह दिल, कैंसर व ओस्टियोपोरोसिस रोगों को कम करने में मदद करता है।

सोयाबीन की भारत के पिछले कई राज्यों जैसे मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, उत्तरप्रदेश और राजस्थान में खेती की जाती है। पिछले वर्षो में सोयाबीन का उत्पादन मध्यप्रदेश से सर्वाधिक प्राप्त हुआ। इसलिए मध्यप्रदेश को सोया स्टेट के नाम से जाना जाता है।

उद्देश्य – प्रस्तुत शोध-पत्र मध्यप्रदेश में सोयाबीन उत्पादन की अनुकूल दशाओं से संबंधित है, जिसमें यह जानने का प्रयास किया गया है कि :

1. सोयाबीन उत्पादन के लिए अनुकूल दशाऐं कौन-सी है ?
2. मध्यप्रदेश में किन अनुकूल दशाओं के कारण उत्पादन सर्वाधिक होता है।
3. देश के अन्य राज्यों का उत्पादन कम होने के कारणो को जानना।
4. सोयाबीन की जातियों का अध्ययनकरना।
5. वर्ष 2014 के सोयाबीन उत्पादन में विभिन्न राज्यों की भूमिका का अध्ययन करना।
6. उत्पादन में आने वाली समस्याओं को जानकर आवश्यक सुझाव प्रस्तुत करना।

परिकल्पनाऐं –

1. देश के सोयाबीन उत्पादन में मध्यप्रदेश का महत्वपूर्ण योगदान रहा है....अध्ययन करना।
2. म.प्र. में सोयाबीन उत्पादन हेतु अनुकूल परिस्थितियां प्रकृति की देन है....तथ्य का अवलोकन करना।
3. महाराष्ट्र, राजस्थान, अन्य राज्यों में सोयाबीन उत्पादन में वृद्धि की जा सकती है, नहीं.....उपरोक्त तथ्यों को उजागर कर सुझाव प्रस्तुत करना।

क्षेत्र व सीमाऐं – प्रस्तुत शोध में राजस्थान, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, राज्यों को मुख्य रूप से अध्ययनहेतु शामिल किया है। अध्ययन हेतु 2014 के सर्वेक्षित आंकड़ों को सम्मिलित किया गया है।

शोध विधि – शोध पत्र आंकड़ों के संकलन हेतु द्वितीयक संमको, इंटरनेट पर संबंधित वेब साइट्स, उपलब्ध पुस्तकालय एवं प्रत्यक्ष रूप से संबंधित अधिकारियों से पूछताछ पर आधारित है।

सोयाबीन की विभिन्न राज्यों में पाई जाने वाली प्रजातियां –

जोन	राज्य	प्रजातियां
नार्थ जोन	उत्तरप्रदेश व राजस्थान	अलंकार, अंकुर, क्लार्क-63, पीके-1042, 262, 308, 327, इंदिरा सोया-9, जेएस-2, जेएस-71-05, जेएस-75-46, जेएस-76-205, जेएस-79-81, जेएस-80-21, जेएस-335, जेएस-90
सेंट्रल जोन	मध्यप्रदेश व महाराष्ट्र	एमएसीएस-13, एमएसीएस-58, एमएयूएस-47 (पंजाबी सोना) ,एमएस-335, एनआरसी-12, एनआरसी-2, एनआरसी-7, पीके472, पीयूएसए-37, एमएसीएस-57, एमएसीएस-450, एमएयूएस-32, जेएस9560, जेएस9305, जेएस335
साउथ जोन	कर्नाटका	एमएसीएस-124, पीयूएसए-40

* शोधार्थी (वाणिज्य) 63/1, बनियावाड़ी, धार (म.प्र.) भारत

देश में सोयाबीन उत्पादन में विभिन्न राज्यों की भूमिका : (तालिक देखे अगले पृष्ठ पर)

तालिका का विश्लेषण करने पर निम्न तथ्य उजागर होते है।

1. मध्यप्रदेश में 55.462 (लाख हेक्टेयर) सोयाबीन बोया गया था। जिसमें 1086 प्रति किलो हेक्टेयर की उपज प्राप्त होकर कुल उत्पादन 60.249 (लाख रू.) प्राप्त हुआ।
2. महाराष्ट्र में म.प्र. की तुलना में सोयाबीन का जोता गया क्षेत्रफल कम था एवं 808 प्रति किलो हेक्टेयर प्राप्त हुई जो म.प्र. की तुलना में 25.60 प्रतिशत कम प्राप्त हुई।
3. राजस्थान में बोया गया क्षेत्रफल म.प्र. एवं महाराष्ट्र की अपेक्षा काफी कम था परंतु यहां पर प्रति किलो हेक्टेयर उपज म.प्र. की तुलना में कम परंतु महाराष्ट्र की तुलना में 2.35 प्रतिशत की वृद्धि थी।
4. आंध्रप्रदेश में जोता गया क्षेत्रफल म.प्र. की तुलना में 52.742 (लाख हेक्टेयर) कम था एवं उपरोक्त राज्यों की तुलना में भी सर्वाधिक कम था परंतु महाराष्ट्र एवं राजस्थान की तुलना में प्रति किलो हेक्टेयर की उपज प्राप्ति सर्वाधिक थी।

कर्नाटका, चंडीगढ़, गुजरात राज्यों की स्थिति पर प्रकाश डाले गए तो यहां पर जोता गया क्षेत्र ऊपर दिखाए गए राज्यों की तुलना में कम रहा परंतु उपज प्रति किलो हेक्टेयर प्राप्ति म.प्र. की तुलना में कम परंतु महाराष्ट्र एवं राजस्थान राज्यों की तुलना में सर्वाधिक प्राप्त हुई।

उपरोक्त विश्लेषण से स्पष्ट है कि –

1. देश के सोयाबीन उत्पादन में म.प्र. का योगदान अन्य राज्यों की तुलना में सर्वाधिक है।
2. तत्पश्चात क्रमश: राजस्थान एवं महाराष्ट्र राज्यों में सोयाबीन की खेती अधिक की जाती है जिससे प्राप्त उपज कुल सोयाबीन उत्पादन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।
3. आंध्रप्रदेश, कर्नाटका, चंडीगढ़, गुजरात राज्यों में सोयाबीन की खेती म.प्र., महाराष्ट्र एवं राज्यों की तुलना में कम की जाती है। अंत इसके कारण प्राकृतिक दशाओं का अनुकूल दशाओं का न होना है। चूंकि इन राज्यों में प्रति किलो हेक्टेयर उपज प्राप्ति अधिक है जो मानव प्रयासों की ओर संकेत करती है।

विभिन्न राज्यों में सोयाबीन उत्पादन की अनुकूल व प्रतिकूल दशाऐं –

मध्यप्रदेश –

1. मध्यप्रदेश में सोयाबीन की खेती उज्जैन, भोपाल, होऐंगाबाद, इंदौर, जबलपुर, सागर, ग्वालियर संभागों में की जाती है।
2. यहां पर 85 प्रतिशत सोयाबीन की जेएस–9560, जेएस–9305 किस्में देखने को मिलती है।
3. खंडवा, बुरहानपुर, खरगोन, बड़वानी, आलीराजपुर जिलों में जेएस–335, जेएस–9560 और जेएस–9305 सोयाबीन किस्में देखी जाती है। जेएस–335 प्रजाति छोटे आकार होने के कारण पानी की जरूरत अधिक पड़ती है। पानी की कमी के कारण यह प्रजाति का उत्पादन कम होता है।

परंतु मध्यप्रदेश अन्य राज्यों की अपेक्षा सोयाबीन उत्पादन करने में प्रथम रहा है। क्योंकि –

1. सोयाबीन के लिए यहां पर मानसून की अनुकूल परिस्थितियां है।
2. यहां के किसानों द्वारा सोयाबीन उत्पादन हेतु नवीन तकनीकों को अधिक अपनाया गया है।
3. खरपतवार प्रबंधन।
4. प्लांट संरक्षण।
5. मालवा पठार के अंतर्गत पाई जाने वाली मिट्टी में संतुलित मात्रा में नाइट्रोजन एवं फास्फोरस की मात्रा पाई जाती है जो सोयाबीन के लिए अनुकूल है।

महाराष्ट्र – महाराष्ट्र में सोयाबीन की खेती अमरावती, नागपुर, नासिक, पुणे, औरंगाबाद, कोल्हापुर संभागों में होती है। क्षेत्र के करीबन 90 प्रतिशत भाग में जेएस–335 किस्म सोयाबीन देखने को मिलती है। जेएस–335 को अधिक पानी की आवश्यकता होती है। परंतु महाराष्ट्र में पानी की कमी की वजह से सोयाबीन उत्पादन में कमी आती है। इसी प्रकार जेएस–335 सोयाबीन किस्म प्राय: 100–105 दिन में परिपक्व होती है, परंतु किसान द्वारा 80–90 दिन में कटाई कर दिए जाने की वजह से भी प्रतिकूल उत्पादन प्राप्त होता है। पिछले वर्षों (2012 एवं 2013) में सोयाबीन उत्पादन में कमी होने के कारण, आवश्यकता से अधिक वर्षा, जल जमाव, कीड़ों का फसल पर आक्रमण जैसे अन्य रहे।

राजस्थान – राजस्थान में सोयाबीन की खेती कोटा, उदयपुर, भींलवाड़ा संभागों में होती है। यहां प्रतापगढ़ व झालावाड़ जिलों में अधिकतर सोयाबीन की जेएस–335 व जेएस–9305 की किस्में पाई जाती है। पूरे राजस्थान में सोयाबीन की स्थिति कमजोर है। कमजोर होने का कारण मुख्यत: पानी का अभाव है। साथ ही जेएस–335 किस्म की परिपक्वता 100–105 दिन लेती है, परंतु यहां के किसान 80 से 90 दिन में कटाई कर लेते है, जिसकी वजह से सोयाबीन उत्पादन अपेक्षाकृत कम प्राप्त होता है।

निष्कर्ष – किसी भी फसल उत्पादन के लिए दो महत्वपूर्ण कारक प्रकृति एवं मानव अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है, किसी भी एक कारक का न होना, कुल उत्पादन पर नकारात्मक प्रभाव डालता है। अत: उपरोक्त अध्ययन से स्पष्ट है कि इसमें कोई संशय नहीं है कि म.प्र. का सोयाबीन उत्पादन में अन्य राज्यों की अपेक्षा महत्वपूर्ण योगदान रहा है, इसका कारण यहां पर प्रकृति प्रदत्त मानसून, मिट्टी, जल आदि फसल के लिए अनुकूल दशाओं का निर्माण करती है, साथ यहां पर किसानों का फसल के प्रति जागरूकता एवं प्रबंधन को भी नकारा नहीं जा सकता है। अत: प्रकृति एवं मानव प्रयासों के द्वारा म.प्र. सोया स्टेट कहलाता है। तत्पश्चात अन्य राज्य महाराष्ट्र, राजस्थान क्रमश: देश के सोयाबीन उत्पादन में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे है। यदि यहां पर सरकार एवं किसान द्वारा प्रयास किए जाए तो सोयाबीन उत्पादन में कुछ सीमा तक वृद्धि की जा सकती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. wwww.sopa.org
2. Soyabeen processors Association of India
3. Department of Agriculture and Co-operation
4. Ministry of Agriculture Govt. of India

देश में सोयाबीन उत्पादन में विभिन्न राज्यों की भूमिका

राज्य	जोता गया क्षेत्र (लाख हेक्टेयर)	उपज प्राप्ति (प्रति किलो हेक्टेयर)	कमी/वृद्धि	उत्पादन (लाख रू. में एमटी)
मध्यप्रदेश	55.462	1086	–	60.249
महाराष्ट्र	38.008	808	–25.59 %	30.721
राजस्थान	6.820	827	+2.35 %	5.639
आंध्रप्रदेश	2.720	975	+17.89 %	2.652
कर्नाटका	2.928	823	–15.58 %	2.418
चंडीगढ़	1.470	915	+11.17 %	1.345
गुजरात	0.742	945	+3.28 %	0.701
शेष भारत	0.693	925	–2.11 %	0.641
कुल योग	**108.834**			**104.366**

****

मालनपुर औद्योगिक क्षेत्र में श्रम संघों की भूमिका का अध्ययन

डॉ. लारेन्स कुमार बौद्ध *

शोध सारांश – श्रमिक संघ श्रमिकों के विकास में सकारात्मक भूमिका निभा रहे है तथा उनके विकास के प्रति सदैव प्रयासरत रहते है उद्योगों में अनुशासन एवं नियमितता कितनी महत्वपूर्ण होती है इस बात का वह श्रमिकों को ऐहसास दिलाते है इससे श्रमिकों के विकास के साथ-साथ औद्योगिक इकाईयों का वातावरण शांत रहता है जिसका सकारात्मक प्रभाव औद्योगिक उत्पादन पर पड़ता है और कार्य निष्पादन की दृष्टि से भी श्रमिक संघों की भूमिका संतोषजनक रही है तथा अधिकांश श्रमिक इस व्यवस्था से पूर्ण संतुष्ट है इस प्रकार से श्रमिक संघ एक नवीन औद्योगिक समाज की रचना कर रहे है।

प्रस्तावना – श्रम संघ श्रमिकों का एक ऐसा संगठन होता है जिसका उद्देश्य सदस्यों के काम करने की दशाओं को बनाए रखना और उसमें सुधार करना होता है श्रम एक ऐसी वस्तु है जिसका यदि किसी समय उपयोग न किया जाए तो वह नष्ट हो जाती है दूसरे शब्दों में हम यह कह सकते है कि श्रम को हम संचित नहीं कर सकते है अत: तत्काल उसे काम मिलना चाहिए अन्यथा उसे हानि होगी उसके समक्ष काम करने के सिवाय और कोई विकल्प नहीं होता तथा वह रोजी-रोटी के लिए अपनी सीमान्त उत्पादन शक्ति से कहीं कम मजदूरी स्वीकार करने को तैयार हो जाता है उद्योगपति श्रम की इस कमजोरी का अनुचित लाभ उठाकर उसका शोषण कर सकते है अकेले श्रमिक में सौदा करने की क्षमता का अभाव होता है उधर उद्योगपति साधन सम्पन्न एवं शक्तिशाली होता है जिससे व्यवहार करने के लिए श्रमिकों के संगठन का होना अत्यन्त आवश्यक हो जाता है अत: श्रम संघो की स्थापना का मुख्य उद्देश्य श्रमिकों की शक्ति को संगठित करना है ताकि वे अपने हितों के लिए उद्योगतियों से बातचीत कर सके।

अध्ययन के उद्देश्य –

1. मालनपुर के उद्योगों में श्रमिक संघ आर्थिक विकास के साथ-साथ श्रमिकों को आर्थिक जीवन से समन्वय और स्वीकृत करने की प्रक्रिया में सहायता देते है तथा वरिष्ठ कर्मचारियों एवं अधिकारियों तथा साथियों से कैसा व्यवहार करना चाहिए, अनुशासन एवं नियमितता का उद्योग में क्या महत्व है इस सम्बंध में अवगत कराते है।
2. श्रमिक संघ एक नवीन औद्योगिक समाज की रचना करने और ग्रामीण समुदाय से हाल में आए हुए श्रमिकों को औद्योगिक जीवन की परिस्थितियों के साथ सामंजस्य बनाने में एक शक्तिशाली उपक्रम के रूप में कार्य करते है।
3. श्रमिक संघ श्रमिक एवं उनके बच्चों का नैतिक एवं सामाजिक विकास करने के लिए उन्हें शिक्षा, मनोरंजन एवं आवास जैसी सुविधायें उपलब्ध कराने का हर संभव प्रयास करते है तथा उनके भविष्य को उज्जवल बनाने के लिये अन्य कल्याणकारी कार्य भी करते है।
4. औद्योगिक वातावरण को शांत बनाये रखने के लिये श्रमिक संघ कार्य दशाऐं, कार्य के घण्टे, अधिसमय कार्य, सुरक्षा उपकरण, बोनस, मँहगाई भत्ता, मकान किराया भत्ता एवं अन्य समस्याओं पर प्रबंधकों का ध्यान आकर्षित करवाते है यदि इस प्रकार की कोई छोटी-मोटी समस्या होती है तो प्रबंधकों द्वारा उसका तुरंत हल निकलवाते है जिससे औद्योगिक उत्पादन पर कोई विपरीत प्रभाव नहीं पड़ता है और औद्योगिक इकाई निर्विवाद रूप से विकास करती है इस प्रकार से श्रमिक संघों की भूमिका हमेशा सराहनीय रही है।

उपकल्पना –

1. श्रमिक संघों का श्रमिकों के विकास में महत्वपूर्ण योगदान रहा है।
2. श्रमिक श्रमिक संघों की कार्य निष्पादन मूल्यांकन पद्धति से संतुष्ट है।

शोध प्रविधि – प्रस्तुत अध्ययन में प्राथमिक एवं द्वितीयक दोनों प्रकार के समंकों का प्रयोग किया गया है तथा प्रत्यक्ष अनुसंधान के माध्यम से श्रमिक संघ कार्यालय में उपस्थित होकर 10 प्रतिशत श्रमिकों की राय श्रमिक संघों के कार्य निष्पादन मूल्यांकन के संबंध में ली गई है इसमें 10 प्रमुख इकाईयों को शामिल किया गया है और आकड़े प्रश्नावली के माध्यम से भी लिये गये है।

कार्य निष्पादन मूल्यांकन विश्लेषण – कार्य निष्पादन मूल्यांकन का विश्लेषण तालिका क्रमांक 1 में 10 प्रमुख औद्योगिक इकाईयों के 10 प्रतिशत श्रमिकों की राय का विश्लेषण पांच बिन्दु पैमाने के आधार पर किया गया है तालिका इस प्रकार है। **(तालिका देखें अगले पृष्ठ पर)**

विश्लेषण एवं निर्वचन – तालिका क्रमांक 2 के आधार पर यह स्पष्ट होता है कि अन्य कम्पनियों की अपेक्षा एस.एम. मिल्कोज प्रा.लि. में पूर्ण संतुष्टि का स्तर सबसे कम है। गोदरेज कन्ज्यूमर्स प्रोडक्ट लि., फ्लैक्स इण्डस्ट्रीज लि., एस.एम. मिल्को प्रा. लि., मै. सुप्रीम इण्डस्ट्रीज लि. इन चार कम्पनियों को छोड़कर शेष कम्पनियों का संतुष्टि स्तर 20 प्रतिशत से कम है। गोदरेज कन्ज्यूमर्स प्रोडक्ट लि, फ्लै स इण्डस्ट्रीज लि, एस.एम. मिल्कोज प्रा.लि, मै. सूर्या रोशनी लि, स्टर्लिग एग्रो इण्डस्ट्रीज लि, मै.सुप्रीम इण्डस्ट्रीज लि.की अपेक्षा अन्य कम्पनियों में कोई टिप्पणी नहीं का स्तर 20 प्रतिशत से अधिक है। असंतुष्टि का स्तर एसएम.मिल्कोज प्रा.लि, स्टर्लिग एग्रो इण्डस्ट्रीज लि.में क्रमश 32 प्रतिशत, 26 प्रतिशत है शेष कम्पनियों में 20 प्रतिशत से कम है। एट्लस साइकिल लि, जय मारूति गैस सैलेण्डर्स लि, मै.सूर्या रोशनी लि.में अधिकतम श्रमिक इस व्यवस्था से पूर्ण असंतुष्ट है जबकि शेष सभी कम्पनियों में यह स्तर 20 प्रतिशत से कम है।

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय गांधी महाविद्यालय, बालाजी, मिहोना, भिण्ड (म.प्र.) भारत

परिणाम एवं निष्कर्ष – उपरोक्त तालिकाओं के आधार पर यह अनुमान लगाया जा सकता है कि मजदूरों की राय का यदि अनुपात निकाला जाये तो अधिकतर मजदूर श्रमिक संगठनों की वर्तमान कार्य निष्पादन पद्धति से पूर्ण संतुष्ट है अत: अध्ययन की द्वितीय उपकल्पना नकारात्मक है तथा श्रम संघ श्रमिकों के विकास के लिये शिक्षा एवं मनोरंजन के साथ–साथ वित्तीय एवं सुरक्षा संबंधी समस्याओं पर प्रबंधकों का ध्यान केन्द्रित करवाते है एवं अन्य कल्याणकारी कार्य कर श्रमिकोंका विकास कर रहे है इससे अध्ययन की प्रथम उपकल्पना भी सिद्ध होती है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. डॉ.कुलश्रेष्ठ, आरएस.(2002) – औद्योगिक अर्थशास्त्र साहित्य भवन पब्लिकेशन्स आगरा, पृष्ठ क्र.216
2. मंगल एवं सिंघई (1983) – औद्योगिक संन्नियम आगरा, बुक स्टोर आगरा, पृष्ठ क्र. 617
3. औद्योगिक श्रम संघ कार्यालय मालनपुर।
4. सिन्हा, बीसी.एवं पुष्पा (2004) – श्रम अर्थशास्त्र मयूर पेपर वैक्स नोएडा, पृष्ठ क्र.212
5. डॉ. मुन्जाल, एस. (2001) – रिसर्च मैथडोलॉजी राज पब्लिसिंह हाउस जयपुर, पृष्ठ क्र. 87
6. डॉ.पाण्डेय, गणेश एवं अरूणा (2007) – शोध प्रविधि राधा पब्लिकेशन्स नई दिल्ली पृष्ठ क्र.209
7. डॉ. नौलखा, आर.एल. (2007) – औद्योगिक सन्नियम रमेश बुक डिपो जयपुर नई दिल्ली पृष्ठ क्र. 57
8. डॉ.मिश्र, एस.के. (1971) – औद्योगिक अर्थशास्त्र वीनस प्रकाशन, कानपुर पृष्ठ क्र.547

तालिका क्रमांक – 1

कार्य निष्पादन मूल्यांकन विशलेषण

कम्पनी का नाम	पूर्ण संतुष्ट	संतुष्ट	कोई टिप्पणी नहीं	असंतुष्ट	पूर्ण असंतुष्ट	योग
गोदरेज कन्ज्यूमर्स प्रोड ट लि.	34	25	15	16	10	100
एट्लस साइकिल लि.	90	35	54	18	53	250
फ्लैक्स इण्डस्ट्रीज लि.	24	12	08	04	07	55
एस.एम. मिल्कोज प्रा.लि.	04	06	03	07	02	22
जय मारूति गैस सैलेण्डर्स लि.	04	02	03	01	05	15
मै.एस.आर.एफ. लि.	18	06	12	09	05	50
मै.सूर्या रोशनी लि.	21	12	08	04	25	70
स्टर्लिंग एग्रो इण्डस्ट्रीज लि.	11	05	03	08	03	30
मै. सुप्रीम इण्डस्ट्रीज लि.	04	03	02	02	01	12
क्राम्प्टन ग्रीब्ज लि.	06	03	04	02	03	18

स्रोत :– औद्योगिक श्रम संघ कार्यालय मालनपुर।

तालिका क्रमांक – 2

कार्य निष्पादन संतुष्टिकरण का स्तर

कम्पनी का नाम	पूर्ण संतुष्ट	संतुष्ट	कोई टिप्पणी नहीं	असंतुष्ट	पूर्ण असंतुष्ट	योग
गोदरेज कन्ज्यूमर्स प्रोड ट लि.	34%	25%	15%	16%	10%	100%
एट्लस साइकिल लि.	36%	14%	22%	07%	21%	100%
फ्लैक्स इण्डस्ट्रीज लि.	44%	22%	14%	07%	13%	100%
एसएम.मिल्कोज प्रा.लि.	18%	27%	14%	32%	09%	100%
जय मारूति गैस सैलेण्डर्स लि.	27%	13%	20%	07%	33%	100%
मै.एस.आर.एफ. लि.	36%	12%	24%	18%	10%	100%
मै.सूर्या रोशनी लि.	30%	17%	11%	06%	36%	100%
स्टर्लिंग एग्रो इण्डस्ट्रीज लि.	37%	17%	10%	26%	10%	100%
मै.सुप्रीम इण्डस्ट्रीज लि.	33%	25%	17%	17%	08%	100%
क्राम्प्टन ग्रीब्ज लि.	33%	17%	22%	11%	17%	100%

****

कृषि एवं आदिवासी विकास हेतु विभिन्न योजनाऐं एवं उपाय

किरण अग्रवाल *

प्रस्तावना – प्रत्येक किसान की इच्छा होती है कि वह कृषि से अधिक से अधिक लाभ प्राप्त करे इसके लिये उन्हें अपने लागत व आय का हिसाब रखना चाहिये मगर किन्हीं कारणवश बहुत कम संख्या में यह काम किया जाता है।

भारत एक कृषि प्रधान देश है जहा 80 प्रतिशत आबादी कृषि प्रधान है गांव में निवास इनका प्रमुख कारण है। मध्य प्रदेश सरकार ने विभिन्न योजनाओं को लागू किया है । शासन द्वारा कृषको के लिये सबसे अधिक योजना चलायी जा रही है तथा बीज खाद गहरी जुताई कल्चर बायो गैस नल कूप खनन कीट नाशक एंव नींदा नाशक औषधि टेक्ट्रर कृषि यंत्र पौघ संरक्षण यंत्र फसल कटाई एंव गहराई के यंत्र आदि का अनुदान दिया जाता है। कम ब्याज पर आवश्यक ऋण किसान क्रेडिट कार्ड के माध्यम से प्रदाय किया जा रहा है। खेती के लिये आवश्यक ज्ञान प्रदाय करने के लिये प्रशिक्षण सेमिनार कृषि प्रदर्शनी मेला खेत पाठशाला कृषक दिवस फसल प्रदर्शन राज्य एंव अन्तर्राज्यीय भ्रमण की सुविधा प्रदान की जा रही है।

लाभ लेने हेतु किसान कल्याण तथा कृषि विभाग प्रादेशिक किसान काल सेन्टर पर निशुल्क फोन 18002334433 है ।

खेती में लगने वाली लागत को कम करना – कम शिक्षा के कारण आदिवासी व किसान अपने लागत एंव लाभ का लेखा जोखा नहीं रख पाते लेकिन शासन ने ऐसी कई व्यवस्था प्रदान की है जिसमें लागत तो नहीं है पर उपाय अपनाना आवश्यक है ताकि कृषि लाभ का व्यवसाय बन सके किसी भी भूमि स्वामी कृषक आदिवासी को आत्महत्या न करनी पडें ।

इसके लिये स्वंय का बीज एंव खाद वर्नी कम्पोस्ड, नाडेपं विधि से तैयार करे। बायो गैस संयत्र लगाकर अच्छी स्लरी खाद एंव गैसीय ईधन बना सकते है स्वंय ही कीट नाशक दवाएं बनाये । दैविक विधि से नीम खटट्ी छांछ करंज लहसुन, धतुरा, लालमिर्च एंव गौ मूत्र से कीट नाशक बनते है ।

महत्वपूर्ण उपाय –

1. खेती का व्यवसाय जोखिम भरा है सुखा पाला अतिवृष्टि बाढ़ कीट व्याधि आग आदि प्राकृतिक प्रकोप के कारण इसलिये फसलो का बीमा अवश्य करना चाहिये ।
2. फसलो को बदल बदल कर बोये अलग अलग टुकों मे तीन चार फसलो को लगाने का लाभ मिलता है
3. बैंक से किसान क्रेडिट कार्ड बनवाये एंव बीज खाद एंव कीट नाशक की व्यवस्था समय से कर लेना चाहिये
4. वर्षा के जल को खेत में बलराम ताल बना कर रोके। खेती को उपजाऊ बनाये
5. फसलो को उन्नत प्रमाणिक बीज ही बोने एंव बीजोपचार दवा कार्बेन्डाजिम या ट्राईको डर्मा बी डी से उपचारित करके बौना लाभप्रद होगा।
6. महिला शक्ति का उचित प्रबंधन कृषि व्यसाय में किया जाये तो महिला शक्ति अन्नपूर्णा के रूप में देश को कृषि के क्षेत्र में आत्म निर्भर बनाने में विशेष योगदान दे सकती है।
7. कृषि विपणन की व्यवस्था ऐसी करनी चाहिये ताकि उद्योगो के लिये कच्चे माल में कमी नहीं हो। यदि कृषि अच्छी नहीं है तो औद्योगिक विकास रूक जायेगा ।

पंचवर्षीय कार्य योजना में कृषिगत क्षेत्र – देश में म.प्र. शासन पिछले वर्षो से कृषि को लाभ का धंधा बनाने में प्रयासरत रहा है सन 2012–13 में 18 प्रतिशत 2013–14 में 24.99 प्रतिशत विकास दर हासिल कर देश में प्रथम स्थान प्राप्त किया 27 लाख है0 क्षेत्र में सिचांई का लक्ष्य रहा ।

आदिवासी विकास योजनाऐं

कृषि के साथ साथ आदिवासी विकास के लिये भी विभिन्न योजनाओं को म0प्र0 शासन ने लागू किया है इसके लिये कृषि शिक्षा एंव आदिवासी शिक्षा को प्रमुख आधार बनाया है।

शालाऐं – आदिवासी क्षेत्र में शिक्षा की समुचित ;व्यवस्था हेतु जिले के सभी आदिवासी विकास खंडो में प्राथिमिक स्तर से उच्चतर माध्यमिक स्तर की शालाओ का संचालन हो रहा है।

राज्य छात्रवृत्ति – 1 से 10 वर्ष के बालक बालिकाओं हेतु ।

कक्षा	बालक	बालिका
1 से 5 साल	150.00	150.00
6 से 8 साल	200.00	300.00
9से 10 साल	600.00	800.00

(विशेष पिछडी जनजाति शहरिया , भारिया, एंव बैगा के ही बालको को एक से पांच में यह सुविधा है।)

पोस्ट मैट्रिक छात्रवृत्ती – इसके भारत सरकार एंव राज्य सरकार द्वारा रूपये 1 लाख 8 हजार की आय सीमा तक भारत सरकार के श्रौतों द्वारा 1 लाख 8 हजार से अधिक किन्तु 3 लाख की आय सीमा तक राज्य सरकार की श्रौतों से छात्रवृत्ति एंव फीस प्रतिपूर्ती की सुविधा प्रदान की जाती है ।

कन्या साक्षरता प्रोत्साहन योजना बालिकाओं को शिक्षा के ओर उन्मुख करने के लिये पांचवीं आठवीं दसवीं की परीक्षा पास करने पर एंव अगली कक्षा में प्रवेश लेने पर क्रमश: 500, 1000, एंव 3000 प्रोत्साहन राशि का प्रावधन है।

* शोधार्थी, ए.पी.एस. विश्वविद्यालय, रीवा (म.प्र.) भारत

छात्रावास एंव आश्रम– प्री मैट्रिक एंव पोस्ट मैट्रिक छात्रावास मे बिजली पानी बर्तन बिस्तर एंव आश्रम शालाओं में भी इन्हीं सुविधाओ का समावेश है साथ ही चतुर्थ श्रेणी कर्मचारी की सेवाओ की सुविधा भी निशुल्क उपलब्ध करायी जाती है।

उत्कृष्ट शिक्षा संस्थान (छात्रावास योजना)– मेधावी छात्र छात्राओं को जिला स्तर, विकास खंड स्तर, पर छात्रावास में निवास रत छात्र / छात्राओं को कम्यूटर कोचिंग एंव 2000 रूपये स्टेशनरी हेतु प्रदान किये जाते है।

छात्र गृह योजना – पोस्ट मैट्रिक छात्रावासो में स्थानाभाव को पूर्ण करने हेतु पोस्ट मैट्रिक छात्राओ के लिये अलग से किराये के मकान उपलब्ध कराये जाते है जिसका बिल बिजली पानी का शासन देती है पोस्ट मैट्रिक छात्रवृत्ति भी प्रदान की जाती है

ग्राम पंचायतो को पुरूस्कार योजना – आदिवासी विकास खंडो मे अनुसूचित जनजाति के बालक बालिकाओं को शत प्रतिशत प्रवेश दिलाने वाली ग्राम पंचायतो को 25 हजार रूपये की राशि प्रति ग्राम पंचायत प्रति विकास खंड के मान से राशि प्रदान की जाती है।

सिविल सेवा प्रोत्साहन योजना– राज्य शासन से संघ लोक सेवा आयोग तथा मध्य प्रदेश लोक सेवा आयोग द्वारा आयोजित की जाने वाली सिविल सेवा परीक्षाओं में विभिन्न स्तरो पर सफल होने वाले अनुसूचित जनजाति के अभ्यर्थियो को निम्नानुसार प्रोत्सहन राशि विभाग द्वारा प्रदान की जाती है।

विवरण	पी.एस.सी.	यू पी एस.सी.
प्रारम्भिक परीक्षा उत्तीर्ण करने पर	– 20000.00	40000.00
मुख्य परीक्षा उत्तीर्ण करने पर	– 30000.00	60000.00
साक्षात्कार उपरात चयन होने पर	– 25000.00	50000.00

सरकार द्वारा चालायी जा रही योजनान्तर्गत सरकार की मदद और सुविधाओं से आदिवासी प्रतिभाऐं चढ़ी परवान – जबलपुर के संतोष कुमार एंव मंडला की गीता नेताम दो विशेष पिछडी जनजाति के विद्यार्थी है जिन्होंने इस वर्ष आई आई टी / जे ई ई (मेंस) में शानदार कामयाबी हासिल की अन्य 133 आदिवासी भी सफल रहे। मेंस में सफल विद्यार्थीयो को 5000–5000 रूपये प्रोत्साहन राशि शासन द्वारा प्रदान की गयी। आगामी परीक्षाओं हेतु विद्यार्थीयों को 01 से 022 मई तक का प्रशिक्षण कोचिंग की व्यवस्था दी गयी। लाईब्रेरी की व्यवस्था राष्ट्रीय कोचिंग संस्थान एफ आई जे ई फोर्चुन मे विद्यार्थियो को प्रवेश दिलवाया गया, जो एक विकास का प्रयास है और इस प्रयास को सफलता मिल रही है।

प्रतिभावान छात्र खिलाडियों को प्रोत्साहन – विभाग द्वारा विभागीय संस्थओं में अध्ययन रत अनुसूचित जनजाति के विद्यार्थियो को जिन्होंने विभिन्न राज्य स्तरीय एंव राष्ट्रीय स्तर की खेल प्रतियोगिताओ में भाग लेकर प्रथम द्वितीय एंव तृतीय स्थान प्राप्त किया है उन्हें निम्नानुसार पुरूस्कार राशी से सम्मानित किया जाता है।

क्र.	विवरण	राज्य स्तर	राष्ट्रीय स्तर
1	प्रथम	7000.00	21000.00
2	द्वितीय	5000.00	15000.00
3	तृतीय	3000.00	4000.00

विद्यार्थी कल्याण योजना – आर्थिक रूप से कमजोर विद्यार्थियो को आकस्मिक विपत्ति विशेष रोग से पीड़ित होने पर इलाज, विशेष अभिरूचि प्रोत्साहन राशि सहायता दी जाती है

क्र.	विवरण	सहायता राशि
1.	मृत्यु पर छात्रावास/ आश्रम में निवासरत रहते हुए	25000.00
2.	विशेष रोग, टी बी केंसर हृदय रोग	25000.00
3.	असामयिक विपत्ति	5000.00
4.	नि:शक्त छात्र/छात्राओ को ट्राईसिकल हेतु	3000.00
5.	विद्यार्थियो को सामूहिक एंव व्यक्तिगत आवश्यकता की पूर्ती हेतु	3000.00
6.	विशिष्ट आयोजनो में सम्मिलत होने हेतु पोशाक परिधान एंव साज सज्जा हेतु	1000.00

नेतृत्व विकास शिविर – अनु0 जाति/ अनु0 जनजाति वर्ग के कक्षा 10 बोर्ड परीक्षा में सर्वाधिक अंक प्राप्त एक छात्र / छात्रा को शासन द्वारा शिविर का आयोजन कर हितग्राही मूलक योजनाओ के साथ ऐतिहासिक धरोहरो के महत्व को समझाया जाता है।

पी.ई.टी, पी.एम.टी. कोचिंग व्यवस्था – शासन कोचिंग की व्यवस्था कर विद्यार्थियो को अपनी समस्याओ के समाधान हेतु एक प्लेटफार्म तैयार कर रही है।

अन्तर्जातीय विवाह योजना– विभाग द्वारा देश मे छोटे बडे ऊँच नीच के भेदभाव को समाप्त करने के लिये एक सार्थक पहल की है। अनुसूचित जाति वर्ग की महिला अथवा पुरूष से अन्य जाति द्वारा विवाह करने पर 50000.00 रूपये की प्रोत्साहन राशि प्रदान की जाती है।

संकटापन्न योजना– अनुसूचित जाति, जनजाति राहत योजनान्तर्गत गरीब हितग्राहियो को अर्थिक सहायता – निराक्षित अंधे अपाहिज, एंव अत्यंत संकटापन्न स्थिति में 2000.00 कलेक्टर द्वारा अनुशंसा पर दिये जाते है।

अस्पृश्यता निवारण– जिला स्तरीय ग्राम पंचायत पुरूस्कार योजना इस योजनान्तर्गत बस्तियो मे विकास कार्य हेतु एक लाख रूपये का प्रावधान रखा गया है।

शंकर शास रघुनाथशाह/ रानी दुर्गावती पुरूस्कार योजना– 10वीं एंव 12 वीं की बोर्ड परीक्षा में अपने संवर्ग में प्रथम , द्वितीय स्थान के लिये निम्न राशि निर्धारित की है।

कक्षा	प्रथम	द्वितीय	तृतीय
10 वीं	20000.00	15000.00	10000.00
12 वीं	30000.00	20000.00	10000.00

वन अधिकार अधिनियम – अधि0 2006 के तहत 31 दि0 2005 वन भूमि में काबिज जनजाति के लोगो को विहित प्रक्रिया के तहत 2000 से अधिक के हक प्रमाण पत्र प्रदान किये जाते है वन अधिकार योजना के तहत कूप निर्माण, डीजल, विद्युत पंप प्रदान किया जाता है।

आज सरकार द्वारा कृषि क्षेत्र को लाभ पहुँचा कर देश के विकास का मार्ग प्रशस्त किया है कृषि उत्पादकता बढाने की चुनौती को विज्ञान द्वारा स्वीकार किया जा रहा है आधुनिक जेनेटिक्स और जैनेटिक इंजीनियरिंग देश की कृषि समस्याओं के खात्मे मे महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है बीस साल से ज्यादा वक्त हो गया केलीफोर्निया यूनिवर्सिटी की पामेला रोनाल्ड ने

धान के 11 वे क्रोमोजोम में एक ऐसा जोन डाला जिसमें रोगो से लडने की क्षमता भी इ कसा चमत्कारी नतीजा निकला और एक नये रोग प्रतिरोधी फसलो के नये युग की शुरूआत हुई

कृषि के साथ आदिवासियो का नाता पुराना है कृषि के विकास के साथ साथ आदिवासी क्षेत्रो का विकास संभव है इसके लिये विभिन्न योजनाओं एंव सकरकारी गैर सरकारी उपायो ने काम किया है।

आधुनिक बायोटेक्नाजिस्ट पामेला रोनाल्ड की शादी जैविक खेती करने वाले किसान राउल एडमयक से हुई दोनों मिलकर आधुनिक विज्ञान और पर्यावरण खेती का मेल बिठाते हुए टिकाऊ खेती का तरीका विकसित किया। उन्होंने एक किताब लिखी **ट्रामारोज टेबल आर्गनिक फार्मिंग जेनेटिक्स एंड फयेचर आफ फूड** । अन्तत: मै इतना कहना चाहूंगी कि सरकार के सहयोग और हमारे प्रयास से उन्नित के मार्ग प्रशस्त हो रहे है। 15 जून से 25 जून तक कृषि महोत्सव का आयोजन म0प्र0 सरकार द्वारा किया गया है जिसमें कृषि रथ हर ग्राम पंचायत मे जाकर किसानो को कृषि अधिकारी एंव इंजिनियरों के द्वारा विशेष तकनीक एंव उन्नत खाद बीज द्वारा फसलो की उत्पादकता बढाने एंव औद्योगिक इकाई विकसित करने में सहयोग प्रदान करेगा।

जबलपुर एंव झाबुआ में उर्वरक कारखाना खुलने का आगाज – जबलपुर एंव झाबुआ में म0प्र0 के लगभग 25 लाख मैट्रिक टन यूरिया एंव अन्य रसायनिक उर्वरको का अग्रिम भंडारण कर दिया गया है ताकि किसानो को कोई परेशानी न हो।

देश में जिन 4 राज्यो में रासायनिक प्लास्टि पार्क को मंजूरी मिली उनमें म0प्र0 पहला राज्य है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. शहडोल आदिवासी विकास विभाग, द्वारा संपादित ।
2. कीर्ति क्रांति दिनांक 7.6.15
3. नवीन शोध संसार 2014
4. कीर्ति क्रांती लेख विज्ञान की मदद से हल होगी कृषि उत्पादकता बढ़ाने की चुनौती –शांताराम ।

****

भारत के आर्थिक विकास में पर्यटन की भूमिका

डॉ. सीता चतुर्वेदी *

प्रस्तावना – विश्व में भारत एक बहुत ही महत्वपूर्ण वैभवशाली पर्यटन उद्देशित स्थान है। भारत के असीमित भंडार में पर्यावरण सम्बन्धी मनमोहक संपदा, सुंदरता तथा अटूट सांस्कृतिक परम्पराओं की बहुत ही विविधता व निरंतरता है। यहाँ की बदलती हुई ऋतुएँ, जलवायु की विविधता, हिमाच्छादित पर्वत मालाएँ, रमणीय समुद्रीय तट, सदाबहार हरा–भरा केरल, रणबांकुरों और स्वाभिमानी राजाओं की भूमि राजस्थान, चार पवित्र धामों की भूमि, विभिन्न धर्मो और धार्मिक स्थलों का देश भारत पर्यटन की दृष्टि से विश्वभर में पर्यटकों को सदा से ही आकर्षित करता रहा है। मोहन जोदड़ो और हड़प्पा के अवशेष, मौर्यकालीन कौशाम्बी, वैशाली और उज्जैन, अशोक कालीन पाटलिपुत्र और नालंदा महाराष्ट्र में अजंता–एलोरा और एलीफेंटा की गुफाएँ, मध्य प्रदेश की खजुराहों मूर्तियाँ यहाँ के प्रमुख पर्यटन–आकर्षण केन्द्र है। अपने प्राचीन वैभव और सम्पदा एवं भारत प्राचीनकाल से ही फाहयान, हेनसांग, वास्को–डि–गामा, कैप्टन कुक से लेकर स्वतंत्रता से पूर्व विशेषकर अँग्रेजो, पुर्तगालियों और फ्राँसीसियों को अपनी ओर खींचता रहा है।

पर्यटन आज विश्व का एक विकसित उद्योग है। इससे वर्तमान में समाज को अनेक प्रकार के सामाजिक एवं आर्थिक काम प्राप्त होते है। अत: आज इस के विकास के लिए प्रत्येक देश की सरकारे प्रयत्नशील है तथा नवीनतम उपलब्धियों के लिए नित्य नवीन आयामो की खोज की जा रही है। यद्यपि यह कहा जाता है कि भारत में अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर पर्यटन मात्र विगत तीन शताब्दी से ही व्यापक रूप से चल रहा है। यहॉ आने वाले विदेशी पर्यटकों की संख्या में अभूतपूर्व वृद्धि हुई है। आँकड़ो से ज्ञात होता है कि 8.4 प्रतिशत प्रतिवर्ष की दर से पर्यटको की संख्या में वृद्धि होती जा रही है। आगामी पंचवर्षीय योजना में इस बात की संभावना व्यक्त की जा रही है कि आधुनिकतम सुविधाओं एवं आकर्षण के कारण आठ प्रतिशत की वृद्धि विश्व पर्यटन के परिप्रेक्ष्य में, भारतीय पर्यटन में होगी।

पर्यटन से तात्पर्य – पर्यटन (Tourism) का प्रादुर्भाव लैटिन भाषा के शब्द (टोरनोस) से निकला है, जिसका अर्थ एक वृत या घूमने वाले चक्के से होता है। करीबन 1643 में इस शब्द का प्रयोग विभिन्न स्थानों की यात्रा, मनोरंजन भ्रमण, पर्यटन तथा विभिन्न राष्ट्रों व क्षेत्रों के स्थलों के भ्रमण अथवा यात्रा करने के लिए किया गया था। अन्य शब्दों में पर्यटन को अँग्रेजी में 'टूर' कहते है। अँग्रेजी भाषा की इण्टरनेशनल डिक्शनरी ऑफ टूरिज्म, जो इण्टरनेशनल एकेडमी ऑफ टूरिज्म से प्रकाशित है, के अनुसार इस का अर्थ यात्रा या चक्रात्मक भ्रमण है।

भारत में पर्यटन का विकास –प्राचीन भारतीय पर्यटन की झलक कौटिल्य के अर्थशास्त्र से मिलती है। प्राचीनकाल में भी पर्यटन विकसित था किन्तु इतना नहीं जितना भारत ने स्वतंत्रता के बाद इस क्षेत्र में प्रगति की। सरकार ने वर्ष 1949 में परिवहन मंत्रालय में पर्यटन प्रकोष्ठ की स्थापना की। जिस का उद्देश्य पर्यटन सम्बन्धी सुविधाओं को जुटाना व पर्यटको को आकर्षित करना था। इसी श्रृंखला में सरकार ने वर्ष 1952 में न्यूयार्क तथा 1953 में लंदन में पर्यटन कार्यालयों की स्थापना की। वर्ष 1954 में मुंबई में पहला होटल प्रबंधन संस्थान (HMI) स्थापित किया गया। वर्ष 1956 में सरकार ने अशोका होटल के निर्माण के साथ होटल व्यवसाय में अपने कदम रखे। वर्ष 1957 में जर्मनी के फ्रेंकफर्ट में पर्यटन कार्यालय स्थापित किया गया। वर्ष 1958 में पर्यटन निदेशालय की स्थापना स्वतंत्र रूप से परिवहन मंत्रालय के अधीन की गई।

इन निगमों की स्थापना का मुख्य उद्देश्य पर्यटको के लिए आवास, खान–पान, परिवहन हेतु ट्रेवल एजेंसियों आदि की सुविधाएँ विकसित परिणाम था। लेकिन इन तीनों निगमों में उचित तालमेल के अभाव के कारण वाँछित परिणाम सामने नहीं आ सके। अत: इन समस्त कमियों को दूर करने की दृष्टि से **'भारतीय पर्यटन विकास निगम'** की स्थापना की गई।

भारतीय पर्यटन विकास की दिशा में भारत के प्रयास – पर्यटन की महत्ता को जानते हुए भारत शासन की विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं में इस विषय का विशेष ध्यान रखा गया जिसका संक्षिप्त विवरण उक्त शोध–पत्र के अन्तर्गत शामिल किया गया है जिसका विस्तृत विवरण इस प्रकार है–

प्रथम पंचवर्षीय योजना 1952 में पर्यटन का स्वरूप निर्धारित किया गया। दूसरी पंचवर्षीय योजना 1957 में एक बड़ी रकम दी गई, केन्द्रीय और प्रांतीय क्षेत्र में भवन निर्माणार्थ एवं स्थान के सौंदर्यकरण हेतु। इसमें टूरिज्म लाज बनाए गए, जिनमें विदेशी पर्यटको के आकर्षण के लिए केन्द्रीय सरकार तथा स्वदेशी एवं विदेशी दोनों प्रकार के पर्यटको के आकर्षण केन्द्रों के लिए राज्य सरकारो का भी योगदान लिया गया। तीसरी पंचवर्षीय योजना में 1962 में कुछ पर्यटन केन्द्रो में जहाँ पर्यटको को सुविधाएँ उपलब्ध नहीं थी, वहाँ विकास का कार्य प्रारंभ किया गया। इस में बोध गया, खजुराहों, साँची महाबलीपुरम, कोणार्क, भुवनेश्वर, मदुरै आदि अनेक स्थानों पर केन्द्र खोले गए, जहाँ विदेशी पर्यटक बड़ी संख्या में आते रहते थे। चौथी पंचवर्षीय योजना में जो 1967 से प्रारंभ हुई, नियोजन की तीव्रता के लिए केन्द्रीय और प्रांतीय क्षेत्रों का विभाजन किया गया। विदेशी पर्यटको के पर्यटन स्थल का नियोजन कार्य केन्द्र ने लिया तथा स्वदेशी पर्यटको का दायित्व प्रांतो पर सौपा गया। पाँचवी पंचवर्षीय योजना 1972 में प्रारंभ हुई, इसमें केन्द्र और राज्य सरकारों का दायित्व पर्यटन की दिशा में बढ़ाया गया। इसके पीछे धारणा थी कि विदेशियों को अधिकाधिक संख्या में आकर्षित किया जाए। केन्द्रीय पर्यटन विभाग ने दो उद्देश्यों को अपने समक्ष रखा पर्यटको के ठहराव और परिवहन की सुविधा। भावी पर्यटकों की सम्भावना को ध्यान में रखकर कार्य करना तथा देश के विभिन्न क्षेत्रों को आवागमन की सुविधा से जोड़ना। छठी पंचवर्षीय योजना में पहली बार बड़े ही उच्च स्वर में पर्यटन की महत्ता को स्वीकार किया गया विशेषत: सामाजिक तथा आर्थिक क्षेत्रों में। इसी समय पर्यटन चक्र बनाए गए तथा पर्यटन ग्राम की अवधारणा को स्वरूप मिला। इस समय जनता सरकार का शासन था उसने पर्यटको के लिए जनता होटलो की परिकल्पना को विकसित किया। इस के साथ ही आवास के लिए पर्यटक आवास पर्यटक बंगला, युवक निवास की योजनाएँ कार्यान्वित हुई।

* वाणिज्य विभाग, शासकीय महारानी लक्ष्मी बाई कन्या स्नातकोत्तर (स्वशासी) महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

सातवी पंचवर्षीय योजना में सर्वप्रथम पर्यटन को उद्योग का दर्जा प्रदान किया गया। उद्योग इसकी सारी क्रियाओं को वही सुविधा और व्यवस्था प्रदान की गई जो किसी निर्यात को दी जाती है। इसमें पर्यटन क्रिया को तीव्र बनाना, व्यक्तिगत संस्थाओं को अधिक से अधिक प्रेरणा देना, स्थानीय कला को विकसित करने के लिए प्रयास करना तथा राष्ट्रीय एकता को व्यवस्थित करना आदि सम्मिलित है। इसके अतिरिक्त शासन के अधीन पर्यटन के क्षेत्र में अनेक योजनाएँ प्रगति पर है।

भारत में पर्यटको के आगमन एवं विदेशी मुद्रा अर्जन पर एक नजर – शासन द्वारा भारतीय पर्यटन के विकास हेतु कई सार्थक कदम उठाए गए ताकि विदेशी मुद्रा के भण्डार, रोजगार के क्षेत्र, राष्ट्र के आर्थिक विकास में सहयोग हेतु महत्वपूर्ण कदम उठाए जा सके। इसी दिशा में वर्ष 1951 में भारत वर्ष में पर्यटन का तेजी के साथ विकास किया गया जिसके फलस्वरूप यह भारत के आर्थिक विकास नियोजन का प्रमुख अंग बन गया। 1951 में विदेशी पर्यटकों की संख्या 53,000 थी, जो बढ़कर 1998–1999 के पहले नौ महीनों के दौरान भारत का दौरा करने वाले पर्यटको की संख्या 16.75 लाख थी, जिनसे 8,424 करोड़ रूपये की विदेशी मुद्रा प्राप्त हुई। यदि हम अन्तर्राष्ट्रीय पर्यटन के क्षेत्र पर नजर डाले तो ज्ञात होता है कि लगभग चार दशको से भारत में इस क्षेत्र में वृद्धि दृष्टिगोचर हुई है। वर्ष 1991 में चौदह लाख विदेशी पर्यटक भारत आए जबकि वर्ष 1996 में यह संख्या बढ़कर पचास लाख से अधिक हो गई। वर्ष 1993 में इंग्लैंड, यूरोप और आस्ट्रेलिया से भारत आने वाले पर्यटको की संख्या 10 से 25 प्रतिशत तक बढ़ी है। अमेरिका, जापान व इटली से आने वाले पर्यटको में भी बराबर वृद्धि हो रही है। वर्ष 1998 में पाकिस्तान व बंग्लादेश के नागरिकों सहित देश में 23,58,509 पर्यटक आए। पर्यटन से वर्ष 1998–99 से 12,011 करोड़ की विदेशी मुद्रा अर्जित की गई। इस प्रकार पर्यटन ने देश के लिए विदेशी मुद्रा अर्जित करने वाला दूसरा प्रमुख उद्योग का रूप धारण कर लिया है। जुलाई 2001 तक भारत में आने वाले विदेशी पर्यटकों की संख्या में 3.1 प्रतिशत की वृद्धि हुई। इस अवधि में कुल 15,14,668 पर्यटक आए। वर्ष 2000 के दौरान कुल आय 1,4238 करोड़ रही इस प्रकार आँकड़ो से ज्ञात होता है कि पर्यटन से प्राप्त आय से विदेशी मुद्रा भण्डार तीव्र गति से वृद्धि कर रहा है।

वर्तमान भारत में पर्यटन की स्थिति – जनवरी 1999 से अगस्त 2006 के दौरान भारत में 2.55 मिलियन पर्यटको ने भारत की यात्रा की जिन से भारत को लगभग 2.83 विलियन डॉलर (लगभग 9200 करोड़ रू.) की विदेशी मुद्रा प्राप्त हुई। विभिन्न वर्षो में भारत आने वाले विदेशी पर्यटको की संख्या को तालिका क्रमांक 01 में सूचीबद्ध किया गया है।

तालिका क्रमांक 01 – भारत आने वाले विदेशी पर्यटको की संख्या

वर्ष	विदेशी पर्यटको की संख्या (लाखो में)	वर्ष	विदेशी पर्यटको की संख्या (लाखो में)
1950	0.53	1998	23.70
1960	1.23	1999	24.20
1970	2.80	2000	24.70
1978	7.20	2006	27.70
1994	18.20	2007	27.90
1995	23.00	2008	28.30
1996	24.00	2009	30.00 (अनुमानित)

वर्ष 1998 में भारत में पर्यटको की संख्या 23.7 लाख रही। भारत में आने वाले विदेशी पर्यटको की अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर संख्या 0.4 है। भारत में आने वाले विदेशी पर्यटक अब तक गोवा को सर्वाधिक पसंद करते रहे है लेकिन अब उन की पसंद दिल्ली, महाराष्ट्र, उत्तर प्रदेश, उत्तराखंड, तमिलनाडु और राजस्थान है।

तालिका क्रमांक 02 – भारत के विभिन्न राज्यों में विदेशी पर्यटकों की संख्या

राज्य	विदेशी पर्यटको की संख्या (लाखो में)	राज्य	विदेशी पर्यटको की संख्या (लाखो में)
दिल्ली	11.62	राजस्थान	6.07
महाराष्ट्र	9.80	बिहार	2.13
उत्तर प्रदेश	7.19	उत्तराखंड	1.95
तमिलनाडु	6.45		

जिन देशो से भारत में सर्वाधिक पर्यटक आते है उनमें क्रमश: इंग्लैंड, संयुक्त राज्य अमेरिका, जापान, श्रीलंका, म्यांमार, चीन, कनाडा और थाइलैंड आदि उल्लेखनीय है।

घरेलू पर्यटक – भारत भ्रमण करने वाले घरेलू पर्यटकों की संख्या लगभग 1.80 करोड़ है। इसके अलावा 44 लाख स्वदेशी पर्यटक प्रतिवर्ष विदेशो में छुट्टियाँ मनाने जाते है।

उपसंहार – सभ्यता की प्रगति के साथ ही पर्यटन की प्रक्रिया भी तीव्र हो रही है। इसके चरण आज क्राँतिकारी परिवर्तन और विकास की ओर अग्रसर है। इतना ही नहीं पर्यटन ने एक विकसित उद्योग का स्थान प्राप्त कर लिया है। किन्तु यह भी पूर्णत: सत्य है कि भारत पर्यटन के विकास पर सबसे कम खर्च करने वाला देश है। वर्ष 1995 में केन्द्र सरकार ने 65.4 करोड़ रूपये खर्च किए, जो आस्ट्रेलिया द्वारा खर्च की गई राशि का पाचवाँ हिस्सा, सिंगापुर और थाईलैड का एक तिहाई और दक्षिण कोरिया का आधा है। पर्यटन के क्षेत्र में दो करोड़ पच्चीस लाख लोगो को रोजगार मिल सकता है, जो भारत की जनसंख्या का 2.5 प्रतिशत है। पर्यटन उद्योग प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से इस से भी अधिक लोगो को रोजगार प्रदान करने में सक्षम है। हिमाचल प्रदेश या गोवा जैसे कुछ प्रदेशों में तो पर्यटन से होने वाली आय वहाँ के आर्थिक संरचना का एक प्रमुख स्त्रोत बन गई है। किन्तु शोध अध्ययन उपरांत यह भी स्पष्ट होता है कि पर्यटन उद्योग जगत में यदि हम अधिक भावी लाभ प्राप्त करना चाहते है तो कुछ सार्थक कदम इस दिशा में उठाने होगे जैसे– महत्वपूर्ण पर्यटन स्थलो की सड़को में आवश्यक सुधार किया जाए और यथा संभव उन्हें मुख्य मार्ग से सीधे जोड़ा जाए जिससे यातायात सुविधाजनक व उत्तम हो सके। इसके साथ ही विद्युत की समुचित व्यवस्था करना आवश्यक ही नहीं अनिवार्य भी है। यदि शासन वास्तव में पर्यटन उद्योग को प्रगति क्षेत्र में अग्रणी देखना चाहता है तो उसे इस क्षेत्र मे विकास सम्बन्धी समस्त सुविधाओ को उपलब्ध कराना होगा जिसके परिणाम हमें यह प्राप्त होगा कि विदेशी मुद्रा अर्जन एवं रोजगार प्रदान करने में हम सब से अधिक सक्षम हो जाएगे।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. बाशम ए.एल., अद्भुत भारत, दिल्ली, 1975
2. भाटिया ए.के., भारत में पर्यटन का विकास, दिल्ली 1975
3. सहाय शिवस्वरूप, पर्यटको का देश भारत, दिल्ली 1992
4. दोरियाल के.एस., पर्यटन विकास एवं प्रभाव, दिल्ली 2012
5. रावत ताज, प्राकृतिक पर्यटन विकास एवं बदलाव, दिल्ली 2007
6. डॉ. वरे एस.एल., प्रो. नागौरी आर. ए., पर्यटन में इतिहास का अनुप्रयोग, भोपाल 2014

मारुति सुजुकी इंडिया लिमिटेड की वित्तीय स्थिति का अध्ययन एवं विश्लेषण

बंदना खरे * डॉ. संजय जैन**

प्रस्तावना – मारूति सुजुकी इंडिया लिमिटेड ज्यादातर इसको मारूति उद्योग लिमिटेड के नाम से जाना जाता है। यह कम्पनी सुजुकी मोटर कार्पोरेशन जापान की सहायक कम्पनी हैं। इस कम्पनी के प्रथम प्रबंध निर्देशक श्री संजय गॉधी थे। मारूति उद्योग लिमिटेड को फरवरी 1981 में स्थापित किया गया, हालाँकि मारूति 800 के साथ कम्पनी ने 1983 में वास्तविक उत्पादन शुरू किया। कम्पनी सालाना 50000 से अधिक कारों के निर्यात के साथ प्रतिवर्ष 1000000 कारों की घरेलू बिक्री भी करती है। इनकी विनिर्माण सुविधाएं हरियाणा के गुडगाँव और मानेसर में स्थित हैं।

कम्पनी का मुख्यालय नेल्सन मंडेला रोड,नई दिल्ली में स्थित है। फरवरी 2012 के अंत तक कम्पनी अपनी एक करोड़ कारे बेंच चूकी है। भारत में मारूति सुजुकी की डीलरशिप 482 से भी ज्यादा जगहों पर है। जो 28 राज्य व 4 केन्द्र शासित प्रदेश में है। लगभग 100 से भी ज्यादा देशों के साथ मारूति सुजुकी का निर्यात व्यापार है। वित्तीय वर्ष 2013-2014 के अंत तक इस कम्पनी की पूँजी 3500 करोड़ रूपये थी।

अध्ययन का क्षेत्र व अवधि – शोध पत्र के अध्ययन का क्षेत्र भारत की मारूति सुजुकी इंडिया लिमिटेड की वित्तीय स्थिति का अध्ययन एवं विश्लेषण करना है। जिसकी वित्तीय स्थिति के अध्ययन के लिए 2009-2010 से 2013-2014 (5) वर्ष के समंको को आधार बनाया गया है।

अध्ययन का उद्देश्य – मारूति कम्पनी के वित्तीय कार्य-कलाप एवं उपलब्धियों का विश्लेषणात्मक अध्ययन करना ।

शोध परिकल्पना – मारूति कम्पनी की आर्थिक स्थिति में निरंतर वृद्धि हुई है।

शोध-प्रविधि – शोध कार्य में मुख्यत: द्वितीयक आंकडों का उपयोग किया गया है। आंकडों के प्रस्तुतीकरण के लिए तालिका का निर्माण कर विश्लेषण किया गया है।

मारूति कम्पनी की वित्तीय स्थिति का विश्लेषण – वित्तीय विवरण व्यवसाय का दर्पण होता है। जिससे उस व्यवसाय की आर्थिक स्थिति का पता चलता है। कम्पनी की वित्तीय स्थिति को तालिका क्रमांक 1.0 में प्रदर्शित किया गया है।

तालिका क्रमांक 1.0 (देखे अगले पृष्ठ पर)

मारुति सुजुकी इंडिया लिमिटेड की वित्तीय स्थिति –

अंश पूँजी – कम्पनी अपने अंशों का विक्रय करके अंश पूँजी प्राप्त करती है। इस संबंध में कम्पनी के अंश-पूँजी वाक्य में दिये गये प्रावधानों का पालन किया जाता है। वर्ष 2009-2010 में कम्पनी की अधिकृत समता अंश पूँजी 144.50 करोड़ रूपये थी जो कि वित्तीय वर्ष 2013-2014 के अंत तक 151.00 करोड़ रूपये हो गई। अत: स्पट है कि कम्पनी की अंश पूँजी में उत्तरोत्तर वृद्धि की प्रवृत्ति रही है।

निधियाँ – मारूति कम्पनी अपनी निधियों का निर्माण निम्न कोषों से करते है। 1.रक्षित कोष 2.संदिग्ध ऋण कोष तथा डूबत ऋण पूर्ति हेतु प्रावधान। यह कोष तथा निधियाँ महत्वपूर्ण होती हैं, क्योंकि कम्पनी अपने लाभ मे से प्रतिवर्ष एक निश्चित राशि इस कोष में हस्तांतरित करती है। इस कोष की राशि जितनी अधिक होती है कम्पनी की आर्थिक स्थिति उतनी मजबूत होगी।

तालिका के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि वर्ष 2009-2010 में कम्पनी के पास 11690.60 करोड़ रूपये की निधियाँ थी जो कि वित्तीय वर्ष 2010-2011 मे 13723.00 करोड़ रूपये हो गई जो कि गत वर्ष से 17% बढ़ गई। इसी प्रकार कम्पनी की निधियाँ वर्ष प्रतिवर्ष निरंतर बढ़ती गई और वित्तीय वर्ष 2013-2014 के अंत तक इस कोष की राशि 20827.00 करोड़ रूपये हो गई। जो कि आधार वर्ष से 2009-2010 से 78% बढ़ गई।

विनियोग – विनियोग बैंक की सम्पत्ति के रूप मे होते हैं। तालिका के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि विनियोग में कमी एवं वृद्धि की प्रवृत्ति रही है। सन् 2009-2010 को आधार वर्ष मानते हुए 2010-2011 में 29% की कमी आयी है इसके पश्चात् सन् 2011-2012 मे विनियोग की राशि 6147.40 करोड़ रूपये व 2012-2013 में यह राशि 7078.30 करोड़ रूपये व 2013-2014 में यह राशि बढ़कर 10117.90 करोड़ रूपये हो गई।

कुल सम्पत्तियॉ – इसमें व्यवसाय की समस्त स्थायी तथा चालू सम्पत्तियाँ सम्मिलित की जाती हैं, किन्तु कृत्रिम सम्पत्तियाँ जैसे - प्रारंभिक व्यय, अभिगोपन कमीशन, अंशों के निर्गमन पर व्यय, निर्गमन पर कटौती, लाभ-हानि खाते का डेबिट शेष, आदि को सम्मिलित नहीं किया जाता है। सुरक्षा की दृष्टि से विनियोगकर्ताओं के लिए कुल सम्पत्तियाँ महत्तवपूर्ण होती है इससे वे ऋण भुगतान की पर्याप्तता जानते हैं। वित्तीय वर्ष 2009-2010 में कम्पनी की कुल सम्पत्तियाँ 12656.50 करोड़ रूपये की थी। यह राशि वर्ष 2010-2011 में 14037.70 करोड़ रूपये हो गई जो कि गतवर्ष से 11% की वृद्धि पर थी। इसी प्रकार अगले वित्तीय वर्षों क्रमश: 2011-2012 व 2012-2013 मे यह वृद्धि दर 29% और 58% हो गई। और उत्तरोत्तर वृद्धि के साथ कुल सम्पत्तियॉ वित्तीय वर्ष 2013-2014 के अंत तक 22663.10 करोड़ रूपये हो गई जो कि आधार वर्ष से 79% वृद्धि पर है।

* सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) यूनिक महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत
** प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (वाणिज्य) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, भेल, भोपाल (म.प्र.) भारत

शुद्ध लाभ – कम्पनी की आथिक स्थिति ज्ञात करने के लिए लाभ–हानि पत्रक बनाया जाता है जिससे कम्पनी की लाभ एवं हानि की स्थिति ज्ञात की जा सके। तालिका के विश्लेषण से ज्ञात होता है कि कम्पनी के शुद्ध लाभ में कमी एवं वृद्धि की प्रवृत्ति रही है। वित्तीय वर्ष 2009–2010 को आधार वर्ष मानते हुए वर्ष 2010–2011, 2011–2012 व 2012–2013 में क्रमश: 9% व 35% व 4% की कमी दर्ज की गयी है इसके पश्चात् वर्ष 2013–2014 में आधार वर्ष की तुलना में यह वृद्धि 11% रही है। यह वृद्धि राशि के रूप में वर्ष 2013–2014 के अंत में 2783.00 करोड़ रूपये हो गयी है।

प्रति अंश अर्जन – इससे यह जानकारी मिलती है कि समता अंशधारियों को प्रति अंश कितनी आय प्राप्त होगी। समता अंशधारियों को पूर्वाधिकार अंशधारियों को लाभांश का वितरण करने के पश्चात् लाभांश भुगतान किया जाता है। वित्तीय वर्ष 2009–2010 में प्रति अंश अर्जन 86.45 रूपये था यह अगले वित्तीय वित्तीय वर्ष 2010–2011 में 79.21 रूपये हो गया जो कि 8% कमी दर्शाता है। इसी प्रकार वर्ष 2011–2012 में यह राशि 56.60 रूपये व 2012–2013 में 79.19 रूपये हो गयी है। वित्तीय वर्ष 2013–2014 में यह राशि 92.13 रूपये हो गयी है जो आधार वर्ष से 6% वृद्धि दर्शाता है।

प्रति अंश पुस्तक मूल्य – प्रति अंश पुस्तक मूल्य दर्शाता है कि कम्पनी के अंशों की कीमत प्रतिवर्ष कितनी है। आधार वर्ष 2009–2010 में एक अंश की कीमत 409.65 रूपये थी, जो कि अगले वित्तीय वर्षों में क्रमश: 479.99, 525.68 व 615.03 हो गई। वित्तीय वर्ष 2013–2014 में एक अंश की कीमत 694.45 रूपये पर पहुँच गई जिससे यह स्पष्ट है कि प्रति अंश पुस्तक मूल्य में प्रतिवर्ष वृद्धि की प्रवृत्ति रही है। जो कि आधार वर्ष से 69% बढ़ी है।

निष्कर्ष – निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि वित्तीय स्थिति निरंतर प्रगति की ओर अग्रसर है। कम्पनी की अंश पूँजी, निधियाँ, कुल सम्पत्तियाँ तथा प्रति अंश मूल्य में निरंतर वृद्धि हुई है। विनियोग, शुद्ध लाभ तथा प्रति अंश अर्जन में कमी एवं वृद्धि की प्रवृत्ति रही है जिसकी वजह ऑटोमोबाइल क्षेत्र मे प्रतिस्पर्धा भी है। मारूति उद्योग कम्पनी को अपने द्धारा उत्पादित किये गये वाहनों की गुणवत्ता, कीमतों को प्रभावी व उपयोगकर्ताओं को उत्तम सेवा प्रदान कर प्रतिस्पर्धा से आगे निकलना चाहिए जिससे कम्पनी की वित्तीय स्थिति को सुदृढ़ व लाभ में निरंतर वृद्धि की जा सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. राठी एम.जी. 2011 पुस्तपालन एवं लेखाकर्म पृष्ठ क्रं.455,466
2. मारुति सुजुकी इंडिया लिमिटेड़ स्थिरता, वार्षिक रिपोर्ट 2009 से लिया गया
3. कृष्णवेनी पी. मारुति उद्योग लिमिटेड, भारतीय ऑटोमोबाइल उद्योग, प्रथम संस्करण, 2007
4. प्रैक्टिस हॉल ऑफ इण्डिया प्राईवेट लिमिटेड संस्करण 1972, पृ.क्रं.2
5. जैन. पी. के.कम्पनी लेखे, नवयुग साहित्य भवन, आगरा 1993
6. hhttp://www.maneycontrol.com/financials/marutisuzukiindia
7. hhttp://www.prokelera.com/automobile/maruti-suzuki/dealers.
8. hhttp://www.studymode.com/essaya/indian-automobile-Industry.
9. The Economic Times Newspaper.
10. hhttp://profit.ndtv.com/stock/marutu-suzuki-india-ltd_maruti/report.
11. Naveen shodh sansar (An International Refereed Research Journal) ISSN 2320-8767 Jan to March 2014.

तालिका क्रमांक 1.0
मारूति सुजुकी इंडिया लिमिटेड की वित्तीय स्थिति

क्र.	मद	2009 – 2010		2010 – 2011		2011 – 2012		2012 – 2013		2013 – 2014	
		राशि (करोड़)	प्रतिशत वृद्धि	राशि (करोड़)	प्रतिशत वृद्धि	राशि (करोड़)	प्रतिशत वृद्धि	राशि (करोड़)	प्रतिशत वृद्धि	राशि (करोड़)	प्रतिशत वृद्धि
1.	अंश पूंजी	144.50 (100)	–	144.50	–	144.50	–	151.00	4.50	151.00	–
2.	निधियाँ	11690.60 (100)	–	13723.00	117	15042.90	129	18427.90	158	20827.00	178
3.	विनियोग	7176.60 (100)	–	5106.80	71	6147.40	86	7078.30	98	10117.90	141
4.	कुल सम्पत्तियाँ	12656.60 (100)	–	14037.70	111	16265.70	129	19968.10	158	22663.10	179
5.	शुद्ध लाभ	2497.60 (100)	–	2288.60	91	1635.20	65	2392.10	96	2783.00	111
6.	प्रति अंश अर्जन (रू)	86.45 (100)	–	79.21	92	56.60	65	79.19	92	92.13	106
7.	प्रति अंश पुस्तक मूल्य (रू)	409.65 (100)	–	479.99	117	525.68	128	615.03	150	694.45	169

****

ई-गवर्नेंस के माध्यम से ग्रामीण स्वशासन का बदलता स्वरूप - मनरेगा के विशेष संदर्भ में

प्रकाश चन्द्र * तरन्नुम हुसैन**

शोध सारांश – मनरेगा अधिनियम की शुरूआत करना तात्कालिन सरकार की एक बहुत बड़ी सोच थी क्योंकि खेती करने लायक जमीने भारत के ग्रामीण क्षेत्रों में बहुत कम रह गई थी। ग्राम के लोग भूख और बेरोजगारी से तंग आकर शहर की और पलायन करना शुरू कर दिया था। जिससे की शहरों में असंतुलन व्याप्त होने लगा। इस कमी को दूर करना इस अधिनियम का मुख्य उद्देश्य था। लेकिन मनरेगा की शुरूआत में इसको क्रियान्वयन करने में बड़ी मुश्किलों का सामना करना पड़ रहा था। 2010 में मनरेगा में सूचना प्रौद्योगिकी का उपयोग इस क्षेत्र में वरदान साबित हुआ और इस क्षेत्र में क्रांति का सूत्रपात हुआ।

शब्द कुंजी – सूचना प्रौद्योगिकी (आई.सी.टी)., मनरेगा, ई-गवर्नेंस, ग्रामीण स्थानीय स्वशासन।

प्रस्तावना – भारतीय मौलिक संविधान में रोजगार की कोई गारंटी प्रदान नहीं की गई। महात्मा गांधी द्वारा ग्रामीण व्यवस्था को अधिक से अधिक सशक्त और आत्म निर्भर बनाने की बात पर गौर करते हुए आजादी के बाद हमारे गाँवों के सुदृढिकरण की योजनायें चलाई गई जिसमें कुछ योजनायें सफल और कुछ योजनायें असफल रही। योजनायें जो कि सरकार द्वारा चलाई गई थी उनकी असफलता के पीछे कहीं ना कहीं उसके क्रियान्यवन में आई बाधायें थी यथा नौकरशाही, लालफीताशाही, भ्रष्टाचार और पारदर्शिता की कमी थी।

भारत में राजीव गांधी के प्रधानमंत्री कार्यकाल से सूचना प्रौद्योगिकी का सूत्रपात हुआ और उन्होंने अपने कार्यकाल में इसके बढावे के लिए प्रयास किये। समय के साथ-साथ सूचना प्रौद्योगिकी भारत के हर क्षेत्र में पहुँच गई यहाँ तक कि दूर दराज के गाँवों व ढ़ाणियाँ भी वंचित नहीं रहे। सूचना प्रौद्योगिकी का धीरे-धीरे सरकारी काम-काज में उपयोग होने लगा और परिणाम स्वरूप ऊपर से नीचे के स्तर पर सूचना प्रौद्योगिकी का उपयोग होने लगा। ग्रामीण स्तर पर स्थापित ग्राम पंचायतों में भी इसके उपयोग के सकारात्मक परिणाम प्राप्त हुए क्योंकि जहाँ से इनका वास्तविक नियंत्रण होता है, वहाँ से ये ग्राम पंचायतें सीधी जुड़ गई। इनके बीच की दूरी व सम्प्रेषण को बड़ी आसानी से प्राप्त व भेजा जाना आसान हो गया और यह प्रशासनतंत्र के लिए वरदान साबित हो रही है।

मनरेगा – सन् 2005 में यू.पी.ए. सरकार ने एक अधिनियम द्वारा भारतीय संविधान की उस चूक को सुधारने का राष्ट्रीय रोजगार गांरटी अधिनियम के माध्यम से प्रयास किया जो कि हमारे संविधान निर्माताओं ने की थी। रोजगार गांरटी देने का कार्य मनरेगा ने पूरा किया। मनरेगा को फरवरी 2006 में भारत के कुछ चिह्नित जिलों में लागू किया गया। लेकिन इसके सकारात्मक परिणामों को देखते हुए कालान्तर में इसको भारत के सभी जिलो में लागू कर दिया। मनरेगा के माध्यम से प्रत्येक चिह्नित व्यक्ति को 100 दिन के रोजगार की गारंटी दी गई और इसके लिए न्यूनतम मजदूरी निश्चत की गई। मनरेगा के माध्यम से मिट्टी खुदाई व इस प्रकार के अन्य कार्यों को करवाने का प्रस्ताव पारित हुआ यथा मेड़ बंधाई, सड़क निर्माण व अन्य कृषि सुधार जैसे कार्य, जिसको एक अकुषल व्यक्ति भी आसानी से कर सके।

मनरेगा के माध्यम से पंजीकृत परिवार को एक फोटो युक्त कार्ड प्रदान किया जाता है जिसमें उस परिवार के सभी पंजीकृत लोगों का ब्यौरा दिया होता है। परिवार के पंजीकृत सदस्य द्वारा ग्राम पंचायत में आवेदन के माध्यम से 15 दिनों के भीतर रोजगार पाने का अधिकार हो जाता है। अगर उसको निश्चित समय में कार्य प्राप्त नहीं होता है तो वह इसके लिए बेरोजगारी भत्ता प्राप्त करने का हकदार होता है।[1]

केंद्रीय रोजगार गारंटी परिषद – केंद्रीय रोजगार गारण्टी परिषद मनरेगा द्वारा सौंपे गये कार्यों का निर्वहन व उनके कर्त्तव्यों का पालन करने वाली सबसे बड़ी इकाई होती है। परिषद् का पदेन अध्यक्ष संघ का ग्रामीण विकास मंत्री व अनेक पदेन सदस्य होते है जैसे सचिव, संघ ग्रामीण विकास, महिला, कृषि व पर्यावरण विभाग आदि मंत्रालयों द्वारा नाम निर्देशित व्यक्ति।[2]

ग्रामीण स्तर पर मनरेगा का क्रियान्वयन– सर्वप्रथम मनरेगा में पंजीकृत होने के लिए आवेदन करना अत्यावश्यक है। आवेदन की प्रक्रिया के बाद उचित प्रक्रिया के माध्यम से आवेदक को जॉब कार्ड प्राप्त हो जाता है और वह रोजगार पाने का पात्र मान लिया जाता है।[3]

मनरेगा कार्यक्रम संबंधित मुख्य दस्तावेज – मनरेगा कार्यक्रम में ग्राम पंचायत की मुख्य भूमिका होती है। मनरेगा कार्यालय पर सम्बंधित कार्यों का क्रियांवयन होता है और मनरेगा सम्बंधित गतिविधियों का लेखा-जोखा रखते हैं। इन दस्तावेजों में मुख्य रूप से पंजीकृत आवेदन-पत्र, कार्य की मांग के लिए आवेदन-पत्र, मस्टरोल, पंजीकृत पंजिका और वित्त व शिकायत पंजिका आदि होते है। इन दस्तावेजों के माध्यम से मनरेगा सम्बंधित आंकड़ों की ऑन लाईन प्रोसेसिंग होती है और पारदर्शिता बनी रहती है।[4]

ग्रामीण स्तर के अलावा इसका ब्यौरा प्रखण्ड स्तर पर और प्रखण्ड स्तर से उच्च स्तरों पर स्थानांतरित होता है।

* शोधार्थी (राजनीति विज्ञान) मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
** शोधार्थी (प्रबंध अध्ययन संकाय) मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

ई–गवर्नेंस और मनरेगा में इसका उपयोग:– मनरेगा में सूचना प्रौद्योगिकी के उपयोग का पायलेट सर्वे राजस्थान के कुछ जिलों में हुआ। सर्वे में ई–गवर्नेंस के कारण मनरेगा क्रियान्वयन में गुणात्मक सुधार देखा गया। मनरेगा सम्बंधित प्रशासनिक कार्यों के क्रियांवयन में सूचना प्रौद्योगिकी का उपयोग ग्राम स्तर से लेकर संघ ग्रामीण विकास मंत्रालय तक होने लगा। इससे इस कार्यक्रम का संचालन और आंकड़ों का संग्रहण आसान हो गया।

आई.सी.टी. का मनरेगा में उपयोग करने का मूल भूत उद्देश्य सूचना प्रबंधन व सम्प्रेषण को पूर्णतया पारदर्शी व उत्तरदायी बनाना है। सूचना की प्रभावी उपलब्धता के माध्यम से निर्धन और मुख्यत: महिलाओं को मनरेगा सम्बंधी सुविधायें प्रदान की जा सकती है साथ ही अधिनियम में वर्णित सरकारी उत्तरदायित्वों के निर्वहन को प्रभावी बनाया जा सकता है।

आई.सी.टी. के मनरेगा में उपयोग को निम्न चार्ट के माध्यम से सुनिश्चित किया जा सकता है –

आई.सी.टी. का मनरेगा में उपयोग (देखे अगले पृष्ठ पर)

मनरेगा में सूचना प्रौद्योगिकी का उपयोग निम्न प्रणाली के माध्यम से किया जा सकता है[5]

1. सर्व प्रथम मनरेगा मजदूर को आई.सी.टी. सूचना केंद्र पर जाकर स्वयं को पंजीकृत कराना होता है।
2. सूचना केंद्र पर स्वयं के फोटो ग्राफ के साथ उपस्थित हो, उपलब्ध ई–मित्र ऑपरेटर की सहायता व बताये निर्देशों के माध्यम से स्वयं का बायोमैट्रीक आधारित पहचान खाता खोलना होता है। जिसे अंगूठे की छाप की सहायता से ऑपरेट किया जाता है।
3. स्वत: संचालित टच स्क्रीन, नरेगा वर्कर को समस्त जानकारी यथा: जॉब उपलब्धता, मस्टरोल, कार्य की स्थिति व मजदूरी की जानकारी जॉब कार्ड पर उपलब्ध करवा दी जाती है।
4. उपयोगकर्ता सहायक चित्रो, स्थानीय भाषा व ऑडियो के माध्यम से जॉब मांग–पत्र व भुगतान प्रति बनवाने की जानकारी आसानी से प्राप्त कर सकता है।
5. मनरेगा मजदूर की मांग व प्राथमिकता के आधार पर ग्राम पंचायत सचिव आई.सी.टी. तंत्र का उपयोग काम दिलवाने व ई–मस्टरोल जारी करने में करता है।
6. मनरेगा मजदूर के उपस्थिति विवरण को जी.पी.एस. आधारित स्वसंचालित उपकरणो जो कि मनरेगा मजदूर की वास्तविक स्थिति को स्थानीय भौगोलिक कार्य स्थल से मिलान करके तैयार किया जाता है।
7. ऑन लाईन उपलब्ध जानकारियो के माध्यम से अधिकारीगण व अन्य सम्बंधित व्यक्ति कार्य विवरण व प्रगति की जानकारी रखते हैं। स्वत: संचालित उपकरणो से समय–समय पर ये जानकारी स्वत: अपडेट होती रहती है।
8. ई–माप पुस्तिका जियोटेजड उपस्थिति विवरण की सहायता से पंचायत कार्यालय बैंक व पोस्ट ऑफिस को भुगतान करने की प्रेरणा देता है।
9. बायो मैट्रिक पहचान को प्रमाणित करने के पश्चात् कार्यालय या गाँव जाकर मजदूर को भुगतान कर दिया जाता है।

मनरेगा कार्यक्रम में ई–गवर्नेंस के माध्यम से सुधार की सम्भानाऐं –

1. पारदर्शिता – मनरेगा कार्यक्रम में ई–गवर्नेंस के माध्यम से पारर्शिता की सम्भावनाऐं बढ़ गई है। अब सम्बंधित आंकड़ों को विभाग की साईटों पर आसानी से देखा जा सकता है। जिससे की लोगों को अपने से सम्बंधित आंकड़ों की जानकारी मिलना आसान हो गया है और जहां भी उनको गलत लगे वे शिकायत कर आसानी से न्याय प्राप्त कर सकते हैं।

2. प्रभावकारी कुशलता– ई–गवर्नेंस के माध्यम से मनरेगा कार्यक्रम के क्रियान्वयन में प्रभावकारी कुशलता आ जाती है। इससे न केवल समय व धन की खपत कम होती है, इससे उन गलतियों से भी बचा जा सकता है जो कि आमतौर पर एक कर्मचारी द्वारा की जाती है।

3. समय बचत– ई–गवर्नेंस से समय की बचत होती है क्योंकि सूचना प्रौद्योगिकी सम्बंधित उपकरणों के माध्यम से निर्देशित आंकड़ों के संचरण में बहुत ही कम समय लगता और आंकड़ें एक से दूसरे स्थान पर तीव्रता से भेजे जाते हैं।

4. अपव्यय में कमी– ई–गवर्नेंस के माध्यम से धन की बरबादी पर रोक लगी है। इसमें एक बार तो धन की बहुत आवश्यकता होती है, लेकिन जब सभी उपकरण उपलब्ध कर लिये जाते हैं, तो बाद में केवल अच्छे रख–रखाव से मनरेगा सम्बंधित कार्य का संचालन सुव्यवस्थित व गुणात्मक पूर्ण बनाया जा सकता है।

5. मानवीय संसाधनों की आवश्यता कम– मनरेगा में ई–गवर्नेंस के उपयोग के माध्यम से मानवीय संसाधनों की प्रशासनिक कार्यों में अगर कमी हो तो भी इस पर कोई असर नहीं है क्योंकि इसमें जो सूचना प्रौद्योगिकी का उपयोग किया जाता है। उसके संचालन के लिए अधिक कर्मचारियों की जरूरत न होकर उनकी तकनीकी कौशल शक्ति पर ज्यादा ध्यान दिया जाता है।

6. क्रियान्वयन आसान– ई–गवर्नेंस के माध्यम से मनरेगा कार्य का क्रियान्वयन आसान हुआ है क्योंकि इससे समय और धन की बचत के साथ–साथ पारदर्शिता का प्रावधान है। जिससे कि मनरेगा सम्बंधित कार्यों का संचालन आसान हो जाता है।

7. दस्तावेजों का रखरखाव आसान– मनरेगा में ई–गवर्नेंस के माध्यम से रख–रखाव आसान हो गया है, क्योंकि बिना ई–गवर्नेंस के लेखों–जोखों को विभिन्न पंजिकाओं में सम्भालकर रखना पड़ता है। इससे अनेक प्रकार के दस्तावेजों का भारी भरकम काम हो जाता है और इनका अच्छी तरह से रख रखाव करना बड़ा मुश्किल होता है। लेकिन ई–गवर्नेंस के माध्यम से इस प्रकार के दस्तावेजों की कोई आवष्यकता नहीं होती है।

8. ई–गवर्नेंस एक अच्छे पर्यवेक्षक के रूप में– ई–गवर्नेंस मनरेगा कार्यक्रम का अच्छा पर्यवेक्षक है क्योंकि ई–गवर्नेंस के माध्यम से सम्पूर्ण कार्यक्रम पर आसानी से निगरानी रखी जा सकती है और विभिन्न प्रकार की जांचों से बचते हुये अपने लक्ष्य तक आसानी से पहुचा जा सकता है।

9. भ्रष्टाचार में कमी– विभिन्न अध्यायों से मनरेगा कार्यक्रम पर भ्रष्टाचार के आरोप लगते रहे है। ई–गवर्नेंस के माध्यम से इसमें सुधार देखा जा सकता है, क्योंकि यह पारदर्शिता लाता है और समय पर आंकड़ों की प्राप्ति व इन पर उच्च स्तर द्वारा निगरानी की जाती है।

10. राजनीतिक हस्तक्षेप में कमी – ई–गवर्नेंस के कारण कार्य ऑन लाईन होने की वजह से इसको अधिनियम के नियमानुसार चलाया जा सकता है न कि स्थानीय राजनीति से प्रभावित होकर इसको भाई भतिजावाद व भ्रष्टाचार की भेंट चढ़ा दिया गया है।

11. समस्याओं व शिकायतों का निस्तारण आसान और प्रशासन के उच्चतर स्तर के साथ सामान्य मजदूर का सीधा सम्बंध – ई–गवर्नेंस के माध्यम से लोगों में मनरेगा के माध्यम से सकारात्मक प्रवृति बढ़ी

है और मनरेगा सम्बंधित शिकायतों व समस्याओं को उजागर करने में ई-गवर्नेंस एक अच्छा माध्यम कहा जा सकता है। समय-समय पर की गई ऑन लाईन शिकायतों का निस्तारण तुरंत व पारदर्शिता के साथ होना सम्भव हो पाया है।

मनरेगा कार्यक्रम में ई-गवर्नेंस के सामने आने वाली बाधाएं-

1. **बजट का अभाव-** भारत में आमतौर पर बजट का अभाव देखा जाता है। शुरूआत में तो किसी कार्यक्रम के लिए अच्छा बजट उपलब्ध करवाया जाता है, लेकिन बाद में जब सम्बंधित उपकरणों में तकनीकी खराबी होती है तो बजट का अभाव बना रहता है। यही असर मनरेगा कार्यक्रम में उपयोग की जा रही सूचना प्रौद्योगिकी में देखा जा सकता है।

2. **निरक्षरता –** भारत में शिक्षा का स्तर काफी कम है विशेषकर तकनीकी शिक्षा का तो और भी कम। तकनीकी शिक्षा के अभाव में लोग इस प्रकार की सुविधाओं का उपभोग नहीं कर पाते हैं। इस प्रकार से ई-गवर्नेंस कार्यप्रणाली अपनी उद्देश्यों में असफल रहती है।

3. **आवश्यक आधारभूत संरचना का अभाव –** मनरेगा कार्यक्रम में ई-गवर्नेंस की रफ्तार आवश्यक आधारभूत संरचना के अभाव के कारण धीमी पड़ती जा रही है क्योंकि समय-समय पर आवश्यक उपकरण व अन्य सुविधायें उपलब्ध नहीं हो पाती इंटरनेट, विद्युत व अन्य उपकरण आदि।

4. **लोगों में सूचना प्रौद्योगिकी उपयोग के उद्देश्य का अभाव और उदासिन प्रवृति-** भारतीय ग्रामों में रहने वाले लोग जो कि ज्यादातर अशिक्षित और भाग्यवादी प्रवृति के होते हैं। उनमें मनरेगा कार्यक्रम में उपयोग की जाने वाली सूचना प्रौद्योगिकी के उद्देश्यों का अभाव पाया जाता है। वे इसके पढ़े लिखे और सरकारी लोगों के स्तर के कार्यों से दूर रहते हैं।

5. **स्थानीय स्तर पर राजनीतिक इच्छा शक्ति का अभाव-** स्थानीय स्तर पर विद्यमान लोगों के साथ चुनाव तक ही अच्छे सम्बंध रखते हैं। चुनाव होने के बाद ये स्थानीय स्तर के कर्मचारी सिर्फ अपने भले की ही सोचते हैं और लोगों के किसी प्रकार के लाभ की बात नहीं करते हैं, लोगों को ई-गवर्नेंस जैसी जटील प्रक्रिया से जोड़ने की बात दूर की रह जाती है।

6. **सम्बंधित तकनीकी कर्मचारियों की कमी व उनका कार्य के प्रति उत्तरदायित्व का अभाव –** मनरेगा कार्यक्रम में प्रयोग की जा रही सूचना प्रौद्योगिकी के संचालन के लिए मानवीय संसाधनों का अभाव पाया जाता है। उनमें तकनीकी कौशलात्मक जानकारी नहीं होती जिससे कि वे इस कार्य को ठीक से अंजाम दे सके। इसके साथ ही सम्बंधित कर्मचारियों में उदासींनता भी देखी जा सकती है जिससे की आम आदमी हताश हो जाता है और वह इन सब झंझटों से बचने की सोचता है।

निष्कर्ष – मनरेगा जो कि अपने शुरूआती समय में भ्रष्टाचार, भाई-भतिजावाद की भेंट चढ़ता जा रहा था। इसकी कार्य प्रणाली बिल्कुल लड़खड़ा गई थी। ई-गवर्नेंस ने इसमें जान फूंक दी व इस कार्यक्रम के क्रियान्वयन में गुणात्मक वृद्धि की है और आंकड़ों का संग्रह एक सुसंगठित रूप से निम्न स्तर से उच्च स्तर तक किया जा रहा है। जो कि इस प्रकार का आंकड़ों का संग्रह व मनरेगा का क्रियान्वयन इतना अच्छी तरह से बिना सूचना प्रौद्योगिकी के मुश्किल ही नहीं असम्भव था। अगर भविष्य में मनरेगा में ई-गवर्नेंस के क्षेत्र में इसी तरह सकारात्मक सुधार बना रहा और सूचना प्रौद्योगिकी के नये-नये प्रयोगों को इसमें शामिल किया जाता रहा तो नरेगा के भविष्य की सफलता पर कोई प्रश्न चिह्न नहीं लगाया जा सकता है। बस डर तो इस बात का है कि यह अधिनियम राजनीति की भेंट चढ़कर भविष्य की सरकारों द्वारा खत्म न कर दिया जाये।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. देवपुरा, प्रतापमल, 2012, पंचायती राज के नये आयाम, राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना, अंकुर प्रकाशन, दिल्ली, पेज. 41
2. भारत का राजपत्र, ग्रामीण विकास मंत्रालय अधिसूचना, नई दिल्ली, 25 मई 2006
3. राजगढ़िया, विष्णु, 2013, मनरेगा, राजकमल प्रकाशन प्रा0 लि0, दिल्ली पेज न. 41
4. सरपंच पुस्तिका, ग्रामीण विकास विभाग, भारत सरकार 2008 पेज न. 31
5. केस स्टडी ऑन ई-गवर्नेंस इन इण्डिया, 2013-14, पेज न. 19

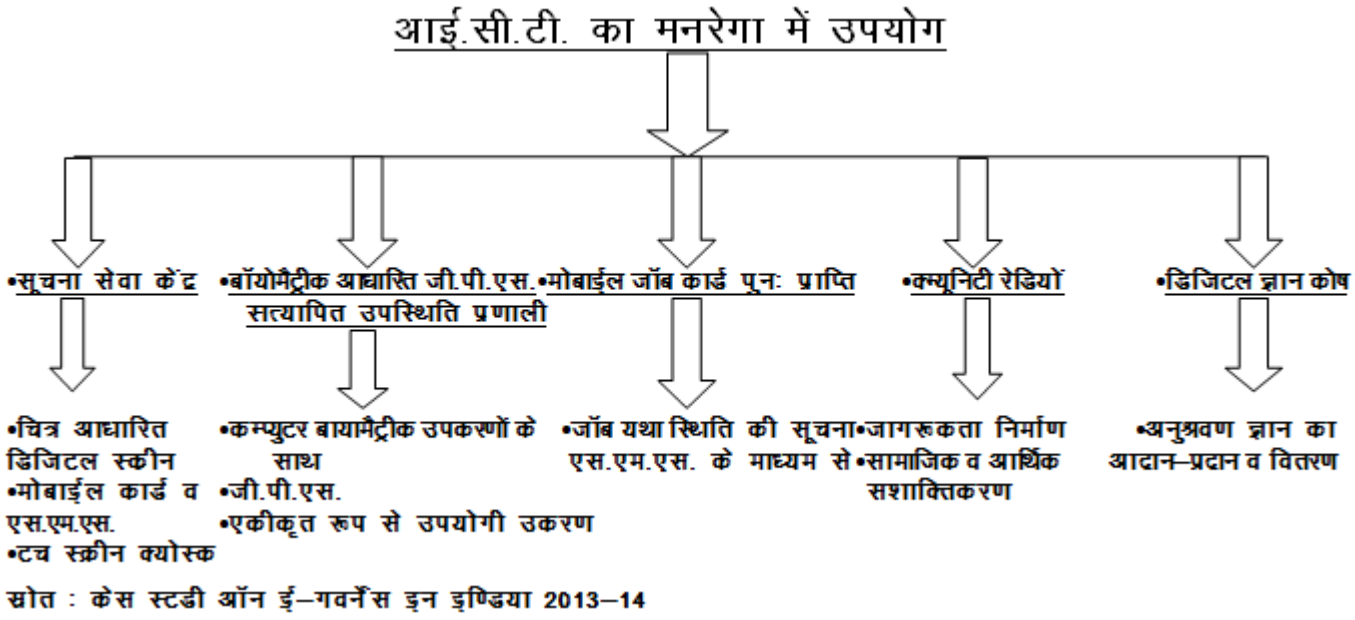

स्रोत : केस स्टडी ऑन ई-गवर्नेंस इन इण्डिया 2013-14

****

युवाओं के स्वरोजगार में एस.जी.एस.वाय.एवं ग्रामीण स्वरोजगार का योगदान - खरगोन (म.प्र.) जिले के विशेष संदर्भ में

डॉ. टी. आर. ब्राह्मणे * संजय खाण्डेकर **

प्रस्तावना – भारत में रोजगार एवं उद्यमों के अभाव में राष्ट्र के प्राकृतिक एवं भौतिक साधन अप्रयुक्त रह जाते है , जिससे देश के व्यक्तियों के कौशल ,ऊर्जाओं एवं उद्यमीय संभावानाओं का सही उपयोग नहीं हो पाता है। सभी व्यक्ति जो शारीरिक एवं मानसिक कार्य करने के योग्य है, उन्हें रोजगार के अवसर उपलब्ध कराना आर्थिक विकास की मलभूत आवश्यकताओं में से एक है। एक अनुमान के अनुसार भारत में कुल बेरोजगारी का 60 प्रतिशत भाग ग्रामीण क्षेत्रों से सम्बन्धित होता है । ग्रमीण बेरोजगारी की श्रेणी में किसान, छोटे कृषक,लघु काश्तकार एवं साथ ही साथ शिक्षित युवक भी शामिल है । गरीबी उन्मूलन और स्वरोजगार हेतु प्रयास किए है, परन्तु बेरोजगारी मिटाने के लिए सर्वप्रथम चतुर्थ पंचवर्षीय योजना (1969-74) में ध्यान दिया गया , इसके बाद भारत में कई स्वरोजगार योजनाएँ प्रारम्भ की गई है ।

शिक्षित बेरोजगार युवकों के लिए स्वरोजगार योजना , शहरी गरीबों के लिए स्वरोजगार के लिए गामीण युवा प्रशिक्षण की योजना , उन्नत औजार किट योजना , समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम , जवाहर रोजगार योजना, रोजगार बीमा योजना , नेहरू रोजगार योजना , प्रधानमंत्री रोजगार योजना, प्रधानमंत्री का एकीकृत शहरी गरीबी उन्मूलन कार्यक्रम और राज्य सरकारों की विविध स्वरोजगार योजनाएँ आदि। गरीबी रेखा से नीची जीवन -यापन करने वाले परिवारों को स्व-सहायता समूहों में संगठित कर स्वरोजगार के लिए ऋण और अनुदान उपलब्ध करवाकर उपयुक्त अवधि में गरीबी रेखा से ऊपर लाने का कार्य केन्द्र सरकार के ग्रामीण विकास मंत्रालय द्वारा विश्व की सबसे बडी स्वरोजगार योजना 'स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना' (एस.जी.एस.वाय.) को 1 अप्रैल 1999 से प्रारम्भ कर किया गया है। ग्रामीण युवा कई बार पर्याप्त जानकारी के अभाव में भटकते रहते है। इस प्रकार बेरोजगारके अंधकार में भटकते युवाओं व ग्रामीणजनों को उद्यमिता के उजाले में लाने का प्रयास पूर्व में संचालित छ:बडी योजनाओं (IRDP, DWCRA, SITRA, TRYSEM, MWS ANDGKY) को आपस में पुनर्गठित एवं एकीकृत कर एस.जी.एस.वाय.संपूर्ण भारत में लागू की गई है। इससे पहले स्वतन्त्रता के स्वर्ण जयन्ती वर्ष में केन्द्र सरकार ने शहरी क्षेत्र में 1 दिसम्बर 1997 से स्वर्ण जयन्ती शहरी रोजगार योजना (एसज़ेएसग़ाय) को लागू कर दिया गया था। वर्तमान में जून 2011 को लागू शासन की महत्वाकांक्षी योजना 'राष्ट्रीय ग्रामीण आजीविका मिशन' (एन. आर. एल. एम) में इसे एस.जी.एस.वाय को समाहित कर लिया गया है। एनआरएलएम का मुख्य उद्देश्य ग्रामीण परिवारों को देश की मुख्य धारा से जोड़ना और विभिन्न कार्यक्रमों को विश्व बैंक से आर्थिक सहायता मिलती है। एन.आर.एल.एम. ने स्व-सहायता समूहों एवं संघीय संस्थाओं के माध्यम से देश के 600 जिलों में 6000 प्रखंडों ,2.50 लाख ग्राम पंचायतों और 6 लाख गाँवों के 7 करोड ग्रमीण बी.पी.एल.परिवारों को 8 से 10 की अवधि में उन्हें अजीविका के आवश्यक साधन जुटाने में सहयोग का संकल्प लिया है। एन.आर.एल.एम. प्रदेशों में अजीविका से जुडी सभी गतिविधियों के क्रियान्वयन पर नजर रखेगा । राज्य सरकार के तहत एक स्वायत्त इकाई के तौर पर एक समिति, ट्रस्ट या कंपनी के तौर पर निगमित किया जायेगा ।

एस.जी.एस.वाय के प्रमुख प्रावधान व प्रक्रिया – ग्राम सभा जमीनी स्तर पर लोकतंत्र की आधारशीला है , ग्राम सभा द्वारा चयनीत गरीबी रेखा से नीचे जीवन यापन करने वाले हितग्राहियों को SWAROZGARIsd कहा जाता है ,जिन्हें योजना का लाभ दिया जाना है। योजनान्तर्गत एक समूह में 10-20 बीपीएल.हितग्राही चयनीत किये जाते है । परन्तु राज्यस्तरीय एस.जी.एस.वाय समिति के अनुमोदन के बाद रेगिस्तानी इलाकों ,पहाडी एवं विरल जनसंख्या वाले क्षेत्रों में समूहों संख्या 5-20 भी हो सकती है ।

योजनान्तर्गत उपलब्ध आवंटन राशि का प्रयोग निम्नानुसार किया जाता है ।

60 प्रतिशत अनुदान राशि (1प्रतिशत रिस्क फण्ड सहित)
10 प्रतिशत प्रशिक्षण हेतु
10 प्रतिशत रिवाल्विंग फण्ड हेतु
20 प्रतिशत अधोसंरचना विकास हेतु
1 प्रतिशत रिस्क फण्ड हेतु

वित्त के कुल आवंटन में केन्द्र में **75 प्रतिशत एवं राज्य 25 प्रतिशत** राशि पदान करता है।

SHGS या स्वरोजगारी को निर्धारित गतिविधि हेतु मूलभूत और तकनीकी प्रशिक्षण दिया जाता है । समूह की माह में दो बार, प्रतिमाह या आवश्यकता पडने पर साप्ताहिक बैठक बुलाई जाती है। समूह के लीडर को समूह गतिविधियों का रिकार्ड रखना व नेतृत्व के गुण सिखाए जाते है । कौशल विकास हेतु पुन: प्रशिक्षण की भी व्यवस्था की जाती है। योजना की मॉनिटरिंग का कार्य ऑनलाइन जीओआई द्वारा पंचायत जनपद जिला स्तर पर बैठकों द्वारा व इसके अलावा अधिकारियों द्वारा भ्रमण के दौरान निरीक्षण और भौतिक सत्यापन की व्यवस्था कलेक्टर सी.ई.ओ.(जिला पंचायत) एडी.ई.ओ.पी.सी.ओ.द्वारा की जाती है। भारत की जनगणना 2011 के आंकडों के अनुसार भारत में 68.84 प्रतिशत जनसंख्या गाँवों में

* सहायक प्राध्यापक(वाणिज्य) श्री नीलकण्ठेश्वर शासकीय महाविद्यालय, खण्डवा (म.प्र.) भारत
** सहायक प्राध्यापक (वाणिज्य) शासकीय अतिथि विद्वान श्री नीलकण्ठेश्वर शासकीय महाविद्यालय, खण्डवा (म.प्र.) भारत

निवास करती है । मध्यप्रदेश में 7237 प्रतिशत है खरगोन जिला मप्र में पश्चिम निमाड के नाम से जाना जाता है। खरगोन जिले की जनसंख्या 1629568 लगभग है । जिसमें 6054 प्रतिशत जनसंख्या गाँव में रहती है। एस.जी.एस.वाय के द्वारा 30 प्रतिशत ग्रामीण गरीबों को 5 वर्ष में गरीबी रेखा से ऊपर लाने का लक्ष्य निर्धारित किया गया है।

खरगोन जिले में एस.जी.एस.वाय योजनान्तर्गत अब तक (2012-13) 4894 स्व-सहायता समूह गठित किये जा चुके है। जिनमें महिला समूहों की संख्या 2199 है। खरगोन जिले को प्राप्त पांच वर्षो का वार्षिक आवंटन एवं उसका उपयोग निम्न तालिका द्वारा स्पष्ट किया जा रहा है

तालिका क्रं 1

खरगोन जिल में योजनान्तर्गत वार्षिक आवंटन एवं उसका उपयोग

(राशि लाख रू में)

क्र.	वर्ष	उपलब्ध आवंटन	व्यय	व्यय का प्रतिशत
1	2009 (SGSY)	131.82	130.90	99.30
2	2010 (SGSY)	133.91	131.99	98.57
3	2011 (SGSY)	149.34	141.29	95
4	2012 (NRLM)	149.22	141.59	95
5	2013 (NRLM)	187.843	170.46	91

स्त्रोत-जिला सांख्किीय कार्यलय खरगोन

उपरोक्त आंकडों से स्पष्ट होता है कि खरगोन जिले को प्राप्त आवंटन का व्यय प्रतिशत प्रारंभिक वर्ष 2009 में 99.30 प्रतिशत रहा है । यह प्रतिशत 2013 में घटकर 91 प्रतिशत हो गया था । परन्तु विकासशील जिले में उपरोक्त प्रगति सरहानीय है । निश्चित ही इससे न सिर्फ ग्रामीण बेरोजगारों को अपना स्वंय का रोजगार मिला है , वरन वे गरीबी रेखा के ऊपर आकर आत्मनिर्भर बन सके है ।

निष्कर्ष - 'स्वर्ण जयंती ग्राम स्वरोजगार योजना' या NRLM ग्रामीण जन्मजात गरीबी के कुचक्र को स्थानीय समुदाय के सहयोग से तोडने व ग्रामीणों में उद्यमीय क्षमता का विकास करने में सराहनीय कार्य कर रही है । एस.जी.एस.वाय द्वारा 'अपनी सहायता उत्तम सहायता 'वाली कहावत को चरितार्थ किया गया है । राष्ट्र के अप्रयु म स्थानीय संसाधनों का समुचित प्रयोग करने ,पिछडी जाति एवं क्षेत्रों का विकास करने , कमजोर वर्ग का आर्थिक उत्थान करने तथा ग्रामीण निर्धन परिवारों को आत्मनिर्भर बनाने हेतु यह कार्यक्रम प्रभावशाली सिद्ध हुआ है। वर्ष 2010-11 में 12.81 लाख स्वरोजगारियों को योजना का लाभ दिया गया था जिसमें से 8.50 लाा संख्या और दिसम्बर 2010 तक प्राप्त आंकड़ों के अनुसार 2901.38 करोड़ रू का ऋण बैंको द्वारा वितरित कर दिया गया था। एस.जी.एस.वास की प्रमुख कमजोरी यह रही है कि अधिकतर ग्रामीण निम्न तकनीकी सपोर्ट एवं न्यून उत्पादकता से जूझ रहे है और समूह द्वारा मुख्य गतिविधि को कम लाभ होने की स्थिति में बीच में ही बंद कर दिया जाता है साथ ही उत्पादित माल का उचित बाजार उपलब्ध नहीं हो पा रहा है। इससे ग्रामीणों को स्वरोजगार योजना से रोजगार प्राप्त हुआ एवं उनमें आत्मनिर्भरता और उद्यमीय संभावनाओं का विकास हुआ है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची:-

1. उद्यमिता विकास, प्रो.शु ल त्रिभुवन नाथ (मप्र हिन्दी ग्रन्थ अकादमी भोपाल) ।
2. उद्यमी ,उद्योग ,स्वरोजगार ,उद्यमिता विकास केन्द्र सेडमैप ।
3. जीएससुधा ,व्यावसाायिक उद्यमिता ।
4. श्री.एच.के भारती, उद्यमिता विकास ।

****

भारत में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश – संभावनाऐं एवं चुनौतियां

डॉ. ए.के. पाण्डेय *

प्रस्तावना – स्वतंत्रता के पश्चात् देश के तीव्र आर्थिक विकास एव संसाधनों के समुचित विदोहन की कठिन चुनौती देश के सामने थी। स्वयं के संसाधनों से समग्र आर्थिक विकास की चुनौती को पार करना आसान नहीं था।

विदेशो में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश को शासित करने वाले दिशा–निर्देशो के रूप में पहली नीति भारत सरकार द्वारा 1969 में जारी की गई। इन दिशानिर्देशो में विदेशी परियोजनाओं में भारतीय कम्पनियों की भागीदारी की सीमा को परिभाषित किया गया था। उनमें भारतीय पक्ष द्वारा गौण भागीदारी की अनुमति दी गई थी जिसमें कोई नकदी पारेषण नहीं था। जहां कहीं आवश्यक हों, स्थानीय पक्षों, स्थानीय विकास बैंकों, वित्तीय संस्थाओं और स्थानीय सरकारों की सहबद्धता का पक्ष भी ऐसे निवेशो को प्रोत्साहित करने के लिए लिया गया।

सरकार ने 1978 में अधिक सर्वांगीण उपायो का सैट जारी करके इन दिशा निर्देशो को संशोधित किया। इन उपायों में वाणिज्य मंत्रालय द्वारा एक केन्द्र बिन्दु पर निवेश प्रस्तावो के अनुमोदन, निगरानी, मूल्यांकन का प्रावधान था। इन दिशानिर्देशो में किसी भारतीय कम्पनी के विदेश में निवेशो से संबंधित इसके आरंभिक और अनुवर्ती खर्चों को पूरा करने के लिए विदेशी मूद्रा जारी करने हेतु भारतीय रिजर्व बैंक (आरबीआई) के पास आवश्यक अधिकार सौंपने की आवश्यकता को भी मान्यता दी गई।

इन दिशा निर्देशो को तदंतर 1986, 1992 और 1995 में संशोधित किया गया। विदेशो में भारतीय निवेशो संबंधी नीति का सबसे पहले 1992 में उदारीकरण किया गया। इसके अंतर्गत, विदेशी निवेशो के लिए एक स्वचालित मार्ग शुरू किया गया और कुल मूल्य प्रतिबंधों सहित पहली बार नकद परिषणो की अनुमति दी गई। विदेशो में भारतीय निवेशो की व्यवस्था खोलने के लिए मूल तर्काधार भारतीय उद्योग को नए बाजारों और प्रौद्योगिकियों तक पहुंच प्रदान करने की आवश्यकता है ताकि वे वैश्विक रूप से अपनी प्रतिस्पर्द्धात्मकता बढ़ा सके और देश के निर्यात को बढ़ावा दे सके।

भारतीय निवेश प्रक्रियाओं को और उदार एवं कारगर बनाने का कार्य 1995 में आरंभ किया गया। 1995 के दिशा निर्देशो में विदेशी निवेश से संबंधित कार्य वाणिज्य मंत्रालय से भारतीय रिजर्व बैंक (आरबीआई) को अंतरित करके एक विस्तृत फ्रेमवर्क की व्यवस्था की गई और भारतीय रिजर्व बैंक विदेशी निवेश नीति को प्रशासित करने के लिए एक केन्द्रीय एजेन्सी बन गई। इसमें विदशी निवेश अनुमोदनों के लिए एक एकल बिंदु प्रणाली की व्यवस्था की गई। तब से विदेशो में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश के सभी प्रस्ताव भारतीय रिजर्व बैंक (आरबीआई) को प्रस्तुत किए जा रहे हैं जिसके द्वारा इन पर कार्रवाई की जा रही है। इसके अतिरिक्त, इन दिशा निर्देशो का लक्ष्य निम्नलिखित मूल उद्देश्यो के साथ विदशी निवेश नीति के ढांचे में पारदर्शिता लाना है –

- भारतीय उद्योग और व्यापार को वैश्विक नेटवर्कों को पहुंच प्रदान करने के लिए फ्रेमवर्क की व्यवस्था करना।
- यह सुनिश्चित करना कि व्यापार और निवेश प्रवाह, यद्यपि ये वाणिज्यिक हितों द्वारा निर्धारित होते हैं, विशेष रूप से पूंजी प्रवाहों के आकार की दृष्टि से देश के वृहत् आर्थिक और भुगतान संतुलन की विवशताओं के अनुरूप हो।
- भारतीय व्यापार को प्रौद्योगिकी हासिल करने अथवा संसाधन प्राप्त करने अथवा बाजार तलाशने के लिए उदार पहुंच प्रदान करना।
- यह संकेत देना कि सरकार की नीति में परिवर्तन है और वह एक विनियामक या नियंत्रक के स्थान पर सुविधा प्रदाता है।
- भारतीय उद्योग को विदेशो में छवि सुधारने के उद्देश्य से स्व–विनियमन और सामूहिक प्रयास की भावना अपनाने के लिए प्रोत्साहित करना।

अत: 1991 के नये आर्थिक सुधारों को अपनाने के पश्चात् विदेशी नीति को और अधिक उदार बनाया गया। इस प्रकार विदेशी विनियोग को प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से प्रत्यक्ष विदेशी विनियोग को आसान बनाया गया। प्रत्यक्ष विदेशी निवेश वह निवेश होता है जिसमें कोई विदेशी नागरिक अथवा संगठन दूसरे देश में अपनी पूंजी द्वारा उत्पादन इकाई की स्थापना करता है। ऐसे विनियोजन पर विनियोगजक का स्वामित्व एवं प्रबन्धन में नियंत्रण रहता है। भारत में यह विनियोग भारतीय रिजर्व बैंक औद्योगिक सहायता सचिवालय एवं विदेशी विनियोग प्रोत्साहन बोर्ड (एफआईपीबी) के माध्यम से होता है। इसके अन्य दो रास्ते हैं– अनिवासी भारतीय तथा अनिवासी द्वारा भारतीय कम्पनियों में शेयरों की खरीद। अर्थात् एफडीआई का अर्थ विदेशी मुद्रा प्रबन्धन (किसी अनिवासी भारतीय द्वारा प्रतिभूतियों का अन्तरण अथवा निर्गम) विनियमन 2000 की अनुसूची 1 के अंतर्गत भारतीय कम्पनी की पूंजी में अनिवासी/विदेशो में रह रहें व्यक्तियों द्वारा किया गया निवेश है।

एफडीआई की सामान्य शर्तें – कोई अनिवासी व्यक्ति (पाकिस्तान के किसी नागरिक अथवा निगमित कम्पनी को छोड़कर एफडीआई नीति के अनुसार भारत में निवेश कर सकता है। पोर्ट फोलियो निवेश के अंतर्गत किसी भारतीय कम्पनी की पूंजी में एफआईआई निवेश कर सकती है। जिसमें एफआईआई की निजीधारिता की सीमा कम्पनी की पूंजी से अधिक नहीं रखी गई है।

* प्राध्यापक व विभागाध्यक्ष (अर्थशास्त्र) शासकीय कन्या महाविद्यालय, सतना (म.प्र.) भारत

एफडीआई और पोर्टफोलियो निवेश स्कीम में समग्र एफआईआई निवेश सीमाओं के भीतर होना चाहिए। कुछ विभिन्न शर्तों के अंतर्गत भी निवेश किया जा सकता है जैसे, इक्विटी शेयर में पात्र विदेशी निवेशक, साझेदारी फर्म स्वामित्व संस्था में एफडीआई, उद्यम पूंजी निधि में एफडीआई, सीमित दायित्व साझेदारी में एफडीआई आदि।

एफडीआई के क्षेत्र – एफडीआई उदारीकरण की नीति का एक महत्वपूर्ण घटक रहा है। 1991 से लगातार इस बात पर विचार-विमर्श होता रहा है कि एफडीआई की अनुमति किन क्षेत्रों में और कितने प्रतिशत होनी चाहिए तथा किन क्षेत्रों में पूर्णत: प्रतिबंधित किया गया है।

एफडीआई के संबंध में सरकार की नवीन नीति के अंतर्गत एफडीआई की अनुमति का क्षेत्र अधिक विस्तृत किया गया है। साथ ही कुछ क्षेत्र ऐसे हैं जिनमें एफडीआई पूर्णत: प्रतिबंधित किया गया है।

ऐसे क्षेत्र जिनमें एफडीआई की सीमा 100 प्रतिशत है। उनमें से मुख्य निम्नलिखित हैं –

1. **कृषि एवं पशुपालन –** बागवानी, मधुमक्खी पालन, बीज और रोपण, पशुपालन, मत्स्य पालन और कृषि व सम्बद्ध क्षेत्र से जुड़ी सेवाएं आदि।
2. **चाय बागान –** चाय क्षेत्र एवं चाय बागानो सहित।
3. **खनन –** हीरा, सोना, चांदी और कीमतो अयस्कों सहित (किंतु टाइटेनियम युक्त खनिजों और अयस्कों को छोड़कर)।
4. **कोयला और लिग्नाइट –** कोयला खान अधिनियम 1973 के प्रावधानों के अंतर्गत और उसके अधीन अनुमति है।
5. **पेट्रोलियम एवं प्राकृतिक गैस –** तेल विकास, पेट्रोलियम उत्पादों और प्राकृतिक गैस उत्पादों का विपणन, पाइपलाइनों, बाजार अध्ययन और संरचना एवं पेट्रोलियम रिफाइनिंग आदि।
6. **औद्योगिक पार्क –** अवसंरचना एवं सार्वजनिक सुविधाओं का विकास।
7. **नागरिक उड्डयन क्षेत्र –** एयरपोर्ट, ग्रीन फील्ड परियोजनाऐं और विद्यमान परियोजनाऐं।

वह क्षेत्र जिनमें स्व-प्रतिशत से कम एफडीआई की अनुमति है –

1. टेलीकॉम सेवाओं में 74 प्रतिशत एफडीआई की अनुमति है।
2. बैंक्रिग निजी क्षेत्र में 74 प्रतिशत एफआईआई द्धारा निवेश तथा 20 प्रतिशत एफडीआई तथा पोर्टफोलियों निवेश की अनुमति है।
3. जीन्स बाजार में 49 प्रतिशत एफडीआई एवं एफआईआई की अनुमति है।
4. ऋण सूचना कम्पनियां प्रतिभूति बाजार में अवसंरचना कम्पनी में 49 प्रतिशत एफडीआई एवं एफआईआई की अनुमति।
5. बीमा क्षेत्र में 26 प्रतिशत स्वचालित एफडीआई की अनुमति है।
6. प्रिंट मीडिया में 26 प्रतिशत एफडीआई की अनुमति।
7. प्रसारण सेवा क्षेत्र में 74 प्रतिशत एफडीआई सहित कुल प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष विदेशी निवेश।

ऐसे क्षेत्र जिनमें एफडीआई प्रतिबंधित है। उनमें से मुख्य निम्नलिखित हैं-

1. खुदरा व्यापार (एकल ब्रांड उत्पाद खुदरा व्यापार के अलावा)।
2. सरकारी/निजी लॉटरी, ऑनलाइन लॉटरी आदि सहित लॉटरी व्यापार।
3. कैसीनों आदि सहित जुआ खेलना और सट्टा लगाना।
4. चिट फंड।
5. निधि कम्पनी।
6. अन्तरणीय विकास अधिकारों में व्यापार (टीडीआर)।
7. स्थावर सम्पदा व्यापार अथवा फॉर्म हाउसों का निर्माण।
8. सिगरेट, चुरट, सिगार, सिगरिलोज तथा सिगरेट का तम्बाकू अथवा तम्बाकू के उत्पाद।
9. गतिविधियों/सेक्टर्स जो निजी क्षेत्र निवेश हेतु खुले नहीं हैं अर्थात् परमाणु ऊर्जा और रेलवे परिवहन (जन द्रुत परिवहन प्रणालियों से भिन्न)।

फ्रेंचाइजी, ट्रेडमार्क, ब्राण्ड, नाम, प्रबंध, संविदा हेतु लाइसेंस सहित किसी भी रूप में विदेशी प्रौद्योगिकी सहयोग, लॉटरी व्यापार और जुए तथा सट्टा लगाने की गतिविधियों के लिए एफडीआई प्रतिबंधित है।

भारत में एफडीआई – भारत में निवेशकों के लिए आकर्षक वातावरण बनाने के उद्देश्य से दिसम्बर 2004 में निवेश आयोग का गठन किया गया। आयोग को सरकार की ओर से बातचीत करने, देश में घरेलू तथा विदेशी व्यापार के विस्तार हेतु पहल करने के लिए व्यापक अधिकार प्राप्त हैं। आयोग ने आर्थिक विकास की गति तेज करने के लिए **'फ्यु नेशनल थ्रस्ट एरियाज'** की पहचान करने की आवश्यकता पर बल दिया है। जहां विकास के लिए सभी अवरोधक हटाने तथा बुनियादी ढ़ांचे को मजबूत करने वाले क्षेत्रों में निवेश को बढ़ावा देने के लिए आवश्यक पहल की गई।

1991 की औद्योगिक नीति की घोषणा के पश्चात् देश में विदेशी पूंजी के अंतरप्रवाह में तेजी से वृद्धि हुई है। जिसे निम्न सारिणी द्धारा स्पष्ट किया जा सकता है –

सारिणी क्रमांक – 1
भारत में एफडीआई प्रवाह

(राशि मिलियन अमरीकी डॉलर में)

वर्ष	कुल एफडीआई प्रवाह	पिछले वर्ष की तुलना में वृद्धि (प्रतिशत में)
1991-1992	129	-
2000-01	4029	(+)124%
2001-02	6130	(+)54%
2002-03	5035	(-)8%
2003-04	4233	(-)14%
2004-05	6051	(+)40%
2005-06	8961	(+)48%
2006-07	22826	(+)146%
2007-08	34835	(+)53%
2008-09	41874	(+)20%
2009-10 (पी+)	37745	(-)10%
2010-11 (पी+)	34847	(-)08%
2011-12 (पी+)	46847	(+)34%
2012-13(पी) (अप्रेल2012)	2775	-
कुल योग	**2,56,277**	

स्त्रोत - भारतीय रिजर्व बैंक बुलेटिन, दिनांक: 11/06/2012।

उपर्युक्त सारिणी से स्पष्ट है कि 1991-92 से 2001-02 के मध्य एफडीआई में तेजी से वृद्धि हुई किंतु 2002-03 एवं 2003-04 में यह

वृद्धि ऋणात्मक रही। जबकि 2004-05 से 2008-09 तक एफडीआई की वृद्धि उत्साहजनक थी। सबसे अधिक प्रवाह 2006-07 में (146 प्रतिशत) रहा। किंतु 2009-10 एवं 2010-11 में एफडीआई का अंतर्वाह पूर्व के वर्षों की तुलना में ऋणात्मक (-08 प्रतिशत) तथा 2011-12 में एक बार पुन: एफडीआई में तेजी से वृद्धि हुई जो पूर्व के वर्षों की तुलना में लगभग 34 प्रतिशत रही है। अत: देश में एफडीआई के प्रवाह में निरंतर उतार-चढ़ाव देखा गया है।

भारत में एफडीआई की प्रवृत्तियां - भारत सरकार ने विदेशी प्रत्यक्ष निवेश को अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों में आकर्षिक करने का प्रयास किया है। अर्थव्यवस्था के दस प्रमुख क्षेत्रों जैसे, सेवा, निर्माण गतिविधियां, आई.टी. क्षेत्र, रसायन, विद्युत एवं ऑटोमोबाइल्स आदि क्षेत्रों में मुख्य रूप से एफडीआई का अंतर्वाह उल्लेखनीय रहा है। जिनका विवरण सारिणी क्रमांक- 2 में देखा जा सकता है -

सारिणी क्रमांक - 2 (देखे अगले पृष्ठ पर)

सारिणी क्रमांक-2 से स्पष्ट होता है कि उच्चतम एफडीआई वाले 10 प्रमुख क्षेत्रों में (2010-11, 2011-12 एवं 2012-13 अप्रैल 2012 के मध्य) सबसे अधिक सेवा क्षेत्र (वित्तीय एवं गैर वित्तीय) में कुल एफडीआई अंतरप्रवाह 19 प्रतिशत रहा है। जबकि दूरंसंचार निर्माण गतिविधियां एवं कम्प्यूटर क्षेत्र में 7 प्रतिशत, आवास एवं स्थावर सम्पदा, रसायन (उर्वरकों को छोड़कर) तथा औषधियों एवं भेषज क्षेत्र में लगभग 6 प्रतिशत एफडीआई अंतर्वाह है। वहीं विद्युत ऑटोमोबाइल्स एवं धातुकर्म उद्योग में 4 प्रतिशत है।

देश में एफडीआई को अधिक से अधिक मात्रा में आकर्षित किया जाये। इस प्रयास में भारत विश्व के उन प्रमुख देशो जो देश में अधिक से अधिक विदेशी प्रत्यक्ष निवेश कर सकते हैं। उनमें से मुख्य हैं, मॉरीशस, सिंगापुर, यू.के., जापान, यू.एस.ए. आदि हैं। जहां से भारत में ज्यादा से ज्यादा एफडीआई का अंतरवाह होता है। जिसे निम्न सारिणी क्रमांक 3 में देखा जा सकता है -

सारिणी क्रमांक - 3 (देखे अगले पृष्ठ पर)

सारिणी क्रमांक 3 से स्पष्ट है कि देश में (2010-11, 2011-12 एवं 2012-13 अप्रैल 2012 के मध्य) शीर्ष दस एफडीआई निवेशक देशो की भागीदारी के विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि उक्त समयावधि में देश में कुल विदेशी निवेशकों में मॉरीशस से सबसे अधिक (38 प्रतिशत) निवेश हुआ है। सिंगापुर से 10 प्रतिशत, यू.के., जापान, यू.एस.ए. से लगभग 8 प्रतिशत वहीं नीदरलैण्ड, साईप्रस, जर्मनी एवं फ्रांस से औसतन 3 प्रतिशत एफडीआई अंतर्वाह हुआ है।

देश में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश का सबसे बड़ा स्त्रोत मॉरीशस है। उसकी सबसे बड़ी वजह है कि मॉरीशस का पता दिखाने पर विदेशी कम्पनियों को भारत से की गई कमाई पर टैक्स नहीं देना पड़ता। इसलिए एफडीआई के आंकड़ों से सही तथ्य का पता नहीं चलता कि असली निवेश किस देश से हो रहा है।

भारत विकासशील देशो में प्रत्यक्ष विनियोग में अभी भी चीन तथा हांगकांग जैसे देशो से काफी पीछे है। जबकि देश के समग्र आर्थिक विकास के लिए एफडीआई की पर्याप्त संभावनाएं हैं। सरकार विदेशी निवेश पर लगातार जोर दे रही है। एफडीआई वर्तमान में एक बड़ी आवश्यकता बन गई। जिसके माध्यम से देश का आर्थिक विकास तेजी से किया जा सकता है, लाखों लोगों को रोजगार प्राप्त हो सकता है, कृषि एवं उद्योग क्षेत्र में आधारभूत संरचना के विकास में सहायता मिल सकती है। वर्तमान प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी के विदेशी दौरो का एक बड़ा निमित्त आर्थिक, व्यापारिक एवं अन्य क्षेत्रों में अधिक से अधिक मात्रा में विदेशी निवेश को आकर्षित करना है। हालांकि देश में एक वर्ग ऐसा भी है जो एफडीआई की चुनौतियों की ओर ध्यान आकृष्ट करता है। उनकी नजर में हमारी मूलभूत आवश्यकता रोटी, कपड़ा और मकान जैसी बुनियादी जरूरतों को पूरा करना है। उनका मानना है कि एफडीआई उन्हीं क्षेत्रों में कार्य करता है, जहां लाभ की संभावनाऐं अधिक हों। किंतु इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता है कि प्रत्यक्ष विदेशी निवेश हमारी महत्वपूर्ण आवश्यकता है। एफडीआई का लाभ देश के आर्थिक विकास एवं रोजगार के क्षेत्र में तभी प्राप्त हो सकता है जब सरकार प्रत्यक्ष विदेशी निवेश को बुनियादी ढांचे को मजबूत करने में आमंत्रित करे। जैसे, बिजली का क्षेत्र, भारी उद्योग मशीनरी, सार्वजनिक यातायात (रेल, मेट्रो रेल, रैपिड ट्रांसपोर्ट सिस्टम, सड़क मार्ग), निर्यात के लिए पक्का माल बनाने वाली इकाई जैसे, दवा का क्षेत्र, खनन उद्योग, टूरिज्म, सेवा क्षेत्र, शिक्षा, चिकित्सा आदि।

अत: निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि उपरोक्त सभी क्षेत्रों में प्रत्यक्ष विदेशी निवेश से देश में लाखों नवयुवकों को रोजगार के अवसर उपलब्ध होगें, सरकार की आय में टैक्स के रूप में वृद्धि होगी, देश की अर्थव्यवस्था मजबूत होगी, निर्यात बढेगा, देश की मुद्रा (रूपया) मजबूत होगी, देश की एकता व अखण्डता मजबूत होगी, निवेशक देश के साथ सम्बन्ध मजबूत होगें साथ ही देश की उभरती नौजवान प्रतिभा का पलायन रूकेगा व देश के विकास में उसका सही इस्तेमाल होगा। विदेशी निवेश टिकाऊ होगा जो विदेशी निवेशक व देश दोनों के हित में होगा। साथ ही इस प्रकार के निवेश से देशवासियों की आवश्यक व जीवनरक्षक आवश्यकता को भी पूरा किया जा सकेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मिश्र एवं पुरी, 'भारतीय अर्थव्यवस्था' हिमालया पब्लिसिंग हाउस, नई दिल्ली, 2009।
2. डॉ. माहेश्वरी पी.डी. एवं डॉ. गुप्ता शीलचंद, 'भारतीय आर्थिक नीति', कैलाश पुस्तक सदन, 2006।
3. डॉ. सिन्हा वी.सी. - 'भारतीय आर्थिक नीति', मयूर प्रकाशन, नई दिल्ली (2008)
4. आर्थिक समीक्षा - 2011-12, 2012-13।
5. औद्योगिक नीति और संवद्धन विभाग, वाणिज्य और उद्योग विभाग, भारत सरकार (समेकित प्रत्यक्ष विदेश नीति 2011-12)
6. आरबीआई बुलेटिन - 2012
7. प्रतियोगिता दर्पण - भारतीय अर्थव्यवस्था (2011-12)

सारिणी क्रमांक – 2

अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों में अधिकतम एफडीआई इक्विटी अंतर्वाह

(राशि मिलियन अमरीकी डॉलर में)

श्रेणियां	क्षेत्र	2010–11 (अप्रैल–मार्च)	2011–12 (अप्रैल–मार्च)	2012–13 के लिए) (अप्रैल, 2012)	संचयी अंतर्वाह (अप्रैल 00–अप्रैल 2012 के लिए)	कुल अंतर्वाहों की प्रतिशतता
1.	सेवा क्षेत्र (वित्तीय एवं गैर वित्तीय)	3,296	5,216	449	32,800	19%
2.	दूरसंचार (रेडियो पेजिंग, सेल्यूलर मोबाइल, बुनियादी टेलीफोन सेवाऐं)	1,665	1,997	0	12,552	7%
3.	निर्माण गतिविधियां (सड़कों एवं राजमार्गों सहित)	1,103	2,796	120	11,553	7%
4.	कम्प्यूटर सॉफ्टवेयर एवं हार्डवेयर	780	796	25	11,230	7%
5.	आवास एवं स्थावर संपदा	1,227	731	55	11,168	6%
6.	रसायन (उर्वरकों को छोड़कर)	398	7,252	8	9,852	6%
7.	औषधियां और भेषज	209	3,232	359	9,554	6%
8.	विद्युत	1,272	1,652	68	7,367	4%
9.	ऑटोमोबाइल उद्योग	1,299	923	21	6,779	4%
10.	धातुकर्म उद्योग	1,098	1,786	242	6,283	4%

स्त्रोत : भारतीय रिजर्व बैंक बुलेटिन, दिनांक: 11/06/2012

सारिणी क्रमांक – 3

एफडीआई इक्विटी अंतर्वाहों में शीर्ष निवेशक देशों की भागीदारी (वित्तीय वर्ष)

(राशि मिलियन अमरीकी डॉलर में)

श्रेणियां	क्षेत्र	2010–11 (अप्रैल–मार्च)	2011–12 (अप्रैल–मार्च)	2012–13 के लिए) (अप्रैल, 2012)	संचयी अंतर्वाह (अप्रैल 00–अप्रैल 2012 के लिए)	कुल अंतर्वाहों की प्रतिशतता
1.	मॉरीशस	6,987	9,942	633	64,802	38%
2.	सिंगापुर	1,705	5,257	146	17,298	10%
3.	यू.के.	755	9,257	366	16,262	9%
4.	जापान	1,562	2,972	32	12,345	7%
5.	यू.एस.ए.	1,170	1,115	41	10,605	6%
6.	नीदरलैण्ड	1,213	1,409	357	7,467	4%
7.	साईप्रस	913	1,587	69	6,468	4%
8.	जर्मनी	200	1,622	41	4,662	3%
9.	फ्रांस	734	663	25	2,252	2%
10.	यू.ए.ई.	341	353	3	2,246	1%
कुल एफडीआई अंतर्वाह		**19,427**	**36,504**	**1,857**	**172,263**	**.**

स्त्रोत : भारतीय रिजर्व बैंक बुलेटिन, दिनांक: 11/06/2012।

****

मध्य प्रदेश में कृषि विकास : उद्यानिकी फसलों के सन्दर्भ में

सुनील शर्मा * डॉ. के. के. श्रीवास्तव **

प्रस्तावना – मध्य प्रदेश कृषि प्रधान अर्थव्यवस्था वाला राज्य है। राज्य की कुल कार्यशील जनसंख्या का 69 प्रतिशत भाग अपनी आजीविका के लिये कृषि पर निर्भर है तथा ग्रामीण कार्यशील जनसंख्या का 85.6 प्रतिशत भाग आजीविका के लिये कृषि पर निर्भर है । राज्य की कुल जनसंख्या 7,25,97,565 है जिसमें 5,25,37,899 (72.37 प्रतिशत भाग) ग्रामीण क्षेत्र में निवास करती है। प्रदेश देश का ऐसा राज्य है जहाँ लगभग सभी प्रकार की फसलों का उत्पादन किया जाता है। खाद्यान्न फसलें (गेंहूँ, चावल, मक्का, ज्वार, बाजरा) दलहन फसलें (चना, अरहर, मूँग, उड़द, मसूर), तिलहन फसलें (सोयाबीन, सरसों, तिल, मूँगफली), वाणिज्यिक फसलें (गन्ना, कपास), मसाला फसलें (मिर्च, धनियां, हल्दी, लहसुन, अदरक), सब्जियां (आलू, शकरकन्द, प्याज, मटर, टमाटर, चुकन्दर इत्यादि), फल फसलें (केला, आम, सन्तरा, पपीता) तथा फूल वाली फसलें (गैंदा, गुलाब) प्रदेश की प्रमुख कृषि उपजे हैं। सोयाबीन, चना एवं दालो के उत्पादन में मध्य प्रदेश देश में प्रथम स्थान पर है। तिलहन के उत्पादन (20.4%) में देश में दूसरे स्थान पर है। सरसों (10.46%) एवं ज्वार (8.26%) के उत्पादन की दृष्टि से देश में तीसरा राज्य है। गेंहूँ उत्पादन में भी तीसरे स्थान पर है। प्रदेश कृषि उत्पादन की दृष्टि से देश का अग्रणी राज्य बन गया है । वर्ष 2011–12 तथा 2012–2013 में राज्य की कृषि विकास दर क्रमश: 18.89% तथा 24.8% रही, जो देश में सबसे अधिक विकास दर है। प्रदेश के कृषि उत्पादन तथा कृषि विकास दर में उद्यानिकी क्षेत्र का महत्वपूर्ण योगदान है । प्रस्तुत शोध में मध्यप्रदेश में विगत 5 वर्षों 2009–10 से 2013–14 तक के उद्यानिकी फसलों के विकास का विश्लेषण किया गया है। विचाराधीन शोध अवधि में मध्य प्रदेश राज्य में उद्यानिकी क्षेत्र का तीव्र विकास हुआ है। जिसके मूल में राज्य सरकार की उद्यानिकी क्षेत्र के विकास के प्रति दृष्टिकोण तथा विकासवादी योजनायें हैं।

शोध कार्य के उद्देश्य –शोध कार्य का मुख्य उद्देश्य मध्यप्रदेश में उद्यानिकी फसलों के विकास का अध्ययन करना है, जिसके अन्तर्गत चयनित उद्यानिकी फसलों का क्षेत्रफल विस्तार तथा उत्पादन की वृद्धि दर, विकास में राजकीय सहयोग, विकास की बाधायें तथा बाधायें दूर करने के उपायों का अध्ययन करना है । उपर्युक्त अध्ययन एवं विश्लेषण से प्राप्त निष्कर्षो के आधार पर मध्यप्रदेश में उद्यानिकी फसलों के तीव्र विकास हेतु नीतिगत सुझाव प्रस्तुत करना।

शोध प्रविधि – शोध पत्र भारत के राज्य मध्य प्रदेश में कृषि क्षेत्र के उद्यानिकी फसलों के विकास के विश्लेषण से सम्बन्धित है। शोध कार्य में मध्य प्रदेश में वर्ष 2009–10 से 2013–14 तक विगत पाँच वर्षो में उद्यानिकी फसलों के क्षेत्रफल विस्तार तथा उद्यानिकी फसलों के उत्पादन का विश्लेषण किया गया है। शोधकार्य में प्रकरण अध्ययन हेतु उद्यानिकी फसलों में तीन प्रमुख फसलों – मसाले, सब्जियां तथा फलों का चयन किया गया है। पुन: इन तीन चयनित फसलों के अन्तर्गत प्रकरण अध्ययन हेतु – मसाला फसलों में प्रदेश में मुख्य रूप से पैदा की जाने वाली फसलों – मिर्च, धनियां, अदरक तथा लहसुन का चयन किया गया है । सब्जी फसलों के अन्तर्गत – आलू, शकरकन्द, मटर, टमाटर, प्याज एवं फूलगोभी का प्रकरण अध्ययन हेतु चयन किया गया है। फल फसलों के अन्तर्गत प्रदेश में प्रमुख रूप से पैदा होने वाले चार फलों – केला, आम, मौसम्मी/ सन्तरा एवं पपीता का प्रकरण अध्ययन हेतु चयन किया गया है। शोध कार्य में द्वितीयक समंकों का उपयोग किया गया हैं। उक्त समंकों से विश्लेषण हेतु विविध उद्यानिकी फसलों के क्षेत्रफल सूचकांक, क्षेत्रफल वृद्धि दरें, उत्पादन वृद्धि दरें तथा क्षेत्रफल एवं उत्पादन से सम्बन्धित मिश्रित वृद्धि दरों की गणना की गई है। इन परिकलित वृद्धि दरों के माध्यम से शोध क्षेत्र में शोध अवधि के अन्तर्गत समग्र उद्यानिकी फसलों के साथ–साथ उद्यानिकी फसलों के तीनों व्यक्तिगत अवययों तथा उनके अन्तर्गत चयनित फसलों के विकास की प्रवृति ज्ञात की गई है।

उद्यानिकी फसलों का विकास विश्लेषण – उद्यानिकी फसलों का विकास कृषि विविधीकरण का परिणाम है । परम्परागत खाद्यान्न फसलों की पूर्व आवश्यकतायें पूर्ण न कर सकने वाले छोटे कृषकों ने बागवानी फसलों की ओर अपना रूख किया है। बागवानी फसलें सीमान्त और छोटे कृषकों के लिये परम्परागत खाद्यान्न फसलों की अपेक्षा अधिक उपयुक्त है । क्योंकि बागवानी फसलों के लिये न तो बड़े कृषि क्षेत्रफल की आवश्यकता होती है और नही महँगी कृषि आदाओं की आवश्यकता होती है। बागवानी फसलों को छोटे कृषि क्षेत्र पर बिना अधिक पूँजी निवेश के सरलतापूर्वक उगाया जा सकता है। बागवानी फसलें श्रम गहन तकनीक आधारित फसलें हैं, जिनमें जलवायु परिवर्तन के कम दुष्प्रभाव होते हैं । अतएव मध्यप्रदेश के लिये बागवानी फसलें अधिक उपयुक्त है क्योंकि यहाँ औसत कृषि जोत का आकार 1.78 हैक्टेयर है। राज्य की कुल कृषि जोतो की 7.46% सीमान्त और लघु जोते हैं। जो बागवानी फसलों के लिये उपयुक्त है। राज्य में सीमान्त कृषि जोतो और लघु कृषि जोतों का औसत आकार क्रमश: 0.49 है. तथा 1.42 हैक्टेयर है।

समग्र उद्यानिकी फसलों के क्षेत्राच्छादन में तीव्र वृद्धि – शोध अवधि में शोध क्षेत्र में चयनित उद्यानिकी फसलों के फसलाधीन क्षेत्रफल में निरन्तर

* शोधार्थी (अर्थशास्त्र) अध्ययनशाला, जीवाजी विश्वविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत
** प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) विजयाराजे शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, मुरार, ग्वालियर (म.प्र.) भारत

एवं तीव्र वृद्धि परिलक्षित हुई है। शोध अवधि के प्रारम्भिक वर्ष 2009-10 में उद्यानिकी फसलों का क्षेत्राच्छादन 676110 हैक्टेयर था, जो शोध अवधि के अन्तिम वर्ष में बढ़ कर 1,38,6427 हैक्टेयर हो गया। यह शोध अवधि में शोध क्षेत्र में उद्यानिकी फसलों के फसलाधीन क्षेत्रफल में दो गुनी (205.10%) वृद्धि है, जो प्रदेश में लागू किये गये 'राष्ट्रीय उद्यानिकी मिशन' के लक्ष्य से भी आगे बढ़ने की दिशा का सूचक है।

शोध अवधि में चयनित बागवानी फसलों के व्यक्तिगत अवयवों - मसाला फसलों, सब्जियों तथा फल फसलों के क्षेत्रफल में भी तीव्र वृद्धि की प्रवृति परिलक्षित हुई है। शोध अवधि में प्रारंभिक वर्ष 2009-10 में मसाले वाली फसलों का फसलाधीन क्षेत्रफल 315350 हैक्टेयर था, जो शोध अवधि के अग्रिम वर्ष 2013-14 में बढ़कर 554204 हैक्टेयर हो गया। यह शोध अवधि में शोध क्षेत्र में मसाला फसलाधीन क्षेत्रफल में 75.74% की उल्लेखनीय वृद्धि है। शोध अवधि में शोध क्षेत्र में फसलाधीन क्षेत्रफल में विस्तार की दृष्टि से सब्जियों की स्थिति सर्वाधिक श्रेष्ठ रहीं। शोध अवधि के प्रारंभिक वर्ष 2009-10 में शोध क्षेत्र में सब्जियों का फसलाधीन क्षेत्रफल 248380 हैक्टेयर था, जो शोध अवधि के अग्रिम वर्ष 2013-14 में बढ़कर 62,1691 हैक्टेयर हो गया। यह शोध क्षेत्र में शोध अवधि में सब्जियों के फसलाधीन क्षेत्रफल में 150.30 प्रतिशत की वृद्धि का सूचक है। यही वृद्धि की प्रवृति फलों के सम्बन्ध में भी रही। शोध क्षेत्र में शोध अवधि के प्रारम्भिक वर्ष 2009-10 में फलों का फसलाधीन क्षेत्रफल 112380 हैक्टेयर था, जो शोध अवधि के अंतिम वर्ष 2013-14 में बढ़कर 210532 हैक्टेयर हो गया। यह शोध क्षेत्र में शोध अवधि में फलों के फसलाधीन क्षेत्रफल में 87ण्34 प्रतिशत वृद्धि का द्योतक है। इस प्रकार, शोध अवधि में शोध क्षेत्र में चयनित उद्यानिकी फसलों के फसलाधीन क्षेत्रफल का विश्लेषण करने के उपरान्त सुगमतापूर्वक प्रतिपादित किया जा सकता है कि विचाराधीन शोध अवधि में शोध क्षेत्र में चयनित उद्यानिकी फसलों के क्षेत्राच्छादन में तीव्र वृद्धि हुई है।

क्षेत्राच्छादन सूचकांकों में वृद्धि के सूचक - विचाराधीन शोध अवधि में शोध क्षेत्र में चयनित उद्यानिकी फसलों के क्षेत्रफल सूचकांकों में निरन्तर वृद्धि की प्रवृति परिलक्षित हुई हैं।

(1) **समग्र उद्यानिकी फसल क्षेत्राच्छादन में दो गुनी वृद्धि** - शोध क्षेत्र में शोध अवधि में चयनित उद्यानिकी फसलों का समस्त फसलाधीन क्षेत्रफल बढ़ा है। शोध अवधि के प्रारम्भिक वर्ष की तुलना में यह शोध अवधि के अन्तिम वर्ष में बढ़कर 205.10 हो गया। समग्र उद्यानिकी फसल क्षेत्राच्छादन सूचकांक में सतत वृद्धि की प्रवृति पाई गई। वर्ष 2010-11 में यह सूचकांक 115.65 हो गया। वर्ष 2011-12 में यह सूचकांक 168.66 हो गया। वर्ष 2012-13 में यह 199.05 हो गया तथा अन्तिम वर्ष में यह दो गुना बढ़कर 205.10 हो गया। यह निरन्तर वृद्धि की प्रवृति का सूचक है। (तालिका क्र. 01)

(2) **मसाला क्षेत्राच्छादन सूचकांक : वृद्धि की प्रवृति** - शोध अवधि में शोध क्षेत्र में चयनित मसाला फसलों का फसलाधीन क्षेत्रफल सूचकांक निरन्तर बढ़ा है। शोध अवधि के प्रारंभिक वर्ष की तुलना में इसमें 75.74 प्रतिशत की वृद्धि हुई। वर्ष 2010-11 में मसाला फसलों का फसलाधीन क्षेत्रफल सूचकांक 11.01 रहा। वर्ष 2011-12 में यह सूचकांक 148.63 हो गया। वर्ष 2012-13 में यह सूचकांक 170.50 हो गया तथा अन्तिम वर्ष में यह सूचकांक बढ़कर 175.74 हो गया। यह प्रवृति मसाला फसलों के क्षेत्राच्छादन क्षेत्र में अच्छी वृद्धि का सूचक है। (तालिका क्र. 01)

(3) **फल क्षेत्राच्छादन सूचकांक : अधिक वृद्धि** - शोध अवधि में शोध क्षेत्र में चयनित फलों के फसलाधीन क्षेत्रफल सूचकांक निम्न में निरन्तर वृद्धि की प्रवृति रही और यह वृद्धि मसाला फसलों के क्षेत्राच्छादन सूचकांक की अपेक्षा अधिक रही। वर्ष 2010-11 में फलों का क्षेत्राच्छादन सूचकांक 117.80 रहा। वर्ष 2011-12 में यह सूचकांक 145.81 रहा। वर्ष 2012-13 में यह सूचकांक बढ़कर 181.92 हो गया और शोध अवधि के अन्तिम वर्ष 2013-14 में यह सूचकांक बढ़कर 187.34 हो गया। यह फलों के फसलाधीन क्षेत्रफल में निरन्तर अच्छी वृद्धि का सूचक है। (तालिका क्र. 01)

(4) **सब्जी क्षेत्राच्छादन सूचकांक : तीव्र सर्वाधिक वृद्धि** - शोध अवधि में शोध क्षेत्र में चयनित सब्जियों के फसलाधीन क्षेत्रफल सूचकांक में बहुत तीव्र एवं मसालों तथा फलों के फसलाधीन क्षेत्रफल सूचकांकों की तुलना में सर्वाधिक वृद्धि परिलक्षित हुई। वर्ष 2010-11 में सब्जियों का क्षेत्राच्छादन सूचकांक 114.21 रहा। वर्ष 2011-12 में यह सूचकांक बढ़कर 203.08 हो गया। वर्ष 2012-13 में यह बढ़कर 243.05 हो गया तथा शोध अवधि के अन्तिम वर्ष 2013-14 में यह सूचकांक बढ़कर 250.30 हो गया। शोध अवधि में चयनित सब्जियों के क्षेत्राच्छादन में ढाई गुना से भी अधिक वृद्धि का सूचक है। (तालिका क्र. 01)

उत्पादन सूचकांकों में उल्लेखनीय वृद्धि की प्रवृति - विचाराधीन शोध अवधि में शोध क्षेत्र में चयनित उद्यानिकी फसलों के उत्पादन में बहुत तीव्र वृद्धि की प्रवृति रही। यह वृद्धि 'राष्ट्रीय उद्यानिकी मिशन' के प्रदेश में लक्ष्यों को न केवल प्राप्त करने का सूचक है, बल्कि मिशन के लक्ष्यों से भी आगे बढ़ने की प्रवृति का द्योतक है।

(1) **समग्र उद्यानिकी फसल उत्पादन सूचकांक : मिशन के लक्ष्यों से अधिक वृद्धि** - शोध अवधि में शोध क्षेत्र में चयनित उद्यानिकी फसलों के समग्र उत्पादन में बहुत तीव्र वृद्धि की प्रवृति पाई गई। चयनित उद्यानिकी फसलों के उत्पादन सूचकांकों में निरन्तर एवं तीव्र वृद्धि होने के साथ साढ़े तीन गुना बढ़कर 350.27 हो गया। वर्ष 2010-11 में यह सूचकांक 115.60 रहा। वर्ष 2011-12 में यह सूचकांक 254.20 रहा। वर्ष 2012-13 में यह सूचकांक बढ़कर 339.00 हो गया और शोध अवधि के अन्तिम वर्ष में यह बढ़कर 350.27 हो गया। शोध अवधि में शोध क्षेत्र में चयनित उद्यानिकी फसलों के उत्पादन में यह आशातीत वृद्धि का परिचायक है। (तालिका क्र. 02)

(2) **फलोत्पादन सूचकांक : दो गुनी वृद्धि** - शोध अवधि में शोध क्षेत्र में चयनित फलों के उत्पादन सूचकांकों में निरन्तर वृद्धि के साथ दो गुनी वृद्धि परिलक्षित हुई। शोध अवधि के प्रारंभिक वर्ष की तुलना में फलोत्पादन सूचकांक में 17.40 प्रतिशत की वृद्धि के साथ वर्ष 2010-11 में यह 117.40 हो गया। वर्ष 2011-12 में यह सूचकांक 126.73 रहा। वर्ष 2012-13 में यह बढ़कर 19452 हो गया तथा अन्तिम वर्ष 2013-14 में यह सूचकांक बढ़कर 201.85 हो गया। (तालिका क्र 02)

(3) **सब्जी उत्पादन सूचकांक : चार गुना वृद्धि** - शोध अवधि में शोध क्षेत्र में चयनित सब्जियों के उत्पादन में तीव्र वृद्धि की प्रवृति परिलक्षित हुई है। सब्जी उत्पादन सूचकांकों में निरन्तर तीव्र वृद्धि की प्रवृति, शोध क्षेत्र में सब्जियों के उत्पादन में 'राष्ट्रीय उद्यानिकी मिशन' की सफलता का सूचक है। वर्ष 2010-11 में चयनित सब्जी उत्पादन सूचकांक 114.10 रहा। वर्ष 2011-12 में यह तेजी से बढ़कर 311.26 हो गया। वर्ष 2012-13 में यह

सूचकांक लगभग चार गुना वृद्धि की प्रवृति के साथ 383.30 हो गया तथा अन्तिम वर्ष 2013-14 में यह सूचकांक 396.10 हो गया। यह शोध अवधि में शोध क्षेत्र में चयनित सब्जियों के उत्पादन में बहुत बढ़ी वृद्धि का सूचक है। (तालिका क्र. 02)

(4) **मसाला उत्पादन सूचकांक - दस गुना वृद्धि** - शोध अवधि में शोध क्षेत्र में चयनित मसालों के उत्पादन में दस गुना वृद्धि के साथ बहुत बड़ी सफलता प्राप्त हुई। शोध अवधि में मसाला उत्पादन सूचकांक बहुत तेजी से बढ़े। वर्ष 2010-11 में मसाला उत्पादन सूचकांक 115.04 था, जो वर्ष 2011-12 में बढ़कर 680 हो गया। वर्ष 2012-13 में मसाला उत्पादन सूचकांक बढकर 977.60 हो गया और अन्तिम वर्ष 2013-14 में मसाला उत्पादन सूचकांक दस गुना बढ़कर 1010.30 हो गया। यह शोध अवधि में शोध क्षेत्र में उद्यानिकी फसल मसालों के विकास की बहुत बड़ी उपलब्धि है। (तालिका क्र. 02)

समग्र उद्यानिकी फसलों के उत्पादन में तीव्र वृद्धि -विचाराधीन शोध क्षेत्र में शोध अवधि में समग्र रूप से चयनित बागवानी फसलों के उत्पादन में तीव्र गति से वृद्धि की प्रवृति परिलक्षित हुई है। तीनों चयनित उद्यानिकी फसलों - मसाले, सब्जियों तथा फलों के उत्पादन में निरन्तर वृद्धि की प्रवृति रही है। शोध क्षेत्र में शोध अवधि के प्रारंभिक वर्ष 2009-10 में मसालों का उत्पादन 4.19 लाख मीट्रिक टन था, जो शोध अवधि के अन्तिम वर्ष में बढ़कर 42.33 लाख मीट्रिक टन हो गया। शोध-अवधि में मसालों के उत्पादन में यह 910 प्रतिशत की वृद्धि है, जो दस गुने से भी अधिक है। सब्जियों के उत्पादन में वृद्धि की दर अपेक्षाकृत कम रही। शोध अवधि के प्रारंभिक वर्ष 2009-10 में शोध क्षेत्र में चयनित सब्जियों का उत्पादन 32.42 लाख मीट्रिक टन था, जो अन्तिम वर्ष 2013-14 में बढ़कर 128.41 लाख मीट्रिक टन हो गया। यह शोध अवधि में चयनित सब्जियों के उत्पादन में 296.10 प्रतिशत की महत्वपूर्ण वृद्धि है। फलों के उत्पादन में वृद्धि की दर चयनित उद्यानिकी फसलों अपेक्षाकृत कम रही। शोध क्षेत्र में शोध अवधि के प्रारंभिक वर्ष 2009-10 में चयनित फलों का उत्पादन 28.64 लाख मीट्रिक टन था, जो शोध अवधि के अन्तिम वर्ष 2013-14 में बढ़कर 57.81 लाख मीट्रिक टन हो गया। शोध अवधि में शोध क्षेत्र में चयनित फलों के उत्पादन में यह 101.85 प्रतिशत की उल्लेखनीय वृद्धि का सूचक है। शोध क्षेत्र में शोध अवधि के प्रारंभिक वर्ष 2009-10 में समग्र चयनित बागवानी फसलों का उत्पादन 65.25 लाख मीट्रिक टन था, जो शोध अवधि के अन्तिम वर्ष 2013-14 में बढ़कर 228.55 लाख मीट्रिक टन हो गया। शोध क्षेत्र में शोध अवधि में चयनित उद्यानिकी फसलों के उत्पादन में यह 250.3 प्रतिशत की उल्लेखनीय वृद्धि का सूचक है। जो 'राष्ट्रीय उद्यानिकी मिशन' को उद्यानिकी फसलों के उत्पादन को दो गुना करने के लक्ष्य से भी अधिक वृद्धि का परिचायक है। शोध क्षेत्र में शोध अवधि में चयनित बागवानी फसलों के उत्पादन सम्बन्धी विकास की प्रवृतियों का विश्लेषण करने के उपरान्त बड़ी सुगमतापूर्वक प्रतिपादित किया जा सकता है कि विचाराधीन शोध अवधि में शोध क्षेत्र में चयनित बागवानी फसलों के उत्पादन में तीव्र वृद्धि हुई है। यह प्रवृति शोध क्षेत्र में उद्यानिकी फसलों के विकास का सूचक है।

उद्यानिकी फसलों की मिश्रित वृद्धि दरें : तीव्र विकास की सूचक-

(अ) **आच्छादित क्षेत्र दरें** -

(1) मसाला क्षेत्राच्छादन मिश्रित वृद्धि दर शोध अवधि में 52.75 प्रतिशत रही।

(2) सब्जियों की क्षेत्राच्छादन मिश्रित वृद्धि दर 102.66 प्रतिशत रही।

(3) फलों की क्षेत्राच्छादन मिश्रिम वृद्धि दर 58.22 प्रतिशत रही।

(4) चयनित समग्र उद्यानिकी फसलों की क्षेत्राच्छादन मिश्रिम वृद्धि दर 71.99 प्रतिशत रही।

(ब) **उत्पादन दरें** -

(1) मसाला उत्पादन की मिश्रित वृद्धि दर 595.74 प्रतिशत रही।

(2) सब्जियों के उत्पादन की मिश्रित वृद्धि दर 101.19 प्रतिशत रही।

(3) फलों के उत्पादन की मिश्रित वृद्धि दर 59.88 प्रतिशत रही।

(4) शोध अवधि में शोध क्षेत्र में चयनित उद्यानिकी फसलों की समग्र उत्पादन मिश्रित वृद्धि दर 164ण्77 प्रतिशत रही। (तालिका क्र. 03)

निष्कर्ष-शोध पत्र के अन्तर्गत मध्यप्रदेश में विगत 5 वर्षों में चयनित उद्यानिकी फसलों के विकास का विश्लेषण करने के उपरान्त निष्कर्ष के रूप में प्रकट होता है कि प्रदेश में उद्यानिकी फसलों का अत्यन्त तीव्र विकास हुआ है और यह विकास बहुआयामी है। शोध कार्य के कुछ मुख्य निष्कर्ष निम्न प्रकार संक्षेप में प्रस्तुत किये जा सकते हैं -

(1) उद्यानिकी फसलों के विकास की दृष्टि से शोध अवधि अत्यन्त महत्वपूर्ण रही। उद्यानिकी फसलों का शोध अवधि में सर्वांगीण विकास हुआ। उद्यानिकी फसलों का क्षेत्रफल विस्तार भी हुआ और उत्पादन में भी तीव्र वृद्धि परिलक्षित हुई।

(2) शोध अवधि में शोध क्षेत्र में चयनित उद्यानिकी फसलों का क्षेत्रफल बढ़ा है। चयनित तीनों उद्यानिकी फसलों - मसाला फसलों, सब्जी वाली फसलों तथा फलों का फसलाधीन क्षेत्रफल बढ़ा है। मसालों के क्षेत्राच्छादन में बहुत बड़ी वृद्धि हुई है।

(3) शोध अवधि में शोध क्षेत्र में चयनित उद्यानिकी फसलों के उत्पादन में भी महत्वपूर्ण वृद्धि हुई है। उद्यानिकी फसलों का उत्पादन तेजी से बढ़ा है। उत्पादन में यह वृद्धि चयनित तीनों बागवानी फसलों - मसाला फसलों, सब्जी फसलों तथा फल फसलों में परिलक्षित हुई है। नि:संदेह यह प्रदेश में चयनित बागवानी फसलों के विकास में शोध अवधि में बहुत बड़ी उपलब्धि है।

(4) प्रदेश के बागवानी क्षेत्र ने शोध अवधि में निर्धारित लक्ष्यों से बहुत आगे जाते हुये क्षेत्रफल दो गुने से अधिक और उत्पादन साढ़े तीन गुने से अधिक वृद्धि दर प्राप्त करके क्षेत्र में बहुत बड़ी उपलब्धि प्राप्त की है।

सरकार एवं मध्यप्रदेश में उद्यानिकी विकास - भारत सरकार द्वारा मध्यप्रदेश में उद्यानिकी फसलों के विकास हेतु निरन्तर विविध प्रकार से सहायता की जा रही है। मध्यप्रदेश में अच्छे कृषि विकास निष्पादन को प्रोत्साहन के रूप में विगत दो वर्ष 2012-13 एवं 2013-14 में राज्य को क्रमश: 18 प्रतिशत तथा 24 प्रतिशत कृषि विकास दर के लिये 'कृषि कर्मण पुरूस्कार' प्रदान किया गया है। प्रदेश में उद्यानिकी फसलों के विकास को बढ़ावा देने के लिये कृषि मंत्रालय भारत सरकार द्वारा वर्ष 2005-06 से 'राष्ट्रीय उद्यानिकी मिशन' प्रारम्भ किया गया है। इस योजना का मुख्य उद्देश्य राज्य में उद्यानिकी फसलों का क्षेत्र विस्तार करना तथा उत्पादन दोगुना करना है। वर्ष 2009-10 से राज्य के 39 जिलों में 'राष्ट्रीय उद्यानिकी मिशन' लागू किया गया है

नीतिगत सुझाव - प्रदेश में शोध अवधि में चयनित उद्यानिकी फसलों के विकास का विश्लेषण करने के उपरान्त बहुत सी बातें स्पष्ट होती है, जिनमें सुधार करके और कुछ नवाचारों को अपना कर प्रदेश के उद्यानिकी क्षेत्र को और अधिक सुदृढ़ किया जा सकता है। (1) उद्यानिकी क्षेत्र के कृषकों को कृषि वित्त की व्यवस्था करके उनकी वित्त सम्बन्धी कठिनाईयों को दूर

किया जा सकता है।(2) उद्यानिकी फसलों के उन्नत पौध कार्यक्रम को और अधिक क्षेत्रों तथा अधिक फसलों पर विस्तार करके उत्पादन तथा उत्पादकता बढ़ाने के प्रयास किये जा सकते हैं।(3) बागवानी फसलों के मानकीकरण, परिवहन, भण्डारण और विपणन की उचित एवं उपयुक्त प्रणाली की आवश्यकता है। मानकीकरण की सुविधा, परिवहन व्यवस्था में सुधार तथा भण्डारण क्षमता में विस्तार करके बागवानी क्षेत्र को ठीक प्रकार विकसित किया जा सकता है।(4) बागवानी फसलों की कीमत स्थिरता सुनिश्चित करके तथा विपणन व्यवस्था में सुधार करके भी बागवानी क्षेत्र को संरक्षण देकर क्षेत्र का विकास सुनिश्चित किया जा सकता है। (5)बागवानी फसलों में और अनुसंधान के द्वारा उत्पादन तथा उत्पादकता दोनों में वृद्धि की संभावनायें हैं। (6) प्रदेश के उद्यानिकी क्षेत्र को जलवायु परिवर्तन के दुष्प्रभावों से बचाने की भी आवश्यकता है। बागवानी फसलों को फसल बीमा योजना द्वारा भी संरक्षण प्रदान किया जा सकता है। उक्त उपायों के क्रियान्वयन से प्रदेश में उद्यानिकी फसलों के क्षेत्रफल विस्तार के साथ-साथ उत्पादन तथा उत्पादकता दोनों में वृद्धि की संभावना है। इससे ग्रामीण क्षेत्रों में आय बढ़ने की संभावना भी है। इससे ग्रामीण गरीबी दूर करने तथा ग्रामीणों के जीवन स्तर में सुधार होने की संभावना है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. मध्यप्रदेश का आर्थिक सर्वेक्षण 2013-14 (2015) आर्थिक एवं सांख्यिकी संचालनालय, म. प्र. शासन भोपाल।
2. Ag. Censcus 2012, CSO, New Delhi.
3. Chadha, K. L. (2001) `Minuts of the Fourth Meeting of the working Group on Horticulture Development for Formulation of Tenth Five Year Plan', Krishi Bhawan, New Delhi.
4. Madhya-Pradesh Agricultural Economic Survey 2014 (2014) Directorate of Economics and Statistics, Govt. of M.P., Bhopal.
5. Madhya-Pradesh Human Development Report – 2007, UNDP, Oxford University Press, New Delhi.
6. Madhya-Pradesh Development, Report (2011) Planning Commission of India, Academic Foundation, New Delhi.
7. Malhotra, S.K. (2012) `Technology Led Development in Horticulture : For Increase Production and Production', Horticulture Commission, Govt. of India, New Delhi.
8. Narayanan, C.K. (2014) `Post Harvest Losses in Selected Fruits and vegetables in India' (Edited), Indian Institute of Horticultural Research, Bangaluru.
9. Twelfth-Five Year Plan – 2012-17 and Annual Plan 2012-13, Volume – I, Planning, Economics and Statistics Department, Govt. of M.P. Bhopal.
10. Tiwari, R.K. (2014) `Horticulture Development By NHB' Directorate, National Horticulture Board, Govt. of India, New Delhi.

उद्यानिकी फसलों का क्षेत्राच्छादन विवरण

तालिका क्र. 1 (हैक्टेयर में)

फसल / वर्ष	मसाले			सब्जियां			फल			उद्यानिकी फसलें		
	क्षेत्रफल	क्षेत्रफल सूचकांक	प्रवृत्ति	क्षेत्रफल	क्षेत्रफल सूचकांक	प्रवृत्ति	क्षेत्रफल	क्षेत्रफल सूचकांक	प्रवृत्ति	क्षेत्रफल	क्षेत्रफल सूचकांक	प्रवृत्ति
2009-10	315350	100	-	248380	100	-	112380	100	-	676110	100	-
2010-11	365850	116.01	16.01	283680	114.21	14.21	132380	117.80	17.80	781910	115.65	15.65
2011-12	468704	148.63	48.63	504409	203.08	103.08	163864	145.81	45.81	1136977	168.16	68.16
2012-13	537671	170.50	70.50	603674	243.05	143.05	204440	181.92	81.92	1345805	199.05	99.05
2013-14	554204	175.74	75.74	621691	250.30	150.30	210532	187.34	87.34	1386427	205.10	105.10

स्त्रोत- 1. मध्यप्रदेश का आर्थिक सर्वेक्षण 2013-14 (2015) आर्थिक एवं सांख्यिकी संचालनालय, म.प्र. शासन भोपाल।
2. Madhya-Pradesh Agricultural Economic Survey 2014(2014) Directorate of Economics and Statistics, Govt. of M.P., Bhopal

उद्यानिकी फसलों का उत्पादन विश्लेषण

तालिका क्र. 2

(लाख मीट्रिक टन में)

फसल / वर्ष	मसाले			सब्जियां			फल			उद्यानिकी फसलें		
	उत्पादन	उत्पादन सूचकांक	प्रवृत्ति	उत्पादन	उत्पादन सूचकांक	प्रवृत्ति	उत्पादन	उत्पादन सूचकांक	प्रवृत्ति	उत्पादन	उत्पादन सूचकांक	प्रवृत्ति
2009-10	4.19	-	-	32.42	-	-	28.64	-	-	65.25	-	-
2010-11	4.82	115.04	15.04	36.99	114.10	14.10	33.62	117.40	17.40	75.43	115.60	15.60
2011-12	28.91	680.00	580.0	100.91	311.26	211.26	36.01	125.73	25.73	165.83	254.20	154.20
2012-13	40.96	977.60	877.60	124.53	383.30	283.30	55.71	194.52	94.52	221.20	339.00	239.00
2013-14	42.33	1010.30	910.30	128.41	396.10	296.10	55.81	201.85	101.85	228.55	350.27	250.27

स्त्रोत- 1. मध्यप्रदेश का आर्थिक सर्वेक्षण 2013-14 (2015) आर्थिक एवं सांख्यिकी संचालनालय, म.प्र. शासन भोपाल।

2. Madhya-Pradesh Agricultural Economic Survey 2014(2014) Directorate of Economics and Statistics, Govt. of M.P., Bhopal

चयनित उद्यानिकी फसलों की मिश्रित वृद्धि दरें

तालिका क्र. 03

स. क्र.	फसल	आच्छादित क्षेत्र मिश्रित वृद्धि दर	उत्पादन मिश्रित वृद्धि दर
01	मसाले	52.75	595.74
02	सब्जियां	102.66	201.19
03	फल	58.22	59.88
04	समस्त चयनित उद्यानिकी फसलें	71.99	164.77

स्त्रोत - तालिका क्र. 01 एवं 02 से परिकलित।

****

विकास का यथार्थ और लाभों की भागीदारी में गरीबी

डॉ. लता जैन *

प्रस्तावना – 'इस पृथ्वी पर 'अर्थशास्त्र' की प्रथम पुस्तक भारतवर्ष में लिखी गई थी, अर्थात अर्थशास्त्र में भारत विश्व गुरु रह चुका है। अब इसी देश में अर्थशास्त्र एंव अर्थव्यवस्था गोता लगा रही है।'

आजाद भारत में आज तक गरीबी से पिण्ड छुड़ाने का कोई मार्ग परिलक्षित नहीं हो पा रहा है। देश की जनता गरीबी से त्रस्त है, जबकि सत्ताधीशों की कमाई के वेग में आकूत वृद्धि होती जा रही है। 'गरीबी हटाने' के नाम पर सरकारें आती जाती हैं, परन्तु गरीबी हटने का नाम ही नहीं लेती। यह भी कितना बड़ा विरोधाभास है कि भारत को प्रकृति ने बहुत समृद्धशाली देश बनाया है, किन्तु यहाँ के अधिकांश निवासी बेहद गरीब। यह बहुत सुखद है कि भारत सरकार ने अब गरीबों की पहचान कर ली है। देश में गरीबों की संख्या भी बढ़ी है इस बात की तस्दीक भारत सरकार ने भी कर दी है। इसीलिए उदार शासन ने 67 प्रतिशत गरीब जनता के लगभग मुफ्त भोजन हेतु एक अध्यादेश जारी कर दिया है, जो प्रभावशील भी हो गया है।

रोनाल्ड सेगल ने अपनी मशहूर पुस्तक Anguish of India में लिखा है: The religion and poverty of India are two primary materials of wich the whole structure of her society has been built and is still being built.

अर्थशास्त्र में गरीबी से पार पाने के लिए 'विकास' भी एक सिद्ध अस्त्र है। परन्तु अभी तक तो आर्थिक वृद्धि की बात है। विकास तो उससे ऊपर की मंजिल है। वस्तुत: गरीबी विकास का प्रतिलोम फलन होती है, अर्थात: p = f (d), f ' (d) < 0 जबकि p = poverty, तथा व = Development है। इसका तात्पर्य है कि जैसे–जैसे D वृद्धिमान होता है, P ह्रासमान होता जाता है, इसे सरल रूप में भी व्यक्त कर सकते है:

$$p = \frac{a}{b}$$

जबकि α 0 एक स्थिरांक है, जिसे अर्थव्यवस्था की प्रकृति के अनुसार सामंजित किया जा सकता है। इससे स्पष्ट है कि गरीबी की काट विकास में ही निहित है। आर्थिक वृद्धि विकास का एक मूल तत्व है, परन्तु विकास उससे अधिक व्यापक है। मिसाल के लिए भारतवर्ष से चीन, जापान, दक्षिण कोरिया आदि देशों को लौह अयस्क का निर्यात आर्थिक वृद्धि के दायरे में आता है। यही लौहा जब सिद्ध यंत्र बनकर पुन: भारत में आता है, तो इससे चीन, जापान तथा दक्षिण कोरिया विकसित देशों की पंक्ति में दृष्टिगोचर होते हैं। आर्थिक वृद्धि से प्राप्त धन का नाम मात्र श्रमिकों को मिल पाता है, परन्तु अधिकांश भाग 'धन सागर' में समाहित हो जाता है। भारत एवं चीन के कृषि विकास की तुलना हम देख सकते है।

तालिका

मद	भारत	चीन
खाद्य उत्पादन (प्रति हैक्टेयर)	3034 किलोग्राम	6233 किलोग्राम
गेहूँ उत्पादन (प्रति हैक्टेयर)	2688 किलोग्राम	4155 किलोग्राम
फल एंव सब्जियों का उत्पादन	135 मिलियन	450 मिलियन टन
कृषि योग्य भूमि	161 मिलियन हैक्टे.	30 मिलियन हैक्टे.
सिंचित भूमि	58.8 मिलियन हैक्टे	54.5 मिलियन हैक्टे.
औसत कृषि आकार	1.4 हैक्टेयर	0–4 हैक्टेयर0–5

सरकार द्वारा भारी–भरकम खर्च के बाद भी यदि उत्पादकता में वृद्धि न हो,तो महँगाई का वेग कैसे कम हो सकता है। वस्तुत: जॉन मेनार्ड कीन्स के πएक प्रदर्शानुसार –

$$\pi = \frac{c + I + G}{Y} - 1$$

इसमें = मुद्रास्फीति, G = सरकारी खर्च, C = उपभोक्ता व्यय, ख = पूंजी निवेश तथा Y = सकल उत्पादन है। इस प्रादर्श के अनुसार यदि C,I तथा G के मान में वृद्धि होती है, तो इसे संतुलित करने के लिए ध के मान में वृद्धि अवश्य होना चाहिए। यदि Y स्थिर रहता है अथवा इसमें ह्रास होता है, तो मुद्रा स्फीति को कैसे थाम सकते है ? उत्पादन में ह्रास था जो इस प्रकार देखा गया –

तालिका–सकल घरेलू उत्पादन में वृद्धि दर (प्रतिशत में)

क्षेत्र	**वित्त**	**वर्ष**
–	**2011–12**	**2012–13**
कृषि	3.6	1.9
उद्योग	2.7	1.2
सेवा	7.9	6.8

स्त्रोत – तथ्य भारती मई 2013 पृष्ठ 16

उदारीकरण के दौर में विकास का यथार्थ – भारतीय अर्थव्यवस्था के विकास में विगत वर्षो में महत्वपूर्ण बात यह है कि यहां का विकास ऐतिहासिक कालक्रम के अनुरूप नहीं रहा है। विकसित देशों का अनुभव बताता है कि आर्थिक विकास क्रम में सबसे पहले कृषि क्षेत्रक विकसित होता है, फिर औद्योगिक क्षेत्रक तथा अन्तत: सेवा क्षेत्रक विकास पथ पर अग्रसर होता है। भारतीय अर्थव्यवस्था ही विश्व की एकमात्र ऐसी अर्थव्यवस्था बनकर उभरी

* प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष (अर्थशास्त्र) श्री अटल बिहारी वाजपेयी शासकीय कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

है जहां सकल घरेलु उत्पाद ने उद्योग क्षेत्रक की हिस्सेदारी में कोई खास वृद्धि हुए बिना ही सेवा क्षेत्रक का योगदान सीधे-सीधे आधे से अधिक हो गया। यह तथ्य रोजगार के अवसरों में हुई वृद्धि के स्वरूप से भी प्रमाणित हो जाता है। विगत दो दशकों में जो रोजगार बढ़ा, वह उद्योग क्षेत्रक में सृजित रोजगार के अवसरो से कहीं अधिक है।

भारतीय अर्थव्यवस्था की पिछले एकदशक की साधन लागत पर सकल घरेलु उत्पाद में वास्तविक क्षेत्रक संबंधी दरे निम्न तालिका में स्पष्ट है-

साधन लागत पर सकल घरेलू उत्पाद में वास्तविक क्षेत्रक संवृद्धि दरें (1999-2000 की कीमतों पर) (सारणी देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

तालिका में स्पष्ट है कि विनिर्माणी क्षेत्रक ने अर्थव्यवस्था में नया विश्वास पैदा किया है और सेवा क्षेत्रक सर्वाधिक तेजी के साथ उभरकर सामने आया। वर्ष 2002-2003 एवं 2006-07 के बीच की अवधि में (दसवीं पंचवर्षीय योजना) सकल उत्पाद की औसत वृद्धि दर में सेवा क्षेत्र का योगदान 68.6 प्रतिशत तक ऊँचा रहा है शेष औद्योगिक क्षेत्र का रहा। परिणामस्वरूप कृषि क्षेत्र का हिस्सा वर्ष 2007-08 में लगातार कम होते हुए 17.5 प्रतिशत के स्तर पर आ गया।

दसवीं पंचवर्षीय योजना में परिवहन एवं दूरसंचार सर्वाधिक तीव्रगति से विकसित होने वाला क्षेत्रक रहा है। 2002-07 के दौरान इस क्षेत्र की औसत सवृद्धि दर 15.3 प्रतिशत रही है। सूचना प्रौद्योगिकी एवं सूचना प्रौद्योगिकी प्रदत्त सेवाओं, रेल एवं सड़क यातायात, टेलीफोन संयोजनों की संख्या में भारी वृद्धि से सकल घरेलु उत्पाद में तीव्रतम सवृद्धि दर्ज की गई। इसके अतिरिक्त वित्तिय सेवाओं (बैंकिंग, बीमा, स्थावर सम्पदा एवं व्यवसाय सेवाएं) की संवृद्धि दर का प्रश्न है तो ये लगातार बढ़ते बढ़ते वर्ष 2007-08 तक 11.7 प्रतिशत दर्ज की गई।

लेकिन सकल घरेलु उत्पाद जीडीपी उच्चतम सवृद्धि दर 9 प्रतिशत के वर्तमान परिदृश्य में भी सर्वाधिक चिंता का विषय कृषि एवं सहायक सेवायें क्षेत्रक की औसत सवृद्धि दर 2.6 प्रतिशत के आसपास रहना है। 2007-08 में यह 2.6 प्रतिशत रही जो इस बात को दर्शाती है कि कृषि पर निर्भर 70-75 करोड़ जनसंख्या की वास्तविक आय में वृद्धि नहीं हो पा रही है और उच्च विकास दर का लाभ उन तक नहीं पहुंच पा रहा है। कृषि एवं उद्योग तथा सेवा क्षेत्रक के बीच चौड़ी खाई से भारत के पूर्वी भागों (पूर्वोत्तर राज्यों पश्चिमी बंगाल, बिहार, झारखण्ड एवं उड़ीसा) तथा पश्चिमी भागों (पंजाब, हरियाणा, गुजरात, महाराष्ट्र) के बीच विकास आधारित विभाजक रेखा खिची हुई है। उड़ीसा, बिहार, झारखण्ड, असम, मणिपुर, मिजोरम, त्रिपुरा, अरूणाचल प्रदेश, मेघालय, मध्यप्रदेश, आन्धप्रदेश आदि का बड़ा भाग विकास में बहुत पीछे है। इन राज्यों में उच्च विकास दरजनित लाभों में भागीदारी दिखाई नहीं देती है और गरीबी अनुपात लगातार बड़ा है।

विभिन्न समूहों में गरीबी अनुपात -

रा. सांख्यिकीय संगठन की रिपोर्ट 2009-10 के अनुसार देश के विभिन्न समूहों में गरीबी अनुपात इस प्रकार है -

अ धार्मिक समूहों में गरीबी अनुपात

1. सिख आबादी में ग्रामीण क्षेत्रों में 11.9% गरीब है
2. ईसाई आबादी में शहरी क्षेत्रों में 12.9%गरीब है
3. मुसलमान आबादी में ग्रामीण क्षेत्रों में
   1. असम में 53.6%
   2. उत्तरप्रदेश में 44.4%
   3. पश्चिम बंगाल में 34.4%
   4. गुजरात में 31.4%

शहरी क्षेत्र में यह अनुपात अखिल भारतीय स्तर पर 33.9%रहा है।

ब सामाजिक समुहों के अनुसार गरीबी का अनुपात

ग्रामीण क्षेत्र में गरीबी	एसटी	47.4%
	एससी	42.3%
	ओबीसी	31.9%
	सभी जातियों में	33.8%
शहरी क्षेत्र में	एसटी	30.4%
	एससी	34.1%
	ओबीसी	24.3%
	सभी जातियों में	20.9%

स व्यावसायिक वर्गो में गरीबी अनुपात

ग्रामीण कृषि मजदूर 50%, अन्य मजदूर 40%

शहरी क्षेत्र में अस्थाई मजदूरों का प्रतिशत 47.1 है।

द सेवा क्षेत्र में असंगठित एवं अनियमित वेतन वाले लोगों में गरीबी अनुपात अधिक है।

इ कृषि क्षेत्र में गरीबी अनुपात

राज्य हरियाणा	55.9%
पंजाब	35.6%
बिहार	86%
असम	89%
उडीसा	58.8%
शहरी पंजाब	56.3%
उत्तरप्रदेश	67.6%
पश्चिम बंगाल	53.7%

फ इसी तरह जिन परिवारों में स्त्री मुखिया है वहां ग्रामीण गरीबी 29.4%तथा शहरी 22.1%है।

ज शिक्षा के अनुसार गरीबों में जहां प्राथमिक एवं निम्न शिक्षा प्राप्त लोग हैं वहां सबसे अधिक गरीबी है।

देश में घरेलू उपभोग व्यय की संरचना के सम्बन्ध में एक अन्य महत्वपूर्ण तथ्य जो एनएसएसओ के इन सर्वेक्षणों में दर्ज किया गया हैं, वह यह कि ग्रामीण व शहरी, दोनों ही क्षेत्रों के उपभोक्ताओं के कुल उपभोग व्यय में भोजन पर किए गए व्यय का अंश लगातार घट रहा है, इस सम्बन्ध में एनएसएसओ के विगत पाँच सर्वेक्षणों में स्थिति निम्नलिखित अनुसार रही है-

कुल उपभोग व्यय में भोजन पर व्यय का भाग प्रतिशत

वर्ष	ग्रामीण क्षेत्र	शहरी क्षेत्र
1987-88	64.0	56.4
1993-94	63.2	54.7
1999-2000	59.4	48.1
2004-2005	55.0	42.6
2009-10	53.6	40.6

स्त्रोत-आर्थिक सर्वेक्षण 2009-10

शहरी क्षेत्रों में भी सर्वाधिक औसत उपभोग व्यय वाले टॉप चार राज्य जहाँ क्रमश: केरल, महाराष्ट्र, हरियाणा व पंजाब हैं, वहीं बॉटम थ्री राज्य क्रमश: बिहार, उड़ीसा, झारखण्ड हैं शहरी क्षेत्रों में सर्वाधिक प्रति व्यक्ति मासिक उपभोग व्यय केरल में 2412.58 रूपए पाया गया, जबकि महाराष्ट्र में यह 2436.75 रूपए, हरियाणा में 2321.49 रूपए तथा पंजाब में यह 2108.79 रूपए दर्ज किया गया। शहरी क्षेत्रों में न्यूनतम उपभोग व्यय वाले राज्यों में बिहार में यह 1237.54 रूपए, उड़ीसा में 1548.36 रूपए तथा झारखण्ड में 1583.75 रूपए दर्ज किया गया।

वास्तव में कृषि विकास, उच्च विकास की ओर अग्रसर अर्थव्यवस्था की पहली प्राथमिकता होनी चाहिये। दूसरा मुद्दा देश में व्याप्त गरीबी के ऊँचे स्तर से जुड़ा हुआ है। राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण संगठन के 61 वें चक्र के आंकलनों के अनुसार 30 दिवसीय सार्वभौमिक स्मरण अवधि (युनिवर्सल री-कॉल पीरीयड) के उपभोग व्यय के आधार वर्ष 2004-05 में देश की 27.5 प्रतिशत जनसंख्या निर्धनता रेखा के नीचे रह रही थी। निर्धनता के आंकड़ों को यदि निरक्षरता, शिशु मृत्युदर, कुपोषण, प्रशिक्षित स्वास्थ्य कर्मियों द्वारा प्रसव, स्वच्छ पेयजल उपलब्धता के साथ देखा जाये तो अनुमान लगाया जा सकता है कि भारत की करीब एक चौथाई जनसंख्या तक विकास के लाभ नहीं पहुंच रहे है, जो अपेक्षित थे।

समावेशी विकास की अवधारणा को देखने से एक बात जहन में उठती है कि समावेशी विकास की याद 11 वीं योजना में ही क्यों आई। इसके पूर्व क्यों नहीं, जबकि अर्थव्यवस्था 9 प्रतिशत की दर से वृद्धि कर रही है, बचत निवेश दर भी ऊँचे स्तर पर है, विदेशी मुद्रा भण्डार भी 300 अरब डॉलर को पार कर चुका है। निश्चित ही यह महसूस होता है कि बाजार पर आधारित आर्थिक विकास मॉडल उच्च आर्थिक वृद्धि तो जरूर दे रहा है, पर समावेशी विकास नहीं। अत: एक तरफ भारत (ग्रामीण क्षेत्र) और दूसरी ओर इंडिया (शहरी क्षेत्र) के बीच एक ऊँची दीवार खड़ी होती नजर आ रही है। इसीलिये तात्कालिक प्रधान मंत्री मनमोहनसिंह ने अपने न्यूनतम साझा कार्यक्रम में आठ 'फ्लैगशिप' कार्यक्रमों की घोषणा 2004 में की थी।

विकास सिद्धांतो में विकास, रोजगार एवं गरीबी – प्रचलित विकास सिद्धांतो के अनुसार गरीबी दूर करने के लिए स्थायी आर्थिक विकास अनिवार्य है। 1990 के दशक में विश्व बैंक द्वारा कराए गए अनुसंधान में इसी तथ्य का पुरजोर समर्थन करते हुए कहा गया था कि उठती लहरें सभी नौकाओं को उठाती हैं अर्थात् 'विकास गरीबों के लिए अच्छा है'।

1970 के दशक में और फिर अंतिम दशक के मध्य में, अनेक संसाधन संपन्न देशों ने संसाधनों के मूल्य में बढ़ोतरी के कारण ऊंची विकास दर हासिल की। किंतु उनके विकास का असर गरीबी कम करने पर अधिक प्रभावशाली नहीं रहा।उदाहरण के लिए बोत्सवाना की वृद्धि दर दो दशकों से अधिक समय तक सात प्रतिशत से अधिक रही । फिर भी गरीबी की दर बहुत ऊंची, करीब 21% थी। यह विश्व के सर्वाधिक असमानता वाले देशों में से एक है। जहां आय का गिनी गुणांक 0.61 था। संसाधन क्षेत्र उच्च पूंजी सघनता वाले होते हैं, और इन क्षेत्रों में वृद्धि का अक्सर गरीबी उन्मूलन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता।

अनुसंधानों, विशेषकर अंतरराष्ट्रीय श्रम संगठन (आईएलओ) और संयुक्त राष्ट्र विकास कार्यक्रम (यूएनडीपी) से पता चलता है कि संसाधन-विहीन देशों में भी विकास के सभी दौरों का असर गरीबी पर एक जैसा नहीं पड़ता।

गरीबी उन्मूलन पर विकास का प्रभाव अनेक घटकों पर निर्भर करता है, जो आर्थिक विकास के स्वरूप को परिभाषित करते हैं। विकास-गरीबी गठजोड़ में एक महत्वपूर्ण घटक रोजगार है-इसका घनत्व और गुणवत्ता (इसी से संबंधित है उत्पादकता वृद्धि) दो अन्य महत्वपूर्ण घटक हैं- क्षेत्रगत संरचना या विकास एवं असमानता के स्त्रोत से जुड़ा है।

रोजगार बहुल विकास का गरीबी पर प्रभाव सृजित रोजगार की गुणवत्ता पर भी निर्भर करता है। रोजगार सापेक्षता का उत्पादकता के साथ अनूठा प्रतिलोम संबंध है। सशक्त रूप से बढ़ती रोजगार सापेक्षता ऐसी अर्थव्यवस्थाओं

(तालिका-1) सकल घरेलू उत्पाद की अलग-अलग दरें और गरीबी उन्मूलन : कुछ उदाहरण **(देखे अन्तिम पृष्ठ पर)**

(तालिका-2)

रोजगार बहुल और उत्पादकता बहुल विकास एवं गरीबी उन्मूलन		
रोजगार क्षेत्र	रोजगार बहुल विकास	उत्पादन बहुल विकास
अधिक उत्पादक	गरीबी कम करने के संदर्भ में सकारात्मक संबंध	गरीबी कम करने के संदर्भ में सकारात्मक संबंध
कम उत्पादक	गरीबी उन्मूलन के साथ स्वाभाविक/सकारात्मक संबंध	गरीबी कम करने के संदर्भ में सकारात्मक संबंध

में औसत उत्पादकता को और कम कर सकती है, जो पहले से ही व्यापक तौर पर उत्पादकता की व्यापक कमी वाले रोजगार के रूप में परिभाषित की गई है। कम उत्पादकता वाले रोजगारों से कम आय अर्जित होती है, जिससे कम उत्पादकता, कम दिहाड़ी और गरीबी के दुश्चक्र को बढ़ावा मिलता है।

जब उच्च आर्थिक वृद्धि दर की परिणति उत्पादकता क्षमता में स्थाई वृद्धि के रूप में होती है तो अधिक उत्पादकता के साथ रोजगार के अवसर पैदा किए जा सकते हैं। इससे बेरोजगारों और अर्द्ध-रोजगारों को उत्पादकता के उच्चतर स्तरों के साथ विस्तारित आर्थिक गतिविधियों में निरंतर आमेलित और एकीकृत करने में मदद मिलती है। इससे कार्मिकों को कौशल निर्माण में निवेश करने में मदद मिलती है, जिससे उच्च उत्पादकता और उच्चतर दिहाड़ी के अनुकूल चक्र का सृजन होता है। इस प्रकार निर्धन अधिक उत्पादकता हासिल करते हैं और अपनी आय में वृद्धि करते हैं। यह वृद्धि मौजूदा व्यवसायों के जरिये अथवा बेहतर कौशल की मदद से नए व्यवसायों में जाकर हासिल की जाती है।

क्षेत्रगत विकास - जहां निर्धन रहते और काम करते हैं – विकास कहां होता है, यह भी महत्वपूर्ण घटक है, जो विकास-गरीबी के संबंध को प्रभावित करता है।

गरीबों की तीन चौथाई संख्या देहात में रहती है, और शहरी निर्धनों में ज्यादातर वे लोग शामिल हैं जो ग्रामीण क्षेत्रों से हाल ही में पलायन करके शहरों में आए हैं। अत: ग्रामीण निर्धनों, विशेषकर छोटे किसानों और दिहाड़ी कमाने वालों की आय में वृद्धि करना अत्यंत महत्वपूर्ण है। वैश्विक स्तर पर कृषि रोजगार में लगे लोगों की संख्या में बढ़ोतरी की कोई संभावना नहीं है, लेकिन ग्रामीण क्षेत्रों में उच्चतर मूल्य सवंर्धित कृषि रोजगार की क्षमता और बागवानी एवं कृषि-प्रसंस्करण गतिविधियों का अनेक परिस्थितियों में समुचित विकास नहीं किया गया है।

कम कृषि उत्पादकता वाले देशों में रोजगार–सघन विकास के बजाय उत्पादकता सघन विकास पर ध्यान केंद्रित किया जाना चाहिए। इसके लिए कृषि प्रौद्योगिकी, अनुसंधान और विकास, विस्तार सेवाओं और कृषि श्रमिकों के कौशल विकास जैसी गतिविधियों में निवेश करना होगा। कृषि श्रमिकों को उत्तरोतर उच्च उत्पादकता वाली गैर कृषि गतिविधियों में स्थानांतरित करने से भी कृषि उत्पादकता बढ़ाई जा सकती है।जिसका गरीबी उन्मूलन पर रचनात्मक प्रभाव पड़ेगा।

तालिका 3 – जीडीपी के संदर्भ में रोजगार लचीलापन

क्षेत्र	1993–94 से 2004–05	1990–00 से 2009–10
कृषि	0.26	.0.05
द्धितीयक जिसका	0.59	0.60
विनिर्माण	0.47	0.25
तृतीयक	0.43	0.30
व्यापार	0.61	0.30
वित्तीय सेवांए	0.99	0.81
सामुदायिक एवं व्यक्तिगत सेवाएं	0.06	0.28
कुल	0.29	0.2

स्त्रोत: ईयूएस एनएसएसओ और राष्ट्रीय लेखा सांख्यिकी, सीएसओए विभिन्न वर्ष

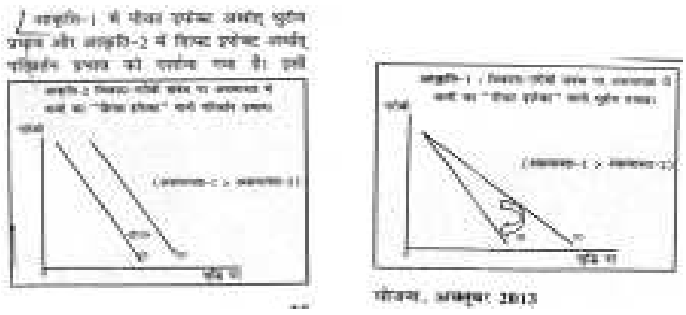

अत: हर तरह की बढ़ोतरी गरीबी उन्मूलन पर समान प्रभाव नहीं डालती। विकास का गरीबी उन्मूलन विषयक प्रभाव उसकी रोजगार और उत्पादकता बहुलता पर निर्भर करता है तथा उसमें कम उत्पादक गतिविधियों से उच्चतर उत्पादक गतिविधियों में परिवर्तन हुआ है। निश्चय ही, उच्च उत्पादक गतिविधियों के विस्तार के बिना यह संभव नहीं हो सकता अन्यथा ग्रामीण क्षेत्रों से शहरी क्षेत्रों में पलायन करने वाले लोगों से निम्न आय वर्ग, शहरी असंगठित क्षेत्र के आकार का विस्तार होगा।

आनुभविक मुद्दे पर कौन सा प्रभाव सही–सही पड़ता है, यह परिस्थितियों पर निर्भर करता है, लेकिन किसी भी स्थिति में यह स्पष्ट है कि जब घटती समानता के साथ आर्थिक विकास होता है तो गरीबी के स्तर में महत्वपूर्ण गिरावट आती है।

विकास हेतु कुछ घटक – यह उचित होगा कि ऐसे राज्यों में जहां वित्तीय विकास अधिक है। जनसंख्या शिक्षित, अधोसंरचना का विकास, श्रम बाजार अधिक लोचशील है और जहां गरीब लाभान्वित हो रहे है उसे आधार बनाकर निम्न बातों पर बल देना आवश्यक होगा –

1. आधारभूत आवश्यकताओं के अनुरूप सभी तक पहुंच होनी चाहिये।
2. ग्रामीण रोजगार में वृद्धि की जानी चाहिये, उस प्रक्रिया को विकास से जोड़ना चाहिये।
3. कृषि तथा ग्रामीण विकास ऐसा सुनिश्चित हो कि उस क्षेत्र में निवेश में वृद्धि तथा परिणामस्वरूप आय में वृद्धि हो।
4. अनुसूचित जाति एवं जनजाति, अल्पसंख्यकों या किसी वर्ग के कमजोर, निर्धन, महिलाओं तथा बच्चों का सामाजिक तथा आर्थिक सशक्तिकरण किया जावे।
5. शिक्षा, स्वास्थ्य, आवास तथा खाद्य सुरक्षा पर सामाजिक व आर्थिक सशक्तिकरण हो।
6. कमजोर वर्ग के सभी लोगों के संबंध में ऐसे उपाय सुनिश्चित करना, जिससे उनके मूल्यस्तर में स्फीतिक वृद्धि का प्रभाव कम से कम हो।
7. वित्तीय समावेशन से अभिप्राय अल्प आय तथा कमजोर वर्ग के उस बड़े समूह को जो सामान्य रूप से प्रचलित बैंकिंग प्रणाली से बैंकिंग सेवा तथा लाभ प्राप्त करने से वंचित रह जाता है, उसे वहनीय लागत पर बैंकिंग सेवायें उपलब्ध कराना चाहिये।

भारतीय सरकार द्वारा कार्यान्वयन को अधिक प्रभावी बनाये जाने की पहल की है जैसे राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार ग्यारन्टी योजना, जवाहर नेहरू राष्ट्रीय शहरी नवीनीकरण मिशन, एकीकृत बाल विकास सेवायें, रा. ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन, पूर्ण स्वच्छता अभियान, राजीव गांधी पेयजल मिशन, सर्वशिक्षा अभियान, मध्यान्ह भोजन योजना आदि।

फ्लेगशिपय कार्यक्रमों के रूप में सभी कार्यक्रमों का सीधा–सीधा सम्बन्ध समाज के कमजोर वर्गों के उत्थान से है। और इन्हीं के माध्यम से सरकार समावेशित विकास की प्रक्रिया को कम से कम समय में साकार करना चाहती है। इस दिशा में भारत निर्माण परियोजना भी एक सार्थक पहल है। जिसमें सिंचाई क्षेत्र बढ़ाना, स्वच्छ पेयजल सुविधा अधिक से अधिक उपलब्ध कराना, दुर्गम क्षेत्रों के गांवों को पक्की सड़क से जोड़ना, निर्धनों के लिये अतिरिक्त मकानों का निर्माण करना, गांवों में बिजली पहुंचाना, टेलीफोन सुविधाओं से जोड़ना आदि शामिल है।

निष्कर्ष – भारत के कुछ क्षेत्रों में उच्च आर्थिक प्रगति लाने वाला आर्थिक सुधार का रास्ता सभी पहलुओं उत्पादन, उपलब्धता, वितरण, उपभोग और पोषण यानी खाद्य सुरक्षा के मामले में विफल रहा है जो भारत को दुनिया के सबसे कुपोषित देशों में एक बनाता है और जो दक्षिण सहारा अफ्रीका में प्रचलित मानदंडों से भी काफी नीचे है। भारत में 76 फीसदी भारतीय आधा–अधूरा भोजन करते हैं। तीन–चौथाई महिलायें और बच्चे रक्त की कमी से पीड़ित है, खाद्यान्न उत्पादन 1997 से 2010 के बीच 208 से कम होकर 196 किलोग्राम प्रतिवर्ष प्रति व्यक्ति हो गया और उसी अनुपात में कृषि श्रमिकों के बीच बेरोजगारी बढ़ी, कृषि उत्पादकता घटी है और खाद्य वस्तुओं की कीमतें ऊपर चढ़ी है चार में से एक घर को ही सुरक्षित पेयजल और सफाई की सुविधायें प्राप्त हैं कृषि और स्वास्थ्य में निवेश लगातार कम हुआ है। आर्थिक उदारीकरण के बाद अधिक खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने के बजाय खाद्य सब्सिडी घटाने पर जोर रहा है। किसानों द्वारा आत्महत्यायें की घटनायें बढ़ी है और 1995 से अब तक कुल संख्या 2.5 लाख तक पहुंच चुकी है। जिसमें 2010 में लगभग 16000 आत्महत्याऐं की गई।

यह सही है कि भारत की विकास दर 8–9% वार्षिक की 'सेक्युलर विकास दर' के दौर में पहुंचकर विश्व की तेजी से विकसित हो रही अर्थव्यवस्थाओं में से एक है, लेकिन आर्थिक विकास की इस दौड़ में देश के

कुछ भाग और जनसंख्या का करीब एक चौथाई हिस्सा बहुत पीछे है। अत: विकास का वर्तमान स्वरूप समावेशित विकास की अवधारणा को निरूपित नहीं करता है। यह विकास उसी अवस्था में समावेशित होगा जब उच्च विकास दर जनित रा. आय का लाभ, समाज के कमजोर वर्गों तक पहुंचेगा। इससे न केवल आय एवं धन के वितरण की असमानतायें कम होगी, बल्कि जीवनस्तर में सुधार होगा।

इसके लिये सरकारी संगठनों के साथ साथ गैर सरकारी संगठनों को भी आगे आना होगा। गरीब जनता को जागरूक करना होगा। पूर्व सरकारी योजनाओं का ईमानदारी से क्रियान्वयन होना चाहिये। आज चीन एक बड़ी अर्थव्यवस्था के रूप में उभर रहा है फिर भी उसने अपने यहां के निम्नवर्ग के लोगों पर विशेष ध्यान दिया है। वहीं मॉडल हमें भी अपनाना होगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. समाचार पत्रों की न्यूज लेख, नई दुनिया, दैनिक भास्कर।
2. इन्डो जर्मन चेम्बर ऑफ कॉमर्स की संगोष्ठी के टेलीविजन पर प्रसारण के अंश।
3. प्रतियोगिता दर्पण पत्रिका 2009 फरवरी, लेख समावेशी विकास आशय एवं कार्यान्वयन।
4. क्रानीकल पत्रिका 2011 के अंश।
5. उदारीकरण में गांधी के चिंतन की प्रांसगिकता डॉ. श्रीपाद जोशी।
6. भारतीय अर्थव्यवस्था मिश्र एवं पुरी 2012
7. ग्राम स्वराज्य हरिप्रसाद व्यास दिल्ली 2004

साधन लागत पर सकल घरेलू उत्पाद में वास्तविक क्षेत्रक संवृद्धि दरें (1999-2000 की कीमतों पर)

मदें	2002-2003	2003-2004	2004-2005	2005-2006	2006-2007	दसवीं योजना	2007-2008
अ. कृषि एवं सहायक सेवाएं	-7.2	10.0	0.0	5.9	3.8	2.5	206
ब. उद्योग	7.1	7.4	9.8	9.6	10.0	-	-
खनन एवं उत्खनन	8.8	3.1	7.5	5.7	5.7	6.1	3.4
विनिर्माण	6.8	6.6	8.7	9.0	12.0	9.6	9.4
विद्युत, गैस एवं जलापूर्ति	4.7	4.8	7.5	4.7	6.0	5.6	7.8
निर्माण	7.9	12.0	14.1	16.5	12.0	12.9	9.6
स. सेवाएं	7.4	8.5	9.6	9.8	11.2	-	-
व्यापार, होटल, परिवहन, एवं संचार	9.2	12.1	10.9	9.4-14.6	8.5-16.6	8.5-15.3	12.1
वित्तीय, स्थावर सम्पदा एवं व्यवसाय सेवाएं	8.0	5.6	8.7	11.4	13.9	9.5	11.7
समुदाय, सामाजिक एवं वैयक्तिक सेवाएं	3.9	5.4	7.9	7.2	6.9	6.1	7.0
द. सकल घरेलू उत्पाद	3.8	8.5	7.5	9.4	9.6	7.8	8.7

स्त्रोत- आर्थिक समीक्षा 2007-08

तालिका-1

सकल घरेलू उत्पाद की अलग-अलग दरें और गरीबी उन्मूलन : कुछ उदाहरण

सकल घरेलू उत्पाद की दरें	गरीबी उन्मूलन की दर		
	उंची	सामान्य	कम
उच्च	इंडोनेशिया (1970 का) दशक, 1980 का दशक) वियतनाम (1990 का दशक) युगांडा (1990 का दशक)	शहरी भारत (1990 का दशक)	ग्रामीण भारत (1990 का दशक) इंडोनेशिया (1990 का दशक)
मध्यम	बोलिविया (1990 का दशक)	बांग्लादेश (1991-91 का दशक)	इथियोपिया (1990 का दशक) बांग्लादेश (1996-2000 का दशक) भारत (1980 का दशक)

****

राजस्थान में जनांकिकी लांभाश और आर्थिक विकास – एक अध्ययन

परस राम तैली * डॉ. शशी सांचीहर **

प्रस्तावना – जनांकिकी ढांचा और आर्थिक विकास के बीच सम्बन्ध की चर्चा के बीच 18 वीं शताब्दी में माल्थस के द्वारा दिया गया सिद्धान्त की बहुत आलोचना हुई और उसके साथ ही जनांकिकी लाभांश की अवधारणा को जन्म लिया। जनांकिकी लाभांश की अवधारणा को इस प्रकार से समझा जाता है जब कार्यशील आयु की जनसंख्या में वृद्धि होती है तो आर्थिक वृद्धि की दर में बढ़ोतरी होती है।

जनांकिकी लाभांश की स्थिति तब उत्पन्न होती है जब जन्मदर गिर रही होती है जिसमें आयु संरचना में वयस्क आयु का वर्चस्व बढ़ रहा हो इस स्थिति को जनांकिकी उपहार या जनांकिकी खिड़की भी कहा जाता है।

एक अर्थव्यवस्था की उत्पादकीय क्षमता सीधे तौर पर कार्यशील जनसंख्या के आकार से जुड़ी होती है। आयु संरचना सीधे तौर पर कूल जनसंख्या से जुडी होती है। इसलिए जनांकिकी लाभांश यहां पर शिशु आयु से युवा आयु में परिवर्तन से समझा जाता है। यह युवा वर्ग की जनसंख्या का प्रतिनिधित्व करती है शिशु आयु और वृद्ध आयु की तुलना में।

देश में वर्गानुसार वितरण के अध्ययन से वहां की श्रम शक्ति, प्रजनन योग्य स्त्रियों का अनुमान, वैवाहिक दरें इत्यादि ज्ञात की जा सकती है किसी देश में क्रियाशील जनसंख्या के भावी विकास को जानने के लिए वहां के समस्त लोगों की आयु संरचना के आधार पर अध्ययन करना आवश्यक है। यदि जनसंख्या में शिशुओं और वृद्धों की अपेक्षा अधिक वयस्को का अनुपात अधिक होगा तो वहां की मृत्यु दर कम एवं जन्म दर अधिक होगी। चूंकि शिशुओं एवं वृद्धों में मृत्यु दर अधिक पायी जाती है तथा वे पूर्नत्थान में भी अपना योगदान नहीं दे सकते है। इस प्रवृति को पिरामिडिय कहा जाता है। आयु संरचना किसी जनसंख्या में आयु वर्गो के अनुसार जनसंख्या के वितरण को प्रदर्शित करती है।

जनसंख्या में निम्न आयु वर्ग की अधिकता, आश्रित सूचकांक में अधिक होने तथा कार्यशील जनसंख्या की कमी तथा वृद्धि का वास्तविक ज्ञान भी आयु संरचना के अध्ययन से होता है। इससे स्पष्ट है कि आयु संरचना में परिवर्तन में विभिन्न जनांकिकी तथ्य प्रभावित होते है तथा आयु संरचना में परिवर्तन से जनांकिकी संक्रमण की अवस्था में भी परिवर्तन दृष्टिगत होता है।

अत: यह कहना कठिन होगा कि किसी देश की जनसंख्या का आयु, संरचनात्मक अध्ययन उस देश की जनांकिकी, सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक एवं शैक्षिक नीतियों के निर्धारण में अप्रत्यक्ष सहायक सिद्ध होता है।

किसी राज्य अथवा देश की जनसंख्या को तीन वर्गो क्रमश: बालक वर्ग, वयस्क वर्ग एवं वृद्ध वर्ग में विभक्त किया जाता है। इनकी आयु सीमा क्रमश: 0–14 वर्ष, 15–59 वर्ष तथा 60 वर्ष से अधिक मानी गई है। 15–59 वर्ष की जनसंख्या को देश की क्रियाशील जनसंख्या माना जाता है। जिस पर देश का आर्थिक विकास निर्भर करता है। उत्पादक वर्ग 15–59 वर्ष की जनसंख्या देश की आर्थिक दृष्टि से उत्पादक जनसंख्या होती है जिस पर बाल वर्ग एवं वृद्ध वर्ग की जनसंख्या आश्रित होती है।

साहित्य समीक्षा –

1. Demographic Dividend (A New Perspective on The Economic Consequences of Population Change)

By – David Bloom, David Canning, Jaypee Sevilla.

इस बात की एक लम्बी बहस है कि किस प्रकार से जनसंख्या राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था को प्रभावित करती है। इस बहस पर कई नये शोधों में कार्य हुए और एक नयी रिपोर्ट इस बिन्दु पर बनाई गयी। लेखक ने जनसंख्या की आयु संरचना को इसमें शामिल किया। बताया कि आयु संरचना अगर वृद्धि दर से अत्यधिक है तो यह आर्थिक विकास को प्रभावित करती है साथ ही प्रजननता दर की घटती दर आर्थिक विकास के अवसर पैदा करती है। अगर शिक्षा, स्वास्थ्य, श्रम बाजार की नीतियाँ सकारात्मक है तो ये भी आर्थिक विकास में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका रखती है।

2. Demographic Dividend or Demographic Threat in Pakistan: Demographic Dividend : The past the present and the future

Author (s) नायम डी. वर्ष – 2008 क्षेत्र – दक्षिण एशिया

लेखक के अनुसार विकासशील देशों में जनांकिकी संक्रमण के अन्तर्गत जनसंख्या ढांचे में महत्वपूर्ण बदलाव आ रहे हैं। अध्ययन में बताया कि पाकिस्तान में भी जनांकिकी संक्रमण की स्थिति से गुजर रहा है तथा वहां पर जनसंख्या निर्भरता की दर घट रही है।

अध्ययन के उद्देश्य –

1. राजस्थान में जनांकिकी लाभांश की स्थिति का पता लगाना
2. राजस्थान में जनांकिकी लाभांश और आर्थिक विकास के बीच सम्बन्ध को समझना

अध्ययन पद्धति – शोध पत्र पूर्णत: द्वितीयक संमको पर आधारित है। जनांकिकी लाभांश तथा विकास से जुड़े पहलू जैसे शुद्ध घरेलू उत्पति और प्रति व्यक्ति आय को द्वितीयक स्त्रोतों से जुटाया गया है। जनांकिकी लाभांश और विकास के मध्य सम्बन्ध को प्रतिशत विधि के माध्यम से प्रस्तुत किया गया है। यह प्रदर्शित किया गया है कि वर्ष 1980–81 वे वर्ष 2010–11 तक विभिन्न दशकों में जनांकिकी लाभांश की स्थिति में क्या परिवर्तन हुए और साथ ही इसी अवधि में विकास से जुड़े पहलूओं में कितना परिवर्तन आया है अर्थात् शोध प्रवधि पूर्ण द्वितीयक समंको पर आधारित है और प्रतिशत वृद्धि दर के माध्यम से शोध पत्र के निष्कर्ष प्राप्त किये गये है।

*शोधार्थी (अर्थशास्त्र) मोहनलाल सुखाडिया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
**व्याख्याता (अर्थशास्त्र) राजकीय मीरा कन्या महाविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

राजस्थान में जनांकिकी लाभांश का स्वरूप – भारत वर्ष की भांति पिछले कई दशकों में राजस्थान में स्वास्थ्य एवं चिकित्सा दशाओं में सुधार होने के परिणामस्वरूप मृत्यु दर में कमी आयी है। इसके विपरित जन्मदर की ऊँची प्रवृति के कारण राजस्थान में बाल वर्ग एवं वृद्ध वर्ग की जनसंख्या की अधिकता आती रही है। जनसंख्या में निर्भरता वर्ग की अधिकता के परिणाम स्वरूप, शिक्षा, स्वास्थ, चिकित्सा, आवास, खाद्यान्न आदि मुलभूत आवश्यकताओं की समस्या बढ़ती है। जिससे राज्यों का आर्थिक एवं सामाजिक विकास प्रभावित होता रहा है।

विगत कुछ दशकों में जन्म दर की उच्च तथा मृत्युदर की निम्न प्रवृति के फलस्वरूप जनसंख्या की आयु संरचना में आश्रित वर्ग 0–14 तथा 60 वर्ष की जनसंख्या की अधिकता पायी गई है। जिसके फलस्वरूप राजस्थान की क्रियाशील जनसंख्या में पर भार बढ़ता रहा है। जनसंख्या में निम्न वर्ग कि अधिकता के परिणाम स्परूप शिक्षा, स्वास्थ्य, चिकित्सा, खाद्यान्न आदि मूलभूत आवश्यकताओं की समस्या बढी है। जिनकी पूर्ति के लिये सरकारी साधनों का प्रयोग उत्पादन कार्यो में हटकर मूलभूत आवश्कताओं की पूर्ति में लगाये जा रहे है, जिससे राजस्थान का आर्थिक विकास बाधित होता रहा है परन्तु पिछले दशकों में राजस्थान के जनांकिकी ढ़ाँचें में 15–59 वर्ष की आयु वर्ग का भाग बढ़ा है जो विकास के लिए आदर्श साबित हो रहा है।

राजस्थान में जनसंख्या का आयु वर्गानुसार वितरण भी बहुत उतार–चढ़ाव वाला रहा है। राजस्थान में जनसंख्या का आयु वर्ग अनुसार वितरण पर एक नजर–

तालिका –1 (देखे अगले पृष्ठ पर) तालिका 1 तथा प्रस्तुत ग्राफ से स्पष्ट है कि राजस्थान में 1981 की जनगणना के अनुसार 0–14 वर्ष के आयु वर्ग का कुल जनसंख्या में 42.43 प्रतिशत भाग था जो 1991 में 40.98 प्रतिशत भाग रहा सन् 2001 की जनगणना के अनुसार कुल जनसंख्या में इस वर्ग का 40.40 प्रतिशत भाग था तथा 1990–2001 के बीच 27.20 प्रतिशत की वृद्धि दर रही। आश्रित वर्ग 60 + वर्ष आयु वर्ग की जनसंख्या में भी निरन्तर वृद्धि हुई है। 1981 में कुल जनसंख्या में इसका भाग 6.02 प्रतिशत था जो 1991–01 में बढकर क्रमश: 6.28 तथा 6.74 प्रतिशत रहा। जबकि सन् 2011 में यह अनुपात 6.8 प्रतिशत रहा।

इसके विपरित क्रियाशील वर्ग 15–59 वर्ष के अनुपात में अभूतपूर्व की वृद्धि हुई है। 1981 में कुल जनसंख्या में इसका भाग 51.53 प्रतिशत था जो 1991 में 31.11 प्रतिशत की दशकीय वृद्धि के साथ कुल जनसंख्या का 52.71 प्रतिशत भाग रही है। सन् 2001 की जनगणना के अनुसार कूल जनसंख्या में भाग 52.85 प्रतिशत रहा तथा 28.22 प्रतिशत की दशकीय वृद्धि दर रही। जबकि वर्ष 2011 में वर्ष 2001 कि तुलना में 36.94 प्रतिशत की वृद्धि के साथ यह 59.6 प्रतिशत पर पहुँच गया।

निष्कर्ष रूप से राज्य में विगत तीन दशकों में कुल जनसंख्या में क्रियाशील वर्ग के अनुपात में अभुतपूर्व की वृद्धि हुई है तथा 0–14 वर्ग के अनुपात में थोड़ी सी कमी आयी है लेकिन इस वर्ग की जनसंख्या वृद्धि दर विगत तीन दशकों में तीव्र गति से बढ़ी है। जिससे राज्य में निम्न वर्ग की जनसंख्या की अधिकता रही है तथा सबसे अधिक जनसंख्या वृद्धि दर वृद्ध आयु वर्ग की जनसंख्या में भी रही है।

राजस्थान में जनांकिकी लाभांश और विकास के मध्य सम्बन्ध – राजस्थान में जनांकिकी लाभांश और विकास के मध्य भी सकारात्मक सम्बन्ध दिखाई देता है। राजस्थान में जनांकिकीढ़ाँचा और विकास के मध्य सम्बन्ध पर एक नजर –

तालिका – 2 (देखे अगले पृष्ठ पर) राजस्थान में जनांकिकी लाभांश और विकास के सम्बन्ध के अन्तर्गत तालिका में जनांकिकीलाभांश अर्थात 15–59 वर्ष की उम्र की कार्यशील जनसंख्या को शामिल किया गया हैं जबकि विकास की अवधारणा में शुद्ध घरेलू उत्पति (करोड़ रूपये) तथा प्रति व्यक्ति आय (रूपयों में) को लिया गया है। वर्ष 1980–81 में जब 15–59 वर्ष की आयु का प्रतिशत 51.53 प्रतिशत था, इसी वर्ष शुद्ध घरेलू उत्पति 5467 करोड रूपये थी, तो प्रति व्यक्ति आय 1619 रूपये। वर्ष 1990–91 में 15–59 वर्ष की जनसंख्या 31.11 प्रतिशत की वृद्धि के साथ 52.71 प्रतिशत के स्तर पर रही। वही शुद्ध घरेलू उत्पाद 316.46 प्रतिशत बढ़ा और यह 22768 करोड़ रूपये के स्तर पर पहुँचा। प्रति व्यक्ति आय पिछले दशक की तुलना 222.42 प्रतिशत की वृद्धि के साथ 5220 रूपये हो गयी। वर्ष 2000–01 में 15–59 आयु वर्ग का राज्य में 52.85 प्रतिशत की वृद्धि को दर्शाता है। इसी वर्ष शुद्ध घरेलू उत्पति और प्रति व्यक्ति आय में क्रमश: 219.60 तथा 147.06 प्रतिशत की वृद्धि रही। इस वृद्धि के साथ शुद्ध घरेलू उत्पाद 72766 करोड़ रूपये तथा प्रति व्यक्ति आय 12817 रूपये रही। वर्तमान में भी जनांकिकी लाभांश और विकास अनुकूलता बनाये हुए है। वर्ष 2010–11 में जहाँ 15–59 आयु वर्ग का प्रतिशत 59.6 प्रतिशत रहा जो पिछले दशक के मूकाबले 41.76 प्रतिशत अधिक है वही शुद्ध घरेलू उत्पति 191539 करोड़ रूपये तथा प्रति व्यक्ति आय 28885 रूपये रही जो क्रमश: 163.23 तथा 123.97 प्रतिशत की वृद्धि को दर्शाती है।

तालिका से स्पष्ट हो जाता है कि जंनाकिकी लाभांश और विकास के पहलुओं की वृद्धि लगातार विभिन्न दशकों में बढ़ी है। जहाँ राजस्थान में 15–59 वर्ष की आयु वर्ग में लगातार बढ़ोतरी हुई, तो साथ साथ शुद्ध घरेलु उत्पति तथा प्रति व्यक्ति आय का पैमाना भी बढता गया है। इससे स्पष्ट होता है कि 15–59 वर्ष की आयु वर्ग एक उत्पादक वर्ग है जो अपनी क्षमता योग्यता के आधार पर उत्पादन को बढ़ावा देकर शुद्ध घरेलू उत्पति एवं प्रति व्यक्ति आय में परिवर्तन करता है।

यहां यह कहना उचित होगा कि जब किसी भी अर्थव्यवस्था में कार्यशील जनसंख्या के अनुपात में वृद्धि होती है। तो वहां कि अर्थव्यवस्था के सभी पहलु सकारात्मक रूप से वृद्धि करते है जैसे तालिका में स्पष्ट शुद्ध घरेलू उत्पति तथा प्रति व्यक्ति आय। अत: यह कहना उचित होगा की जनांकिकी लाभांश और विकास के मध्य धनात्मक सम्बन्ध होता है जो विकास के पैमाने को निर्धारित करता है।

निष्कर्ष – शोध पत्र राजस्थान में जनांकिकी लाभांश से जुडा है। जनांकिकी लाभांश से सीधा युवा जनसंख्या से लिया जाता है जो अर्थव्यवस्था के विकास में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते है। जनांकिकी लाभांश और विकास में भी सम्बन्ध देखने को मिलता है। जनांकिकी लाभांश जो कि युवा वर्ग का रूप है जिसमें 15–59 वर्ष की आयु वर्ग को शामिल किया जाता है। जो युवा होने के साथ साथ कार्यशील होती है। विकसित राष्ट्रों में युवा वर्ग की जनसंख्या का अधिकांश भाग कार्यशील होता है अर्थात् विभिन्न प्रकार के उत्पादक कार्यो में लगा होता है। जबकि विकासशील राष्ट्रों में रोजगार और उचित समायोजन के अभाव में अधिकांश यूवा वर्ग अकार्यशील श्रेणी में पाया जाता है। लगातार कई वर्षो से भारत में युवा वर्ग का प्रतिशत लगातार बढा है। वर्ष 1981 में जहॉ 15–59 वर्ष की आयु का प्रतिशत 51.99 प्रतिशत था जो वर्ष 2011 में 63.86 प्रतिशत हो गया। जो जनांकिकी का एक अच्छा पहलू है। परन्तु युवा वर्ग की जनसंख्या का वर्ष 1981 में 33.45 प्रतिशत वर्ग की कार्यशील था तथा वर्ष 2011 में 45.66 प्रतिशत तक कार्यशील जनसंख्या बढी है। इससे स्पष्ट होता है कि युवा वर्ग का 54.34 भाग किसी भी उत्पादन प्रक्रिया से जुडा नहीं है यह चिन्ता का विषय,

क्योंकि युवा शक्ति का उपयोग कर अधिक से अधिक विकास को प्राप्त किया जा सकता है।

राजस्थान के जनांकिकी लाभांश के स्वरूप से भी पता चलता की राजस्थान में युवा वर्ग का अनुपात में लगातार वृद्धि हुई है। जहॉ वर्ष 1981 में राजस्थान में युवा वर्ग का प्रतिशत 51.33 प्रतिशत था जो वर्ष 2001 में 52.85 प्रतिशत तथा वर्ष 2011 में 59.7 प्रतिशत बना रहा। वर्ष 2001 से वर्ष 2011 के बीच 36.94 प्रतिशत की वृद्धि दर से यह बढ़ा।

राजस्थान में जनांकिकी लाभांश एवं विकास के मध्य सम्बन्ध देखने को मिलता है वर्ष 1990-91 में जहां युवा वग का अनुपात 1980-81 के मुकाबले 31.11 प्रतिशत बढ़ा, उसी वर्ष शुद्ध घरेलू उत्पति 316.46 प्रतिशत तो प्रति व्यक्ति आय 222.42 प्रतिशत की वृद्धि से बढ़ी।

वर्ष 2011 में युवा वर्ग का अनुपात वर्ष 2000-01 की तूलना में 36.44 प्रतिशत बढा। जबकि इसी वर्ष शुद्ध घरेलू उत्पति 163.23 प्रतिशत वही तो प्रति व्यक्ति आय +123.97 प्रतिशत की दर से बढी। आंकडों को देखने से पता चलता है कि 1981 से लेकर 2011 तक राजस्थान में युवा वर्ग का अनुपात लगातार बढ़ा है। वर्ष 1980 से लेकर वर्ष 2011 तक शुद्ध घरेलू उत्पाद और प्रति व्यक्ति आय में भी बढ़ोतरी देखने को मिली है अर्थात् लाभांश और विकास में अन्तर्सम्बंध देखने को मिलता है।

जनांकिकी लाभांश कई रूपों में अर्थव्यवस्था के लिए लाभदायक होता है। जैसे उत्पाद में वृद्धि, राज्य और राष्ट्रीय आय में वृद्धि, जीवन स्तर में सुधार, शिक्षा में सुधार, बाल वर्ग और वृद्ध वर्ग के भार में कमी आर्थिक कल्याण इत्यादि।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. The Times of India, "Make Use of Demographics Dividend: Experts," Apr 16, 2011
2. Singariya, M.R. (2012), "Population and Regional Inequality in India," International Journal of Research in Commerce, Economics & management,Vol.2,No. 7p.p.133-139 (online) Availabel: http://www.ijrcm.org.in
3. Singariya, M.R. (2012), "The Demographic Dividend: Evidence from Districts of Rajasthan" International Journal of Management 2 Business Studies, Vol. 2, Issue 3, p.p. 51-54

तालिका1

राजस्थान की जनसंख्या का आयु वर्गानुसार वितरण सन् 1981 से 2011 तक

वर्ष / आयु	1981	1991	2001	2011
0-14	14540654	17948548	22830815	23056660
प्रतिशत	(42.43)	(40.98)	(40.40)	(33.06)
	-	(+23.43)	(+27.20)	(+0.989)
15-59	17656112	23153093	29866101	40898123
प्रतिशत	(51.53)	(52.71)	(52.85)	(59.6)
	-	(+31.11)	(+28.22)	(+36.94)
60 +	2065098	2767870	3810272	4666229
प्रतिशत	(6.02)	(6.28)	(6.74)	(6.8)
	-	(+34.03)	(+37.66)	(+22.46)
योग	34261862	44005990	56507188	68621012
	(100)	(100)	(100)	(100)
	-	(+28.44)	(+28.36)	(+21.43)

स्त्रोत- भारत की जनगणना, तालिका 2 1981, 1991, 2001, 2011

तालिका - 2

राजस्थान में जनांकिकी लाभांश और विकास

वर्ष	शुद्ध घरेलू उत्पति (करोड़ रूपये)	प्रति व्यक्ति आय (रूपयों में)	जंनाकिकी लाभांश आयु (प्रतिशत) (15-59 वर्ष)
1980-81	5467	1619-	17656112
G.R.	-	-	51.53 -
1990-91	22768	5220	23153093
G.R.	(+ 316.46)	(+ 222.42)	52.71 (+31.11)
2000-01	72766	12897	29866101
G.R.	(+219.60)	(+147.06)	57.68 (+28.22)
2010-11	191539	28885	40898123
G.R.	(+163.23)	(+123.97)	59.6 (+ 36.94)

स्त्रोत- राजस्थान आर्थिक समीक्षा - 2011, राजस्थान की जनगणना 2011

****

भारत में ग्रामीण आधारभूत संरचना के विकास का विश्लेषणात्मक अध्ययन

प्रदीप कुमार डामोर * प्रो. फरीदा शाह **

शोध सारांश – आधारभूत संरचना किसी भी क्षेत्र के आर्थिक एव सामाजिक विकास के लिए महत्वपूर्ण कुंजी है। ग्रामीण आधार ढांचा जीवन स्तर की गुणवत्ता को निर्धारित करता है। आधारभूत सुविधाओं का ग्रामीण जीविका, उनके स्वास्थ्य और उत्पादकता में सुधार तथा गरीबी घटाने पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। प्रस्तुत अध्ययन भारत में ग्रामीण आधारभूत संरचना के विकास के विश्लेषण को बताता है। भारत में केन्द्र और राज्य सरकार दोनों ही विशेष रूप से 2004-05 से ग्रामीण आधारभूत संरचना पर काफी खर्च कर रही है किंतु पहुंच और गुणवत्ता दोनों के संदर्भ में इनके परिणाम निराशाजनक रहे है। ग्राम स्तर पर एक दूसरे तक पहुंचने के मार्गो में सुधार हुआ है किन्तु घरों को अभी भी बुनियादी सुविधाएं प्राप्त नहीं है। प्रस्तुत अध्ययन द्वितीयक आंकडो पर आधारित है। अध्ययन का उद्देश्य ग्रामीण भारत में आधारभूत संरचना का विकास एवं उसमें क्षेत्रीय असमानताओं का विश्लेषण करना है। अध्ययन में पाया है कि 70 प्रतिशत घरों में शौचालय की सुविधा नहीं है। 45 प्रतिशत परिवारों को विद्युत उपलब्ध नहीं है एवं 50 प्रतिशत परिवारों के पास पक्के आवास नहीं है। राज्यों के बीच ही नहीं, राज्यों के भीतर भी बहुत अधिक असमानाऐं है। सभी राज्यों में सामाजिक रूप से कमजोर और हाशिये पर स्थित समुदायों की स्थिति अन्यों की तुलना में अधिक खराब है। ग्रामीण क्षेत्रों में आधारभूत संरचना के विकास को बढ़ाने एवं सामाजिक सेवाओं की गुणवता, सुव्यवस्थित संस्थाओं की स्थापना की जानी चाहिए। तथा जो क्षेत्र पिछडे हुए है उन क्षेत्रों में बडे सरकारी निवेश एवं सरकार द्वारा संचालित विकास योजनाओं का उचित क्रियान्वयन की आवश्यकता है।

शब्द कुंजी – आधारभूत संरचना, ग्रामीण निवेश, गरीबी, असमानता, स्वच्छता, पेयजल, आवास इत्यादि।

परिचय एवं महत्व – किसी भी देश के आर्थिक विकास की दर एवं विकास की गति बहुत हद तक उस देश में निर्मित आधारभूत संरचना पर निर्भर करती है। आधारभूत संरचना से तात्पर्य अर्थव्यवस्था की उस पूंजी से होता है जो सड़क, रेल, विद्युत, संचार तेल व गैस पाइपलाइन, शिक्षा, स्वास्थ्य पेयजल, बैंक, बीमा व अन्य वित्तीय संस्थाऐं तथा मुद्रा प्रणाली आदि सार्वजनिक सेवाओं का प्रत्यक्ष एवं सकारात्मक प्रभाव देश के उत्पादन उपभोग, रोजगार एवं राष्ट्रीय आय पर पड़ता है, जबकि कुछ अन्य अर्थव्यवस्था के सामाजिक क्षेत्रकों के निर्माण में अप्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता है। आधारभूत संरचना ऐसी सहयोगी प्रणाली है जिस पर एक आधुनिक औद्योगिक अर्थव्यवस्था की कार्यकुशल कार्यप्रणाली और आधुनिक कृषि निर्भर करती है तथा यह एक देश के आर्थिक विकास के तत्वों की उत्पादकता में वृद्धि करके और उसके जनता के जीवन की गुणवता में सुधार करके अपना योगदान देती है।

अनेक अध्ययनों से पता चला है कि गांवों में आधारभूत सुविधाऐं उपलब्ध कराने से रोजगार, स्वास्थ्य और उत्पादकता में सुधार हो सकता है और गरीबी कम हो सकती है, उत्पादन में वृद्धि करने वाली सुविधाओं जैसे सड़के, विद्युत, सिंचाई, कृषि अनुसन्धान और विकास तथा चिकित्सा और स्वास्थ्य पर सरकारी धन खर्च करने से कृषि उत्पादकता, वेतन और गैर कृषि रोजगार में वृद्धि होती है, जिससे गरीबी कम करने में मदद मिलती है। (**आर एंड डी**) परिवहन की लागत कम करने और किसानों की बाजार तक पहुंच बढ़ाने से कृषि में विस्तार होता है और ऋण सेवाओं की लागत कम करने से किसानों को अधिक ऋण की सुविधा प्राप्त होती है। कृषि सामग्री की मांग में अधिक वृद्धि होती है और अधिक फसल का उत्पादन होता है।(**बिंसवानगेर एवं अन्य, 1993**)

विद्युत की व्यवस्था करने से गैर कृषि आय में वृद्धि होती है, दुर संचार में सुधार होने से ग्रामीण वित्त, स्वास्थ्य और विकास सुविधाओं का अधिक लाभ उठा सकते है, बुनियादी रूप से स्वच्छता और पेयजल सुविधाओं में सुधार होने से लोगों की सेहत में सुधार होता है जिसके फलस्वरूप आगे जाकर उत्पादकता में सुधार होता है। (**जालान एवं रेवेलियन, 2003., कुमार एवं वोलमर 2011**)

वैश्विक परिप्रेक्ष्य में देखा जाये तो विकसित देशों में आधारभूत ढ़ांचे के विस्तार पर सर्वाधिक ध्यान दिया गया है इन देशों का आर्थिक शक्ति का मूलाधार इनकी सुदृढ़ औद्योगिक शक्ति है और औद्योगिक शक्ति का मूलाधार मजबुत आधार संरचना जिसमें आर्थिक विकास को भारी सम्बल प्रदान किया है। भारत एक विकासशील देश है जहां 75 प्रतिशत ग्रामीण जनसंख्या निवास करती है। ग्रामीण भारत का स्वरूप बदलने के लिए इसके आधारभूत संरचना में परिवर्तन करना जरूरी है क्योंकि भारत में ग्रामीण अर्थव्यवस्था कृषि आधारित अर्थव्यवस्था से गैर-कृषि अर्थव्यवस्था में बदल रही है। निश्चित रूप से सरकार द्वारा ईधन, खाद्य और अन्य मदों पर सब्सिडी देने की तुलना में आधारभूत सुविधाओं पर व्यय करने के प्रभाव अधिक स्थाई और दीर्घकालिक होंगे।

यद्यपि ग्रामीण आधारभूत संरचना निर्माण के सभी क्षेत्र राज्य सरकारों के अधीन है, किन्तु सरकारी व्यय या उसके परिणामों के बारे में विश्वसनीय और मानवीकृत सूचनाऐं प्राप्त करना बहुत कठिन है। इन वर्षो में ग्रामीण आधारभूत संरचना के विकास में केन्द्र सरकार में काफी योगदान दिया है। विशेष रूप से 2004-05 से केन्द्र सरकार ने ऐसी सभी आधारभूत सरचना के विकास पर जोर दिया है, जिससे ग्रामीण परिवारों की व्यक्तिगत आवश्यकताओं

* शोधार्थी (अर्थशास्त्र) सामाजिक विज्ञान एवं मानविकी महाविद्यालय, मोहनलाल सुखाडिया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत
** प्राध्यापक (अर्थशास्त्र) सामाजिक विज्ञान एवं मानविकी महाविद्यालय, मोहनलाल सुखाडिया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) भारत

को पुरा किया जा सके, किन्तु पहुंच और गुणवत्ता के संदर्भ में इनके परिणाम काफी निराशाजनक रहे है। विश्व बैंक के अध्ययन (1997) के अनुसार ग्रामीण सडक निर्माण में 10 लाख रूपये का निवेश किया जाता है तो 163 लोग गरीबी के दल दल से निकल जाते है। ग्रामीण सड़कों की खराब स्थिति के कारण कुल कृषि उत्पाद का 15 प्रतिशत भाग खेत और उपभोक्ता पहुंच के बीच ही खत्म हो जाता है इससे किसानों की आय पर विपरित प्रभाव पडता है। लेकिन इन सच्चाईयों के बावजुद भी भारत में अब भी 30 प्रतिशत निवास स्थान पक्की सडकों से जुड नही पाये है।

केन्द्रिय ऊर्जा मंत्रालय रिपोर्ट के अनुसार देश में 87 प्रतिशत गांव विद्युतीकृत है, लेकिन ग्रामीण आबादी में 40 से 44 प्रतिशत आवासों को ही विद्युत उपलब्ध है, क्योंकि ग्रामीण विद्युतीकरण वर्ष 2003-04 विद्युतीकृत ग्राम की परिभाषा के संशोधन के बाद उस गांव को विद्युतीकृत माना जाता है, जिस गांव में कम से कम कुल आवासों में से 10 प्रतिशत आवास विद्युतीकृत हो इन नऐ मानको के आधार पर कई गांव विद्युतीकृत की श्रेंणी में तो आ जाते है, लेकिन सभी आवास विद्युतीकृत नहीं हो पाते है। अभी भी ग्रामीण एवं दुर्गम क्षेत्रों में खाद्य एवं आजीविका सम्बन्धी सुरक्षा के साथ जीवन व्यतीत करने के रास्ते में टिकाऊ और किफायती उर्जा स्त्रोतों की कमी है।

सकल घरेलू उत्पाद का 33 प्रतिशत, निर्यात का 24 प्रतिशत तथा करों से प्राप्त कुल सरकारी आय का 46 प्रतिशत भाग ग्रामीण क्षेत्रों से प्राप्त होने के कारण ग्रामीण क्षेत्र की भूमिका स्वत: ही स्पष्ट है। राष्ट्रीय आय में ग्रामीण समुदाय द्वारा महत्वपूर्ण योगदान देने की बावजुद देश में ग्रामीण और शहरों के बीच विभिन्न क्षेत्रों में व्यापक अन्तराल और आर्थिक-सामाजिक असमानताऐं मौजुद है। एक तरफ संरचनात्मक एवं प्रौद्योगिकी परिवर्तनों के कारण नगर विकास की धूरी बनकर उभरे है, वही दूसरी ओर ग्रामीण क्षेत्र विकास की दौड़ में पीछे है। अत: ग्रामीण क्षेत्रों को विकास की मुख्य धारा में शामिल करके ही समग्र एवं वास्तविक विकास की प्राप्ति सम्भव है इसके लिए ग्रामीण क्षेत्रों में आधारभूत संरचना का विकास परम आवश्यक है।

अध्ययन के उद्देश्य-प्रस्तुत अध्ययन निम्न उद्देश्यों पर आधारित है-

1. भारत में ग्रामीण विद्युत विकास एवं उसमें क्षेत्रीय असमानओं का विश्लेषण करना।
2. भारत में ग्रामीण क्षेत्रों में स्वच्छता एवं पेयजल विकास एवं उसमें क्षेत्रीय असमनाओं का विश्लेषण करना।

शोध प्रविधि - प्रस्तुत अध्ययन भारत में ग्रामीण क्षेत्रों में आर्थिक-सामाजिक आधारभूत संरचना, स्वच्छता, पेयजल, आवास विद्युत के विकास का विश्लेषण किया गया है। अध्ययन में भारत के 35 राज्य स्तर पर मुख्यत: द्वितीयक आंकडों का प्रयोग किया गया है आवश्यक आंकडे विद्युत, आवास, पेयजल सम्बन्धी विभागों तथा अन्तर्राष्ट्रीय और राष्ट्रीय जर्नल्स, वार्षिक रिपोर्ट एवं इंटरनेट वेबसाइटों से एकत्रित किये गये है। प्रस्तुत अध्ययन में चार प्रमुख संकेतक - 1. विद्युतीकृत परिवारों का प्रतिशत, 2. शुद्ध पेयजल युक्त परिवारों का प्रतिशत, 3. शौचालय सुविधा युक्त परिवारों का प्रतिशत, 4. पक्के आवास युक्त परिवारों के प्रतिशत को सम्मिलित किया गया है

स्त्रोत -

1. विश्व विकास रिपोर्ट 1994, 2001
2. रूरल इन्फ्रास्ट्रक्चर रिपोर्ट 2007
3. भारतीय ग्रामीण विकास रिपोर्ट 2012-13
4. भारत की जनगणना 2001, 2011, आर.जी.आई. नई दिल्ली
5. आर्थिक सर्वे 2010-2014
6. भारतीय बजट 2001-2012

प्रस्तुत अध्ययन का विश्लेषण - भारत में ग्रामीण आधारभूत संरचना की स्थिति (2001-2011) तालिका 1 (देखे अगले पृष्ठ पर)

ग्रामीण आधारभूत सुविधाओं पर केन्द्र सरकार द्वारा किया जाने वाला व्यय (2000-2012) (2006-07) के मुल्यों के आधार पर

तालिका संख्या -2

क्र.स.	मद	कुल व्यय (करोड़ रू.)	हिस्सेदारी प्रतिशत
1.	ग्रामीण सड़के	90,517	29.8
2.	ग्रामीण आवास	48,511	16.0
3.	सिंचाई	48,184	15.9
4.	वॉटरशेड	10,557	3.5
5.	ग्रामीण पेयजल एवं स्वच्छता	62,342	20.5
6.	ग्रामीण विद्युतीकरण	24,100	7.9
7.	दूरसंचार	13,851	4.6
8.	भंडारण	1,972	0.6
9.	पुरा (पीयूआरए)	206	0.1
10.	समेकित कार्य योजना	3,654	1.2
ग्रामीण आधारभूत सुविधाओं पर वास्तविक व्यय		**303,894**	**100**

स्त्रोत- यूनियन एक्सपेंडिचर बजट, खण्ड 2 (2001-02 से 2013-14), वेबसाईट http://indiabudget.nic.in

1. शौचालय युक्त परिवारों की स्थिति - तालिका संख्या 1 से स्पष्ट होता है कि सर्वाधिक शौचालय युक्त परिवारों का प्रतिशत 2001 व 2011 में केरल राज्य में क्रमश: 81.4 प्रतिशत एवं 93.2 प्रतिशत एवं सबसे कम शौचालय युक्त परिवारों का अंश 2001 में छत्तीसगढ़ में 5.1 प्रतिशत तथा 2011 में झारखण्ड में 7.6 प्रतिशत पाया गया है और सम्पूर्ण भारत में 2001 में शौचालय युक्त परिवार 22.8 प्रतिशत थे, जो बढ़कर 2011 में 30.7 प्रतिशत तक ही पहुंचा है। अत: अभी भी ग्रामीण भारत में 70 प्रतिशत लोगों को शौचालय की सुविधा उपलब्ध नहीं है और साथ ही भारत की विभिन्न राज्यों में इस क्षेत्र में काफी असमानताऐंहै।

2. पेयजल युक्त परिवारों की स्थिति - ग्रामीण क्षेत्रों में पानी केवल पीने और घरेलू प्रयोग के लिए ही नहीं किंतु सिचाई के माध्यम से टिकाऊ आजीविका के लिए भी जरूरी होता है भारत में सिंचाई कार्यो में 80 प्रतिशत से अधिक पानी का प्रयोग होता है जबकि पीने के लिए मात्र 8 प्रतिशत जो काफी कम, किन्तु अत्यधिक महत्पवपूर्ण हिस्सा है। तालिका 1 से स्पष्ट होता है कि भारत में ग्रामीण पेयजल आपुर्ति में काफी सुधार हुआ है 2001 में भारत में 73.2 प्रतिशत ग्रामीण परिवारों को पेयजल उपलब्ध था जो बढकर 2011 में 82.7 प्रतिशत हो गया है लेकिन अभी भी कुछ राज्यों जैसे केरल, मेघालय, मणिपुर, मिजोरम में बहुत ही कम ग्रामीण परिवारों को पेयजल उपलब्ध हो रहा है, जबकि इस क्षेत्र में पंजाब, चण्डीगढ़, उत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेश, हरियाणा, बिहार आदि राज्यों में 90 प्रतिशत से अधिक परिवारों को पेयजल उपलब्ध है।

3. ग्रामीण विद्युतीकृत परिवारों की स्थिति - यद्यपि भारत में लगभग सभी गांवो का विद्युतीकरण हो चुका है लेकिन तालिका 1 से स्पष्ट होता है कि 2011 की जनगणना के अनुसार 55.3 प्रतिशत ग्रामीण परिवार को ही

बिजली प्राप्त है यह असंगति विद्युतीकृत गांवों की परिभाषा के कारण हुई है। तालिका 2 से स्पष्ट होता है कि 2000–2012 की अवधि में 2006–07 के मुल्यों के पर ग्रामीण आधार संरचना पर किये जाने वाले कुल वास्तविक व्यय का केवल 7.9 प्रतिशत ही ग्रामीण विद्युत पर व्यय किय गया है जो कि ग्रामीण सड़क पर व्यय 29.8 प्रतिशत से काफी कम है। अध्ययन में विद्युत क्षेत्र में सबसे निम्न स्थिति बिहार राज्य में पायी गई है, जहां 2001 व 2011 में क्रमश: 5.1 प्रतिशत एवं 10.4 प्रतिशत परिवारों को ही बिजली उपलब्ध है। ग्रामीण विद्युत विकास पर सरकार को विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है।

4. ग्रामीण आवास युक्त परिवारों की स्थिति – तालिका 2 से स्पष्ट है कि 2000 से 2012 की अवधि में ग्रामीण आधारभूत संरचना पर कुल वास्तविक व्यय का 16.7 प्रतिशत व्यय किया गया है जो भारत की ग्रामीण व गरीब जनसंख्या के अनुपात में काफी कम है तालिका 1 से स्पष्ट है कि सम्पूर्ण भारत में 2001 में 41.1 प्रतिशत ग्रामीण परिवारों को पक्का आवास उपलब्ध था जो बढकर 2011 में 51.4 प्रतिशत हो गया है, जबकि अभी भी 48.6 प्रतिशत अर्द्ध पक्के एवं कच्चे आवासों में निवास करते है। भारत के कई राज्य जैसे मणिपुर 6.8 प्रतिशत, त्रिपुरा में 9.3 प्रतिशत, नागालैण्ड में 11.8 प्रतिशत लोगों को ही पक्का आवास उपलब्ध है। जो कि स्थिति काफी दयनीय है।

इस प्रकार तालिका 1 एवं तालिका 2 से स्पष्ट है कि विभिन्न राज्यों में ग्रामीण आधारभूत संरचना के विकास में व्यापक अंतराल एवं असमानताऐं विद्यमान है।

निष्कर्ष एवं सुझाव –उपर्युक्त अध्ययन से स्पष्ट होता है कि भारत में ग्रामीण क्षेत्रों में सामाजिक आर्थिक संरचना के विस्तार में काफी प्रगति हुई है लेकिन साथ ही विभिन्न राज्यों में असमानताऐं भी बढी है छत्तीसगढ़, झारखण्ड, औडिसा राज्यों में 90 प्रतिशत से अधिक लोगों को शौचालय उपलब्ध नहीं है। मणिपुर में, मेद्यालय राज्यों में 70 प्रतिशत परिवारों को शुद्ध पेयजल उपलब्ध नहीं है और विद्युत के क्षेत्र में बिहार में 90 प्रतिशत, आसाम में 76 प्रतिशत एवं उत्तरप्रदेश में 72 प्रतिशत ग्रामीण परिवारों को बिजली उपलब्ध नहीं है जबकि आन्ध्रप्रदेश, केरल, पंजाब, हरियाणा और चण्डीगढ राज्यों में आधारभूत संरचना की स्थिति अच्छी है। भारत में ग्रामीण क्षेत्रों में विकास की काफी सम्भावनाऐं है। इन क्षेत्रों में आधारभूत संरचना के विकास में व्याप्त क्षेत्रीय असमनाताओं को एवं ग्रामीण निर्धनता को कम किया जा सकता है तथा कृषि उत्पादन लघु एवं बडे उद्योगों का विस्तार, रोजगार के अवसर और ग्रामीण जनता के जीवन स्तर में सुधार सम्भव है इसके लिये निम्नलिखित सुझाव है–

1. विभिन्न सरकारी योजनाओं में मुख्यत: ग्रामीण क्षेत्रों में पेयजल आपुर्ति, स्वच्छता, विद्युत एवं आवास को सर्वोच्च प्राथमिकता दी जाने की आवश्यकता है।
2. व्याप्त असमानताओं को कम करने के लिए सार्वजनिक एवं निजी निवेश की भागीदारी तथा स्थानीय निकाय को प्रर्याप्त फंड की आवश्यकता है, ताकि ग्रामीण क्षेत्रों के विकास को गति मिल सके।
3. ग्रामीण क्षेत्र में बिजली पूर्ति बढ़ाने में निजीकरण पर जोर दिया जाये एवं ग्रामीण विद्युतीकरण की परिभाषा में संशोधन की आवश्यकता है। क्योंकि इस परिभाषा के अनुसार कई गांव विद्युतीकृत की श्रेणी में आ जाते है, लेकिन कई परिवार विद्युत से वंचित रह जाते है।
4. विभिन्न राज्यों में जिला स्तर पर क्षेत्रीय योजनाओं और नीतियों का सही निर्धारण हो ताकि उचित ढंग से क्रियान्वित किया जा सके।
5. ग्रामीण वित्तीय बाजार एवं विकेन्द्रीकरण को बढ़ावा दिया जाये।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. वनमाली, एस. एण्ड इस्लाम वाई. 1995, 'रूरल सर्विस', 'रूरल इन्फ्रास्ट्रक्चर एण्ड रिजनल डेवलेपमेन्ट इन इण्डिया' द ज्योग्राफिकल जरनल 161 (2) : 149–166
2. भाटिया, एम.एस., 1999 : 'रूरल इन्फ्रास्ट्रक्चर एण्ड ग्रोथ इन एग्रीकल्चर' इकोनोमिक एण्ड पोलिटिकल वीकली 34 (3) : 43–48
3. केशब दास 2001 : 'इश्यू इन प्रमोटिंग 'रूरल इन्फ्रास्ट्रक्चर इन इण्डिया', गुजरात इन्स्टीट्यूट ऑफ डवलपमेन्ट रिचर्स, अमदाबाद, इण्डिया
4. महाजन वी 2007 : 'फाईनेसिंग ऑफ रूरल इन्फ्रास्ट्रक्चर' 'रूरल इन्फ्रास्ट्रक्चर रिपोर्ट, इण्डिया 2007
5. सतीश पी., 2007 : 'रूरल इन्फ्रास्ट्रक्चर एण्ड ग्रोथ : एन ओवरव्यू' इण्डियन जरनल ऑफ एग्रीकल्चर इकोनिमिक, 62 (1) : 32–51
6. बुरागोहिन, तरूज्योति, 2012 : 'इम्पेक्ट ऑफ सोलर इनर्जी इन रूरल डवेलपमेंन्ट इन इण्डिया' इन्टरनेशल जरनल ऑफ इनवायरमेंटल साइंस एण्ड डेवेलपमेन्ट 3 (4) 34–38
7. प्रो. त्रिपाठी, आर.के. एण्ड पाण्डे, 2012 :'रूरल इन्फ्रास्ट्रक्चर डेवेलपमेन्ट स्टेटस इन उत्तरप्रदेश' जरनल ऑफ शोध संचयन 3 (2) : 1–4

website -

1. www.indianeconomic.com
2. www.indiabudjet.nic.in
3. www.wrmin.nic.in
4. www.sage.com

तालिका 1 (अगले पृष्ठ पर देखें)

भारत में ग्रामीण आधारभूत संरचना की स्थिति (2001-2011)

तालिका 1

क्र.सं.	राज्य	शौचालय युक्त परिवारों का प्रतिशत		पेयजल युक्त परिवारों का प्रतिशत		विद्युतीकृत परिवारों का प्रतिशत		पक्के आवास युक्त परिवारों का प्रतिशत	
		2001	2011	2001	2011	2001	2011	2001	2011
1.	आन्ध्रपदेश	18.1	32.2	76.9	86.6	59.7	89.7	47.0	66.0
2.	अरूणाचल प्रदेश	47.3	52.7	73.7	74.3	44.5	55.5	1304	11.6
3.	आसाम	59.5	59.6	56.8	68.3	16.5	28.4	14.2	21.1
4.	बिहार	14.0	17.6	86.1	93.9	5.1	10.4	37.2	45.0
5.	छत्तीसगढ़	5.2	14.5	66.1	84.8	46.1	70.0	17.0	21.1
6.	गोवा	48.2	70.9	58.3	78.4	92.4	95.6	60.6	77.6
7.	गुजरात	21.7	33.0	76.9	84.9	72.1	85.0	51.0	61.7
8.	हरियाणा	28.7	56.1	81.2	93.0	78.5	87.2	58.2	70.9
9.	हिमाचल प्रदेश	27.8	66.6	87.6	93.2	94.5	96.2	61.8	75.0
10.	जम्मू कश्मीर	41.8	38.6	54.9	70.1	74.8	80.7	45.6	54.3
11.	झारखण्ड	6.5	7.6	35.5	54.3	10.9	32.3	19.4	26.0
12.	कर्नाटक	17.5	28.4	80.5	84.4	72.2	86.7	42.6	55.1
13.	केरल	81.4	93.2	16.8	28.3	65.5	92.1	64.6	79.2
14.	मध्यप्रदेश	8.9	13.1	61.5	73.1	62.3	58.3	31.2	33.4
15.	महाराष्ट्र	18.2	38.0	68.4	73.2	65.2	73.8	40.3	53.4
16.	मणिपुर	77.4	86.0	29.4	37.5	52.5	61.2	4.8	6.8
17.	मेघालय	40.0	53.9	29.4	35.1	30.3	51.6	14.6	21.5
18.	मेजोरम	79.8	84.6	23.8	43.4	44.1	68.8	32.4	43.3
19.	नागालैण्ड	64.7	69.2	47.6	54.6	56.9	75.2	9.4	11.8
20.	औडिसा	7.7	14.1	62.9	74.4	19.4	35.6	21.8	36.7
21.	पंजाब	41.0	70.4	96.9	96.7	89.5	95.5	83.3	85.8
22.	राजस्थान	14.6	19.6	60.5	72.8	44.0	58.3	57.1	64.8
23.	सिक्किम	59.4	84.1	67.0	82.7	75.0	90.2	31.8	33.2
24.	तमिलनाडू	14.4	23.2	85.3	92.2	71.2	90.8	47.3	60.3
25.	त्रिपुरा	77.9	81.5	45.0	58.1	31.8	59.5	4.0	9.3
26.	उत्तरप्रदेश	19.1	21.8	85.5	94.3	19.8	23.8	46.1	59.2
27.	उत्तराखण्ड	31.6	54.1	83.0	89.5	50.3	83.1	85.1	89.6
28.	पं. बंगाल	26.9	46.7	86.9	91.4	20.3	40.3	24.9	36.0
29.	अण्डमान निकोबार	42.3	60.2	97.8	78.2	68.1	79.4	19.3	36.2
30.	चंडीगड़	68.5	88.0	99.9	98.7	97.4	97.3	88.7	95.8
31.	दादर व नगर हवेली	17.3	26.5	68.5	84.3	82.6	91.7	33.7	39.0
32.	दीव दमन	32.0	51.4	94.9	97.8	97.5	98.3	91.0	94.6
33.	दिल्ली	62.9	76.3	90.1	87.9	85.5	97.8	91.5	93.6
34.	लक्ष्यद्वीप	93.1	98.1	4.6	31.2	99.7	99.8	93.9	95.0
35.	पण्डूचेरी	21.4	39.0	96.6	99.6	81.0	95.8	37.5	58.8
	भारत	**22.8**	**30.7**	**73.2**	**82.7**	**43.5**	**55.3**	**41.1**	**51.4**

* स्त्रोत-Census of India 2001, 2011 (R.G.I. New Delhi)

****

प्राचीन भारतीय परराज्य सम्बन्ध में षाड्गुण्यमंत्र (मूलमंत्र) की उपयोगिता – वर्तमान सन्दर्भ में

डॉ. जे.के. संत *

प्रस्तावना – प्राचीन भारतीय रातशास्त्रियों ने राज्य का **षाड्गुण्यमंत्र** को मूलमंत्र माना है। मनु ने यह मंत्र छ: प्रकार का बतलाया है। इसीलिये इसे षाड्गुण्यमंत्र कहते है। प्राचीन भारत के प्राय: सभी आचार्यो ने यह मंत्र छ: प्रकार का बतलाया है। महाभारत में षाड्गुण्यमंत्र का गुणगान किया गया है। शांतिपर्व में भीष्म राजा युधिष्ठिर को उपदेश देते हुये बताते हैं कि षाड्गुण्यमंत्र त्रिवर्ग तथा परमत्रिवर्ग को राजा जान लेता है, वही इस सम्पूर्ण पृथ्वी का भोग करता है। कौटिल्य एवं शुक्र ने भी मंत्र को षाड्गुणयुक्त माना है।[1] इस प्रकार मनु के षाड्गुण्यमंत्र का अनुमोदन परम्परागत आधार पर प्राचीन भारतीय राजशास्त्र के प्रमुख आचार्यों ने ज्यों का त्यों उसी रुप में किया है। धर्म शास्त्रकारों ने षाड्गुण्यमंत्र के छ: गुणों को संधि, विग्रह, यान, आसन, द्वैधीभाव और संश्रय के नामों से सम्बोधित किया है। इस संदर्भ में मनु का कथन है कि उपर्युक्त उपायों को प्रयोग में लाते समय राजा को संधि, विग्रह, यान, आसन, द्वैधीभाव और संश्रय इन छ: गुणों का सर्वदा चिन्तन करना चाहिये।[2] महाभारतकार ने भी इन गुणों का वर्णन किया है।[3] कौटिल्य कतिपय आचार्यो का मत देते हुये बतलाते है कि आचार्यो के मतानुसार संधि, विग्रह, आसन, यान, संश्रय, और द्वैधीभाव छ: गुण षाड्गुण्यमंत्र के होते हैं।[4] आचार्य वातव्याधि का मत है कि गुण केवल दो ही होते हैं।[5] संधि और विग्रह में ही समस्त चार गुणें का अन्तर्भाव निहित है।[6] परन्तु कौटिल्य आचार्य वातव्याधि के इस मत से सहमत नहीं हैं। वह संधि, विग्रह, यान, आसन, संश्रय और द्वैधीभाव इन छ: गुणों को मानते है।[7] शुक्र ने भी छ: गुणों को माना है।[8] इन गुणों में से किस समय किस गुण का आश्रय लेना चाहिये, इस सन्दर्भ में मानवधर्मशास्त्रकार की व्यवस्था इस प्रकार है – आसन, यान, संधि, विग्रह, द्वैध और संश्रय इन गुणों में से अवसरानुसार हानि–लाभ को देखकर जब जिस गुण की आवश्यकता हो उसका आश्रय लेना चाहिये।[9]

1. **संधि –** मानवधर्मशास्त्रकार ने संधि की परिभाषा नहीं की है, किन्तु इसके रुपों का विवेचन किया है, परन्तु अन्य विचारकों ने संधि की परिभाषा विशेष रुप से की है और उन परिस्थितियों का उल्लेख किया है जिनमें संधि गुण का आश्रय लेना होता है। मनु इस विषय में भी प्राय: मौन हैं। फिर भी उन्होंने यह बताया है कि राजा को कार्य देखकर इनको प्रयोग में लाना चाहिये। साथ ही कुछ परिस्थितियों का भी संकेत उन्होंने किया है। कौटिल्य ने अर्थशास्त्र में संधि की परिभाषा इस प्रकार की है – प्रण के आधार पर दो राजाओं में जो परस्पर बन्धन हो जाता है, संधि कहलाता है।[10] शुक्र ने संधि की परिभाषा इस प्रकार की है – जिस क्रिया के द्वारा बलवान शत्रु राजा मित्र बन जाय वह क्रिया संधि कहलाती है। सोमदेवसूरि ने संधि की परिभाषा में कौटिल्य के शब्दों का अनुकरण किया है। कौटिल्य ने शम: समाधि, संधि, तीन पर्यायवाची नाम संधि के बताये हैं। अन्यत्र कौटिल्य ने संधि शब्द की व्याख्या में लिखा है – राज्ञं विश्वासोपगम: संधि। इसका तात्पर्य यह होता है कि संधि करने दोनों राष्ट्र परस्पर का हित साधन करने में एक दूसरे की सहायता करेंगे ही ऐसा निश्चय कर ले। इस प्रकार संधि की परिभाषा में परस्पर सहायता और विश्वास को महत्व प्रदान किया जाता है, जो मित्रता के आवश्यक तत्व होते हैं। वर्तमान परिस्थितियों को देखते हुये ऐसा लग रहा है मानो प्राचीन भारतीय परराज्य सम्बन्धों का अनुकरण किया जा रहा है। जैसे– विकासशील राष्ट्रों (दुर्बल राजा) के द्वारा विकसित राष्ट्रों(बलवान राजा) के साथ संधि करना समझौता करना आदि। मानवधर्मशास्त्रकार ने संधि के दो भेद बताये हैं –

1. **समानयानकर्मा संधि –** इस विषय में मनु का आशय स्पष्ट नहीं है। किन्तु इसमें प्रयुक्त यान शब्द के माध्यम से इसे इस प्रकार कहा जा सकता है– तात्कालिक या भविष्य के लाभ की इच्छा से किसी दूसरे राजा से मिलकर शत्रु पक्ष पर एक साथ आक्रमण कर देना समानयानकर्मा संधि है।
2. **असमानयानकर्मा संधि –** समानयानकर्मा संधि के विपरीत जब उक्त उद्देश्य से दो राता परस्पर संधि करते हैं कि एक मित्र राजा को एक ओर और दूसरे को दूसरी ओर वाले शत्रु पर आक्रमण करना है तो इस प्रकार की संधि असमानयानकर्मा संधि मानी जाती है।[11]

संधि की परिस्थितियॉं – शुक्र ने संधि किन परिस्थितियों में की जानी चाहिये इस विषय पर अपना मत प्रकट किया है। वह संधि के महत्व का वर्णन करते हुये कहते है कि राजाओं को चाहिये कि वह युद्ध से सदैव बचते रहें। जब युद्ध के अतिरिक्त कोई दूसरा उपाय रह ही न जाये, तब विवश होकर युद्ध करना चाहिये।[12] बलवान के साथ युद्ध करना चाहिये, इसका तो कोई उदाहरण ही नहीं है। प्रचण्ड वायु की ओर कभी मेघ जाता हुआ नहीं देखा गया है। संधि तो अनार्य राजा से भी कर लेनी चाहिये। जब संधि हो जाती है तो उसके अन्य शत्रु नष्ट हो जाते है। जब बॉसों का समूह बॅध जाता है और कांटों से घिर जाता है तो उसे कोई काट नहीं सकता है। जिस प्रकार संघातकारी कांटों से युक्त बॉस कभी काटा नहीं जा सकता उसी प्रकार अनार्य राजा से भी मिल जाने पर अन्य शत्रु राजा को उखाड़ नहीं पाते। जब किसी राजा पर बलवान शत्रु आक्रमण कर दे और उस समय कोई अन्य उपाय दिखलायी न पडे तो विवादग्रस्त राजा को अपने शत्रु से संधि कर लेनी चाहिये और शत्रु के विपरीत समय की प्रतीक्षा करते रहना चाहिये। संधि कर लेना ही शत्रु के लिये एक भेंट मानी गई है। समय पर संधि कर लेना चाहिये ऐसा शुक्र का मत है।[13] शुक्र ने इस विषय का भी उल्लेख किया है कि जब एक सबल राजा निर्बल राजा पर आक्रमण कर देता है और वह निर्मल राजा इस प्रकार संकट में पड़कर कन्या,

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति शास्त्र) शासकीय तुलसी महाविद्यालय, अनूपपुर (म.प्र.) भारत

भूमि, अथवा धन का उपहार उस सबल राजा को देकर संधि करने पर विवश हो जाता है और संधि कर लेता है, तो इस प्रकार की संधि स्थायी रहे यह सर्वांश सत्य नहीं है। राजा को सदैव सचेत और सचेष्ट रहना चाहिये क्योंकि विवश होकर की गई संधि वास्तविक संधि नहीं होती। ऐसी संधि केवल समय टालने के लिये की जाती है। इस विषय में शुक्र का कथन है कि जो बुद्धिमान राजा होता है वह संधि कर लेने पर भी विश्वास नहीं करता है। इन्द्र ने वृत्तासुर से वैर न करने की संधि कर के भी उसे मार गिराया था। यह पूर्वकालीन कथा प्रसिद्ध है।[14] इस प्रकार शुक्र समयानुसार संधि करने पर विष्वास करते हैं। इस प्रकार शुक्र ने विशेष चातुर्यपूर्ण ढंग से मनु के विचारों का ही अनुमोदन किया है और संधि के पश्चात भी शत्रु से सजग रहने की सलाह दी है। कामन्दक ने भी उस परिस्थिति का वर्णन किया है जिसके वशीभूत होकर राजा को संधि करनी पड़ती है। कामन्दक का कथन है कि जब राजा किसी दूसरे बलवान शत्रु राजा से आक्रान्त हो जाये और अपनी रक्षा का कोई उपाय न दिखलायी पड़े तो ऐसी अवस्था में विपद्ग्रस्त राजा को समय व्यतीत करने के लिये संधि कर लेनी चाहिये।[15] कामन्दक की उक्ति है कि संधि गुण के विशेषज्ञों संधि के सोलह प्रकार बताये हैं। इसमें उपहार संधि को वह सब संधियों में श्रेष्ठ मानते हैं। उनका मत है कि आक्रमक करने वाला वली शत्रु बिना लोभ निवृत्ति के लौटता ही नहीं। इसलिये ऐसे शत्रु राजा से उपहार के अतिरिक्त अन्य संधि की ही नहीं जा सकती। इस संदर्भ में सोमदेवसूरि की मान्यता है कि – यदि कोई राजा अपने शत्रु राजा से कमजोर है और यह समझता है कि संधि कर लेने पर शत्रु संधि के प्रणों का उल्लंधन नहीं करेगा ऐसी परिस्थिति में उसे संधि के गुण का आश्रय लेना उचित है।[16] इस प्रकार सोमदेव ने कौटिल्य आदि द्वारा की गई संधि की परिस्थितियों में वृद्धि की है। उन्होने इतना प्रतिबंध और लगाया है कि यदि दुर्बल राजा यह समझता है कि उसका शत्रु संधि की मर्यादा का अतिक्रमण नहीं करेगा तभी संधि करना उचित होगा। इस प्रकार हम देखते हैं कि मनु द्वारा निर्दिष्ट संधि एवं उसकी परिस्थितियों का अनुमोदन थोड़ी बहुत अपनी सूझ–बूझ के साथ बढ़ाकर अन्य राजनैतिक विचारकों ने भी किया है।

2. **विग्रह –** युद्ध आदि द्वारा विरोध करने की प्रक्रिया को विग्रह कहते हैं। मनु ने षाड्गुण्यमंत्र का एक गुण विग्रह भी माना है। उन्होंने विग्रह की परिभाषा नहीं की है। अर्थशास्त्र में कौटिल्य ने विग्रह की परिभाषा इस प्रकार की है– परस्पर एक दूसरे के अपकार में संलग्न हो जाना विग्रह कहलाता है।[17] शुक्र के मतानुसार जिस क्रिया के द्वारा पीड़ित किया गया शत्रु अपने अधीन हो जाता है, उस क्रिया को विग्रह कहते हैं।[18] अत: यह कहना उपयुक्त है कि संधि विच्छेद को विग्रह कहते हैं। जब युद्ध आदि नीतियों द्वारा शत्रु पक्ष को हानि पहुॅचाई जाय तो उसे विग्रह की संज्ञा प्रदान की जाती है। वर्तमान परिस्थितियों को देखते हुये ऐसा लग रहा है मानो प्राचीन भारतीय परराज्य सम्बन्धों का अनुकरण किया जा रहा है। जैसे– पाकिस्तान एवं चीन के द्वारा भारत पर आक्रमण करना, अन्य कई देशों के द्वारा एक दूसरे पर आक्रमण करना आदि...। मनु विग्रह के दो भेद किये हैं –

1. **स्वहित विग्रह –** समय व असमय पर शत्रु को आपत्ति में पड़े हुये देखकर स्वयं तो आक्रमण किया जाय वह स्वहित विग्रह माना जाता है।

2. **मित्रहित विग्रह –** जब मित्र को किसी दूसरे राजा के द्वारा हानि पहुॅचाई जा रही हो, उस समय मित्र नरेश की सहायता व रक्षा के लिये किया गया कार्य मित्रहित विग्रह कहा जाता है।[19]

परिस्थितियॉ – विग्रह काल का उल्लेख करते हुये मनु ने कहा है कि तब राजा अपनी सेना आदि को हृष्ट–पुष्ट तथा शत्रु सेना को कमजोर समझे तो उससे विग्रह अर्थात उस पर चढ़ाई कर दे।[20] कौटिल्य ने विग्रह की परिस्थितियों का वर्णन इस प्रकार किया है – यदि राजा अपने को शत्रु से बलवान समझे तो विग्रह को अपनाना चाहिये।[21] यदि विजयाकांक्षी राजा यह देखे कि उसके राज्य में प्राय: लोग शस्त्र चलाने में समर्थ और संगठित हैं तथा नदी, पर्वत, वन और दुर्गों से उसका राज्य सम्पन्न है, उसमें प्रवेश का केवल एकही मार्ग है, वह शत्रु के आक्रमण का उत्तर देने में समर्थ है, वह अपने राज्य के सीमा के दृढ़ दुर्ग में स्थित होकर शत्रु के कार्यो का नाश कर सकता है, व्यसन और कष्टों से शत्रु का सारा उत्साह नष्ट हो रहा है, इस समय उसको वश में किया जा सकता है, यदि युद्ध छिड़ गया तो वह शत्रु के देश का कुछ भाग दबा सकेगा, ऐसे परिस्थितियों में उस राजा को विग्रह का आश्रय लेना चाहिये।[22] इस प्रकार स्पष्ट है कि कौटिल्य ने मनु के संकेत का ही विस्तृत विवेचन किया है। एतदर्थ शुक्र की यह मान्यता है कि जिस शत्रु राजा की सेना और मित्र निर्बल पड़ चुके हों, वह किसी दुर्ग में बन्द होकर बैठा हो, दो शत्रुओं से घिरा हो अथवा भोग विलास में अत्यन्त व्यस्त हो, जो प्रजा के द्रव्य का अपहरण कर रहा हो, जिसके मंत्रियों और सेना में भेद हो, ऐसे शत्रु पर आक्रमण कर उसको वश में कर लेना चाहिये। इस कार्य को ही विग्रह कहते हैं। इसके पूर्व की दिशा को कलह कहते हैं।[23] इस प्रकार विग्रह की परिस्थिति के विषय में शुक्र भी मनु का सविस्तार समर्थन करते हैं। सोमदेवसूरि के कथन से भी मनु का समर्थन होता है। सोमदेव जी का कथन है यदि राजा यह समझे कि वह शत्रु की अपेक्षा अधिक बलिष्ठ है, और उसकी सेना में किसी प्रकार का क्षोभ नहीं है, ऐसे परिस्थितियों में उसे विग्रह गुण का आश्रय लेना उचित है।[24]

3. **यान –** यान का तात्पर्य शत्रु पर आक्रमण करना है। मनु ने यान गुण की परिभाषा देने की प्रयास नहीं किया है। वर्तमान परिस्थितियों को देखते हुये ऐसा लग रहा है मानो प्राचीन भारतीय परराज्य सम्बन्धों का अनुकरण किया जा रहा है। जैसे– पाकिस्तान एवं चीन के द्वारा भारत पर आक्रमण करना आदि...। किन्तु इसके दो भेद बताये हैं।

1. **एकांकिन यान –** इसके अन्तर्गत विजयाकांक्षी राजा अकेले ही (बिना किसी मित्र की सहायता लिये हुये) कार्यवश शत्रु पर आक्रमण कर देता है।

2. **मित्र संहतयान –** यह यान का दूसरा प्रकार है, इसमें राजा स्वयं समर्थ न होने पर मित्र के साथ शत्रु पर आक्रमण करता है।[25] कौटिल्य यान की व्याख्या करते हुये यह व्यवस्था देते हैं – किसी राजा पर आक्रमण करने का नाम यान है।[26] शत्रु के कार्य का नाश यान के द्वारा ही सम्भव है। जब राजा अपनी रक्षा का पूर्ण प्रबन्ध कर ले, तब ऐसी परिस्थिति में उसे यान का आश्रय लेना चाहिये। शुक्र के मतानुसार अपने इच्छित फल, विजय–प्राप्ति की कामना से, शत्रु के नाश के निमित्त जो प्रस्थान (गमन) किया जाता है, उसे यान कहते हैं। शुक्र ने इसके पॉच भेद किये हैं– विग्रहयान, संधाययान, सम्भूययान, प्रसंगयान और उपेक्षायान। कामन्दक ने भी इन भेदों को मान्यता प्रदान की है।[27]

4. **आसन –** आसन का शाब्दिक अर्थ होता है बैठना। राजशास्त्र में इसे इस प्रकार परिभाषित कर सकते हैं–अपने अवसर की ताक में मौन बैठे रहना आसन कहलाता है। मनु ने इस विषय में कहा है–जब राजा अपनी सेना, वाहन एवं अमात्य आदि शक्तियों से अपने को अत्यन्त क्षीण (दुर्बल) समझे तब यत्नपूर्वक धीरे–धीरे शत्रु को शान्त करता हुआ आसन गुण को ग्रहण करे।[28] कामन्दक ने आसन गुण की परिभाषा करते हुये अपना मत इस प्रकार

व्यक्त किया है–युद्ध के कारण जब शत्रु और विजयाभिलाषी दोनों की सामर्थ्य परस्पर नष्ट होती हो तो उसको नष्ट न करके मौन बैठे रहना आसन कहलाता है।[29] वर्तमान परिस्थितियों को देखते हुये ऐसा लग रहा है मानो प्राचीन भारतीय परराज्य सम्बन्धों का अनुकरण किया जा रहा है। जैसे– पाकिस्तान के द्वारा भारत पर अचानक आक्रमण करना एवं अन्य कई देशों के द्वारा एक दूसरे पर अचानक आक्रमण करना आदि...। धर्मशास्त्रकारों ने आसन के दो भेद बतलाये हैं–

1. **शक्तिहीन आसन** – यह वह आसन है जिसमें राजा अपने पूर्व कर्म के कारण क्षीण होकर पुन: शक्ति संचय के लिये चुपचाप बैठ जाता है।

2. **मित्रानुरोध आसन –** इसमें मित्र के अनुरोध पर राजा मौन बैठ जाता है।[30]

परिस्थितियॉ – मनु के अनुसार अपनी दुर्बलता आसन गुण अपनाने के लिये उपर्युक्त समय है। कौटिल्य ने किसी समय या परिस्थिति की प्रतीक्षा में मौन बैठे रहने को आसन कहा है।[31] यदि राजा के विचार में यह बात आये कि शत्रु इतना समर्थ नहीं है कि वह मेरे कार्यों में हानि पहुॅचा सके और न मैं ही इतना समर्थ रखता हूॅ कि मैं शत्रु के कार्यों को हानि पहुॅचा सकता हूॅ, यद्यपि शत्रु राजा पर व्यसन है परन्तु कलह में कुत्ता और शूकर के कलह के भॉति कोई फल नहीं निकलेगा, यदि मै अपना कार्य करता रहा तो वृद्धि को सतत प्राप्त कर लूॅगा, ऐसी परिस्थितियों में राजा को चुपचाप बैठकर आसन का अवलम्बन करना चाहिये, ऐसा कौटिल्य का मत है। शुक्र के अनुसार जिस स्थान (समय) पर बैठने से अपनी रक्षा और शत्रु का नाश सम्भव हो, उस स्थान पर बैठने (मौन होने) को आसन कहते हैं।[32] इसी प्रकार सोमदेवसूरि ने आसन गुण की परिभाषा में लिखा है कि किसी समय या परिस्थिति की प्रतिक्षा में चुपचाप बैठे रहने को आसन कहते हैं।[33] इससे स्पष्ट है कि इन विचारकों ने भी मनु के मत का पोषण किया है।

5. **संश्रय –** इसका शाब्दिक अर्थ होता है आश्रय ग्रहण करना। मनु ने इसे संश्रय गुण के नाम से सम्बोधित किया है। इसकी परिस्थिति की परिभाषा में मनु का कथन है–जब राजा शत्रु द्वारा अपने को पराजित होने योग्य समझे तब शीघ्र ही बलवान राजा का संश्रय (आश्रय) ग्रहण करे। यहॉ बलवान से तात्पर्य है जो उसकी रक्षा कर सके तथा शत्रु की सेना का निग्रह कर सके। मनु ने संश्रय गुण के दो प्रकार बताये हैं– शत्रु से पीड़ित होते हुये आत्म रक्षार्थ किसी बलवान राजा का आश्रय लेना प्रथम प्रकार का संश्रय कहा जाता है और भविष्य में शत्रु से पीड़ित होने की आषंकावष अपनी रक्षा के लिये किसी बलवान राजा का आश्रय लेना द्वितीय प्रकार का संश्रय कहलाता है।[34] उपर्युक्त मनु 7/174 की भॉति कौटिल्य ने भी आश्रय को संश्रय नाम से सम्बोधित किया है। इस गुण की व्याख्या में वह कहते हैं कि अपने आपको शत्रु अथवा बलवान राजा को समर्पण कर देना संश्रय कहलाता है।[35] ।वर्तमान परिस्थितियों को देखते हुये ऐसा लग रहा है मानो प्राचीन भारतीय परराज्य सम्बन्धों का अनुकरण किया जा रहा है। जैस–आतांकवादियों को पकडे जाने पर शत्रु राष्ट्र के संश्रय में आना आदि।

परिस्थितियॉ – मनु की भॉति संश्रय की परिस्थिति का उल्लेख करते हुये कौटिल्य का कथन है कि जब राजा यह समझ ले कि में शत्रु के कार्यों में हानि नहीं पहुॅचा सकता ओर न अपने कार्यों की ही रक्षा करने में समर्थ हूॅ, तो ऐसी स्थिति में बलवान का आश्रय लेना चाहिये।[36] शुक्रनीति में संश्रय गुण को आश्रय गुण कहा गया है। इस सन्दर्भ में शुक्र का मत है कि जिन मित्रों से सुरक्षित होकर दुर्बल राजा भी बलवान हो जाये ऐसे बलवान राजा का अवलम्बन लेना आश्रय कहा जाता है।[37] जब प्रबल शत्रु द्वारा किसी राजा के राज्य का मूलोच्छेद कर दिया गया हो और राजा को कोई दूसरा उपाय न सूझे तो इस परिस्थिति में उस राजा को किसी कुलीन आर्य, सत्यवादी और बलवान राजा का आश्रय ग्रहण करना चाहिये। जिन्हें अपनी भूमि का कुछ भाग दिया गया हो, उसके आश्रय में चले जाने को आश्रय कहते है। सोमदेवसूरि ने संश्रय की परिभाषा व परिस्थिति के उल्लेख में कौटिल्य के शब्दों का सहारा लिया है और सशक्त राजा के आश्रय का समर्थन करते हुये लिखा है कि सशक्त से भयभीत होकर अशक्त राजा का आश्रय लेना उसी प्रकार व्यर्थ है, जिस प्रकार हाथी से भयभीत होकर एरण्ड द्रुम पर चढ़ जाना या आश्रय लेना व्यर्थ होता है।[38] इन विचारों से भी मनु के विचारों की ही पुष्टि होती है।

6. **द्वैधी भाव –** किसी से संधि ओर किसी से विग्रह एक साथ करने की क्रिया को द्वैधीभाव कहते हैं। द्वैधीभाव गुण के समय और परिस्थिति को उल्लेख मानवधर्मशास्त्र में इस प्रकार मिलता है– जब राजा शत्रु को अति बलवान पाये तो ऐसी परिस्थिति में उसे अपनी सेना को दो भागों में विभक्त कर अपना कार्य सिद्ध करना चाहिये। अर्थात वह एक स्थान पर युद्ध करे और दूसरे स्थान पर शान्त रहे। यहॉ सेना को द्विभाग में करने को द्वैधीभाव कहा गया है। याज्ञवल्क्य ने भी अपने सेना को दो भागों में बॉटने को द्वैधीभाव माना है।[39] इसके तर्कसंगत स्पष्ट विवेचन के लिये कौटिल्य की युक्ति का सहारा लेना उचित है। कौटिल्य का कथन है कि एक राजा से संधि करना और दूसरे से विग्रह करना द्वैधीभाव गुण है।[40] एक के साथ संधि और दूसरे के साथ विग्रह करने से मैं अपने कार्य को पूरा कर सकूॅगा और शत्रु के कार्यों को नष्ट कर सकूॅगा–जब राजा ऐसा पूर्ण रुप से समझ ले तो उसे द्वैधीभाव का अवलम्बन करके अपनी वृद्धि करनी चाहिये। कौटिल्य का यह निर्देष है। सोमदेवसूरि ने भी कौटिल्य के मत का प्रतिपादन किया है। इस प्रकार हम देखते हैं कि यहॉ मनु, याज्ञवल्क्य एवं शुक्र के विचार एकमत हैं और कौटिल्य तथा सोमदेवसूरि के एक जैसे हैं। कौटिल्य के इस विचार में विशेष स्पष्टता एवं वैज्ञानिकता दृष्टिगत हो रही है। किन्तु परम्परागत मौलिकता तो मनु की ही है। इस प्रकार अन्तर्राज्यीन सम्बन्ध एवं पर– राष्ट्रनीति के संचालन में मनु ने जिस षाड्गुण्य मंत्र का प्रयोग परम आवश्यक माना है, उसकी उपयोगिता को कौटिल्य आदि विचारकों ने एकमत से स्वीकार किया है। जिसका उल्लेख पी0 वी0 काणे एवं यू0 एन0 के ग्रन्थों में पाया जाता है।[41] वर्तमान परिस्थितियों को देखते हुये ऐसा लग रहा है मानो प्राचीन भारतीय परराज्य सम्बन्धों का अनुकरण किया जा रहा है। जैसे– पाकिस्तान एवं चीन के द्वारा भारत के साथ एक तरफ संधि, वार्ता करना और दूसरे तरफ पर विग्रह, आक्रमण करना आदि। अत: पर–राष्ट्र सम्बन्ध संचालन में इन मंत्रों की उपयोगिता निर्विवाद है।

निष्कर्ष– इस प्रकार हम देखते है कि कौटिल्य द्वारा बताई गयी उपर्युक्त नीतियों का प्रमुख उद्देश्य शत्रु को पराजित करना और अपनी शक्ति में बढ़ोतरी करना है, वह कहता है कि काल और परिस्थितियों के अनुकूल जो नीति राज्य के भलाई में योगदान करे, वह नीति उस समय श्रेयष्कर होती है, इस प्रकार तो राजा उपर्युक्त छ: नीतियों का ठीक–ठाक समयानुसार प्रयोग करता है, वही अपनी आकांक्षाओं की पूर्ति कर पाता है। इस प्रकार वैदेशिक नीति के सफल संचालन क लिये कौटिल्य छ: नीतियों के अलावा चार उपायों का भी वर्णन करता है, ये उपाय हैं– साम, दाम, दण्ड और भेद इन उपायों का मुख्य उद्देष्य शत्रु को अपने वश में करना है। जो ऐसा प्रतीत होता है मानों आज भी प्राचीन परराज्य सम्बन्ध का निरुपण किया जा रहा है। वर्तमान समय में भी

अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों में यह देखा जा रहा है कि एक तरफ संधि, वार्ता होती है और दूसरी ओर सैनिकों का सर काट दिया जाता है, सीमा रेखा को पार किया जाता है, आतंकवादियों द्वारा हमला किया जाता है। ऐसा प्रतीत होता है मानो प्राचीन परराज्य सम्बन्धों में षाड्गुण्यमंत्र के छः गुणों संधि, विग्रह, यान, आसन, द्वैधीभाव और संश्रय का निरुपण किया जा रहा है। वर्तमान अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों में सुधार लाने के लिये प्राचीन भारतीय परराज्य सम्बन्धों के षाड्गुण्यमंत्र के छः गुणों संधि, विग्रह, यान, आसन, द्वैधीभाव और संश्रय का अनुकरण देश के लिये ही नहीं बल्कि पूरे विश्व के लिये अनुकरणीय है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. षाड्गुण्यमेवैतदवस्थाभेदादिति कौटिल्यः। अर्थ0, 7/1, वार्ता 5
2. संधि चविग्रहं यानमासनमेव च।
   द्वैधीभावं संश्रयं च षड्गुणांष्चियेत्सदा।। मनु0, 7/160
3. षाड्गुण्यमिति यत्प्रेक्तं तन्निबोध युधिष्ठिर।
   सन्धानासनमित्येव यात्रासन्धामेव च ।। शांतिपर्व, 69/67
4. संधि विग्रहासनयान संश्रय द्वैधीभावाः षाड्गुण्यमित्याचार्या।। अर्थ0, 7/1, वार्ता 2
5. द्वैगुएयमिति वातव्याधिः। अर्थ0, 7/1, वार्ता 3
6. सन्धिविग्रहाभ्यां हि षाड्गुण्यं संपद्यंतेति।। अर्थ0, 7/1, वार्ता 4
7. षाड्गुण्यमेवैतदवस्थाभेदादिति कौटिल्यः। अर्थ0, 7/1, वार्ता 5
8. शुक्र0, 4/1065
9. मनु0, 7/161
10. तत्र प्रणवंधः संधिः।। अर्थ0, 7/1, वार्ता 6
11. कुल्लूकभट्ट, मनु0, 7/163
12. उपायान्तर नाषे तु ततो विग्रहमाचरेत। शुक्र0, 4/1085
13. शुक्र0, 4/1071
14. शुक्र0, 4/1079
15. वलीयासाभियुकतस्तु नृपोऽनन्य प्रतिक्रियः।
16. नीतिवाक्यामृत, समु0 29, वार्ता 50
17. अपकारों विग्रहः।। अर्थ0, 7/1, वार्ता 7
18. विकर्षितः सन्नाधीनो भवेच्छत्रुस्तु मेनवै।। शुक्र0, 4/1067
19. कुल्लूकभट्ट, मनु0, 7/164
20. मनु0, 7/171
21. अभ्युच्चीय मानोति गृहणीयात्।। अर्थ0, 7/1, वार्ता 13
22. अर्थ0, 7/1, वार्ता 48–52
23. ह्यन्यश्च कलहः स्मृतः।। शुक्र0, 4/1083
24. नीतिवाक्यामृत, समु0 29, वार्ता 51
25. मनु0, 7/165
26. अभ्युच्चयो यानम्।। अर्थ0, 7/1, वार्ता 9
27. कामन्दकीय0, 11/2
28. मनु0, 7/172
29. कामन्दकीय0, 11/12–13
30. मनु0, 7/176
31. उपेक्षाणामासनम्।। अर्थ0, 7/1, वार्ता 8
32. स्वरक्षणं शत्रु नाषोभवेत्स्थानात्तदासनम्।। शुक्र0, 4/1069
33. नीतिवाक्यामृत, समु0, 29, वार्ता 46
34. अर्थसम्पादनार्थ च पीड्यमानस्य शत्रुभिः।
    साधुशु व्यपदेशार्थ द्विविधः संश्रयः स्मृतः।। मनु, 7/168
35. परार्पणं संश्रयः।। अर्थ0, 7/1, वार्ता 10
36. अर्थ0, 7/1, वार्ता 60–61
37. यैर्गुप्तो बलवान्भूपाददुर्बलोऽपि सआश्रयः।। शुक्र0, 4/1069
38. नीतिवाक्यामृत, समु0, 29, वार्ता 56
39. द्वैधीभावः स्ववलस्य द्विधाकरणम्। मिताक्षरा, याज्ञ0, 1/346
40. संधि विग्रहोपदानं द्वैधीभाव।। अर्थ0, 7/1, वार्ता 11
41. हिस्ट्री ऑफ धर्मशास्त्र, पार्ट,2 पेज, 693, ए हिस्ट्री ऑफ इण्डियन पोलिटिकल आइडियाज, पेज, 181

****

लोकतंत्र का सुदृढ़ आधार-संसदीय प्रणाली

डॉ. जी. एस. ध्रुवे *

प्रस्तावना – संसद के माध्यम से संविधान के जो प्रावधान लागू हुए है, उनसे परिवर्तन की लहर के कारण अपेक्षाकृत रूप में चहूँमुखी विकास संभव हो सका है। यही विकास परिवर्तन के रूप में अंकित किया गया है। इस परिवर्तन में कुछ बातें जरूरी होती हैं, 'सामाजिक बदलाव लोगों के जीवन की भौतिक तथा आर्थिक स्थिति को उन्नत बना देता है। आधुनिक नवीन तकनीकी के संबंध में मानवीय दृष्टिकोण में तार्किकता, परानुभूति, गत्यात्मकता, नवीनता की चाह, अधिकाधिक भागीदारी तथा व्यापक संदृष्टि सरीखे गुणों के फलीभूत होने के लिए मनुष्य की केवल सोच ओर इसके नजरिये में ही बदलाव होना नितान्त अपरिहार्य होता है। इस तरह पता चलता है कि बदलाव के लिये जरूरी है – मानवीय दृष्टिकोण के प्रतिमान के साथ मूल्य व्यवस्था का आधुनिक होना। मानव क्षमता व गुण के अधिकतम उपयोग तथा विकास कार्यक्रमों में अधिकाधिक लोगों की भागीदारी के लिए सामाजिक संरचना में परिवर्तन, जो स्वतंत्रता समानता और भाई-चारे पर आधारित सामाजिक न्याय की स्थापना में सहायक हो, से बदलाव प्रक्रिया सकारात्मक रहती है।

वस्तुत: मौलिक अधिकारों की घोषणा तभी सार्थक हुई है, जब इनके परिवर्तन के लिये सक्रिय साधन उपलब्ध हुए है। अधिकारों का अस्तित्व ही उपचारों पर आधारित है और उपचार ही किसी अधिकार को यथार्थता प्रदान करता है। संसद उपचार करने की ही एक संस्था है। प्रदीप त्रिपाठी के अनुसार – 'इंग्लिश कॉमन लॉ का यह सर्वमान्य सिद्धांत है कि जहाँ विधिक अधिकार है, वहीं राज्य द्वारा विधिक उपचारों की व्यवस्था की जाती है। इंग्लैण्ड में इन अधिकारों को 'परमादेश' आदेशों के माध्यम से सुरक्षित किया गया है। अमेरिकी संविधान में नागरिकों के मूल अधिकारों की सुरक्षा के लिये कामन लॉ में प्रचलित रिटो को वहां की संवैधानिक व्यवस्था में स्वीकारोक्त प्रदान की गयी है। हमारे संविधान में मूल अधिकारों के अतिक्रमण पर उन्हें प्रवर्तित कराने के लिये संवैधानिक उपचार उपलब्ध कराये गये है। अनुच्छेद 32, जो संवैधानिक उपचार का अधिकार देता है, संविधान के भाग तीन में होने के कारण स्वयं एक मौलिक अधिकार है। अनुच्छेद 32 के अधीन उच्चतम न्यायालय और अनुच्छेद 226 के अधीन उच्च न्यायालयों द्वारा मूल अधिकारों के परिवर्तन की व्यवस्था की गयी है।'

डॉ. वसु ने कहा है कि 'संविधान में मूल अधिकारों की अमूर्त घोषणाऐं निरर्थक है, जब तक कि उन्हें प्रभावी करने के साधन न हो । सभी देशों के सांविधानिक अनुभव से यह प्रकट होता है कि इन अधिकारों की सिद्धांत का परीक्षण न्यायालयों में ही होता है। अधिकारों के अनुपालन को प्रवृत्त करने की न्यायालयों की शक्ति न्यायपालिका की निष्पक्षता और स्वतंत्रता पर ही नहीं, इस बात पर भी निर्भर करती है कि कार्यपालिका या अन्य प्राधिकारियों से अनुपालन कराने के लिये उनके पास कितने प्रभावी उपकरण है।'

संविधान के इन प्रावधानों के द्वारा परिवर्तन होना स्वाभाविक है। आजादी की प्राप्ति के बाद संसद के माध्यम से सांविधानिक प्रावधानों के द्वारा जो अधिकार नागरिकों को प्राप्त हुए है, वे विकास की सीढ़ियाँ बने है। राष्ट्रीय आन्दोलन के काल में ही विकास और लोगों को पुनर्वास से संबंधित चर्चाए होने लगी थी। विकास की गति में तीव्रता लाने के लिये सभी एकजुट थे। ध्यान यह भी रखा जा रहा था कि संसदीय प्रावधानों के द्वारा मिलने वाला लाभ मात्र कुछ लोगों तक ही सिमट कर न रह जाए, बल्कि उसे आम आदमी और प्रत्येक आदमी तक पहुँचना चाहिए, उसके लिए जो रणनीति तैयार की गयी थी, उसको चार दिशाओं की तरफ लक्षित किया गया था। प्रथम अर्थव्यवस्था का आयातों और विदेशी सहायता पर आश्रित न होकर स्वतंत्र विकास अर्थात 'आत्मनिर्भर वृद्धि'। द्वितीय बचत और निवेश की दर बढ़ाने के लिये संसाधनों को गतिशील बनाना और पूंजी संचयन अर्थात 'उच्च वृद्धि दर'। तृतीय क्षेत्रीय और सामाजिक असमानता में कमी करना, यानि 'गुणवत्ता का लक्ष्य'। चतुर्थ, जीवन निर्वाह और जीने के लिये न्यूनतम सुविधाएं उपलब्ध कराना, जिसका अर्थ है 'समानता और न्याय'।

इस औद्योगिक नीति के अंतर्गत हथियार और गोला-बारूद, परमाणु उर्जा और रेलवे के निर्माण इत्यादि के लिये सार्वजनिक क्षेत्र के एकाधिकार की स्थापना पर जोर दिया गया है। कोयला, लोहा और इस्पात, धातुओं, पोत-निर्माण, हवाई जहाजो, टेलीफोन एवं टेलीग्राफ के उपकरणों के निर्माण के लिये उद्यमों को प्रारम्भ करने हेतु सरकार के पास विशेष अधिकारों को सुरक्षित रखा गया। इस प्रकार के प्रयास आर्थिक क्षेत्र में बदलाव के लिए बुनियादी ईटों के रूप में सिद्ध हुए। यह परिवर्तन इसलिए और भी ज्यादा कारगर सिद्ध हुए, क्योंकि आवश्यकता होने पर राष्ट्रीय हित साधना में निजी क्षेत्र से सहयोग प्राप्ति की छुट भी रखी गयी और 'इसी के साथ-साथ व्यापारिक समुदाय को यह आश्वासन भी दिया गया कि नए स्थापित किए जाने वाले उद्योगों का कम से कम दस वर्ष तक राष्ट्रीयकरण नहीं किया जाएगा। सरकारों की तरफ से विदेशी कम्पनियों को भी आश्वासन दिया गया कि वे भारतीय उद्योगों पर लागू शर्तो के अंतर्गत ही भारत में अपना व्यापार जारी रख सकती है। बड़े व्यापारिक घरानों की शक्ति को कम करने का कोई प्रावधान भी नहीं किया गया। इसके सापेक्ष अतिरिक्त पूंजी निवेश आकर्षित करने के लिये ब्रिटेन की व्यापारिक कंपनियों और फर्मो से व्यापारिक चर्चाओं को जारी किया गया।'

इस प्रकार भारतीय संविधान के प्रकाश में हमारी संसद ने जिस मिश्रित अर्थ व्यवस्था को खड़ा किया, उससे आर्थिक परिवर्तन की एक नयी लहर उत्पन्न हुई तथा व्यापार एवं उद्योग कुछ ही हाथों से निकलकर अनेक हाथों के द्वारा और भी कुशलता तथा नये प्रबंधन के साथ फलने-फूलने लगे, जिनसे आर्थिक विकास की सनातन धारा का प्रवाह हो जाना स्वाभाविक ही था।

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) शासकीय महाविद्यालय, पथरिया, मुंगेली (छ.ग.) भारत

आर्थिक लाभों को सभी के लिए मुहैया कराने के निमित्त 'योजना आयोग' रूपी एक अन्य संस्था का गठन भी हुआ जो वर्तमान में नीति आयोग के न ाम से जाना जाता है, जिसने तीन बिन्दुओं को सामने रखकर अपना कार्य प्रारम्भ किया – प्रथम, भारत में सभी नागरिकों, पुरूषो और महिलाओं को जीवन निर्वाह के पर्याप्त साधन समान रूप से प्राप्त करने के अधिकार की सुनिश्चितता; द्धितीय, देश के भौतिक संसाधनों के स्वामित्व और नियंत्रण का बंटवारा इस प्रकार किया जाए, जिससे कि अधिकाधिक नागरिकों को इससे लाभ प्राप्त हो सके, तृतीय आर्थिक व्यवस्था की प्रक्रिया से सामान्य नागरिकों के हित की कीमत पर संपत्ति और उत्पादन के साधनों का केन्द्रीकरण नहीं होना चाहिए।

यद्यपि नियोजन द्धारा प्राप्त की जाने वाली आर्थिक और सामाजिक व्यवस्था के संदर्भ में राज्य के नीति निर्देशक सिद्धांतों का अनुकरण किया गया फिर भी नियोजकों की चेतावनी थी कि 'आर्थिक समानता लाने के लिये किये गये उपायो को शीघ्रता से लागू करने के अल्पकाल में बचत और उत्पादकता का स्तर प्रतिकूल रूप से प्रभावित हो सकता है। मसौदे में सामाजिक और संस्थागत परिवर्तनों की आवश्यकता पर जोर दिया गया था, लेकिन निर्धारित योजना में अन्तिम रूप से प्रमुख महत्व तथा बल, उत्पादन वृद्धि की आर्थिक आवश्यकता पर दिया गया था। इसके फलस्वरूप एक ऐसा दृष्टिकोण विकसित हुआ, जिसने नियोजन के अंतर्गत राज्य की भूमिका को निजी क्षेत्र के विस्तार के लिए आवश्यक सामाजिक पूँजी उत्पन्न करने और आर्थिक प्रोत्साहन देने तक ही सीमित रखा।' भले ही व्यवहार में संस्थागत सुधारों को नाममात्र का ही महत्व प्रदान किया गया, लेकिन इन तमाम प्रयासों से एवं नीतियों से आर्थिक क्षेत्र में खूब बदलाव हुआ। इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता है। समय के साथ–साथ इन नियोजनों व नीतियों में जो मन्थरता और स्थिरता आ गयी थी, उसे बाद में समाप्त करने के प्रयास किये गये। कांग्रेस की संसदीय एकाधिकार स्थिति का जब खण्डन हुआ और सन् 1977 में जब गैरकांग्रेसी, जनता पार्टी की सरकार बनी, तो इसने नयी विकास नीति को खड़ा करके बदलाव की फसले उगायी यह दूसरी बात है कि जनता पार्टी की आर्थिक नीतियां भी प्रतिस्पर्धात्मक एवं राजनीति प्रेरित रही, जिनका सामजिक और आर्थिक परिवर्तन में विशेष योगदान नहीं कहा जा सकता। लेकिन राजनीतिक बदलाव में जनता पार्टी की महत्वपूर्ण भूमिका को नजरअंदाज नहीं किया जा सकता। इस काल की राजनीति भूमिकाओं के कारण ही 1980 के मध्यावधि चुनावो में प्राय: तमाम राजनीतिक दलों ने अपने–अपने चुनावी घोषणा पत्रों में पृथक–पृथक आर्थिक नीतियों की प्रस्तुति करके भारतीय जनता को रिझाने की कोशिश की। जनता अब तक राजनीतिक तौर पर पर्याप्त चेतन हो चुकी थी और उसने अपनी राजनीति जागृति का परिचय भी दिया। लेकिन तमाम राजनीतिक दल वायदा–खिलाफी करके सामाजिक लक्ष्यों से पीछे रहते हुए नजर आते है – 'सन्1980 के मध्यावधि चुनावों के समय लगभग सभी राजनीतिक दलों ने अपने घोषणा पत्रों में ऐसी आर्थिक नीति की घोषणाऐं की थी, जो एक–दूसरे से एकदम भिन्न थी। लेकिन महत्वपूर्ण बात यह है कि कि लगभग सभी स्थापित राजनीतिक संगठनों का प्रयत्न लोकप्रिय नारेबाजी की सहायता से जनसाधारण की भावनाओं को संतुष्ट करना था । कांग्रेस(ई) ने अपने चुनावी घोषणा पत्र में सामाजिक परिवर्तन लाने का वादा किया था, परन्तु पार्टी ने सामाजिक परिवर्तन के मसले को गौण लक्ष्य के रूप में लिया, जिस पर क्रमबद्ध तरीके से अमल किया जाना था। इस हेतु जिन उपायो का उल्लेख किया गया था, उसमें सभी क्षेत्रों में अनुमानित प्राप्त क्षमता का पूर्ण उपयोग करना, स्थानीय उत्पादन क्षमता बढ़ाने के लिए निर्यात संभावना में वृद्धि एवं उसके लिए महत्वपूर्ण मदों के आयात हेतु विदेशी मुद्रा का उपयोग करना सम्मिलित था। इन सभी उपायो की घोषणा व्यापारी वर्गो के हितों को ध्यान में रखकर की गयी थी। ऐसा प्रतीत होता है कि कांग्रेस में भारतीय अर्थव्यवस्था को पूंजीवादी आधार पर विकसित करने की प्रवृत्ति थी और उसके लिये प्रयास किया जा रहा था। कांग्रेस की यह नीति असफल सिद्ध हुई। जनाक्रोश इसके कारण पनपता सा दिखने लगा था। इसलिए इसके समाधान के लिए अर्थ व्यवस्था में उदारवादी नीति को विकसित किया गया, जिसने आर्थिक क्षेत्र में ऐतिहासिक बदलाव पैदा किया।'

उदारीकरण की नयी आर्थिक नीति का उद्देश्य प्रतियोगिता को पुन:स्थापित करना था, जिससे बाजार के यंत्र, संसाधनों का आबंटन करने में व्यापक भूमिका अदा कर सके। नीति निर्धारकों को आशा थी कि औद्योगिक क्षेत्र को प्रशासनिक प्रतिबन्धों से मुक्त करने से देश– विदेशों में प्रतियोगिता को प्रोत्साहन मिलेगा और इससे आर्थिक परिवर्तन अवश्यंभावी हो जाएगा। लेकिन इसके परिणाम दूसरे रूप में सामने आये तथा अर्थव्यवस्था की वृद्धि इतनी पूंजीवादी और आयात संघन हो गयी, कि मध्यम स्तर पर घरेलू उद्यम और लघु उद्योग क्षेत्र धीरे धीरे सिकुड़ने लगे। पेंचकस तकनीकीं पर आधारित उद्योगों में अत्याधिक आयात सघन वृद्धि और धनीवर्ग की उपभोग की आवश्यकताओं की संतुष्टि करने वाली अर्थ व्यवस्था से भारत पर विदेशी ऋण का भार बहुत अधिक हो गया। इसलिए सन् 1989 में भारत विश्व का तीसरा सर्वाधिक ऋणी राष्ट्र बन गया। कुल मिलाकर उदारीकरण विदेशों में बने माल के आयात तक सीमित रहा।

नई आर्थिक नीति के नाम पर जो परिवर्तन हुए और उनेक द्धारा अर्थ व्यवस्था में जो खुलापन लाया गया, वह न तो क्रमबद्ध था और न ही उससे सुधारात्मक स्पष्टता सामने आती है और, न ही वह आर्थिक बदलाव के उद्देश्य को प्राप्त कर सकी, जिसे संसदीय प्रयासों में सोचा गया था। यह दूसरी बात है कि विभिन्न क्षेत्रों में परिवर्तनों की स्थिति व्यापकता लिए हुए थी। यथा, 'पांच क्षेत्रों में व्यापक परिवर्तन किये गये – उद्योग, व्यापार, वित्त, वित्तीय संबंधी और मुद्रा संबंधी। बाद में सरकार द्धारा विश्व बैंक को दी गयी विकास नीति में कहा गया कि आर्थिक सुधार के उद्देश्य समानता और सामाजिक न्याय प्राप्त करना है, एक ऐसी राजनीतिक प्रणाली विकसित करना है, जो शासन और स्वतंत्रता दोनों प्रदान करने में सक्षम हो। संसद के माध्यम से सरकार का मुख्य उद्देश्य गरीबी का उन्मूलन करने और जीवन स्तर को सुधारने के लिये विकास की उच्च गति प्राप्त करना बताया गया। इन उद्योगों को प्राप्त करने के लिए सरकार की सुधारवादी रणनीति का उद्देश्य – उदारवादी व्यापार, विनियम दर प्रणाली, जो व्यापार के लिए आबंटन संबंधी प्रणाली से मुक्त हो, प्रतिस्पर्धात्मक बाजार परिस्थितियों में कार्य करने वाली वित्तीय, प्रणाली सक्षम और प्रभावशाली औद्योगिक क्षेत्र, स्वायत्त, प्रतिस्पर्धात्मक और व्यवस्थित सार्वजनिक उद्यम क्षेत्र, जिसका उद्देश्य मूलभूत ढांचा और वस्तु सेवा की व्यवस्था करना हो।'

कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि संसद के माध्यम से जो आर्थिक नीतियां लागू हुई, और उनसे जो परिवर्तन हुआ, वह प्रशंसनीय ही कहा जाएगा। भारत ने अनेक क्षेत्रों में परिवर्तन को प्राप्त किया। हमारे औद्योगिक उत्पादन में कई गुना वृद्धि संभव हो सकी। सार्वजनिक और निजी क्षेत्रों में धातु और भारी इंजीनियरिंग सहित खनन और प्रोसेसिंग उद्योगों को सम्मिलित किया गया। पिछड़ी और आश्रित अर्थव्यवस्था का आधुनिकीकरण किया गया तथा उसमें और भी ज्यादा आत्मनिर्भरता बन सकी। बैंकिंग,बीमा,

वाणिज्य और परिवहन के क्षेत्र में भी पर्याप्त विकास के कारण परिवर्तन हुआ। प्राथमिक तथा माध्यमिक स्तर पर विद्यार्थियों के नामांकन को देखकर भी प्रतीत होता है कि शैक्षिक क्षेत्र में भी परिवर्तन की लहर आयी है। प्राथमिक तथा माध्यमिक स्तर पर विद्यार्थियों के नामांकनों में वृद्धि हुई और शैक्षिक स्थिति में परिवर्तन हुआ। तकनीकी रूप से भारत तृतीय विश्व के देशों में सबसे उन्नत देश के रूप में उभरकर आया। भारत के द्वारा अंतरिक्ष में उपग्रह भेजे गये, आणुविक विस्फोट भी भारत में हुए और समुद्र के भीतर खदान के कार्यक्रम आरम्भ हो गये। भारतीय रक्षा सेनाओं ने भी महत्वपूर्ण प्रगति अंकित करायी। जाति और अन्य परंपरागत मान्यताओं मे भी परिवर्तन हुए। विज्ञान और प्रौद्योगिकी के आधार पर भी वृद्धि संभव हो सकी।

ऐसी तमाम उपलब्धियों के उपरांत भी भारत में गरीबी, बेरोजगारी, समान न्याय और आत्मनिर्भरता सरीखी मूलभूत समस्याऐं अभी भी मौजूद है। एक के बाद एक लागू की गयी पंचवर्षीय योजनाऐं देश की अर्थव्यवस्था के मूल ढांचे में परिवर्तन लाने में असफल रही है। इसके बाद भी इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता कि बदलाव आया हैं। सामाजिक विद्रूपताऐं सरलता-सहजता की तरफ बढ़ी है, जिससे समाज में नये संबन्धों का उदय संभव हुआ है। राजनीति जागरण में भी चार चांद लगे है। भारतीय लोकतंत्र में भारत के ग्रामीण अंचलों में गरीबी एवं दरिद्रता से पीड़ित, परन्तु मताधिकार से लैस मानव जाति का एक विशाल समुद्र रह रहा है। आर्थिक प्रयासों से आर्थिक स्थिति में बदलाव हुआ है और चुनावों में मत देने के अधिकार के प्रति जागृति हुई है।

ऐसा भी नहीं है कि गरीबी के बाद निष्क्रियता नहीं टूटी है। बल्कि इसके दबाव को समझते हुए संसद भी उनके प्रति जागरूक हुई है और इन्हें राजनीतिक अधिकार भी प्रदान हुए है। भारतीय संसद में महिलाओं का एक तिहाई आरक्षण इसी बात का प्रमाण है। परिवर्तन इस रूप में भी देखा जा सकता है कि जनता के बीच से वोटों की ठेकेदारी की प्रथा कम हुई है। वर्तमान में निर्वाचन आयोग की सक्रियता से चुनाव में लोकतांत्रिक व्यवस्था में अधिक पारदर्शिता सामने आयी है। बुद्धिजीवी वर्ग, जो राजनीति के प्रति उदासीन हो चला था, सजग हो गया है, और उसके साथ साथ अन्य नागरिक भी मतदान करने के प्रति आगे आये है।

निष्कर्ष – कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि संविधान के प्रकाश में संसद के माध्यम से चहुंमुखी परिवर्तन संभव हुआ है और यह परिवर्तन सकारात्मकता का प्रतीक है। भ्रष्टाचार की जो धारा बह रही है, वह इस परिवर्तन के कारण ही एक दिन समाप्त हो सकेगी।

संदर्भ ग्रंथ सूचीः–

1. नन्दूराम – एस्सेज ऑन दलित इन इण्डिया, सोशल एक्शन, अंक – 43, पृ. 412-25
2. प्रदीप त्रिपाठी – मानवाधिकार और भारतीय संविधान संरक्षण एवं विश्लेषण, राधा पब्लिकेशन, नई दिल्ली, पृ. – 175-176
3. डॉ. ए.एस. नारंग – भारतीय शासन और राजनीति, गीतांजलि पब्लिशिंग हाउस, पृ. 328
4. R. Brass Paul - The Politics of India since Indipendence, Cambridge University Press. p-487
5. एस.के. सिंह : इकॉनोमिक रिफार्म्स इन इण्डिया एम्लायमेंट न्यूज, 22 (23) 1-2,

****

पर्यावरण एवं नदी प्रदूषण

डॉ. सुरेखा रेगे *

प्रस्तावना – भारत की संस्कृति वन संस्कृति रही है एवं प्रकृति से उसका अकाट्य संबंध था। पर्यावरण उसके नैसर्गिक रूप में सन्निहित था। प्राचीन भारतीय संस्कृति परम्पराओं, मान्यताओं में पर्यावरण संरक्षण के रिवाज थे परन्तु आज की उपभोक्तावादी संस्कृति में अधिक धन भौतिक–सुविधाओं की प्राप्ति के लालच में मनुष्य ने प्रकृति की सतत् भयंकर छेड़छाड़ करके 'पर्यावरण' को नष्ट कर दिया है। अब न केवल मनुष्य वरन् प्राणी मात्र इस संकट की चपेट में आ चुके है। वृक्ष तथा वनस्पति भी प्रदूषण से प्रभावित हो रही है। अत: आधुनिक पर्यावरण प्रदूषण की राष्ट्र स्तर पर बहस वस्तुत: 1985 में गंगा कार्ययोजना आरंभ करने के बाद प्रभावी हुई। वास्तव में हमारे देश में जल, प्रदूषण की गंभीर समस्या है। इसका कारण यह है कि भारत तीन ऋतुओं का देश है। वायु प्रदूषण वायुमण्डल में बहुत दिनों तक जमा होने के बाद वर्षा के साथ–साथ धरती पर आ जाता है एवं नालो–नालियों, सीवर लाइनों के द्वारा नदियों में चला जाता है। स्थल प्रदूषण भी नालों और सीवरों के माध्यम से नदियों में चला जाता है। जल प्रदूषण के कारण देश में प्रतिवर्ष मरने वालों की संख्या आठ लाख से अधिक है।

भारतीय संस्कृति में नदियों की पूजा–अभ्यर्थना एवं वृक्षों की सेवा सुश्रुषा का प्रावधान पर्यावरण की रक्षा के उद्देश्य से ही किया गया है। सभी धर्मो में प्रकृति के साथ अन्योन्याश्रय का संबंध दर्शाया गया है किन्तु खेद है कि भारत में प्राय: सभी नदियों जैसे केरल में परियार, पूर्व में हुमली एवं दामोदर, अहमदाबाद की साबरमती, पश्चिम उत्तरप्रदेश में कालिंदी, यमुना एवं गंगा सहित प्रदूषण से बुरी तरह ग्रसित है। यहाँ तक कि श्रीनगर की डल झील राजस्थान में उदयपुर एवं पाली की झील अथवा सरोवर, हैदराबाद की हुसैन–सागर झील प्रदूषित हो गयी है। भारत में दो तिहाई बीमारियॉ जैसे मियादी ज्वर, पीलिया, हैजा एवं त्वचा तथा पेट की बीमारियाँ जल प्रदूषण के कारण होती है।

नदियों के जल के प्रदूषित होने के प्रमुख कारण हैं मानव बस्तियों का मल पदार्थ तथा उद्योगों का दूषित उत्प्रवाह नदियों में बहाया जाना तथा पशुओं द्वारा नदियों में गंदगी फैलाई जाना है। देश के लगभग 3000 बड़े नगरों में से मात्र 217 में मल शुद्धिकरण की सुविधा है जो संतोषजनक नहीं है। देश की सबसे पवित्र कहीं जाने वाली गंगा नदी आज की सबसे दूषित नदी बन चुकी है। इस पवित्र नदी में बस्तियों को मल, उद्योगों का अवशिष्ट पदार्थ, तो बहाया ही जाता है साथ ही शवों को भी जलाऐं बिना इसमें बहा दिया जाता है जिससे गंगा का विभत्स रूप सामने दिखाई देता है। यही स्थिति यमुना नदी की भी है। मथुरा में साठ लाख टन के तेल शोधक संस्थान को लगाया गया है जिसकी गंदगी यमुना में जाने से यह पानी प्रदूषित हो गया है।

देश की सभी बड़ी नदियां प्रदूषण की शिकार है। म.प्र. में नर्मदा, चम्बल, ताप्ति, तवा, काली सिंध, शिप्रा, पार्वती आदि नदियां भी प्रदूषित हो रही है साथ ही सूख गई है। म.प्र. के कुछ क्षेत्रों में (शाजापुर की सुसनेर तहसील, देवास क्षेत्र) भयानक जल संकट है।

अत: आवश्यकता है जनआन्दोलन और जन जागृति की। समय रहते नदियों के प्रदूषण को रोकने के कारगर प्रयास किये जाने चाहिए अन्यथा सारा देश संकट की स्थिति का सामना करेगा।

(अ) नदी प्रदूषण के कारण –

1. **प्राकृतिक कारण –** कुछ प्राकृतिक पदार्थ भी नदियों के जल को प्रदूषित कर देते है जैसे विभिन्न गैसे, मृदा, खनिज, वनस्पति, मृत जीवजन्तु, उल्का धूल, ज्वालामुखी क्रियाएं आदि ।
2. **मानवीय स्त्रोत एवं धार्मिक कारण –**पूजा के फूल एवं अन्य पूजन सामग्री नदी में डाल दी जाती है। गणपति एवं माता की बड़ी – बड़ी मूर्तियां जिन पर वार्निश पेंट होता है नदी में विसर्जित की जाती है जो प्रदूषण बढ़ाती है। शव नदियों में प्रवाहित किए जाते है। अग्नि संस्कार के बाद की राख भी नदियों में डाली जाती है जो नदियों में गंदगी बढ़ाती है।
3. **औद्योगीकरण –** औद्योगिक प्रक्रियाएँ, उद्योगों के निकले अपशिष्ट पदार्थ एवं दूषित जल नदियों में प्रवाहित कर दिया जाता है जिससे नदियों का जल प्रदूषित हो जाता है
4. **मल – जल –** जनसंख्या वृद्धि के साथ–साथ मल–जल की मात्रा बढ़ रही है। विशालकाय जनसंख्या नदियों के घाट पर स्नान एवं प्रातः कालीन नित्यकर्म से निवृत्त होकर मल–मूल त्याग करती है। इससे डिटर्जेन्ट, साबुन, कागज चमड़े, अस्पतालों के अपशिष्ट पदार्थ नदियों में फैकें जा रहे है।
5. **कृषि –** अधिक कृषि उत्पादन के लिए रासायनिक उर्वरकों व कीटनाशकों का बढ़ता प्रयोगजल प्रदूषण में वृद्धि कर रहा है। साथ ही अधिक खाद्यान्न उपजाने हेतु कृषक बहुत सिंचाई करते हैं जिससे नदियॉ सूख रही हैं।
6. **परिवहन –** नदियों में नोका परिवहन से यात्रियों के विसर्जित दूषित पदार्थ कचरा नदियों में फैका जाता है।
7. **अन्य कारण –** तालाब, नदियों में रेशेदार फसलों का सड़ाने से जल प्रदूषित होता है जैसे 'सन' सड़ाकर जूट की रस्सी बनाई जाती है।

ब. नदी प्रदूषण के दुष्प्रभाव –

नदी प्रदूषण का जनजीवन पर निम्न दुष्प्रभाव होता है –

1. **रोगों की सम्भावना –** नदी के प्रदूषित जल के उपयोग से अनेक रोगो के होने की संभावना रहती है जैसे – पक्षाघात, पीलिया, हैजा, डायरिया, पेचिश आदि। यदि नदी के जल में रेडियों सक्रिय पदार्थ और लैड, क्रोमियम आर्सेनिक जैसे विषाक्त धातु हो तो कैसर, कुष्ठ रोग हो जाते है।

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति शास्त्र) क्वाटर नं.एम.आई.जी., बी.–68, बी. सेक्टर होशंगाबाद रोड़, विद्यानगर, भोपाल (म.प्र.) भारत

2. **जलीय जीवों की हानि –** जल की मछलियॉ, मगरमच्छ कछुए आदि जलीय जीव विषाक्त जल में मर जाते है जिससे बहुत बड़ा पारिस्थितिक असंतुलन पैदा हो जाता है।
3. **फसलों की क्षति –** प्रदूषित नदियों के जल से सिंचाई करने से फसलों को नुकसान पहुॅचता है क्योंकि प्रदूषित जल से सब्जी, फसलें , फल खराब हो जाते हैं।
4. **विभिन्न पर्यावरणीय घटकों पर दुष्प्रभाव –** जल प्रदूषण से नदी के प्राकृतिक जल का मान, उसकी आक्सीजन व कैल्शियम मात्रायें परिवर्तित हो जाती है। जस्ता व सीसा से प्रदूषित जल में कोई जीवन जीवित नहीं रह सकता है।
5. **सांस्कृतिक पराभव –** भारतीय हिन्दु संस्कृति में नदियों को दैवी कहकर उनकी पूजा की जाती है किन्तु आज उनकी पूजा–अर्चना की जगह उनमें मल–मूल विसर्जित किया जाकर उनका अपमान किया जाता है।

स. नदी प्रदूषण का निवारण एवं नियंत्रण उपाय –

नदी प्रदूषण को रोकने के लिए निम्न उपाय किए जाने चाहिए।

1. **अवशिष्ट जल का उपचार –** कलकारखानों के अवशिष्ट जल को नदियों में बहाने से पहले उनका उपचार किया जाना चाहिए ताकि नदी प्रदूषित न हो सके। सीवर के जल को भी दोषरहित बनाकर नदी में भेजा जाय तो उनका मार्ग बदल दिया जाय ताकि वह नदी में न मिल सके।
2. **पुन:चक्रण** – ठोस अवशिष्ट पदार्थो से रासायनिक क्रियाओं द्वारा अन्य उपयोगी पदार्थ बनाऐं जाये।
3. **जनजागृति लाई जाए –** जनता में नदियों के जल की सफाई हेतु जागृति लाई जावे जिससे जनता मल–मूल विसर्जन, स्नान की क्रियाएं नदी पर न करें ।
4. **सरकार द्वारा गंदगी फैंकने हेतु साधन उपलब्ध कराऐं जाऐं –** सरकार द्वारा शवदाह गृह (बिजली चलित) की व्यवस्था की जाय ताकि शव की राख नदी में न डाली जा सके। इलेक्ट्रिक क्रिमेटोरियम के प्रयोग से शव की राख को खेतों में डालने से उर्वरा शक्ति बढ़ेगी। शवों को नदी में जल में डालने से सख्त कानूनी नियंत्रण लगाना चाहिए। इसके अतिरिक्त जगह–जगह बस्तियों के कूड़े के लिए कूड़ेदान बनाए जाने चाहिए व कूडे को सम्पूर्ण नष्ट करने हेतु कारगर उपाय किया जावें।
5. **जैवनियंत्रण –** शैवाल पानी में रहकर पानी को शुद्ध करने की क्षमता रखते हैं। अत: 'स्पाइसलिना' नामक शैवाल को प्रदूषित नदियों में उगाकर प्रदूषण को दूर किया जा सकता है। ये पानी में आक्सीलन की कमी को पूरा करती है तथा दूधारू पशुओं के आहार में प्रोटिन की कमी को पूरा करती है।
6. **जल प्रदूषण नियंत्रण हेतु अधिनियम –** जल प्रदूषण को रोकने के लिए भारत में सरकार द्वारा निम्न नियम–कानून बनाए गए हैं – (1) जल प्रदूषण निवारण एवं नियंत्रण अधिनियम 1974 (2) पर्यावरण (सुरक्षा) अधिनियम 1986 (3) जल प्रदूषण निवारण नियंत्र उपकर अधिनियम 1977
7. **जल गुणवत्ता का मूल्यांकन –** नदियों के जल की गुणवत्ता की निगरानी हेतु 170 निगरानी केन्द्र है जिनमें 30 नए केन्द्र 1987–88 में खोले गए।

इस प्रकार स्पष्ट है कि नदी प्रदूषण की गति जितनी तेज है उससे ऐसा लगता है कि कुछ वर्षो में हम बहुत संकटापन्न हो जाऐंगे। अत: नदी जल प्रदूषण को सख्ती से रोका जाय व कुछ सक्रिय योजनाऐं बनाकर प्रदूषित जल को स्वच्छ किया जाय। इस कार्य में भारत सरकार ने 'गंगा कार्ययोजना' बनाई है ।

उपसंहार – हमारे देश में जलप्रदूषण सबसे बड़ी समस्या है। साथ ही मुख्य जलस्त्रोत नदियॉ ही है इसलिए नदियों को प्रदूषण एवं उसके बचाव की समस्या के प्रति हमारा जागरूक होना आवश्यक है। एक सूचना के अनुसार देश में प्रतिवर्ष आठ लाख व्यक्ति जल प्रदूषण के कारण मरते हैं एवं सत्तर प्रतिशत बीमारियों का स्त्रोत प्रदूषित जल ही है। उद्योगों से निकलने वाले बहिस्त्राव एवं खेतों से निकले कीटनाशक तथा जमीन से कूड़ा–करकट बहकर नदियों में ही जाते हैं। ग्रामीण अंचलों में लोग नदी पर स्नान करते हैं, कपड़े धोते हैं, मल–मूत्र विसर्जन तथा मवेशियों को पानी पिलाना, नहलाना आदि क्रियाऐं सम्पन्न करते हैं। इससे नदियों का जल भयानक रूप से प्रदूषित हो जाता है। गंगा, युमना, गोदावरी, कावेरी, भद्रा, काली, सोन, आदि देश की प्रमुख नदियॉ 'भयंकर' प्रदूषण से प्रभावित हैं। यहॉ तक कि मप्र.की प्रमुख नदियां – नर्मदा, ताप्ती, बेतवा, चम्बल, काली सिंध, क्षिप्रा, पार्वती आदि भी पूर्णत: प्रदूषण रहित स्वच्छ वाली नदियॉ नहीं रही हैं।

इन प्रदूषणों से बचने के लिए केन्द्र सरकार ने गंगा सफाई अभियान को प्राथमिकता दे कर यह सिद्ध कर दिया कि नदियों का प्रदूषण दूर हो सकता है। इस प्रकार की योजना में काफी रूपया खर्च होता है क्योंकि इसमें बड़े–बड़े पम्पिंग स्टेशनों का निर्माण करना पड़ता है, सीवर लाइनें डाली जाती है और शुद्धिकरण संयंत्र लगाये जाते हैं। यह कार्य स्थानीय निकाय भी कर सकते हैं एवं राज्य सरकार को भी करना चाहिए। लेकिन इसके साथ–साथ जनता में जागृति से भी बहुत कार्य हो सकता है। पेड़ों की अंधांधूध कटाई रोकने के लिए जनता को आगे आना पड़ेगा। नदियों में से घड़ियाल व कछुओं को पकड़ कर धन कमाने वालों के विरूद्ध कठोर कार्यवाही होना आवश्यक है। नदियों में मछलियों का प्रजनन बढ़ाने की व्यवस्था सरकार ने की है जिससे नदियों का प्रदूषण कम होता है। नदियों में शवों का विसर्जन बंद होना चाहिए। विद्युत शवदाह गृह की व्यवस्था की जानी चाहिए।

अमेरिका, ब्रिटेन, जर्मनी, जापान आदि देशों में तीसरी कक्षा से ही पर्यावरण की प्रारंभिक शिक्षा दी जाती है। आज भारत में भी स्कूल–कॉलजों में पर्यावरण शिक्षा पाठ्यक्रम का अंग बन चुकी है। नदी प्रदूषण के प्रति जनता को जागरूक बनाने के लिए ग्रामीण एवं शहरी अंचलों के 'नारे', पोस्टर – प्रदर्शनी, नाटक, संगीत प्रति आदि लिखवाना, आयोजन करना चाहिए। श्रमदान का आयोजन करके नदियों की सफाई प्रतिवर्ष स्थानीय निकायों को करनी चाहिए। साथ ही नदियों के आसपास वृक्षारोपण हो जिससे नदियों का कटाव न हो सके। नदियों में स्नान, शवदाह कर्म, शवविसर्जन, पूजासामग्री का विसर्जन, मूर्तियों का विसर्जन आदि कार्य जनता के सहयोग से रोकना चाहिए।

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 51ए के अनुसार पर्यावरण की रक्षा एवं प्राणीमात्र के प्रति दया भाव रखना प्रत्येक भारतीय का कर्तव्य है।

वास्तव में प्रकृति हमारी संरक्षक पोषक है। वस्तुत: स्वस्थ विकास वहीं है जिसमें हम प्रकृति की मूल सम्पदा को बचाये रखते हुए ही ब्याज से कार्य चलाते रहे। अपनी भावी पीढ़ी के लिए उसे संजोकर, बचाकर रखें। अच्छा हो प्रकृति और पर्यावरण की इस भयानक त्रासदी को छेड़छाड़ से बचा जाए

अन्यथा क्रिया की प्रतिक्रिया से नहीं बचाया जा सकेगा। पर्यावरण के प्रति ये प्रक्रियॉ प्रेरणादायक एवं सही साबित होतीं है।

प्रकृति अलंकृत करती जन को।
हर्षित करती हर तन–मन को ।।
इसको संयम से अपनाये।
राष्ट्र सम्पदा तभी बचायें ।।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. Rebert Nrickles - Pollution Control
2. John Perry - Our Polluted World
3. Henry Still - The Dirty Animal
4. Wellem Rudofs - Industrial Wastes
5. Dr. Suresh Chandra -Contem Porary Political Issues
6. Tripathy A.K.- Adances in Environmental Sciences
7. Dr. Pramod Singh - Indian Environment
8. श्री विष्णुदत्त शर्मा – पर्यावरण प्रदूषण।
9. राम आसरे चौरसिया – पर्यावरण प्रदूषण एवं प्रबंध।
10. धर्मेन्द्र वर्मा–प्रदूषण।
11. जे.के. अवस्थी – जन्तु विज्ञान।
12. एस.बी. अग्रवाल – वनस्पति विज्ञान।
13. प्रो.धन्नजय वर्मा–पर्यावरण चेतना।
14. म.प्र. पंचायिका–
15. कुरूक्षेत्र।
16. म.प्र. शासन आवास एवं पर्यावरण विभाग– प्रशाासनिक प्रतिवेदन 04–05से 13–14
17. दैनिक भास्कर 2004 से 2014 तक के अंक।
18. नवभारत।
19. जनसत्ता।
20. भारत का मानचित्र प्राकृतिक।

****

सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक न्याय की अवधारणा

डॉ. अनिल कुमार जैन *

प्रस्तावना – व्यक्ति और समाज के संबंधों में व्यक्ति अपने व्यक्तित्व की विशिष्टता बनाये रखते हुए समाज में अपनी महत्ता भी स्थापित करने के लिये कृत संकल्पित रहता है। व्यक्ति और समाज द्वारा अपनी–अपनी भूमिका को बनाये रखने के संदर्भ में, इनमें परस्पर टकराहट होती है। अत: समन्वय के प्रयास हर युग में हुए है। उन्हें न्याय की संज्ञा दी जाती है।

मनुष्य की नीजि आकाक्षांऐं और अहं के प्रति होने वाले सामाजिक प्रतिरोध के कारण, इनमें संघर्ष की स्थिति बन जाती है, जो मानवता के लिये दुष्परिणाम सूचक संकेत होता है। इस टकराहट के निवारण और विश्व में मानवता के शाश्वत आदर्शो की स्थापना के लिये अतीतकाल से आज तक जो प्रयास होते रहे है, उनमें न्याय की अपनी एक स्वतंत्र अवधारणा है। न्याय में समानता, स्वतंत्रता और भाईचारा के जीवन मूल्य समाहित है।

सभी स्थापित मूल्यों की संकल्पनाओं का अर्थ तथा स्वीकार्यता देशकाल व परिस्थितियों की भिन्नता के कारण मानव के ऐतिहासिक विकास के प्रयासों के संदर्भ में भिन्न स्वरूप लिए हुए है। तात्पर्य यह है कि न्याय की अवधारणा का स्वरूप विकास के रूप में, समयानुसार विकसित हुआ है।

सुकरात न्याय की अपनी धारणा प्रस्तुत करते हुए कहते हैं 'सदगुण ही न्याय है। अत: ज्ञानी मनुष्य ही इसका अधिकारी व पक्षधर है।' प्लेटो का कथन है 'न्यायपूर्ण समाज में प्रत्येक व्यक्ति वही कार्य करता है जिसे करने की उसमें अधिकतम योग्यता होती है। यही सामाजिक न्याय है।' अरस्तू का कथन है ' स्वतंत्र तथा समान व्यक्तियों द्वारा निर्मित संस्थाओं के अनुरूप व्यवहार का नाम ही न्याय है।' प्रश्न यह है कि ग्रीक दार्शनिक का सद्गुण क्या है ? यह स्पष्ट नहीं है। इसी प्रकार प्लेटो और अरस्तू द्वारा अधिकतम योग्यता व समाज द्वारा बनाई व्यवस्था का अनुपालन न्याय है, लेकिन ग्रीक समाज के अध्ययन से ज्ञात होता है कि वहाँ की दासता और स्वतंत्रता वहाँ के शक्तिशाली वर्ग द्वारा निर्मित थी। इस स्वतंत्र वर्ग के समाज में, गुलामों का कोई अस्तित्व नहींथा, और उनके लिये यही न्याय था। केवल स्वतंत्र नागरिक ही मानव कहलाने के अधिकारी थे। एथेन्स नगर राज्य में सिर्फ 80 हजार नागरिक थे। वहां दासों की संख्या 3 लाख 50 हजार थी। महान दार्शनिकों ने इसके बारे में एक शब्द नहीं लिखा, तब इनकी न्याय की अवधारणा कोई कैसे स्वीकार कर सकता है।

भारतीय चतुर्थ वर्ण व्यवस्था भी न्याय कहलाती है। इसमें ब्राम्हण व क्षत्रिय वर्ग के पैरों तले जीने वाले अन्य वर्ग की जिन्दगी का कोई मूल्य दिखाई नहीं देता। इस वैदिक व्यवस्था को न्याय कहना न्याय का ही उपहास है। मध्यकाल में धर्मग्रंथों से ही निकाले गये विधवा क्रूरता तथा सती प्रथा जैसे नैतिक नियमों द्वारा महिलाओं का समाज में जो शोषण व दमन हुआ उसे हम क्या न्याय कहेगें ? जाति प्रथा व वर्ण व्यवस्था के रूप में, मनु संहिता द्वारा स्थापित न्याय ने भारत में अछूतों के लिये न्याय व्यवस्था रूप अमानवीय नियमों द्वारा उत्पीड़न किया गया, उसे न्याय कहलाने की हिम्मत भी अन्याय का समर्थन ही है।

आधुनिक युग में आकर ही ज्ञान का विस्फोट, औद्योगिक क्रांति तथा मार्क्स के सिद्धान्त की स्थापना के साथ न्याय की नई परिभाषा के प्रति शनै–शनै जन के समर्थन और विश्वास में वृद्धि हुई है। फिर भी कट्टरपंथी रूढ़ीवादी एवं परम्पराओं में श्रृद्धा रखने वाला अशिक्षित तथा अंधविश्वासी वर्ग विश्व में आज भी बड़ी संख्या में विद्यमान है। जो अतीत से प्रेरणा लेकर आतंकवाद जैसे जघन्य प्रयासों द्वारा अपने तथाकथित न्याय आदर्श की स्थापना के प्रचार प्रसार में सक्रिय है।

वस्तुत: न्याय का अर्थ, अतीत से आज तक किये गये मानवीय आदर्श की स्थापना व विकास के प्रयासों के रूप में विकसित हुए है। प्राचीन ग्रीक तथा एशियन मध्यकालीन विचारक अभिजात्य वर्ग के हितों की रक्षा को ही न्याय मानते रहे है। वर्तमान समाज में उत्पादन साधनों के बदलाव की स्थिति में, पूंजीवादी विकास के विरूद्ध शोषित वर्ग के हितों की रक्षा में, न्याय की अवधारणा में परिवर्तन आया है। वर्ग व जातिगत हित सामाजिक न्याय में सदैव बाधक रहे है। यही कारण है कि संविधान द्वारा प्रदत्त दलितों के लिये न्यायपूर्ण हित साधन प्रावधानों में भी, राजनीति की दलीय व्यवस्था के कारण न्याय के क्रियान्वयन में अवरोध दूर नहीं हो पाया है।

यह सच है कि सामाजिक न्याय की अवधारणा की पृष्ठभूमि में धर्म की सदैव अनुकूल व प्रतिकूल प्रभावी भूमिका रही है। यहां तक की प्राचीनकाल में राजनीतिक व्यवस्था तथा सामाजिक व्यवस्थ में धर्म के विश्वभर में हस्तक्षेप देखा गया है। हमारा भारतीय समाज तो लगभग 6 हजार जातियों में बंटा हुआ है। इन जातियों व उपजातियों में स्वीकृत सामाजिक बंधन और भेदभाव, सामाजिक अन्तर क्रियाओं में भी रोक लगाते है। इसी व्यवस्था के कारण प्राय: हर जाति समूह का व्यवसाय भी निश्चित है। पिछड़ी जातियों को जब व्यवसाय बदलने की स्वतंत्रता नहीं रही तब इनके लिये निर्धारित हीन व कम महत्व के कार्यो के कारण उनकी स्थिति धीरे–धीरे दास से भी कुछ हद तक बदतर हो गई। इस कुरीति का विरोध करने वालों का धनवान, कर्मकाण्डी तथा बाहुबलियों द्वारा स्वहित साधन संदर्भ के लिये दमन किया जाता रहा है। बलात्कर, सामूहिक आगजनी, बहिष्कार तथा उत्पीड़न सदियों से चल रहे, अत्याचार के रूप है।

आधुनिक युग के नवजागरण, औद्योगिक क्रांति व मार्क्सवाद ने विश्व को आर्थिक, सामाजिक व राजनीतिक जीवन के नये मूल्यों पर खड़ा कर दिया। सन् 1789 में फ्रांस की राज्य क्रांति में, रूसों की प्राकृतिक मानवाधिकारों की नई सैद्धांतिक अवधारणा के माध्यम से समानता, स्वतंत्रता एवं बंधुत्व के नये जीवन मूल्यों से विश्व को न्याय के संदर्भ में नई चेतना मिली है। इसी प्रकार मार्क्स के उद्घोष 'दुनिया के मजदूरों एक हो जाओ तुम्हें पैरों की जंजीरों के अलावा खोने के लिये कुछ है नहीं।' इस चेतना ने भी पूंजीवादी व्यवस्था द्वारा मान्य व स्थापित न्याय की अवधारणा के सामने नई चुनौती उपस्थित की है। परिणाम यह हुआ श्रमिकों के साथ–साथ समाज व्यवस्था के लिये भी यथार्थवादी न्याय के बारे में पुन:र्विचार अनिवार्य हो गया।

* सहायक प्राध्यापक (राजनीति विज्ञान) शासकीय कन्या महाविद्यालय, रतलाम (म.प्र.) भारत

प्रथम विश्व युद्ध के बाद जब दुनिया को आर्थिक मंदी ने अपनी चपेट में ले लिया था। तब इंग्लैण्ड के राबर्ट मोनार्ड ने सिद्धान्त प्रतिपादित किया था कि काम और उचित दाम देना सरकार का दायित्व है, तभी से विश्व में सत्ता के लिये कल्याणकारी राज्य की नई न्याय राजनीति का भी प्रादुर्भाव हुआ। यद्यपि इस नई स्थिति का राजनीतिक व्यवस्था द्वारा स्वीकार करने की कभी इच्छा नहीं रही कि ऐसी न्याय प्रणाली प्रस्थापित हो। रॉल्स स्वतंत्रता के संदर्भ में सभी नागरिकों के लिये समान अधिकार देने के समर्थक थे। वे पिछड़े हुए वर्ग के लिये भी अवसर की समानता उपलब्ध कराना की राज्य ने कर्तव्यों में भी प्राथमिकता देते थे। क्योंकि जिसके पास कुछ नहीं है, उसे भी प्रतिष्ठा से जीने का अधिकार न्याय है।

राजनीतिक सत्ता व समाज व्यवस्था सदैव अर्थतंत्र के हाथों का खिलौना रही है। इतिहास साक्षी है , हर युग में राजनीतिक सत्ताओं को समर्थन तथा प्राय: प्राणदान आर्थिक सत्ता से प्राप्त होता रहा है। अपने नीजि स्वार्थ को स्वतंत्रता का नाम देते हुए उसकी रक्षा के लिये अन्य की स्वतंत्रता का हनन कभी न्याय नहीं माना जा सकता है। प्रत्येक मनुष्य में ईश प्रदत्त, मानसिक, शारीरिक क्षमता और सहज योग्यता व प्रतिभा होती है। अत: सभी प्राणी समान है और इन सभी को अपना उत्कर्ष करने तथा सम्मानपूर्ण जीवन जीने का प्राकृतिक अधिकार है। लेकिन कुछ लोग या वर्ग अपनी विकसित क्षमता का लाभ उठाकर दुर्बल वर्ग की कमजोरियों का, धर्म तथा व्यवस्था का लाभ लेकर अपना हित साधन करते हुए उसे न्याय की संज्ञा देते है। वस्तुत: न्याय सभी व्यक्तियों के लिये, अपनी प्रतिभा योग्यता और क्षमता के अनुसार सम्मानपूर्वक जीने तथा उनके लिये विकास के सभी अवसरों को उपलब्ध कराने की व्यवस्था है। इस व्यवस्था को संयुक्त राष्ट्र संघ के मानवाधिकार घोषणा-पत्र द्वारा विश्व के सभी देशों में एक साथ प्रभावी बनाने के प्रयास, वर्तमान युग का अपूर्व व नैतिक न्याय प्रयास है।

भारत में भी स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् संविधान द्वारा देश के सभी नागरिकों के लिये कानूनी रूप से समान व्यवस्था का प्रावधान किया गया है। संविधान के अनुच्छेद 14 से 30, 31 तक मानव हित में आर्थिक सामाजिक तथा राजनीतिक न्याय के अधिकारों में समानता को सर्वोपरि महत्व दिया गया है।

भारत में विशेष रूप में सामाजिक न्याय के व्यवहारिक पक्ष के संदर्भ में, आधुनिक भारतीय समाज में राष्ट्रवाद के प्रति विद्यमान आस्था को देखते हुए यह स्पष्ट है कि देश में बंधुत्व की भावना का विस्तार हुआ है। व्यक्तियों के विकास के लिये, समाज में समान अवसर के अधिकार व किसी भी प्रकार के भेदभाव के निषेध की संवैधानिक व्यवस्था ने अतीत की हमारी स्थापित भेदभाव मूलक अन्यायपूर्ण समाज व्यवस्था को गंभीर चुनौती दी है। इसमें हमारी लोकतंत्र में आस्था की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। शिक्षा, आम मानव अधिकार के प्रति जनजागृति, कल्याणकारी, राज्य की अवधारणा तथा दुर्बल के अधिकारों के प्रति संरक्षण नीति आदि ने दलित, महिला व दुर्बलों के कल्याण की दिशा में सक्रिय योगदान किया है।

यह सच है आर्थिक न्याय के अभाव में राजनीतिक न्याय निष्प्रभावी रहत है। डॉ. अम्बेडकर ने दलितों के मसीहा के रूप में सामने आकर स्वतंत्रता आंदोलन की आंधी में भी दलितों के आर्थिक व सामाजिक हितों का संरक्षण किया था और विशेष रूप में आर्थिक न्याय को सामाजिक न्याय के क्रियान्वयन में एवं राजनीतिक अधिकारों की उपलब्धि में सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्थान दिया था। इसमें संदेह नहीं है कि इसी कारण दलितों के लिये भारत के संविधान ने सभी राजनीतिक अधिकार प्रदान किये है। इसी प्रकार आर्थिक विकास के लिए भी सभी प्रकार के अवरोध व निषेधों को अपराध घोषित कर दिया है। विडम्बना है आजादी के साठ वर्ष से अधिक समय व्यतीत हो जाने पर भी वर्ग विशेष का बहुसंख्य समाज आज भी अपने परम्परागत व्यवसायों यथा गंदगी, गटर, मैला व सफाई के कार्यो से अपने को मुक्त नहीं कर पाया है। इस वर्ग को प्रदत्त 10 वर्ष का आरक्षण भी हनुमान की पूंछ बन जाने पर भी आरक्षण के लाभार्थी लोगों के परिवारों का विशेषाधिकार बन कर रह गया है। दूसरी तरफ गोसाईजी का कथन सत्य सिद्ध हो रहा है ' समर्थ को नहीं दोष गोसाई प्रजातंत्र में बाहुबल, धनबल, जातिबल तथा आतंक की गिरफ्त में जकड़कर कहने मात्र के लिए जनता का शासन रह गया। भ्रष्टाचार के नग्न स्वरूप ने, नैतिकता और न्याय के सभी स्थापित प्रतिमानों को आज निर्लज्जतापूर्वक अस्वीकृत कर सत्ता और सम्पत्ति की उपलब्धि के लिये जो इतिहास रचना है, उसकी प्रतिक्रिया ही अन्ना हजारे के न्याय संघर्ष में, आम जनता की छटपटाहट के रूप में अभिव्यक्त हुई है।

निष्कर्ष यह कि न्याय देना कोई भीख नहीं है। यह एक स्वत्व का एहसास है। आदमी को अपने आप अपनी क्षमता का ज्ञान नहीं होता उसे न्याय किस चिड़िया का नाम है, इसकी अनुभूति ही नहीं होती है। न्याय का प्रारंभ अपने स्वयं के वजूद की पहचान से ही प्रारंभ होता है। इस पहचान का प्रारंभ शिक्षा से होता है। यह किताबी शिक्षा नहीं है, वरन् जिस समाज में मनुष्य पैदा हुआ इसके मूल्यों में यह शिक्षा होती है। जिस पर्यावरण व संस्कार में व्यक्ति पलता है उसके नैतिक, मानवीय और समतामूलक आचरण और व्यवहार ही न्याय के व्यवहारिक स्वरूप की स्थापना करते है। यही कारण है न्याय के संदर्भ में देश-विदेश की मानसिकता, अवधारणा तथा व्यवहारित आचरण में अंतर पाया जाता है। न्याय की अवधारणा का विकास समय, परिस्थिति, देशकाल के स्वीकृत संस्कारों के अनुरूप ही विश्व में विकसित हुआ है। महत्वपूर्ण यह है कि मानव अधिकारों के प्रति सभी देशों में मानव जाति की एकता के प्रति आस्था सदैव विद्यमान रही है। यही मानवता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. शर्मा उर्मिला शर्मा एस.के. : पाश्चात्य राजनीतिक चिंतन (खण्ड-1) एटलांटिक पब्लिशर्स, दिल्ली (2007) पृष्ठ 48
2. शर्मा उर्मिला शर्मा एस.के. : पाश्चात्य राजनीतिक चिंतन (खण्ड-1) एटलांटिक पब्लिशर्स, दिल्ली (2007) पृष्ठ 201
3. अरोडा एन.डी., अवस्थी एस.एस. : राजनीतिक सिद्धांत और चिंतन : हर आनन्द पब्लिकेशन प्रा.लि. नईदिल्ली (2007) पृष्ठ 207 व 309
4. जाटव डी.आर. : सामाजिक न्याय का सिद्धांत : समता साहित्य सदन, जयपुर (1993) पृष्ठ 19
5. भोले डॉ. भा.ल. : राजकीय सिद्धांत और विश्लेषण पीपलापुरे बुक डिस्ट्रीब्यूटर्स, नागपुर (2002) द्वितीय संस्करण, पृष्ठ 127
6. भारतीय संविधान : सूचना एवं प्रकाशन मंत्रालय, भारत शासन, नईदिल्ली।
7. जिंदल मीरा : 'गरीबी नहीं तो मानवाधिकार हनन नहीं ' पंजाब केसरी, अम्बाला 10 दिसम्बर 2006, पृष्ठ 06
8. खेर सी.पी. : राजनीतिक अर्थव्यवस्था का नया रूप : दिलीप राज प्रकाशन, शनिवार पेठ, पूणे (2010) पृष्ठ 117

****

Role Of Women Representative In Urban Development Of Banswara (Rajasthan)

Devender Singh Sarangdevot *

Abstract - Urban governance must be gender-sensitive if it is to be equitable, sustainable and effective. Participation and civic engagement are critical determinants of good governance, a concept which addresses issues of social equity and political legitimacy and not merely the efficient management of infrastructure and services. The banswara district forms eastern part of the region known as vagad or vagwer. The district was formally a princely state ruled by the Maharavas. Approach to urban governance of Banswara. A concerted women's representation in political structures and their active involvement in advocacy and lobbying for equitable human settlements development through participation in organizations outside of government. The presence of women in public office does not guarantee that the interests of other women will be represented. Political beliefs, ideology, race and class all intersect, and sometimes compete, with the claims of gender, thus complicating the relationship between women in power and their presumed female constituency. The population of women in the country constitutes nearly 50 percent of the total population. In spite of such enormous population, the women do not have the adequate representation in the urban local bodies. The 74th Constitution Amendment Act, 1992 has specified the reservation of seats for women in the municipalities and other urban local bodies. The one-third reservation for women has been considered as partnership contribution in the field of development and decision-making in urban local bodies as a vital instrument of democratic decentralization for planning and administration.The objective of the study is to ascertain the Status of Women Representatives in the Urban Local Bodies of Rajasthan and to examine their role alone with the efficacy and gaps in implementations and implications of the laws enacted for the reservation of a women candidate in urban local bodies as well as records the perceptions and problems faced by them at the work place.

Introduction - Urban governance must be gender-sensitive if it is to be equitable, sustainable and effective. Participation and civic engagement are critical determinants of good governance, a concept which addresses issues of social equity and political legitimacy and not merely the efficient management of infrastructure and services. The different ways in which women and men participate in and benefit from urban governance are significantly shaped by prevailing constructions of gender, whose norms, expectations and institutional expressions constrain women's access to the social and economic, and thus political, resources of the city. Most societies ascribe roles and responsibilities to women and men differentially but fail to value, or even account for, the crucial contributions women's labour makes to household and community maintenance. Ironically, such social reproduction allows little time (or, in some cases, permission) for women to participate in civic life in ways which help them to determine their own lives.

The banswara district forms eastern part of the region known as vagad or vagwer.

The district was formally a princely state ruled by the Maharavas. As regards to the administrative set-up the district is divided into 5 sub-division vise. Banswara, kushalgarh, Ghatol, Garhi and Bagidora. The Banswara Sub-division consists of Talwara and Chhotisarvan Panchayat Samities where as the Kushalgarh sub division consists of Kushalgarh and Sajjangarh Panchayat Samities. The Ghatol Sub-division consists of Ghatol Panchayat Samities. The Bagidora sub-division consists of Bagidora and Anandpuri Panchayat Samities.

A gender-sensitive approach to urban governance of Bhilwara has been laid on two principal objectives; firstly, to increase women's participation in human settlements development and, secondly, to foster gender-awareness and competence among both women and men in the political arena and planning practice. A concerted approach to the issue of participation is required, including an improvement in women's representation in political structures and their active involvement in advocacy and lobbying for equitable human settlements development through participation in organizations outside of government. The work of such organizations in holding to account mainstream institutions and structures can be strengthened through international cooperation. New and inclusive urban partnerships are also needed, which recognize the interests, contributions and reciprocal potential of women as well as men. Planners must acknowledge the diversity of women, while recognizing that they also generally share specific gender interests arising from a common set of responsibilities and roles. Partnerships between urban dwellers, designers and decision-makers must

* Research Scholar, Pacific University, PAHER, Udaipur (Raj.) INDIA

address both the diversity and commonality of women's experiences and needs.

Getting women themselves into the mainstream of public office and the bureaucracy is a vital part of engendering urban governance. The presence of women in public office does not guarantee that the interests of other women will be represented. Political beliefs, ideology, race and class all intersect, and sometimes compete, with the claims of gender, thus complicating the relationship between women in power and their presumed female constituency.

Women in Urban Local Bodies - The population of women in the country constitutes nearly 50 percent of the total population. In spite of such enormous population, the women do not have the adequate representation in the urban local bodies. To involve the women's participation in the development and in the development making process, the role of women assumes importance in urban local bodies. The 74th Constitution Amendment Act, 1992 has specified the reservation of seats for women in the municipalities and other urban local bodies. It spells out that not less than one-third of the total number of seats to be filled by direct election in every municipality shall be reserved for women and such seats may be allotted by rotation to different constituencies in a municipality.

The one-third reservation for women has been considered as partnership contribution in the field of development and decision-making in urban local bodies as a vital instrument of democratic decentralization for planning and administration. It has been a fact that the women community has been neglected and their representatives can effectively monitor and administer the schemes like health, education and family planning.

The women representatives as mayors, chairpersons and councilors will contribute significantly in the context of 12th Schedule, Article 243-W of Constitution 74th Amendment Act with reference to -

1. Planning for economic and social development.
2. Water supply for domestic industrial and commercial purposes.
3. Public health, sanitation, conservancy and solid waste management.
4. Urban forestry protection for environment and promotion of ecological aspects.
5. Safeguarding the interests of the weaker sections of society including the handicapped and mentally retarded.
6. Slum improvement and up gradation.
7. Urban poverty alleviation programme.
8. Public amenities including street lightning, Parking lots, bus stops and public conveniences.

Objectives of the Study - The broad objective of the study is to ascertain the Status of Women Representatives in the Urban Local Bodies of Rajasthan and to examine their role alone with the efficacy and gaps in implementations and implications of the laws enacted for the reservation of a women candidate in urban local bodies as well as records the perceptions and problems faced by them at the work place.

The main research questions for probe are: Women Councilor Related

1. The priorities of women representatives and see whether they are differ from those of men
2. To ascertain the role of women in framing women centered programmers
3. To ascertain the independence of women representative -s in determine the priorities of urban local bodies.

General Public -

4. To find out voters perception of their women representatives.
5. Are more women voting for women candidates Policy Related.
6. Have the formal structures like committees with Urban Local Bodies been modified to include more women?
7. To see whether the present reservations policy needs and changes.
8. Looking into gender budgeting at urban local body levels.
9. Impact of the two child norm.

The issues for micro level probe were to be identified after situational analysis in the initial stages of the research and prioritized subsequently with the help of various stakeholders

Women as Electors - The following table shows that in the recently held elections to the urban local bodies 61.79% women caste their votes. Although women showed a very keen interest in casting their vote in the elections, the female turnout was also seen very high as compared to men. It is interesting to note that women, over the years, have been actively participating in electoral process and their turn out in state and Lok Sabha elections, have been impressive. The same trend has been noticed in the election to urban bodies in Rajasthan, particularly in the context of 50% reservation for women. The following table gives the total number of registered voters and the gender wise turn out in the elections to local bodies.

Table 1

Electorate, Voter Turnout & their Percentage

Population	Electorate on pre Poll Date	Voter Turnout	Polling Percentage
Total	10745882	6675341	62.12
Male	3152959	1874434	59.45
Female	7592923	4762281	62.72

Source: Report on municipal General Election (2014), State Election Commission, Rajasthan (Jaipur)

It is evident that percentage of women, exercising their vote, was more them 62% which was impressive. Thus, the women councilors did represent women substantively and hence were expected to be more sensitive to their needs and requirements in none too helpful social conditions.

Profile of Respondents: Women Councilors

Table 2 (See in the last page)

Interpretation - As is evident from the table above the councilors are young and hence supposedly mature enough to take up their civic responsibilities as per the expectations of their civic respective constituencies. It is a fair mix of very young and adults with above 51% representations in the 30-50 age group when a person is expected to acquire a wide-ranging understanding of his/her socio-political environment and an awareness and an awareness about civic problems of habitations Wherein he/she dwells. Experience gained owing to age id reflected thought 26.7% councilors in the age group of 50 and above, while 21.7% councilors ate those (under 30 year of age) who represents new generations and are expected to take up issue transcending routinised and traditionally grounded activities, generally characterizing the work of civic bodies. To what extent, the experience and youthful exuberance are translated into real performance is what this study contends to find out.

Education and Professional Qualifications Table 3 (See in the last page)

Interpretation - It is significant to note 34% councilors are ether graduates or post graduates. Literates, that is with below 8th class education constitute 22% of the total sampled councilors. 32% have secondary/ higher secondary education.

Thus 75% councilors have enough educational qualifications to deal with civic problems . In the context of women, it is indeed a pleasant augury giving enough scope to expects them to perform well in civic body. It is, however, a fact that 82% of them do not have any professional qualifications , through 8.33% have done B.Ed. and hence are expected to handles problems related to elementary education.

Table 4 (See in the last page)

Interpretation: It is evident that nether political parties nor the civic bodies (as per the responses of the women councilors) are interested in ameliorating the lot of women, who suffer silently domestic violence and other kinds of discriminations within the farmed any specific programmed for the betterment of women and as per the views of 80% women councilors there is no special emphasis on the problems faced by women in civic bodies too.

Table 5 - Voter's view about the performance of current women councilors

Respondents: 300

Response	No. of Respondents	%of Respondents
Yes	220	73.3%
No	80	26.6%
Total	300	100%

Interpretation - In table- It is found that out of 300 respondents, 70 % of the respondents have said Yes & they agree with the performance of current women councilors of 30% of the respondents have said No.

Evidently, he voters' have a positive view with regard to the performance of the present women councilors. 73.3% of them have expressed their satisfaction while 26.6% have expressed their disappointment.

Conclusion - Women often play an important role in urban development, particularly at the neighborhood level. In some contexts this is being recognised by urban policy makers and professionals and women's participation is sought in public-private partnerships which embrace community participation, urban regeneration or the problems of distressed or conflict-ridden areas. This is often for reasons of project effectiveness, although there is also a genuine and growing appreciation of the value and achievements of women, particularly in local development.

As mayors, chairpersons and councilors women would be enable to exercise in local self-government, their administ -rative, executive and political power in managing efficiently and effectively the management of urban local bodies

References :-

1. http://www.gdrc.org/u-gov/doc-whygendermatters.html
2. http://infochangeindia.org/women/news/50-quota-for-women-in-all-tiers-of-panchayati-raj.html
3. https://books.google.co.in/books?id = nJ0_bplC12QC &pg=PA22&lpg=PA22&dq=role+of+women+repre sentative+in+urban+development&source= bl&ots=i5JZrsEJZB&sig=P4HTQkbbJfZ5x1CsCni_ n3 H FGA0&hl=en&sa=X&ei=jd s D V a S f C J C j u gTm1oCg Cg&ved=0CEoQ6AEwCA#v=one page&q =role %20of% 20women% 20representative% 20in%20 urban %20development&f = false
4. http://dcmsme.gov.in/dips/DIPR_%20Banswara.pdf

Profile of Respondents: Women Councilors

Table 2

Age and marital status **Respondents: 50**

Age			**Marital Status**				
Age Group	**No. of Respondents**	**%**	**Married**		**Unmarried**		**Total %**
			No.	%	No.	%	
>30	12	21.7	59	98.3	1	1.7	50/100
30-50	22	51.6	-	-	-	-	-
50 and above	16	26.7	-	-	-	-	-
Total	**50**	**100**	-	-	-	-	-

Table 3
Education and Professional Qualifications

Respondents: 50

Education Qualification			**Professional Qualification**		
Education Qualification	**No. of Respondents**	**%**	**Professional Qualification**	**No. of Respondents**	**%**
Literate	13	26.0	B. Ed	5	10
Upto 8th	11	22.0	LLB	1	2
Upto 10th	5	10.0	LLM	1	2
Upto 12th	4	8.0	Nurse	1	2
Graduate	7	14.0	STC	1	2
Post-Graduate	10	20.0	Non-Professional	41	82
Total	50	100.00		50	100.00

Table 4
Civic Body, Political Parties and Women related problem

Respondents =50

Political Parties			**Civic Bodies**		
Special programme for Women			**Emphasis on Women issues**		
Yes/No	**No. of Responses**	**%**	**Yes/No Responses**	**No. of**	**%**
Yes	10	20	Yes	18	36
No	40	80	No	32	64
Total	50	100	Total	50	100

****

सामाजिक विधानों का महिलाओं पर प्रभाव एक समाजशास्त्रीय अध्ययन (ग्वालियर शहर के संदर्भ में)

अर्चना सेन *

शोध सारांश – महिलायें 50 वर्षो की आजादी के बाद पुरूष वर्ग की बराबरी में होती, शोषण एवं उत्पीड़न नहीं झेलती, राष्ट्र के विकास में प्रमुख स्तम्भ होती लेकिन संविधान में दिये गये अधिकारों की प्राप्ति और उसे अमल में लाने के लिये महिलाओं ने भी सक्रियता नहीं दिखलाई। केवल कानून बनने से या कानून के बारे में बात कर लेने से महिला सशक्तिकरण नहीं हो सकता है उसके लिये सामाजिक सोच में परिवर्तन लाना पड़ेगा। आज भी अधिकांश महिलाओं को सामाजिक विधानों के बारे में जानकारी प्राप्त नहीं है और उनमें जागरूकता की कमी है। सामाजिक विधान बनने के बाबजूद भी महिलाओं की स्थिति मध्यम ही है। महिलाओं को शिक्षा स्वास्थ्य एवं उनकी स्थिति को सुधारने के प्रयास लम्बे समय से किये जा रहे हैं किन्तु अभी भी बहुत कुछ करना बाकी है, साथ ही यह निश्चित करना कि वे जीवन के प्रत्येक क्षेत्र तथा गतिविधि में खुलकर भागीदारी निभायें।

प्रस्तावना – समाज में नारी की स्थिति जितनी मजबूत होगी, समाज उतना ही विकसित और प्रभावपूर्ण होगा, हमारे धर्मग्रन्थों में भी लिखा गया है– 'यत्र नार्यस्तु पूज्यंते रमन्ते तत्र देवता' अर्थात् जहां नारियों का सम्मान व उनकी पूजा होती है, वहां देवता निवास करते हैं।

किसी भी समाज की संरचना, सांस्कृतिक प्रतिमान तथा मूल्य प्रणाली पुरूषों व स्त्रियों दोनों लिंगो की व्यवहार संबंधित सामाजिक प्रत्याशाओं पर प्रभाव डालते है और समाज में स्त्रियों की भूमिका व स्थिति एक निश्चित सीमा तक निर्धारित करते है। भारतीय समाज में इस संबंध में सबसे अधिक महत्वपूर्ण संस्थाये, वंशक्रम प्रणालिया, धार्मिक परंपरायें, पारिवारिक संगठन व विवाह है, जो पुरूषो व स्त्रियों उनके अधिकारों और कर्तव्यों की घटनाओं को नैतिक आधार प्रदान करती है। इन सभी संस्थाओं ने एक स्त्री के लिये परंपरागत रूप से लड़की, पत्नी, गृहिणी एवं माँ इन चार स्तरों वाली भूमिका व स्थिति क्रम निश्चित किया है किसी भी युग में सभ्यता तथा संस्कृति के निर्माण एवं विकास में कन्या, पत्नि और माता तीनों रूपों में नारी का योगदान महत्वपूर्ण माना गया है। नारी के प्रति सम्मान की मात्रा समाज की सभ्यता का एक मापदण्ड माना जाता है।[1] इसलिये हम किसी भी युग की स्थिति का आकलन उस युग की नारी की स्थिति से कर सकते है। प्रत्येक युग के समाज में नारी की स्थिति में होने वाले परिवर्तन व्यवस्थापकों के लिये चिंतन का विषय रहे है। सामाजिक मान्यताओं के अनुरूप समय–समय पर नारी की स्थिति में भी परिवर्तन हुये है

प्राचीन काल में विशेषकर वैदिक युग में महिला का बहुत समादर था। महिलाओं की स्थिति शिक्षा, विवाह, संपत्ति आदि के संबंध में पुरूषों के समान थी, वे संस्कृति की वाहक थी, किंतु यह भी सत्य है कि जहाँ तक अधिकारों का संबंध है पितृसत्तात्मक समाज के ढांचे के अंतर्गत स्त्रियों के अधिकार सीमित ही थे।[2] वैदिक काल के बाद से ही स्त्रियों के स्थान पद में उतरोत्तर गिरावट प्रारंभ हुई एवं उत्तरवैदिक काल तथा मुख्यत: मध्यकाल में स्त्रियों की स्थिति अत्यधिक निम्न हो गयी वैदिक काल के पश्चात ही सामाजिक विचारधारा और कानून की दृष्टि से समाज में स्त्रियों के लिये पराधीनता सूचक विधि विधानों की नींव पड़ी।स्त्रियों की स्थिति के लिये मुगल काल काला युग सिद्ध हुआ। पुरूष के लिये स्त्री केवल उपभोग की वस्तु बनकर रह गई। इस युग में स्त्री सभी अधिकारों से वंचित हो गई तथा वह घर की चारह दीवारी में बंद हो गई। पर्दा–प्रथा एवं बाल विवाह के कारण महिलायें शिक्षा से वंचित हो गयी, जागरूकता में कमी आई, विधवा विवाह निषेध, विधवाओं की अमंगल सूचक, अभिशापित स्थिति, सतीप्रथा, जौहरप्रथा जैसी सामाजिक कुरीतियों का जन्म हुआ।

ब्रिटिश काल में स्वतंत्रता प्राप्ति से पूर्व यद्यपि स्त्रियों की स्थिति को सुधारने के लिये प्रयत्न हुये तथा हमारे देश के अनेक समाज सुधारको – स्वामी दयानंद सरस्वती, राजा राम मोहन राय, ईश्वर चंद्र विधासागर, श्रीमती एनीबीसेंट आदि ने समाज में व्याप्त कुरीतियों को समाप्त करने तथा महिलाओं में सामाजिक चेतना को उत्पन्न करने तथा समाज की कुप्रथाओं के विरोध में सरकार से अधिनियम बनाने के लिये दबाव डाले। परंतु इन प्रयासों के बाद भी व्यवाहारिक रूप से महिलाओं की स्थिति में कोई विशेष सुधार नहीं हो सका है।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद समाज सुधारको के द्वारा इस दिशा में स्त्रियों के अधिकारों की सुरक्षा हेतु एवं स्त्रियों की निर्योग्यताओं को दूर करने के लिये अनेक अधिनियम पारित किये गये एवं पूर्व प्रचलित विधानो में आवश्यक संशोधन व सुधार किये तथा नवीन कानूनो का सृजन किया गया। इस दृष्टि में विधवा पुनर्विवाह अधिनियम (1856), सतीप्रथा निषेध अधिनियम (1829), बाल विवाह अवरोध अधिनियम (1929), संपत्ति अधिकार अधिनियम (1937), विवाह विच्छेद अधिनियम (1956), हिंदू विवाह तथा विशेष विवाह अधिनियम (1956), हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम (1956), लड़कियों से संबंधित अनैतिकता व व्यापार संबंधी अधिनियम (1956), दत्तक ग्रहण अधिनियम (1956), दहेज निरोधक अधिनियम (1961), मातृत्व लाभ अधिनियम (1961), अशिष्टिरूपण प्रतिषेध अधिनियम (1986) विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

उपलब्ध–साहित्य की समीक्षा – 'सामाजिक विधानों का महिलाओं पर प्रभाव' के अध्ययन में निम्नलिखित समाजशास्त्रयों का अध्ययन का उल्लेख किया गया है।

डॉ. ए.एम. अल्टेकर 1956[3] द्वारा किया गया अध्ययन पोजीशन ऑफ वूमन इन हिंदू सिविलाइजेशन पर है। डॉ. अल्टेकर ने स्त्रियों का

* शोधार्थी (समाजशास्त्र) 42 बी/ए, विकास नगर, फूलबाग, ग्वालियर (म.प्र.) भारत

प्रागैतिहासिक काल से लेकर वर्तमान समय तक की स्थिति का अध्ययन किया है अपने अध्ययन में प्रमुख रूप से जिन मुद्दो की ओर अल्टेकर ने विशेष ध्यान दिया है वे है – भारतीय नारी की बचपन व शिक्षा की समस्याऐं स्त्रियों की वैवाहिक जीवन की अनेक विषम समस्याऐं – समाज में विधवाओं की दयनीय स्थिति मनु के अनुसार विवाह ही नारी का उपनयन संस्कार है, पत्नी को पति सेवा उसी प्रकार करनी चाहिए जिस प्रकार शिष्य को गुरू की सेवा। नारी के जीवन का एक मात्र उद्देश्य परिपराण्यता तथा पति सेवा ही है।[4]

जहाँ तक विवाह संस्था में परिवर्तन का संबंध है अंग्रेजी शासन काल के प्रारंभ से ही ऐसे कानून बनते रहे है, जिनके द्वारा विवाह के परंपरागत नियमों में परिर्वतन का प्रयत्न किया गया इसका उदाहरण बंगाल सती रेग्युलेशन एक्ट है जो 1829 में बना जिसमें सती के नाम पर महिला को जिंदा जलाने की कुप्रथा को समाप्त करने का प्रयास किया गया। बाद में इस विधान ने अनेकों संशोधन किये गऐ और इसे ज्ञातव्य अपराध माना गया। किन्तु वर्तमान समय में भी यदा–कदा सती की घटनाऐं घटित होती दिखाई देती है ,जो कि मानव हृदय की झकझोर देती है। जिसमें राजस्थान में सन् 1956 में जोधपुर के एक जागीदार की विधवा[5], सीकर जिले के नरसिंहपुर ग्राम की एक जुगल किशोरी (30 मार्च 1965)[6], इसके अलावा हाल ही में सलेहा (पन्ना जिला मुख्यालय) से साठ किमी. दूर पटना तमोली गाँव में साठ वर्षीय कुटू बाई सती हुयी।[7] इस तरह की घटनाऐं वर्तमान में महिलाओं पर बढ़ते हुऐ आर्थिक दवाब और पितृसत्तात्मक परंपराओं के पुन: सक्रिय होने की दिशा की ओर संकेत करते है।

ब्यावरा के आस–पास किये गये ग्रामों के सर्वेक्षण के अनुसार 63 प्रतिशत व्यक्ति ऐसे थे, जिन्हें यह ज्ञान ही नहीं था कि ऐसा कोई अधिनियम हमारी सरकार द्वारा पारित किया गया है तथा 75 प्रतिशत लोगों को तो यह ज्ञान भी नहीं था कि इस अधिनियम के द्वारा वर तथा वधू के लिए निम्नतम आयु क्या निश्चित की गई है।[8]

महिलाओं के प्रति घरेलू हिंसा कोई नवीन अत्याचार व घटना नहीं है। विश्व के सभी देशों मे महिलाओं पर अत्याचार किया जाता हैं। महिलाओं के विरूद्ध घरेलू हिंसा एक सार्वभौमिक समस्या हैं। कोई भी देश एवं समाज इससे नहीं बचा हैं। मानव समाज में महिलाओं के विरूद्ध व्यवहार के रूप में घरेलू हिंसा के रूप में एक स्वाभाविक घटना के रूप में हमेशा से देखा जाता रहा हैं, समाज आदिम हो या आधुनिक शिक्षित हो या अशिक्षित हर देश और समाज में घरेलू हिंसा का रूप देखने को मिलता हैं। ब्रिटेन में 25 प्रतिशत, श्रीलंका में 60 प्रतिशत, पाकिस्तान में 80 प्रतिशत और बांग्लादेश में 47 प्रतिशत महिलाऐं घरेलू हिंसा से पीड़ित हैं।[9]

अध्ययन के उद्देश्य –

1. प्रस्तुत अध्ययन का प्रमुख उद्देश्य महिलाओं/समाज के उत्थान में किये जाने वाले प्रयासों का मूल्यांकन है।
2. अध्ययन के अंतर्गत सामाजिक विधानों का वर्तमान स्थिति का आँकलन करना।
3. अध्ययन के माध्यम से यह जानने की चेष्टा की जायेगी कि प्रयासों में की गई या होने वाली त्रुटियों को कैसे सुधारा जा सकता है।

परिकल्पना –

1. सामजिक विधानों ने महिलाओं की स्थिति सुधारने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।
2. सामाजिक विधानों के बारे में अधिकांश लोगों को विशेष तौर पर महिलाओं को जानकारी नहीं है। लोगों में जागरूकता की कमी है।
3. सामाजिक विधानों का क्रियान्वयन सही तरीके से नहीं किया जाता है इनमें और अधिक सुधार की आवश्यकता है।

शोध विधि – प्रस्तुत समस्या को ध्यान में रखते हुये सर्वेक्षण विधि का उपयोग किया गया है।

न्यादर्श/प्रतिदर्श अभिकल्प – शोधार्थी द्वारा प्रस्तुत शोध अध्ययन में न्यादर्श का चयन हेतु उद्देश्यपूर्ण निदर्शन विधि का चयन किया गया है।

प्रयुक्त अध्ययन में शोधकर्ता ने 100 शिक्षित महिला उत्तरदाताओं को अध्ययन के लिये चुना है जिसमें 20 से 30 वर्ष की आयु की 30 प्रतिशत महिलायें एवं 30 से 40 वर्ष की आयु महिला उत्तरदाता 45 प्रतिशत तथा 40 से 50 वर्ष की आयु की 25 प्रतिशत महिला उत्तरदाता हैं। शैक्षणिक स्तर पर स्नातक शिक्षा प्राप्त महिला उत्तरदाता 50 प्रतिशत एवं स्नातकोत्तर महिलायें 30 प्रतिशत तथा स्नातकोत्तर स्तर से अधिक की महिलायें 20 प्रतिशत हैं। वैवाहिक स्थिति के आधार पर 65 प्रतिशत महिला उत्तरदाता विवाहित हैं तथा 35 प्रतिशत महिलायें अविवाहित हैं। पारिवारिक आय के आधार पर निम्न आय वाली (0 से 10000 रूपये) महिलायें 15 प्रतिशत, मध्यम आय वाली (10000 से 20000 रूपये तक) महिलायें 65 प्रतिशत एवं उच्च पारिवारिक आय (20000 रूपये से अधिक) वाली महिलायें 20 प्रतिशत हैं। पारिवारिक प्रतिमान के आधार पर संयुक्त परिवार की महिला उत्तरदाता 25 प्रतिशत एवं एकाकी परिवार की महिला उत्तरदाता 75 प्रतिशत हैं।

तथ्यों का संकलन – प्रस्तुत शोध प्रबंध में तथ्य संकलन हेतु दोनों प्रकार के स्त्रोतो का उपयोग किया गया है। शोधार्थी ने अपने शोध अध्ययन के लिये प्राथमिक तथ्यों का संकलन स्वनिर्मित प्रश्नावली तथा साक्षात्कार अनुसूची द्वारा सूचनाऐं एकत्रित की गई तथा द्वितीयक स्त्रोत के अंतर्गत विभिन्न पुस्तकालयों से पुस्तकों, पत्र, डायरिया, जनरल्स एवं पेपर आदि के द्वारा तथ्य संकलित किए गऐ है।

तथ्यों का विश्लेषण एवं व्याख्या – किसी भी विवेचनात्मक अध्ययन के लिए यह आवश्यक है कि संकलित की गई सामग्री को व्यवस्थित ढंग से प्रस्तुत किया जाऐ। अत: वर्गीकरण करने के बाद तथ्यों को सारणीबद्ध किया गया तथा सारणीयों के आधार पर निष्कर्ष निकाले गऐ।

भारतीय समाज में स्त्रियों की सामाजिक स्थिति कैसी है ?

तालिका क्रमांक – 01

सं.क्र.	प्रकार	संख्या	प्रतिशत
1	उच्च	15	15 प्रतिशत
2	मध्यम	70	70 प्रतिशत
3	निम्न	15	15 प्रतिशत
	योग	100	100 प्रतिशत

उपरोक्त सारणी के आधार पर कहा जा सकता है कि 70 प्रतिशत महिलायें मानती हैं कि भारतीय समाज में अभी भी महिलाओं की स्थिति मध्यम ही है। विभिन्न परिवर्तियों की दृष्टी से देखने पर 30 से 40 वर्ष की आयु की 45 प्रतिशत महिलायें जो कि स्नातक शिक्षा प्राप्त हैं और इनमें से कुछ विवाहित हैं तथा जिनकी पारिवारिक आय मध्यम है, परन्तु 15 प्रतिशत महिलाओं के अनुसार महिलाओं की स्थिति निम्न है।

क्या महिलाओं को विवाह से सम्बंधित कानून के बारे में जानकारी है ?

तालिका क्रमांक–2

सं.क्र.	प्रकार	संख्या	प्रतिशत
1.	हाँ	40	40 प्रतिशत
2.	नहीं	20	20 प्रतिशत
3.	ज्यादा नहीं	40	40 प्रतिशत

उपर्युक्त तालिका के आधार पर महिलाओं को विवाह से संबंधित कानून के बारे में जानकारी है। पूछने पर 40 प्रतिशत शिक्षित महिलाओं के अनुसार वह ज्यादा जानकारी नहीं रखते हैं एवं 20 प्रतिशत महिलायें ऐसी हैं जो स्नातक शिक्षा प्राप्त हैं उन्हें कानून के बारे में जानकारी नहीं है।

सामाजिक विधानों के क्रियान्वयन में कमी के लिये आप किसे जिम्मेदार मानते है। तालिका क्रमांक – 3

सं.क्र.	प्रकार	संख्या	प्रतिशत
1.	सरकार	80	80 प्रतिशत
2.	स्वयं महिलाओं को	05	05 प्रतिशत
3.	धर्मान्धता	03	03 प्रतिशत
4.	पुरूषवादी सोच	12	12 प्रतिशत

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट होता है कि अधिकांश उत्तरदाता 80 प्रतिशत महिलायें हैं जो सामाजिक विधानों के क्रियान्वयन में कमी के लिये सरकार को जिम्मेदार मानती है। इनमें से 30 से 50 वर्ष की 70 प्रतिशत महिलायें जिनमें कुछ स्नातकोत्तर एवं स्नातकोत्तर स्तर से उच्च शिक्षा प्राप्त हैं जो संयुक्त एवं एकाकी दोनों ही परिवार से हैं।

क्या सामाजिक विधानों को सही तरीके से लागू किया जाता है तालिका क्रमांक – 4

सं.क्र.	प्रकार	संख्या	प्रतिशत
1.	हाँ	10	10 प्रतिशत
2.	नहीं	90	90 प्रतिशत
	योग	**100**	**100 प्रतिशत**

उपरोक्त तालिका से स्पष्ट होता कि 90 प्रतिशत महिलाओं के अनुसार सामाजिक विधानों को सही तरीके से लागू नहीं किया जाता है। उनके अनुसार सामाजिक विधानों के पालन के लिये कठोर दण्ड का प्रावधान किया जाना चाहिये।

निष्कर्ष एवं सुझाव –

1. स्त्रियों की सामाजिक स्थिति अधिकाशं उत्तरदाताओं के अनुसार मध्यम ही है एवं 75 प्रतिशत उत्तरदाताओं के अनुसार स्त्रियों को पुरूषों के समान वास्तविक रूप से अधिकार प्राप्त नहीं है एवं अधिकाशं उत्तरदाता जिसमें 25 प्रतिशत शिक्षित पुरूष एवं शिक्षित महिला है जो कि उच्च आय वाले (20,000 से ऊपर) से संबंधित है विवाह से संबंधित कानून के बारे में ज्यादा जानकारी नहीं रखते है एवं 84 प्रतिशत उत्तरदाता के अनुसार महिलाओं को अपने अधिकारों के प्रति जागरूक होनी चाहिए उनके अनुसार केवल कनून बनने से ही महिलाओं को अधिकार संपन्न नहीं बनाया जा सकता।
2. संयुक्त परिवार के 30 प्रतिशत उत्तरदाताओं के अनुसार भारतीय परिवारों में घरेलू हिंसा अत्यधिक पायी जाती हैं स्नातक स्तर की 50 प्रतिशत महिलाओं का कहना है कि घरेलू हिंसा को कम करने के लिए महिलाओं में जन जागृति आवश्यक है।
3. सामाजिक विधानों के क्रियान्वयन में कमी के लिए 80 प्रतिशत उत्तरदाता सरकार को जिम्मेदार मानते है तथा 90 प्रतिशत शिक्षित उत्तरदाताओं के अनुसार सामाजिक विधानों को सही तरीके से लागू नहीं किया जाता है।
4. 92 प्रतिशत उत्तरदाताओं के अनुसार सामाजिक विधानों में वर्तमान में संशोधन की आवश्यकता हैं अधिकांश महिलायें 60 प्रतिशत के विचार से विधवा विवाह, विवाह – विच्छेद, संपत्ति अधिकार, दहेजनिरोधक अधिनियम आदि आज भी परंपरावादी विचारो के कारण सफल नहीं हो पा रहे है।
5. जहाँ तक इन सामाजिक विधानों के द्वारा महिला सशक्तिकरण में योगदान है पूछने पर 90 प्रतिशत उत्तरदाता इससे सहमत है जिनमें 60 प्रतिशत महिलाओं के अनुसार महिलाओं की सामाजिक स्थिति में पहले की तुलना में परिवर्तन आये है स्त्री को पुरूषों की तरह सभी क्षेत्रों में समान अधिकार मिल गये है, संपत्ति के अधिकार विवाह – विच्छेद का अधिकार, भरण पोषण एवं गोद लेने का अधिकार आदि ने स्त्रियों की सामाजिक प्रतिष्ठा में वृद्धि की है।

सुझाव –

1. यदि कानूनी प्रावधान के बजाय खुद महिला संगठन या स्वंय महिलायें समाज में आगे बढे तो सामाजिक विधानों को सही तरीके से लागू करने में सहायता कर सकती है।
2. महिलाओं को शिक्षित करने पर वह अपने अधिकारों के प्रति जागरूक होगी और भारतीय समाज में व्याप्त प्रथाओं, परंपराओं और रूढ़िवादिता को समाप्त किया जा सकता है।
3. घरेलू हिंसा अधिनियम लागू होने के बाद भी महिलाओं पर हिंसा को रोकना व्यवहारिक रूप से संभव नहीं हो सका है। महिलाओं पर हिंसा को खत्म करने के लिये सभी को एकताबद्ध होना होगा, महिलाओं के प्रति दैहिक संबंधो में समानता बरतनी चाहिए जिससे उनका दखल राजनीतिक शक्ति तथा आर्थिक संसाधनों तक हो। महिलाओं को दया की जगह अधिकार संपन्न, सशक्त और स्वाबलंबी बनाने का दायित्व सरकार, समाज और कानून सभी का है।
4. उच्च शिक्षित महिलाऐं एवं पुरूषों के अध्ययन से स्पष्ट हुआ है कि सामाजिक विधानों को सही तरीके से लागू नहीं किया जाता है। यह सामाजिक विधानो को कडाई से क्रियान्वयन करने के पक्ष में है तथा शिक्षा को रोजगारन्मुखी बनाया जाना चाहिए ताकि महिलायें आर्थिक रूप से जल्द से जल्द स्वतन्त्र हो और अपने निर्णय स्वयं ले सके उन्हें घर, परिवार एवं समाज में ये अधिकार दिया जाना चाहिए।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. A.S.अल्टेकट, 1956 द पोजीशन ऑफ कूमेन इन हिंदू सिविलाइजेशन (Banaras Motilal Hensi ; seeds publishers)
2. आदित्य नारायण चौपड़ा, नवम्बर 2006 घरेलू हिंसा कानून कहीं पुरूषों के लिये हिंसक न बन जायें, पंजाब केसरी नई दिल्ली।
3. सर. बी.वी. शाह, 1940 सोशल बेक ग्राउण्ड ऑफ बड़ौदा।
4. सर सी.टी. केनन, 1963 इंटर कास्ट एण्ड इन्टर कम्युनिटी मेरिज इन इंडिया।
5. सी.मेयर, 1960 कास्ट एंड किनशिप इन सेन्ट्रल इंण्डिया, पृ0 193
6. देसाई नीरा, 1982 भारतीय समाज में नारी – मैकमिलन इंण्डिया लिमिटेड – दिल्ली।
7. नीलम गुप्ता, 2003 शिक्षित हिदूं स्त्रियों पर सामाजिक विधानों का प्रभाव समाज शास्त्रीय अध्ययन।
8. सिन्हा कमला, 20 अगस्त 1972 वीकली हिंदुस्तान।
9. श्रीमती. जी.बी. देसाई, 1955वूमन्स इन मार्डन गुजराती लाइफ, एम.ए.थीसिस, बंबई पृ. 48–49.
10. श्रीमती विमलेश अग्रवाल, 1991 अप्रकाशित पी.ए.च.डी. शोध प्रबंध
11. यादव संतोष, 1987, 19 वीं और 20 वीं शताब्दी में स्त्रियों की स्थिति प्रिन्टवेल पब्लिशर्स, पृ. 153
12. कपाड़िया के.एम., 1958 मैरिज एण्ड फैमिली इन इण्डिया, ऑक्सफोर्ड युनिवर्सिटी प्रेस, बोम्वे।

जनंसख्या वृद्धि के प्रमुख कारण - एक अध्ययन

लाजवन्ती सावदे *

प्रस्तावना – भारत देश अत्यधिक जनसंख्या वाला देश है। जनसंख्या वृद्धि की दृष्टि से भारत का विश्व में चीन के बाद द्वितीय स्थान है, जबकि क्षेत्रफल की दृष्टि से भारत का विश्व में सातवाँ स्थान है। इससे यहाँ स्पष्ट होता है कि भारत-भूमि पर जनसंख्या का दबाव अपेक्षाकृत अधिक है। भारत के पास विश्व के कुल भौगोलिक क्षेत्रफल का 2.4% भाग और विश्व की समस्त आय का 1.5% भाग निवास करता है। इससे भारतीय अर्थव्यवस्था में जनसंख्या के संख्यात्मक आधिक्य का असंतुलित चित्र स्पष्ट होता है।

भारत राष्ट्र की जनसंख्या वर्तमान में संयुक्त राज्य अमेरिका और सोवियत रुस की सम्मिलित जनसंख्या से अधिक है। जबकि इन देशों के पास विश्व के कुल भौगोलिक क्षेत्रफल का 21.3% भाग और विश्व राष्ट्रीय आय का 40% भाग है। ये देश विश्व की जनसंख्या का केवल 12% है। भाग का ही भरण-पोषण करते है। इसी प्रकार भारत की कुल जनसंख्या अफ्रीका और लैटिन अमेरिका के समस्त देशों की जनसंख्या के योग के बराबर है। यह अनुमान किया जाता है कि भारत जनसंख्या वृद्धि में प्रतिवर्ष ऑस्ट्रेलिया की जनसंख्या के बराबर जनसंख्या जुड़ जाती है। इन समस्त तथ्यों से यह जानकारी होती है कि भारत पर जनसंख्या को बोझ अपेक्षाकृत बढ़ता जा रहा है।

जनसंख्या वृद्धि से संबंधित कुछ तथ्य निम्नलिखित है –

1. भारत हर दिन में अपनी जनसंख्या में 43281 व्यक्ति जोड़ लेता है।
2. भारत देश की जनसंख्या में वृद्धि हर 15 दिन में एक चंडीगढ़ (640725 जनसंख्या) और प्रत्येक माह में एक ऑस्ट्रेलिया (1.85 करोड़) की जनसंख्या के बराबर हो जाती है।
3. भारत में हर 12 महीने में जनसंख्या में वृद्धि लगभग (155 मिलियन) है जो फ्रांस की (58.4 मिलियन), ब्रिटेन की (58.8 मिलियन) और इटली की (57.36 मिलियन) की मिश्रित जनसंख्या से कुछ कम है।
4. भारत की जनसंख्या में लगभग एक दशक में 49% की वृद्धि चार राज्यों-बिहार, मध्यप्रदेश, राजस्थान, उत्तरप्रदेश में ही है, जिन्हें (BIMARU) के नाम से जाना जाता है।
5. सन् 2035 तक भारत चीन को पीछे छोड़ संसार का सबसे अधिक जनसंख्या वाला राष्ट्र बन जायेगा। जबकि चीन 123 करोड़ की तुलना में भारत की जनसंख्या 138 करोड़ होगी। भारत में वर्तमान में जब जनसंख्या वृद्धि दर 3.1% प्रतिशत है, जबकि चीन 2.1% प्रतिशत है।
6. वृद्धि की वर्तमान दर से अधिकांश भारतीयों का जीवन 30-40 वर्ष उपरांत असहनीय हो जायेगा। चिकित्सा सुविधाओं को उपलब्ध कराना अति कठिन हो जायेगा। शिक्षा, मकान आदि का खर्चा अत्यधिक हो जायेगा। तकनीकी और व्यवसायिक शिक्षा विशिष्ट व्यक्तियों का अनन्य परमाधिकार बन जायेगा और खाद्यान्नों की कमी राष्ट्र के तीन पंचमांश (Three-fifteen) भाग को निर्धनता रेखा के नीचे धकेल देगी।

जनसंख्या वृद्धि के निम्न कारण है –

1. अशिक्षा और अज्ञानता
2. जन्मदर में वृद्धि और मृत्यु दर में कमी
3. बाल-विवाह
4. अंधविश्वास और रुढ़िवादी प्रथाऐं
5. पुत्र की लालसा
6. गर्म जलवायु
7. परिवार नियोजन के साधनों के प्रति अविश्वास
8. सरकार एवं निजी संस्थाओं की उदासीनता

3. जनसंख्या वृद्धि से उत्पन्न समस्याएँ –

1. जीवन उपयोगी वस्तुओं की कमी
2. प्राकृतिक संसाधनों की कमी
3. बेरोजगारी एवं गरीबी
4. अशिक्षा एवं शिक्षा स्तर में गिरावट
5. स्वास्थ्य में गिरावट
6. जीवन स्तर में गिरावट
7. आर्थिक विकास पर प्रभाव

4. जनसंख्या वृद्धि को रोकने के उपाय –

1. राज्यों का खण्डों और क्षेत्रों में विभाजन
2. कम आयु में विवाह पर नियंत्रण
3. परिवार नियोजन के साधनों को अपनाना
4. शिक्षा का प्रचार-प्रसार
5. विवाह की आयु में वृद्धि
6. मनोरंजन के साधनों का विकास
7. सामाजिक जागरुकता

बढ़ती जनसंख्या वृद्धि को रोकने हेतु सुझाव –

1. बढ़ती जनसंख्या वृद्धि की जिम्मेदार गलत परंपराओं मान्यताओं, रुढ़ियों तथा अंधविश्वासों का तर्कपूर्ण ढंग़ से सामना कर समाज में जनसंख्या नियंत्रण हेतु प्रभावी वातावरण तैयार करना चाहिये।
2. जनसंख्या वृद्धि पर नियंत्रण लगाने के लिए समन्वित नीति अपनानी चाहिये , जिससे समाज सरकार और आम जनता की पूरी भागीदारी हो।
3. परिवार-नियोजन संबंधित ऑपरेशनों के बारे में फैली भ्रमपूर्ण जानकारियों को दूर कर सरकार को इस कार्य में योग्य एवं अनुभवी चिकित्सकों का प्रयोग्र किया जाना चाहिए।

* शोधार्थी, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

4. साक्षरता महिला एवं पुरुषों में खासतौर पर महिलाओं की शिक्षा पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए।
5. बाल-विवाह पर सरकार को प्रतिबंध लगा देना चाहिये, जिससे लड़कियों का कम उम्र में विवाह ना हो सके।
6. ग्रामीण क्षेत्रों में शिक्षा का प्रचार-प्रसार करना चाहिये।

निष्कर्ष – भारत की बढ़ती बे-लगाम जनसंख्या वृद्धि एक घोर अभिशाप बन चुकी है। जैसे-जैसे देश में जनसंख्या का आंकड़ा बढ़ेगा, वैसे-वैसे मनुष्य को अनेक कठिनाईयों का सामना करना पड़ेगा। बढ़ती जनसंख्या वृद्धि के कारण आम-आदमी की जरुरतों पर भी प्रभाव पड़ता है। यदि आर्थिक दृष्टि से एक ताकतवर समृद्ध एवं विकसित देश बनाना है तो जनसंख्या पर नियंत्रण हेतु गंभीरतापूर्वक जोरदार कदम उठाना होगा। देश का भविष्य एवं विकास अन्य सभी बातों से ऊपर होना चाहिए तथा इस दिशा में हमारे देश की सरकार को राजनीति से ऊपर उठकर कदम उठाना चाहिए। जनसंख्या वृद्धि से संबंधित योजनाओं को अमल में लाना चाहिये। नि:संदेह विश्व को अनेक समस्याओं से मुक्ति मिल सकती है। यदि जनसंख्या अनुकूलतम होगी।

भारत में जन्म एवं मृत्यु दर (प्रति-हजार)

वर्ष	जन्मदर	मृत्यु दर	जनसंख्या वृद्धि प्रतिशत में
1901-11	49.2	42.6	0.56
1911-21	48.1	47.2	0.09
1921-31	46.4	36.3	10.1
1931-41	45.2	31.2	14.1
1941-51	39.9	27.4	12.5
1951-61	44.3	22.8	21.5
1961-71	42.6	17.8	24.8
1971-81	40.15	15.4	24.75
1981-91	34.3	10.8	23.5
1991-2001	25.0	8.1	21.54

भारत में जनसंख्या वृद्धि (करोड़ों में)

वर्ष	जनसंख्या वृद्धि	वर्ष	जनसंख्या वृद्धि
1901	23.83	1961	43.91
1911	25.20	1971	54.80
1921	25.13	1981	64.48
1931	27.89	1991	84.84
1941	31.85	2001	120.00
1951	36.10		

विश्व की भावी जनसंख्या (लाखों में)

महाद्वीप	1970	1980	1990	2000
अफ्रीका	3480	4580	6200	8600
उत्तरी अमेरिका	2300	2720	3250	3880
लैटिन अमेरिका	2840	3870	5300	7560
एशिया	23430	25570	33170	44010
यूरोप	7130	7210	8780	9730
औसीलिया	184	220	267	325
विश्व की जनसंख्या	26264	44870	57047	74105

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. भारतीय अर्थव्यवस्था – डॉ. बद्री विशाल त्रिपाठी।
2. सामाजिक समस्याऐं – राम आहूजा।
3. जनसंख्या अध्ययन – डॉ. रजनी एस. जैन शषि के. जैन।
4. जनसंख्या एवं विकास – डॉ. यू.सी. गुप्ता।
5. भारतीय अर्थव्यवस्था – रुद्र द्रत्त के.पी.एम. सुन्दरम्।

****

भारत में महिलाओं के विकास में रूढ़िवादी प्रथाओं की चुनौतियां

डॉ. पूनम बजाज *

प्रस्तावना – किसी भी समाज में जब विकास की चर्चा की जाती है तो वह उसकी आधी आबादी के सहयोग के बिना अधूरा माना जाता है। विकास के विभिन्न आयामों यथा सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक किसी को भी जानने से पूर्व विकास की अवधारणा को जानना आवश्यक होगा। विकास के प्रत्यय में सकारात्मक दिशा में गुणात्मक परिवर्तन और परिमाणात्मक वृद्धि दोनों के साथ-साथ मानव तत्व को महत्वपूर्ण माना गया है।

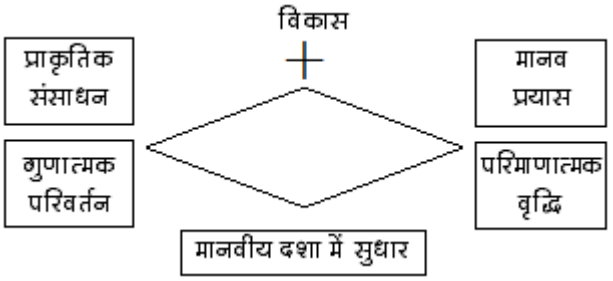

जब हम आर्थिक विकास की बात करते है तो उसका एक सामाजिक पहलू होता है। जैसे-जैसे आर्थिक के साथ सामाजिक विकास होता है वैसे-वैसे समाज के सदस्यों की व्यक्तिगत, आर्थिक, राजनैतिक नागरिक स्वाधीनताओं में वृद्धि होती जाती है। व्यक्तियों को अपनी इच्छानुसार एवं रूचि अनुसार व्यवसाय अपनाने, चिन्तन करने, विचारों को व्यक्त करने, राजनैतिक मत रखने, प्रशासक चुनने उन्हें बदल देने, विवाह करने की स्वाधीनता एवं शिक्षा प्राप्ति के अवसरों में वृद्धि होती जाती है।

महिलाओं के संदर्भ में जब इस विकास की बात करते है तो इसका अर्थ महिलाओं पर किये जाने वाले सरकारी व्यय की राशि में वृद्धि से नहीं बल्कि माध्यम से महिला वर्ग के जीवन पर पड़ने वाले वास्तविक एवं अप्रत्यक्ष प्रभावों से लिया गया है। भारत में महिलायें निम्न प्रस्थितियों में जकड़ी हुई है-

नारी की प्रस्थिति निर्माण में पितृ तंत्र का प्रभाव रहा है जो कि सभी समाजों एवं कालों में एक सार्वभौमिक परिवार व्यवस्था के रूप में विद्यमान रहा। पुरूष की शक्ति एवं सत्ता को इस व्यवस्था ने प्रबल किया है और नारी को निर्बल बनाकर उसकी अबला की छवि एवं स्थिति का निर्माण किया है। नारी के शरीर के कुछ ऐसे आयाम है जिनका सांस्कृतिक अर्थ विकसित कर दोहरे नैतिक मूल्यों की स्थापना की गई है। परिवार में लड़के का जन्म शुभ माना जाता है जबकि लड़कियों को विवाह उपरान्त परिवार का नाम, गोत्र आदि सब बदलने पड़ते है अर्थात एक व्यक्ति के रूप में उसकी स्वयं की पहचान का कोई अर्थ नहीं रह जाता। मातृत्व को गौरव प्रदान करने के लिए अनेक प्रतीकों का सहारा लिया जाता है। ये सारी संरचनायें पुरूष द्वारा निर्मित है वह पुरूष, धर्मगुरू, कवि, लेखक, पितृसत्तात्मक परिवार का सामान्य पुरूष या अन्य प्रस्थित में हो सकता है। एम.एन. श्रीनिवास विरोधाभासी कथन के रूप में बताते है कि विवाहित स्त्री मां तथा सास के रूप में जानी जाती है। लेकिन पुरूष 'भगवान एवं मालिक' के रूप में।

संस्थापक स्वरूपों में नारी की शक्ति-विहिनता को निरन्तरता की प्रक्रिया व प्रतिमानों से जोड़ने का प्रयास किया गया है। नारी के वैधव्य जीवन से जुड़ें प्रतिबंध, पर्दा प्रथा, सती प्रथा, दहेज एवं पितृसत्तात्मक परिवार व्यवस्था, पुत्र प्राथमिकता, परित्यक्ता, बांझ, वेश्यावृति, देवदासी प्रथा, बालिका वध जैसे संस्थात्मक एवं रूढ़िगत आयामों से नारी की प्रस्तुति को निम्न स्तरीय बनाकर सांस्कृतिक व सामाजिक मूल्यों, मानदण्डों व संरचनाओं से जोड़ दिया। नारी की इस विरोधाभासी छवि के साथ स्थान व काल की स्थितियां एवं अनुभव जड़े हुए हैं।

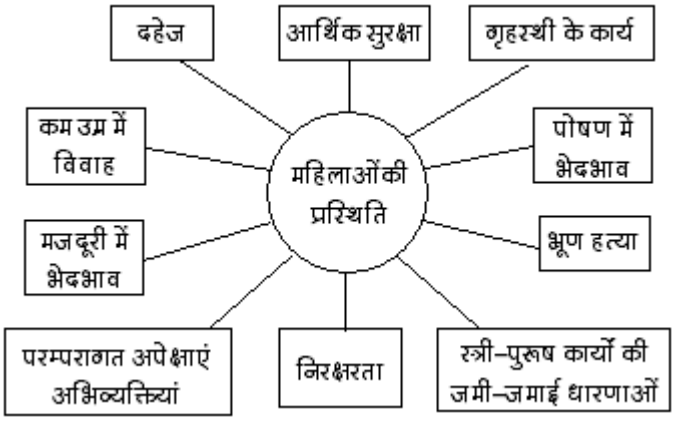

पर्दा प्रथा ने नारी के क्षेत्र को सीमित ही नहीं संकीर्ण भी किया। शारीरिक बंधन ने उसकी मौखिक अभिव्यक्ति पर भी प्रतिबंध लगाया जिससे उसकी मानसिक स्थिति व क्षमता में संस्थागत, ह्यास हुआ। इस प्रथा ने उसके संवादों को व अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को हीन बनाकर उसे केवल भोग्या के रूप में प्रस्तुत किया।

वैधव्य से जुड़ी हुई मान्यताओं ने नारी को अनेक अवसरों, स्थितियों व क्रिया-कलापों से वंचित किया। उसकी पोषाक, श्रृंगार, वर्जना, अशुभकारी परिदर्शन, विवाह-निग्रह व सम्पति अधिकार से वंचना ने उसके साथ अमानवीय व शोषित व्यवहार को प्रोत्साहन दिया। यह वर्जन-वंचना पुरूष के वैधव्य से जुड़ी हुई नहीं रही हैं।

बांझ शब्द का उपयोग महिला के संदर्भ में किया गया, जबकि संतान न होने की स्थिति का कारण पुरूष भी होता है।

वेश्या शब्द का उपयोग भी नारी से जुड़ा है और पुरूष के लिये कोई विशिष्ट शब्द नहीं है जो वेश्यागमन करना है।

* प्राध्यापक (समाजशास्त्र) चौधरी बालूराम गोदारा शासकीय कन्या स्नातकोत्तर महाविद्यालय, श्रीगंगानगर (राज.) भारत

देवदासी प्रथा द्वारा हजारों लड़कियों को ईश्वर के नाम पर उनके अधिकारों से वंचित कर केवल भोग्या के रूप में पुरूषों के सामने प्रस्तुत किया जाता है।

विवाह आज भी भारतीय समाज में महिला की उच्च प्रस्थिति हेतु आवश्यक है। कितनी ही अबूझ बच्चियों को शादी के बंधन में बांधकर उन पर शारीरिक और मानसिक वर्जनाऐं लाद दी जाती है। अविवाहित महिलाऐं और कुवांरी माताऐं समाज में हेय दृष्टि से देखी जाती है।

शिक्षा 1981-91 के दशक में महिला साक्षरता दर में वृद्धि हुई है लेकिन 60 प्रतिशत से अधिक महिलाऐं अभी भी निरक्षर है तथा ग्रामीण-शहरी महिला साक्षरता अंतराल भी बढ़ा है। ग्रामीण क्षेत्रों में लड़कियां देर से शिक्षा प्रारम्भ करती है तथा बीच में ही छोड़ देती हैं। यह हमारे समाज की लिंग के प्रति असंवेदनशीलता ही दर्शाती है।

स्वास्थ्य का स्तर उच्च उठाने में शिक्षा की महत्वपूर्ण भूमिका है लेकिन अज्ञानता तथा घरेलू दायित्वों का निर्वाह के कारण महिलाऐं बीमारी तथा अपने स्वास्थ्य के प्रति सचेत नहीं रहती। सर्वेक्षण बताते है कि सामाजिक-आर्थिक स्तर और अज्ञानता तथा प्रतिरोधक स्वास्थ्य सेवाओं के बीच एक निश्चित संबंध है यही कारण है कि हमारे यहां परिवार, कल्याण, सुरक्षित मातृत्व, शिशु रक्षा कार्यक्रमों के बावजूद प्रसव के दौरान सबसे अधिक मृत्यु होती है तथा अधिकतर महिलायें (लगभग 40 प्रतिशत) आयरन की कमी से पीड़ित रहती है।

व्यवसाय चुनने में भी सदा महिलाओं को परिवार का विरोध सहना पड़ता है तथा लिंग असमानता यहां भी स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। समुचित अवसरों, सहायता पहुंचाने वाले संस्थानों सही शिक्षा और व्यवसायिक प्रशिक्षण के अभाव में अनेक महिलायें प्रतियोगिता में हिस्सा लेने के दबावों से बचने को प्राथमिकता देती है।

कन्या भ्रूण हत्याके मामले हमारे देश में प्रतिवर्ष बढ़ते जा रहे हैं। भारत में तो कन्याऐं जन्म से ही उपेक्षा का शिकार होने लगती है। अनेक स्त्रियां स्वयं ही या तो पुत्र पाना चाहती है या फिर अपने परिवार के दबाव के चलते व पुत्र प्राप्ति के यत्न करने लगती है। यहीं अभिलाषा देश में जनसंख्या नियंत्रण के गणित को गड़बड़ा रही है।

महिला विकास के प्रमुख मापकों का निम्न बिन्दुओं से परीक्षण कर सकते है -

- महिलाओं के प्रति समाज के दृष्टिकोण में परिवर्तन।
- महिलाओं में स्वयं की स्थिति में सुधार एवं विकास हेतु चेतना जागृत होना।
- साक्षरता।
- स्वास्थ्य।
- पोषण।
- रोजगार शिक्षण प्रशिक्षण।
- विवाह के प्रति दृष्टिकोण।
- विभिन्न अंधविश्वासों परम्पराओं एवं रूढ़ियों के प्रति उनकी भावनाओं में परिवर्तन।
- राजनैतिक एवं आर्थिक क्षेत्रों में उनकी रूचि।
- शोषण के विरुद्ध आवाज उठाने की पहल।
- जीवन के प्रत्येक क्षेत्र के प्रति वैज्ञानिक दृष्टिकोण की उत्पति।

महिला विकास का संबंध प्रत्यक्ष रूप से राष्ट्रीय विकास के साथ भी है। महिला विकास के क्षेत्र में उनके स्वास्थ्य, शिक्षा एवं रोजगार तीनों पक्षों को लेकर नीतियां होनी चाहिए। महिलाओं से संबंधित राष्ट्रीय परियोजना 1988 तैयार की गई जिसका लक्ष्य महिलाओं से संबंधित मुद्दों को राजनीतिक और विभिन्न कार्यक्रमों से मुख्य धारा से जोड़ना या महिला के विकास में आने वाली प्रमुख रूकावटों में बार-बार गर्भधारण करना, प्रसव कुपोषण अधिक श्रम और तनाव के कारण स्वास्थ्य संबंधी समस्याऐं, शिक्षा का अभाव और आत्मनिर्भर आर्थिक गतिविधियों में कमी शामिल है उनमें अपने जीवन के तीन स्तरों शैश्वावस्था, युवावस्था तथा जननकाल में इसको सहना पड़ता है। यह विभिन्न चुनौतियां वर्षो से उसके विकास की राह में बाधा उत्पन्न करती आ रही है। यदि विकास में महिलाओं की भागीदारी सही रूप से प्राप्त करनी है तो परम्परागत रूढ़ियों से छुटकारा लेने की पहल उन्हें स्वयं करनी होगी क्योंकि प्रकृति प्रदत्त भेदों को छोड़कर ऐसा कोई कारण नहीं है जो उन्हें विकास के किसी पक्ष से दूर कर सके।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. भगवत शरण उपाध्याय, उड़ीसा के मंदिरों में यौन रूपायान, भारतीय समाज का ऐतिहासिक विश्लेषण, पब्लिशिंग हाउस (प्रा.) लिमिटेड, नई दिल्ली, 1973, पृ. 186-187
2. डॉ. प्रमिला कपूर, भारत में विवाह एवं कामकाजी महिलाऐं, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, 1976
3. मधु ज्योत्सना, नारी शिक्षा और ग्रामीण विकास, कुरूक्षेत्र वर्ष-45, अक-7 मई 2000, पेज 23-24
4. डॉ. अलका आर्य, खुशहाल देशों की बदहाल स्त्रियां, नवभारत टाईम्स नई दिल्ली, दिनांक 27 नवम्बर 1998
5. प्रो. नमिता अग्रवाल, महिलाऐं और श्रम, रोजगार समाचार, नई दिल्ली दिनांक 19-25 फरवरी 2000 पृ. - 2

****

द्वितीय विवाह वैयक्तिक आवश्यकताएँ सामाजिक परिप्रेक्ष्य

प्रो. सुशीला गायकवाड़ * डॉ. श्रद्धा मालवीय **

प्रस्तावना – विवाह मानव संबंधों का एक सबसे गहरा तथा सबसे जटिल बंधन है। विवाह मानव की व्यक्तिगत आवश्यकताओं एवं सामाजिक हितों के मध्य सेतु का कार्य करता है। राधाकृष्णन ने लिखा है, 'विवाह एक परिपाटी ही नहीं बल्कि मानव समाज का एक अन्तर्निहित लक्षण है। यह प्रकृति के जैविकीय प्रयोजनों तथा मनुष्य के सामाजिक प्रयोजनों के बीच एक समायोजन है। 'किन्तु मनुष्य की वे कौन सी आवश्यकताएँ है जिन्होंने विवाह को मानव जीवन की अनिवार्यता प्रदान की' ?

'काम'–तृप्ति की अभिलाषा जीवन का एक अदम्य प्रवृत्ति होती है। जीव सृष्टि के प्रारंभ से ही सेक्स का अस्तित्व रहा है, और सेक्स में कोई नयी बात न होते हुए भी वह सदैव विवाद और नैतिकता का विषय रहा है। 'कामभावनाएँ' चुंकि अदम्य होती है। अतएव यह आवश्यक हो गया कि उनकी पूर्ण संतुष्टि हो। किन्तु मानव समाज के सदस्यों ने यह आवश्यक माना कि इन आवश्यकताओं की पुष्टि के साधन ऐसे हो जो समाज हित के विपरीत न आते हो। पुणेकर और राव ने लिखा है– 'सामाजिक सामंजस्य तथा कल्याण को कम से कम कुछ हद तक बढ़ावा देने के लिए इसे किसी प्रकार अनुशासनबद्ध तथा संगठित किया जावे। इसलिए विवाह की प्रथा और उसके साथ संलग्न नैतिक आचरण के मानदण्डों ने विकसित होकर सामाजिक प्रचलन का रूप धारण कर लिया।'

सामाजिक नियन्त्रण और विवाह व्यवस्था की आवश्यकता प्रतिपादित करते हुए राधाकृष्णन ने लिखा है– 'आध्यात्मिक स्वतन्त्रता कामनाओं का स्वैच्छिक दमन करके नहीं बल्कि उनकी विवेकपूर्ण व्यवस्था करके प्राप्त की जाना चाहिए।' अत: काम उद्वेगों को रोकने के लिए सामाजिक नियमों का निर्माण हुआ।

मात्र काम वासना की पुष्टि विवाह का उद्देश्य नहीं। वैवाहिक संबंध कहीं अधिक गूढ़ और आत्मीय होते है। यौन क्रियाओं पर सामाजिक नियन्त्रण की आवश्यकता के पीछे जो रहस्य है वह यह कि सामान्यत: यौन संबंधों कपरिणिति सन्तानोत्पति में होती है और सन्तानोत्पति के साथ ही अनेकों समस्याएँ उठ खड़ी होती है। जैसे सन्तानों की वैधता की समस्या जो कि आर्थिक, सामाजिक एवं राजनैतिक हस्तांतरण में निर्धारक सिद्ध होते है, प्रमुख रूप से विवाह की आवश्यकता प्रतिपादित करती है। विवाह के माध्यम से परिवार का निर्माण होता है, और परिवार उन प्रेमपूर्ण संबंधों को जन्म देता है, जो मानव मन को असीम शान्ति प्रदान करता है। मानसिक शांति को प्राप्त करना और प्रियजनों को एक सूत्र में बांधना कुछ ऐसी मनोवैज्ञानिक आवश्यकताएँ है जो विवाह द्वारा पूर्ण होती है। यह सर्वमान्य तथ्य है कि विवाह प्रथा की उत्पत्ति अधिक उत्तरदायित्वों के लिंग के आधार पर हुए विभाजन के कारण हुई। आदिम युग में पुरूष का कार्य भोजन सामग्री एकत्रित करना व स्त्रियों और बच्चों की सुरक्षा का उचित पालन पोषण करना होता है। इस संदर्भ में राधाकृष्णन ने लिखा है– 'आदिम विवाह प्रणाली स्त्री की पराधीनता पर आधारित थी और उसका स्थायित्व क्षणभंगूर भावावेश पर नहीं बल्कि आर्थिक आवश्यकता पर आधारित था। अधिक सुव्यवस्थित जीवन पद्धति के विकास और संपत्ति के संचार के साथ वैध उत्तराधिकारियों के माध्यम से स्वामित्व प्रदान करने की इच्छा में विवाह की प्रथा को अतिरिक्त संबंध प्रदान किया।' चाहे आदिम युग हो या आधुनिक युग विवाह एवं परिवार के माध्यम से स्त्री पुरूषों की परस्पर आर्थिक आवश्यकताएँ सदैव पूर्ण होती रही हैं।

विवाह प्रथा चाहे किसी भी कारण से प्रारंभ हुई हो वर्तमान में वह जिस स्वरूप में है निश्चित रूप से वह मानव की जैविक, सामाजिक, आर्थिक व मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं की पुष्टि करने में सक्षम है। विवाह चुँकि जीवन की अनिवार्य आवश्यकता से जुड़ा होता है अत: समाज ने उसे नये स्थायित्व प्रदान करने के अनेक प्रयास किए। इन्हीं प्रयत्नों के फलस्वरूप अनेक सामाजिक नियमों का निर्माण हुआ ताकि तनावपूर्ण वैवाहिक संबंधों को विघटित होने से बचाया जा सकें। यही कारण है कि तलाक को समाज ने कभी प्रशांसा की दृष्टि से नहीं देखा। न तो अविाहित जीवन जीने की प्रेरणा समाज देता है न ही एकाधिक विवाहों की। हिन्दू धर्म में विवाह अनिवार्य माना गया है। ताकि जीवन के तीन उद्देश्य धर्म, अर्थ, काम पूर्ण किए जा सके और तीन उद्देश्यों की पूर्ति के द्वारा हिन्दू जीवन दर्शन के अंतिम लक्ष्य मोक्ष को प्राप्त किया जा सके, किन्तु हिन्दू धर्म में विवाह को धार्मिक संस्कार माना गया है और द्वितीय विवाह सामान्यत: प्रशंसित नहीं रहे है। किन्तु प्रत्येक विवाह स्थायी नहीं होता। मृत्यु तो किसी के वश में नहीं और तलाक भी यदाकदा होते ही रहे हैं। विवाह संबंध भंग हो सकते है, चाहे वे एक जीवन साथी की मृत्यु से हो अथवा तलाक से। वैवाहिक विघटन के साथ आवश्यकताएँ समाप्त नहीं हो जाती। जब आवश्यकताओं की पुष्टि सहज रूप में नहीं हो पाती तो अनैतिक साधनों का उपयोग किया जाता है, इन संदर्भों में अनैतिकता से बचने का एकमात्र उपाय 'विवाह' होता है। 1.जैविक 2.सामाजिक 3. मनोवैज्ञानिक 4.आर्थिक इन्हीं चार आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु चाहे वो महिला हो या पुरूष (पुरूष के लिए अधिक छोड़कर) को प्रथम विवाह के विघटित हो जाने पर द्वितीय विवाह की आवश्यकता अनुभव होती है क्योंकि एकाकी जीवन में अनेकों समस्याएँ उत्पन्न हो सकती है। जिनका सामना अकेले व्यक्ति के लिए संभव नहीं हो पाता किन्तु यही अकेला व्यक्ति जब दो हो जाते है तो आने वाली कठिनाइयों एवं समस्याओं से लड़ने की उनमें

* सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) माखनलाल चतुर्वेदी शासकीय कन्या महाविद्यालय, खण्डवा (म.प्र.) भारत
** सहायक प्राध्यापक (समाजशास्त्र) अटल बिहारी वाजपेयी कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

हिम्मत, ताकत व हौसला आ जाता है, और जीवन जीना आसान लगने लगता है। चुँकि आसान कुछ भी नहीं होता किन्तु जब एक ओर एक मिलते है तो दो नहीं ग्यारह हो जाते है।

द्वितीय विवाह से संबंधित जैविक, सामाजिक, आर्थिक एवं मनोवैज्ञानिक आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए इन्दौर शहर में निदर्शन पद्धति द्वारा सर्वेक्षण कार्य किया गया, साथ ही अनुसूची, प्रश्नावली एवं अवलोकन पद्धति के माध्यम से 300 उत्तरदाताओं पर एक सर्वे किया गया। द्वितीय विवाह की उपरोक्त आवश्यकताओं को निम्नलिखित सारणी द्वारा दर्शाया गया है। **सारणी क्रमांक - 1 (देखे)**

सारणी के अध्ययन से ज्ञात होता है कि महिला एवं पुरूष दोनों में ही द्वितीय विवाह की आवश्यकता अनुभव की गई है। 195 पुरूषों में से 54 प्रतिशत ऐसे पुरूष थे, जिन्होंने सामाजिक कारण के लिए द्वितीय विवाह किए जैसे पुत्र लालसा, संतानों के पालन-पोषण की समस्या या संतान विहीनता आदि कुछ ऐसे कारण है जिन्होंने पुरूषों को द्वितीय विवाह के लिए प्रेरित किया। वहीं 105 महिला में से मात्र 20 प्रतिशत महिलाएँ है जिन्होंने सामाजिक कारणों के चलते द्वितीय विवाह की आवश्यकता अनुभव की। जैविक कारणों को देखा जाए तो इसका सर्वाधिक 35 प्रतिशत पुरूषों में है और महिलाओं में 19 प्रतिशत ही है। इसका आशय यह है कि हमारे समाज में आज भी महिलाओं को खुलकर अपने विचार रखने की स्वतन्त्रता प्राप्त नहीं है और पुरूष हमेशा से अपने विचारों को खुलकर सामने ले आते है, क्योंकि उन पर कोई बंधन नहीं हैं। मात्र मनोवैज्ञानिक कारण ही एक ऐसा कारण है जिसमें महिलाओं का 9 प्रतिशत है और पुरूषों का 6 प्रतिशत ही है। मनोवैज्ञानिक कारणो जैसे अकेलापन से तनाव, साथीपन की इच्छा तथा प्रेम या स्नेह प्राप्ति। इन सभी कारणों की महिला हो या पुरूष दोनों को ही आवश्यकता होती है। और यदि प्रथम विवाह जीवनसाथी की मृत्यु से या तलाक से भंग हो जाता है तो इन मनोवैज्ञानिक कारणों की पुष्टि हेतु व्यक्ति अनैतिक कार्यों की ओर अग्रसर होने लगता है और यदि इन अनैतिक कार्यों पर रोक लगानी है तो विकल्प के रूप में द्वितीय विवाह से इन आवश्यकताओं की पुष्टि की जा सकती है। यही कारण है कि इन मनोवैज्ञानिक कारणों को ध्यान में रखते हुए परिवार के अन्य सदस्य ही यह निर्णय ले लेते है कि महिलाओं का द्वितीय विवाह कर दिया जाए जबकि पुरूष अपने निर्णय स्वयं देते है। आर्थिक कारणों की बात करें तो पुरूषों में इस कारण से द्वितीय विवाह कम ही होते है और महिलओं में सर्वाधिक है जिसे उपरोक्त सारणी द्वारा दर्शाया गया है। मात्र 5 प्रतिशत पुरूष ऐसे है जिन्हें आर्थिक कारण से द्वितीय विवाह की आवश्यकता महसूस की किन्तु 54 प्रतिशत महिलाओं को आज भी आर्थिक कारण से द्वितीय विवाह को अपनाना पड़ा।

इस प्रकार पुरूषों एवं महिलाओं दोनों ही को प्रथम विवाह भंग हो जाने पर द्वितीय विवाह की आवश्यकता विभिन्न कारणों जैसे आर्थिक, सामाजिक, जैविक एवं मनोवैज्ञानिक कारण से होती है। यदि महिलाएँ आर्थिक एवं मनोवैज्ञानिक कारणों से द्वितीय विवाह करती है तो पुरूष सामाजिक एवं जैविक कारण से द्वितीय विवाह को अधिक महत्व देते है। आज के इस भागम्भाग वाले दौर में मनुष्य अनेकों तनावों से ग्रसित होता है, जब वह अपने इन तनावों को कम करने का उपाय ढूंढता है तो उसे एक साथी की आवश्यकता होती है और यह साथी यदि जीवन साथी हो तो सोने पे सुहागा जैसे होगा। दिनभर की थकान, काम का बोझ जैसे तनाव एक ही पल में काफूर हो जाते है जब घर आकर एक कप चाय और साथ में पति-पत्नी।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. व्यक्तिगत शोध के आधार पर।

सारणी क्रमांक - 1

उत्तरदाताओं का द्वितीय विवाह की आवश्यकताओं के अनुसार विवरण

क्र.	परिवारिक प्रणाली	पुरूष		महिला		योग	प्रतिशत
		संख्या	प्रतिशत	संख्या	प्रतिशत		
1	आर्थिक कारण	10	5	54	52	64	21
2	सामाजिक कारण	105	54	21	20	126	42
3	जैविक कारण	68	35	20	19	88	29
4	मनोवैज्ञानिक कारण	12	06	10	09	22	08
	योग -	**195**	**100**	**105**	**100**	**300**	**100**

****

Wild Life Conservation : Issue And Policies

Dr. Mamta Barman *

Abstract - TIndia has a rich heritage of flora and fauna because of different climatic conditions. The different types of vegetation found in India are –

- Tropical Rain forests
- Tropical Deciduous forests
- Thorn and scrub forests
- Montane forests
- Mangrove forests

All the plants and animals in an area are interdependent and interrelated to each other in their physical environment, thus forming an ecosystem. Forests are important for human beings. Forests control soil erosion, modify local climate, regulate stream flow, support a variety of industries, provide livelihood for many communities and offer panoramic or scenic view for recreation. Wildlife Protection Act was implemented in India in 1972. Biosphere reserves have been set up, financial and technical assistance is provided to many Botanical Gardens by the government since 1992, many eco-developmental projects have been introduced, National Parks, wildlife sanctuaries and zoologicial gardens are set up to take care of Natural heritage.

Wildlife helps in maintaining the ecological balance in the environment. It is an essential feature of healthy biosphere. Flora and fauna are our national heritage.

Introduction - Our Country India is one of the twelve mega bio-diversity countries of the world. With about 47,000 plant species India occupies 10th place in the world and 4th in Asia in plant diversity. There are about 15,000 flowering plants in India which account for 6 percent in the world's total number of flowering plants. The country has many non-flowering plants such as ferns, algae and fungi. India also has 89,000 species of animals as well as a rich variety of conservation policies:

Conservation Policies - Government have taken few steps to protect the wild life. Hunting is banned and defaulters are to be punished. **Wildlife protection Act**, was implemented in India in 1972. Financial and technical assistance is provided to many Botanical Gardens by the government since 1992. Project Tiger, Project Rhino, Project Great Indian Bustard and many other eco developmental projects have been introduced. 89 National Park, 490 Wildlife Sanctuaries and Zoological Gardens are set up to take care of natural heritage. Fourteen biosphere reserves have been set up in the country to protect flora and fauna in their natural hibitate, e.g., sunderbans in West Bengal Nanda Devi in uttarakhand, Gulf of mannar (Tamil Nadu) and the Nilgiris are included in the world Heritage List.

Natural vegetation - Natural vegetation refers to a plant community which has grown naturally without human aid and has been left undisturbed by humans for a long time. This is termed as **virgin vegetation**, which are purely Indian, are known as endemic or indigenous species but those which have come from outside India are termed as exotic plants. The term **flora** is used to denote plants of a particular region or period, similarly, the species of animals are referred to as fauna.

Today natural vegetation has not been left natural anymore because- various new species of plants are raised in laboratories and they are planted to have better results, and human interference is continuously increasing day by day, which is deteriorating the quality of nature and is harmful for humans too.

Forests are renewable resouces. Trees are helpful in the conservation of wildlife and play a major role in enhancing the quality of environment. They modify local climate, control soil erosion, regulate stream flow, support a variety of industries, provide livelihood for many communities and offer panoramic or scenic view for recreation. It provides human to the soil and shelter to the wild life.

Land, soil, temperature, photoperiod, precipitation are responsible factors for a great variety of wildlife. Flora and fauna are our national heritage and an essential feature of healthy biosphere. All the plants and animals in an area are interdependent and interrelated to each other in their physical environment, thus, forming an ecosystem. Human beings are also an integral part of the ecosystem. A very large

* Asst. Professor (Psychology) Govt. P.G. College, Narsingpur (M.P.) INDIA

ecosystem on land having distinct types of vegetation and animal life is called a biome. **The biomes** are identified on the basis of plants.

India is also rich in its fauna. It has more than 89,000 of animal species, 12000 species of birds. They constitute 13% of the world's total. Bird life in India is colourful.

We have selected our crops from a bio-diverse environment i.e. from the reserve of edible plants. We also experimented and selected many medical plants. The animals were selected from large stock provided by nature as milch animal. They also provided us draught power, transportation, meat, eggs. The fish provide nutritive food. Many insects help in pollination of crops and fruit trees and exert biological control on such insects, which are harmful. Every species has a role to play in the ecosystem. Hence conservation is essential.

India's natural vegetation has undergone many changes due to several factors such as the growing demand for cultivated land, development of industries and mining, unrbanisation and over-grazing of pastures. Biodiversity is necessary and its conservation is important. It is essential for the normal functioning of ecosystems. It is an important link in our food chain. All of us must realize the importance of the natural ecosystem for our own survival. It is possible if indiscriminate destruction of natural environment is put to an immediate end.

References :-

1. Internet sources
2. Jain, S.K.,: Dictionary of Indian Folk Medicine and ethno botany. Deep Publication New Delhi India (1991)
3. जोशी, रतन 2004: पर्यावरण अध्ययन, साहित्य भवन आगरा उ.प्र.।
4. NCERT: Social Science
5. तिवारी, डॉ. विनय कुमार – पर्यावरण अध्ययन।

****

जनजातीय समूह (वंचित समूह) - शासकीय प्रयास एवं सुझाव

सुधा शाक्य *

शोध सारांश – भारत में विविध समाज एवं संस्कृतियां एक साथ रह रही हैं। प्रत्येक समाज की अपने मूल्य, विश्वास, परम्पराएं एवं संस्कृति है। इन समाजों में आर्थिक दृष्टि से भी विभिन्नता है। प्रथम श्रेणी में उच्च तथा मध्यम वर्ग के वे लोग आते हैं जो सामाजिक, आर्थिक तथा शैक्षिक दृष्टि से सम्पन्न है। द्वितीय श्रेणी में उस वर्ग के लोग आते हैं जिनके पूर्वज आर्थिक एवं शैक्षिक दृष्टि से सम्पन्न थे, परन्तु आज उनकी स्थिति अच्छी नहीं है। तृतीय श्रेणी में वे लोग आते हैं, जो सामाजिक आर्थिक एवं सांस्कृतिक दृष्टिकोण से पिछड़ें हैं, और उनके पूर्वज भी ऐसे ही थे। इस वर्ग को सामाजिक आर्थिक रुप से अलाभान्वित या वंचित समूह कहा जाता है। प्रस्तुत शोध आलेख सामाजिक-आर्थिक रुप से वंचित समूह की विभिन्न समस्याओं, समाधान, शासकीय प्रयास एवं योजनाओं एवं उन्हें समाज की मुख्य धारा से जोड़ने और उन्नयन करने के उद्देश्य से एक मनोवैज्ञानिक विश्लेषण है। सामाजिक एवं आर्थिक स्तर पर वंचित होने के कारण इन्हें भरण-पोषण, शिक्षा में अरुचि, सम्मान में अभाव, बौद्धिक योग्यता की कमी, रुढ़िवादी संस्कारों से जकड़े रहने, आत्मनिर्भरता एवं आत्मविश्वास की कमी, उपेक्षा, हीन भावना, कुसमायोजन एवं अन्य लोगों की नकारात्मक प्रवृत्ति की समस्या का सामना करना पड़ता है। इन सभी समस्याओं के समाधान हेतु शासन द्वारा विभिन्न शासकीय योजनाएं लागू एवं क्रियान्वित हो रही हैं, परंतु इसके अलावा शारीरिक, मानसिक, शैक्षिक, नैतिक एवं सामाजिक विकास हेतु मनोवैज्ञानिक एवं परामर्शदाता की योजनाबद्ध तरीके से परामर्श देने में महत्वपूर्ण भूमिका है। जिससे इस वंचित वर्ग में आत्मविश्वास, भाषा विकास, अभिप्रेरणा, आत्मनिर्भरता, उत्तम स्वास्थ्य, समायोजन, सुरक्षा, सामाजिक प्रतिष्ठा, नकारात्मक प्रवृत्तियों से मुक्ति तथा हीनता की भावना से मुक्त कर समाज ने अन्य वर्गो के समकक्ष खड़ा कर सकारात्मक कदम उठाया जाए।

प्रस्तावना – भारत में हिन्दू समाज में जाति व्यवस्था एक ऐसी व्यवस्था है जिसमें कई आधारो पर विभाजन किया गया, जैसे वर्ण, कार्य, जाति आदि। इसमे से एक विभाजन मनु आदि स्मृतिकारो ने समृद्धि के लिए व्यवसाय के आधार पर चार वर्गो में विभाजित किया गया, उपदेशक एवं अध्यापक ब्राह्मण कहलाए, प्रशासक एवं योद्धा क्षत्रिय कहलाए, कृषक व्यवसायी और साहूकार वैश्य तथा श्रमिक सेवा और निम्न कार्य करने वाले शूद्र कहलाए। आर्थिक और सामाजिक दृष्टि से पिछड़े समाज अनेक प्रकार असुविधायुक्त जीवन यापन करने के लिए मजबूर है। सम्पन्न और गरीब समाज में अंतर सदियों से चला आ रहा हैं आर्थिक कठिनाईयों के कारण उन्हें सामाजिक असमानता, शिक्षा से वंचित, दास जैसा जीवन, और अन्य कई सुविधाओं से वंचित रहना होता हैं जाति भेद के कारण वे अनुसूचित जाति में रखे गए हैं, एवं जंगल, पहाड़, कंदराओं में रहने के कारण अनुसूचित जनजाति की श्रेणी में माने गए। भारत की जनसंख्या में 8.01 प्रतिशत जनसंख्या जनजातियों की है। भारत में मध्य प्रदेश अनुसूचित जनजाति जनसंख्या वाला तेरहवें स्थान का राज्य है। मध्य प्रदेश में सभी जिलों में आदिवासी लोग निवास करते हैं। मध्यप्रदेश में सबसे अधिक 1,21,111 से अधिक झाबुआ जिले में तथा भिण्ड जिले में सबसे कम 6720 आदिवासी व्यक्ति निवास करते हैं।

आदिवासी समूह के लोग जंगलों, पहाड़ों एवं कंदराओं में रहते हैं। विभिन्न समूहों में विभक्त होने के कारण जातीय भिन्नता भी है। धार्मिक निष्ठा बहुत प्राचीन तथा अंध विश्वासों पर चलती है। कम वस्त्र या बिना वस्त्र के भी रहते हैं। ये मांसाहारी होते हैं, साथ ही जीविकोपार्जन के लिए जंगली उपज का संग्रह, खेती, पशुपालन, दूध, माँस का सहारा लेते हैं। अनुसूचित जनजातियों में साक्षरता (सन् 2001) का अनुपात 41.2% बहुत कम है। पुरुष साक्षरता 53.6% की तुलना में स्त्री साक्षरता 28.4% बहुत कम है। जन जातियों में संबंध विच्छेद एवं तलाक का प्रतिशत 0.4 है। म.प्र. में नगरों में रहने वाले आदिवासियों में साक्षरता का 57.2% है। ग्रामीण भागों में 40% साक्षरता है। ग्रामीण स्त्रियों में साक्षरता 27.24% है। जबकि नगरीय स्त्रियों में साक्षरता 45.89% है। शासकीय प्रयासों से साक्षरता का प्रतिशत बढ़ रहा है।

वंचित समूह का संप्रत्यय – विकासशील एवं विकसित देशों में आज भी जनसंख्या का एक बहुत बड़ा भाग सामाजिक, शैक्षिक, सांस्कृतिक व आर्थिक सुविधाओं, मनोरंजन आदि से वंचित है। किसी भी वांछित चीज की कमी को वंचन कहा जाता है। एवांस (1978)-वंचन का तात्पर्य किसी ऐसी वस्तु को हटा देने या अत्याधिक सीमित कर देने से है, जो वस्तु, प्राणी के लिए अत्याधिक आवश्यक है। वर्तमान संदर्भ में 'वंचन' शब्द का उपयोग आर्थिक तथा सामाजिक वंचन के अर्थ में लिया जाता है। सामाजिक स्वीकृति या प्रतिष्ठा की कमी को सामाजिक वंचन तथा आर्थिक सम्पन्नता की कमी को आर्थिक वंचन कहा जाता है।

सामाजिक आर्थिक वंचन से तात्पर्य है कि समाज या संस्कृति के किसी सम्प्रदाय के लोगों को सामाजिक तथा आर्थिक सुविधाओं से वंचित कर देना। जैसे भारतीय परिवेश में आदिवासी लोगों को वे सामाजिक एवं आर्थिक सुविधाएं उपलब्ध नहीं है, जो उच्च जाति के व्यक्तियों को उपलब्ध हैं। इसी आधार पर आदिवासी लोगों की गणना वंचित समूह के रुप में की जाती है, और उच्च जाति व वर्ग के लोगों की गणना अवंचित समूह के रुप में की जाती है, अर्थात सामाजिक, आर्थिक वंचन का संबंध किसी जाति या वर्ग विशेष से नहीं है, इसमें वे सभी लोग आते हैं, जो सामाजिक एवं आर्थिक सुविधाओं से

* सहायक प्राध्यापक (मनोविज्ञान) शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, नरसिंहपुर (म.प्र.) भारत

वंचित हैं। सिंह(1983) ने पाया कि भारत में 38 प्रतिशत शहरी समाज तथा आदिवासी समाज आर्थिक रुप से वंचित वर्ग में आते हैं।

जेनसेन (1969) के अनुसार नीग्रो समाज आर्थिक रुप से वंचित वर्ग में आते हैं। व्यक्ति की सामाजिक आवश्यकताओं से वंचन जैसे सामाजिक प्रतिष्ठा, आकांक्षा स्तर, जीवन लक्ष्य, अनुमोदन आवश्यकता, उपलब्धि आवश्यकता, अधिकार आवश्यकता इत्यादि से वंचन, सामाजिक वंचन के अंतर्गत आते हैं। कोलमैन (1966) ने साजिद, (1984) में अध्ययन में पाया कि उच्च सामाजिक आर्थिक स्थिति वाले बच्चों की अपेक्षा निम्न सामाजिक आर्थिक स्थिति वाले बच्चों में सृजनात्मक योग्यता कम होती है।

विमला सक्सेना (1982) ने अध्ययन में पाया कि वातावरण संबंधी असुविधाओं के कारण बच्चों में बौद्धिक योग्यता तथा शिक्षण योग्यता का विकास अवरुद्ध हो जाता है। जे+कब्स और स्टर्न ने जनजाति एक ऐसे समूह को कहा है जो एक निश्चित भूभाग में रहता है, एक ही बोली बोलता है, जिसकी सांस्कृतिक परम्परा समान है, और आर्थिक दृष्टि से स्वतंत्र है। जन जातीय समाज छोटे-छोटे समूहों के जंगलों पहाड़ों एवं कंदराओं में रहते हैं, ये मांसाहारी होते हैं, तथा अशिक्षित होते हैं, जीविकोपार्जन का मुख्य साधन जंगली उपज का संग्रह खेती पशुपालन दूध मांस विक्रय होता हैं

गिलिन एवं गिलिन का मत है कि जनजाति किसी ऐसे स्थायी समुदायों के समूह को कहा जाता है जो एक सामान्य भूभाग पर निवास करता है एवं समान भाषा बोलता है और एक सामान्य संस्कृति का व्यवहार करता है।

वंचित समूह की शारीरिक, सामाजिक, मनोवैज्ञानिक एवं शैक्षिक समस्याऐं –

1. **शारीरिक विकास से संबंधित समस्याऐं –** आर्थिक रुप से वंचित होने के कारण संतुलित भोजन, अपेक्षित शारीरिक उपचार आदि के अभाव में लोगों में शारीरिक समस्याएं उत्पन्न हो जाती हैं। अध्ययनों में पाया गया है कि वंचित समूह के व्यक्ति अवंचित समूह के व्यक्तियों की तुलना में शारीरिक रुप से कमजोर होते हैं।

2. **समाजीकरण से संबंधित समस्याऐं –** सामाजिक विकास के अभाव में ये लोग वैयक्तिक, पारिवारिक तथा विभिन्न सामाजिक समस्याओं से ग्रसित हो जाते हैं। डेविस एवं शर्मा (2008) ने अध्ययन में पाया कि ये लोग न तो सामाजिक मूल्यों को सीख पाते हैं, और न ही विभिन्न समूहों के सदस्यों के साथ स्वस्थ्य संबंध स्थापित कर पाते हैं।

3. **पूर्वाग्रह से संबंधित समस्याऐं –** वंचित समूह के लोग कई तरह के पूर्वाग्रह जैसे जाति पूर्वाग्रह, वर्ग पूर्वाग्रह, जातीय पूर्वाग्रह से ग्रसित रहते हैं। हसन एवं शरण (1996) ने अध्ययन में पाया कि सामान्य बच्चों की अपेक्षा वंचित बच्चे विभिन्न तरह के पूर्वाग्रहों से अधिक पीड़ित रहते हैं।

4. **बौद्धिक विकास से संबंधिक समस्याऐं –** वंचन के करण वंचित समूह के लोगों का मानसिक एवं बौद्धिक विकास बाधित हो जाता है, सक्सेना (1984) ने अपने अध्ययनों में पाया कि जनजातीय बच्चों का बौद्धिक स्तर सामान्य से निम्न होता है प्रेमा एन. (2000) ने अध्ययन के आधार पर बताया कि उच्च जाति के असुविधायुक्त बालक-बालिकाओं की बौद्धिक योग्यता अधिक होती है, परन्तु उनकी शैक्षिक उपलब्धि उनकी बौद्धिक योग्यता के अनुकूल नहीं होती।

5. **शैक्षिक उपलब्धि से संबंधित समस्याऐं –** वंचित समूह में आर्थिक वंचन के कारण बच्चों में स्कूली शिक्षा का अभाव, शिक्षा के प्रति नकारात्मक अभिवृत्ति, शिक्षा में अरुचि, भाषा भंडार का अभाव, आदि पाए जाते हैं। पांडे (1980) तथा माथुर (2003) ने अपने अध्ययन में पाया कि वंचित बच्चों में कई तरह की शैक्षिक समस्याऐं देखी जाती हैं, जैसे स्कूल से अनुपस्थित रहना, परीक्षा में बार-बार असफल होना, संवेगात्मक अस्थिरता का शिकार होना। आर्थिक कठिनाई के कारण ये शिक्षा ग्रहण नहीं कर पाते।

6. **मनोवैज्ञानिक समस्याऐं –** वंचन के कारण वंचित समूह में कई मनोवैज्ञानिक समस्याएं उत्पन्न होती हैं। अवधान, प्रत्यक्षण, अधिगम, चिंतन, संप्रत्यय, निर्माण आदि से संबंधित संज्ञानात्मक प्रक्रियाओं पर वंचन का प्रतिकूल प्रभाव होता है।

दास एवं सिन्हा (1977) ने अध्ययन में पाया कि वंचित बच्चे संज्ञानात्मक प्रक्रियाओं से संबंधित क्षेत्रों में अवंचित बच्चों से बहुत पीछे रह जाते हैं। साथ ही इसके कारण उपलब्धि अभिप्रेरणा, आंकाक्षा स्तर, जीवन लक्ष्य आदि प्रेरणात्मक प्रतिरुपों का स्तर निम्न होता है। मिश्रा (1988) ने अध्ययन में पाया कि सभी प्रेरणात्मक प्रतिरुपों में वंचित बच्चों का प्रेरणात्मक स्तर सामान्य बच्चों के प्रेरणात्मक स्तर से काफी निम्न होता है। वंचन का आत्म संप्रत्यय तथा आत्म सम्मान पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है। मिश्रा (1975) ने अध्ययन में पाया कि वंचित समूह के बच्चों में अवंचित समूह के बच्चों की तुलना में आत्म सम्मान कम होता है।

इसके अलावा भी वंचित समूह हीनता की भावना से ग्रस्त रहता है। असुरक्षा, कुसमायोजन, स्मरण शक्ति का क्षीण हो जाना, व्यक्तित्व विकार, मद्यपान आदि की समस्या का सामना करना पड़ता है। सतसंगी पी. (1999) ने अध्ययन में पाया कि अनुसूचित जाति में छात्र-छात्राओं से अधिक समायोजित होते हैं, और उनकी शैक्षिक उपलब्धि की अभिलाषा भी अधिक होती है।

इस प्रकार वंचित समूह में बच्चों तथा महिलाओं को कई प्रकार की समस्याओं का सामना करना पड़ता है, और इससे जो तनाव उत्पन्न होता है जिससे उनमें कई प्रकार के मानसिक, शारीरिक व व्यक्तित्व के विकार उत्पन्न हो जाते हैं। जिनसे उन्हें मुक्त कराने कई प्रकार के प्रयास किए जा रहे हैं।

वंचित समूह के उत्थान हेतु शासकीय योजनाएं –

- उत्कृष्ट शिक्षा संस्थान (छात्रावास) योजना
- पोस्ट मैट्रिक छात्रावासों में आगमन भत्ता
- आश्रम योजना
- नि:शुल्क साइकिल प्रदाय योजना
- प्रशिक्षण सह उत्पादन योजना
- मध्यान्ह भोजन कार्यक्रम
- शिक्षा के लिए भोजन कार्यक्रम
- उत्कृष्ठ विद्यालय को राशि प्रदाय योजना
- स्वर्ण जयंती मध्य प्रदेश अनुसूचित जनजाति बस्ती विकास योजना
- सिविल सेवा प्रोत्साहन योजना
- नि:शुल्क गणवेश प्रदाय योजना
- शालेय शिक्षा कार्यक्रम
- छात्रगृह योजना एवं आवास योजना
- विकलांग आदिवासियों के आर्थिक उत्थान हेतु योजना
- विवेकानंद समूह बीमा योजना
- कन्या साक्षरता योजना
- प्रवीण्य छात्रवृति योजना
- राजीव गांधी खाद्यान सुरक्षा योजना

- मध्य प्रदेश आदिवासी वित्त एवं विकास निगम की योजना
- नाबार्ड योजना
- सामूहिक विवाह योजना
- अन्त्योदय योजना
- अन्नपूर्णा योजना
- रानी दुर्गावती स्वरोजगार योजना।

समस्याओं के समाधान हेतु मनोवैज्ञानिक परामर्श एवं सुझाव – वंचित समूह के व्यक्तियों के उत्थान एवं शिक्षा के लिए शासन द्वारा विभिन्न प्रावधान, योजनाऐं, कार्यक्रम एवं सुविधाऐं दी जा रही हैं। इसके अलावा कुछ मनोवैज्ञानिक परामर्श एवं सुझाव उन्हें शारीरिक एवं मानसिक रुप से सशक्त बने सकते हैं।

- भाषा विकास हेतु विभिन्न साहित्यिक गतिविधियों जैसे वाद–विवाद, परिचर्चा, भाषा, कविता पाठ, निबंध लेखन प्रतियोगिता आदि का आयोजन विद्यालयों एवं महाविद्यालयों में करवाया जाए।
- आत्मनिर्भरता के लिए पाठ्यक्रम को रोजगारोन्मुखी बनाया जाए साथ ही भ्रमण, कैंप मनोरंजन के कार्यक्रम में सहभागिता के अवसर प्रदान किए जाऐं।
- आत्मविश्वास के जागृत करने के लिए सामान्य ज्ञान, व्यक्तित्व विकास और विषय विशेषज्ञों से व्याख्यान करवाए जाएं।
- अभिप्रेरणा का स्तर उच्च करने हेतु हीनभावना को कम किया जाए तथा सफलता पर उन्हें कोई पुरस्कार तथा मौखिक प्रशंसा की जाए।
- उत्तम स्वास्थ्य हेतु जीवन शैली में परिवर्तन करने, नियमित स्वास्थ्य परीक्षण तथा स्वच्छता आदि का प्रशिक्षण दिया जाए।
- मानसिक दशा सुधारने हेतु दबाब, भय, तनाव को दूर करने योग आदि के प्रशिक्षण करवाए जाएं।
- सुरक्षा की भावना को जागृत करने हेतु आत्मरक्षा के प्रशिक्षण जैसे जूडो कराते आदि का प्रशिक्षण दिया जाए।
- सामाजिक प्रतिष्ठा को बचाए रखने के लिए उन्हें हेय दृष्टि से न देखकर आदर और सम्मान देने के साथ सामाजिक समारोहों में भागीदारी करने का समान अवसर प्रदान किया जाए।
- नकारात्मक सोच व प्रवृत्तियों को अन्य व्यक्तियों में समाप्त कर वंचित समूह के प्रति सकारात्मक सोच की प्रवृत्ति को उत्पन्न किया जाए।
- माता–पिता का शिक्षित होना बहुत अनिवार्य है, जिससे वे आगे की पीढ़ी को उच्च शिक्षा, उत्तम संस्कार, नैतिक मूल्य आदि दे सके।
- हीनता की भावना को त्याग कर स्वयं को शारीरिक एवं मानसिक रुप से सक्षम एवं सशक्त बनाना।

निष्कर्ष – निष्कर्षत: कहा जा सकता है कि जनजातीय समूह अर्थात वंचित समूह के व्यक्तियों की कई समस्याऐं होती हैं। जिनके निवारण हेतु शासन कई प्रयास कर रही है, परंतु मनोवैज्ञानिक परामर्श की महत्वपूर्ण भूमिका है, जिससे वे कई मनोवैज्ञानिक समस्याओं से उवरकर शारीरिक एवं मानसिक रुप से स्वस्थ्य रह सके, और एक खुशहाल जीवन व्यतीत कर सके।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. अस्थाना, मधु (2005)– निर्देशन एवं परामर्श, मोतीलाल बनारसी दास, प्रकाशन दिल्ली पृ. 478
2. हस्नैन, एम.(1994)–नवीन सामाजिक मनोविज्ञान, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा (उ.प्र.) पृ. 430
3. मिश्र, गिरीश्वर एवं जैन, उदय (1988) समाज मनोविज्ञान के मूल आधार, म.प्र. ग्रंथ अकादमी भोपाल (म.प्र.) पृ. 303
4. सिंह, अरुण कुमार (1996)–समाज मनोविज्ञान की रुपरेखा, मोतीलाल बनारसी दास प्रकाशन–नई दिल्ली, पृ. 625
5. सिंह, अरुण कुमार (2006)–उच्चतर सामान्य मनोविज्ञान, मोतीलाल बनारसी प्रकाशन नई दिल्ली, पृ. 212
6. शर्मा, श्रीकमल (2013) मध्य प्रदेश का भूगोल, म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी भोपाल(म.प्र.)
7. सिद्धकी, शादाब अहमद (2012)– मध्य प्रदेश संपूर्ण अध्ययन उपकार प्रकाशन आगरा (उ.प्र.)

****

Reconstructing The Indian Indenture Experience: Problem, Method And Scope Of Study

Dr. Siba Barkataki *

Abstract - The 19th century saw the abolishment of slavery. This step towards the freedom of man gave rise to a new system of labor that was contractual and under which the nature of work, duration (in terms of number of years) and working hours were fixed in advance. The export of millions of Indians to unknown shores and the repercussions of such a displacement is a memory that needs to be documented.
Keywords : Indenture, oppressive, historiography, reconstruction.

Introduction - An impressive documentary entitled: "Coolies: How Britain reinvented slavery" tells the story of how Indians became one of the most dispersed groups on this planet. The gigantic displacement of humans seems to be a lost chapter in Imperial history. It is therefore a story that needs to be reconstructed and restored. The present article on the Indian indenture experience is part of a continuous study that aims at reconstructing the memory of the Indian Indentured Labor System. It puts into perspective the need to create a theoretical framework that aims at recreating the experience of laborers under the Indian indenture system through an interdisciplinary study: combining historical records and literary writings of the Indian Diaspora.

The Indenture System saw the colossal displacement of Indian labor to various British colonies. According to UNESCO reports "The Indian Indentured Immigration was first accounted for in the 1830s and over a period of roughly 100 years 1,194,957 Indians were relocated to 19 colonies". The capitalist expansion of colonies created the need for a large number of laborers in labor intensive plantation works. The recruitment, transportation and the livelihood of the laborers were accounted for by the planters and their passage to their destinations was zealously supervised by the colonial administrators. In spite of well structured systems in place, the high mortality rate during transportation and on plantations tells a different story. Furthermore, the immigrants leaving their motherland for a stipulated time period hoped, most of all, to return. However, official documents reveal otherwise, which also goes to prove that "indenture, as a system of coercive labor, was a complex social and moral phenomenon, riddled with contradictions". Various aspects of the indenture system need to be reassessed in order to scientifically restore the memory of the laborers that constitutes an important element of the history of humanity. A systematic approach needs to be adopted that analyzes every phase of the indenture system starting from the process of recruitment, leading to his life in the plantations, up to life of the laborer after the expiry of his stipulated work tenure.

Suggestions - The recruitment phase, firstly, throws light on the socio-economic inadequacies that force a person to engage in the system. In an effort to escape poverty, the oppressive feudal system and caste bias, immigrants flogged from various regions of the country namely "eastern India, Bihar, north west provinces (present Uttar Pradesh), Madras, western India and Haryana". Although the colonial administrators put in place an efficient system that ensured fair and swift passage of the laborers from three ports namely Calcutta, Madras and Bombay, to their destinations, cases of coercion, fraud, kidnapping and rape were reported which points to the fact that the so called "well structured state regulated indenture system" was flawed. Life in the plantations was plagued by oppression: unhealthy working conditions, untimely payment of wages, isolation, severe punishments, racial discrimination and sexual abuse being a few aspects of the exploitation faced by the laborers. Once the laborers completed their term of work, the procedural complications and official reluctance made it impossible for them to return to their home land. Furthermore the untimely payment and nonpayment of wages forced them to reengage in the plantations. The indenture contract thus became for these helpless peasants a life sentence. Deprived of civic and political rights, the laborers faced the worst kind of exploitation that has serious repercussions even on modern day diasporic Indian communities. Very little scholarly work has been done on the nature of Indian indenture experience. As a result, "debates on the nature of the indenture system remain open and problematic". This field of study is in a state of relative infancy and therefore a coherent theoretical framework is required to put into perspective and scientifically restore the memory of the Indian indenture experience.

This giant exodus of man, undertaken in haste due to the dire need of cheap labor, generated a documentary

* Lecturer (French Language) Alliance Srancaise, Delhi (M.P.) INDIA

heritage of considerable importance: "government correspondences, private papers, published reports, Royal commission enquiries, newspaper accounts and so on". Although such conventional archival sources give us an extensive account of the mass movement of Indians, such documents, created and archived mostly by the colonial powers are far removed from the actual hardships faced by the immigrants. These accounts are "pragmatic and dispassionate" and do not provide sufficient information on the long and difficult sea journeys and on the lives of the laborers in the plantations. However a few testimonials by European sugarcane planters give a glimpse of the nature of enslavement that they faced: "The Indians are more docile and submissive and less exigent as compared to the blacks and although they are less productive, they are not driven by the capricious ideas of independence and idleness". Although these documents "offer a unique perspective of colonialism" and thus prove to be indispensable for historical studies, they fail to suffice the study of humanity, since the voices of the indentured laborers are not represented; for example, instances of the moral domination of indentured laborers in the plantations are missing in the existing documents. The accounts of the millions of unsuspecting travelers, unprepared for the arduous sea journey, that usually lasted for months, and clueless about the life they were about to embark upon in a strange land are stories that complete the historiography of the indentured laborer.

Findings - The Indian indentured labor system is not merely a historical phenomenon but an irreplaceable element of the Collective Indian Conscience. It is therefore important to invoke a change in perspective and welcome a collaborative approach between disciplines that allow a holistic study of the human experience: recruitment, transportation and the fate of the laborers in the plantations. An effective method of reconstruction of the Indian indentured labor experience would be the convergence of objective historical records, maintained by colonial administrators, and subjective writings by the diasporic Indian community, such as the writings on the experiences of Indian workers in the "Girmit colonies". As Brij V. Lal rightly points out in his article, there is a need to forsake "the traditional 'top-down' for what may be called the 'bottom-up' approach". The top-down approach depends mainly on the archival documents created by the colonial administrators. These documents although indispensable as historical evidence of the indenture system do not delve into the lives of those who engaged in the system. Literary works of the diasporic Indian population widens the field of research by offering new themes and perspectives that help to deepen our understanding of the indenture experience. As Sudesh Mishra observes in *From Sugar to Masala: Writing by the Indian Diaspora,* some major themes that help to trace the mental landscape of the indenture laborers are "panic, nausea, schizophrenia, hysteria, time-lag, estrangement, violence, nostalgia, madness" and so on.

Although literary accounts are often argued to be insufficient mechanisms in the process of scientific conceptualization, it is important to note that in the case of the Indian indenture experience, such literary accounts are the only documents that relate the collective experience of the millions of unknown men, women and children whose lives were completely uprooted. Furthermore, these stories help to analyze the points of convergence and divergence with the colonial records. The francophone writings from Mauritius and the Reunion islands of authors of Indian descent for instance, establish the gap that exists between their view of the indenture system and the exotic narrative of European travelers and colonial administrators; the reality scared by racial discrimination and oppression stands opposed to the idea of exotic landscapes and women. Prof. Carpanin Marimoutou in his communication entitled "The landscape in Reunion literature" delivered in Jawaharlal Nehru University, New Delhi on the 16th of January 2015, clearly points out the dual postulation that existed vis-à-vis the idea of the landscape. He states that the landscape for the European traveler and the master is in no way similar to the landscape for the slaves. The latter consider it as a place of work and refuge, characterized by extreme difficulty and terror.

A comparative study thus reformulates "the most fundamental of all historical questions: what actually happened, in contrast to what is usually accepted or assumed to have happened". Brij V. Lal suggests the use of two new techniques of scholarly enquiry: oral tradition and quantification. These two techniques along with the comparative method can widen the scope of study and authenticate findings as "the oral evidence help to correct some of the simple explanations which have been offered as to the nature of indenture experience". It is a known fact that many indentured laborers managed to come back to India at the turn of the century: "the vast majority of those who worked on the Kenya-Uganda railways returned to India after the end of their contract". Although this corpus represents a very small percentage of people that cannot speak for the experiences of the millions of Indians who left, it constitutes direct historical evidence.

On the other hand, an effective means of portraying the total indenture experience would be the documentation of diverse oral traditions: myths, legends, folksongs and anecdotes. Such a study holds considerable cultural importance, as the travel and subsequent evolution of myths and legends represent the richness and diversity of the Collective Indian Conscience, it is also an indicator of the cultural and social transformations undergone by the diasporic Indian communities over the years. This approach enables the researcher to humanize his methods and come closer to the lives of the people studied. It also helps to understand why the people actually engaged in the indenture system? On the other hand, quantification based on "census reports, statistics on rainfall, crop production, prices and wages, vital statistics and so on", provides an indirect but concrete means of determining the factors that affected the lives of the laborers.

Conclusion - The convergence of objective records and subjective writings within a theoretical framework aims at the reconstruction of historical facts and the restoration of the indenture memory. It leads to the rehabilitation of a memory that was never completely restored by the official records. The story of the Indian indenture system is a chapter of Imperial history that is lost in time and forgotten. It is important to revive the memory of the millions of innocent Indians who traveled to all corners of the world in order to replace the African slaves in European plantations. A study of the indenture system is thus indispensable as narratives of one's ancestral past completes our understanding of history and helps to reconcile with the paste, creating in the process a stronger foundation for the present. It also brings to light the opposing perspectives existing vis-à-vis a shared past: exotic landscapes versus violent terrains, economic expansion versus severe exploitation and freedom from caste bias versus moral domination. The amalgamation of fictional memory and historical memory holds the merit of filling the empty spaces and codifying the indenture experience.

References :-

1. Mishra, A K, "Indian Indentured Labourers in Mauritius", *Studies in History*, Sage Publications, 2009, 25:229.
2. Brij, V.Lal, "Indian Indenture Historiography: A note on problems, sources and methods", journals.lib.byu.edu, consulted on 11/03/2015, pp.33-37.
3. "Indentured labour from South Asia (1834-1917)", Striking Women:Migration. Web.striking-women.org, consulted on 13/03/2015.
4. Saha, Amit Shankar, "Perspective: Exile Literature and the Diasporic Indian Writer", *The Rupkatha Journal on Interdisciplinary Studies in Humanities*, www. rupkatha. com, consulted on 11/03/2015.
5. "Memory of the World Register: Records of the Indian Indentured labourers (Fiji, Guyana, Suriname, Trinidad and Tobago)", Ref N^{o}: 2010-35, http://www.unesco.org/new/fileadmin.
6. "Coolies: How Britain reinvented slavery", documentary storm.com

****

भारतीय संस्कृति का विश्व में संचार: एक रोमांचकारी गाथा

डॉ. नितिन सहारिया * डॉ. उमाशंकर पटले **

प्रस्तावना – भारत वर्ष का अतीत अत्यंत गौरवशाली रहा है इतिहास की गहराईयों में जाकर हम झॉकते हैं तो जो दृष्य हमारे नेंत्रों के सामने अभरता है वह यह है कि भारत सदियों से विश्व में मानव जाति के लिए प्रेरणा का केन्द्र रहा है। हमारे प्राचीन पूर्वजो ने 'कृ0वन्तो विश्वम्आर्यम' अर्थात सम्पूर्ण विश्व को श्रेष्ठ बनायेंगे और 'वसुधैवकुटुम्बकम' सम्पूर्ण वसुधा एक कुटुम्ब है तथा 'स्वदेशो भुवनत्रयम' तीनों लोक हमारे लिए स्वदेश है, की उदान्त भावना ले सम्पूर्ण विश्व में संचार किया तथा विश्व की सुख, समृद्धि, हेतु कला, कौशल तथा दर्शन का अवदान दिया। इसी कारण भारत प्राचीन काल से जगद्गुरू कहलाता रहा जिसकी झलक पाश्चात्य चिंतक मार्क ट्वेन के निम्न वक्तव्य में दिखाई देती है – 'भारत उपासना पंथो की भूमि, मानव जाति का पालना, भाषा की जन्म भूमि, इतिहास की माता, पुराणो की दादी एवं परंपरा की परदादी है। मनुष्य के इतिहास में जो मूल्यवान एंव सृजन सामग्री है, उसका भंडार अकेले भारत में है। यह ऐसी भूमि है जिसके दर्शन के लिए सब लालायित रहते हैं और एक बार उसकी हल्की सी झलक मिल जाए तो दुनिया के अन्य सारे दृश्यो के बदले में भी वे उसे छोड़ने के लिए तैयार नहीं होगे।'

एक प्रसिद्ध स्विस लेखक बजोरन लेंडस्ट्राम जिसने पुरातन मिस्रियों से लेकर अमेरिका की खोज तक 3000 वर्ष की साहसी यात्राओं और महान् खोजकर्ताओं की गाथा का अध्ययन किया, अपनी पुस्तक 'भारत की खोज' में लिखता है– 'मार्ग और साधन कई थे, परंतु उद्देश्य सदा एक ही रहा प्रसिद्ध भारत भूमि पर पहुचने का जो देश सोना, चाँदी, कीमती मणियों आदि रत्नो, मोहक खादो, मसालो, कपड़ो से लबालब भरा पड़ा था।' बजोरन लेडंस्ट्राम से मिलते–जुलते अनुभव अनेक चिंतको, शोधको यथा हीगल, गैलवैनो मार्कोपोलो आदि के हैं।

हजारों वर्षो तक जो देश जगद्गुरू व सोने की चिड़िया रहा, उस पर पिछले 1500 वर्षो में हुए बर्बर आक्रमणों, लूट और अंग्रेजों के 190 वर्षो के शासन में आर्थिक दृष्टि से देश का इतना शोषण हुआ कि सोने की चिड़िया कंगाल हो गई यहॉ के कृषि, उद्योग, व्यापार को नष्ट किया गया। दुनिया में भारत को फिर से जगदगुरू और सोने की चिड़ियॉ बनाने की चुनौति आज की पीढ़ी के सामने है। स्वाधीनता संग्राम के अनेक सेनानियों तथा चिंतकों ने भव्य भारत का जो स्वप्न देखा, उसे साकार करने का आह्वान आज की पीढ़ी के सामने है।

पूर्व राष्ट्रपति राष्ट्रभक्त डॉ0 ए.पी.जे. कलाम अपने अनुभव को अपने ग्रंथ– 'इंडिया टू थाउजेंट टवेंटी–टवेंटी: ए विजन फॉर न्यूमिलेनियम' मे लिखते हैं कि–

'ब्रिटिश लोग कोंनग्रेव्ह के बारे में सारी जानकारी रखते हैं, पर हम कुछ नहीं जानते उन महान इंजीनियरों के बारे में जिन्होने टीपू की सेना के लिए रोकट बनाया। इसका कारण यह है कि विदेशियत के प्रभाव और अपने बारे में हीनताबोध की मानसिक ग्रंथि से देश के बुद्धिमान लोग ग्रस्त हैं और यह मानसिकता देश के लिए सबसे बड़ी बाधा है।'

भारत नाविको का देश समुद्रवलयांकित भूमि के 'अमृतपुत्र' – सुसंस्कृत और विजिगीशु समाज इस पुण्यभूमि भारत पर गौरवपूर्ण एंव सम्पन्न जीवन जी रहा था। पुण्यभूमि के इन अमृतपुत्रो को फिर भी संतोष नहीं हुआ। अमृतपुत्र सोचते .....यह हमारा दायित्व है, इन सागरों को लॉघकर जाना होगा। विश्व के सभी मानवों को सुसंस्कृत बनाना होगा, आर्य (श्रेष्ठ) बनाना होगा। उन्होंने निश्चय किया और प्राचीन समाघोष का पुन: उद्घोष किया 'कृ0वन्तो विश्वमार्यम्'।

कोई फिर चल पड़ा साहसी वीरों का अविरत अखण्ड प्रवाह ! लहरों से जूझते हुए अनेक वीर सागर पार गये। कोडिन्य नामक वीर ने फूनान की संस्कृति का निमार्ण किया। कम्बू स्वयंभुव कम्बोडिया में पहुचा। चम्पा और अनाम के बलाढय हिन्दु राज्य उदित हुए। सुमात्रा में श्री विजय राज्य वैभव के शिखर पर पहुॅच गया। अश्ववर्मन नामक साहसी वीर और आगे जाकर बोर्निओ पहुॅचा। वहॉ से दक्षिण अमेरिका मानो एक पुकार पर दिखाई देता था। साहसी नाविको की नौकाएँ अमरीका के तट पर भी लग गयीं। वहाँ अस्तिक अथवा मय संस्कृति का उदय हुआ। सिन्धु संस्कृति सबसे प्राचीन संस्कृति है। सौराष्ट्र का लोथल था। ऐसा ही एक उत्खनन में प्राप्त नगर। कलियुगाद आठवीं सदीं (ई.पू. 24 वी शति) में निर्मित् उत्कृष्ठ समुंद्रपत्तन (बंदरगाह) नितांत शास्त्र शुद्ध प्रणाली से बना। मिश्र में सोपोटामिया, ईरान, आदि देशों के साथ इस समुद्रपत्तन से व्यापार चलता था। विविध देशों की रंगविरंगी मालवाही नौकाएँ वहॉ पर खड़ी रहती थी। लोथल के पत्तनो की जो मालिका आरंभ होती थी, वह कन्याकुमारी का चक्कर लगाकर बंगाल के ताम्रलिप्ति समुद्रपत्तन तक थी। पश्चिम में सोपारा (शूर्पारक) और भरूच (भृगुकच्छ) पत्तन विख्यात थे। मरूच पत्तक का उल्लेख हरिवंश पुराण में भृगुतीर्थ के नाम से हुआ हैं भगवान श्रीकृष्ण के अपने अनेक गुरू बंधुओ और गुरूवर्य आचार्य सांन्दीपनि के साथ भृगुतीर्थ से सागर–मार्ग द्वारा प्रभास पत्तन जाने की घटना हरिवंश पुराण में आती है द्वारका यादवो की राजधानी समुद्रतट पर ही थी, अरब सागर का प्राचीन नाम 'रत्नाकर' था। बंगाल की खाड़ी को 'महोदधि' नाम से पुकारा जाता था। दक्षिण के संगम साहित्य में पुराणो और संस्कृत काव्यो में सर्वत्र पाल वाले जलपोतो के उल्लेख मिलते हैं।

'सिंहावदान' नामक बौद्ध ग्रंथ में राजपुत्र विजय और उसके सात सौ सेवकों के ताम्रलिप्ति से सिंहलदीप (श्रीलंका) तक सागर मार्ग से जाने का वर्णन है।

काल की धारा से हम तक पहुॅचा नौकाशास्त्र का एकमेव ग्रंथ धार नगरी के राजा भोज द्वारा लिखित 'युक्तिकल्पतरू' है। उसमें दी जानकारी प्राचीन

* अतिथि विद्वान, शासकीय एम.एम. कॉलेज कोतमा, जिला–अनूपपुर (म.प्र.) भारत
** सहायक प्राध्यापक, शासकीय नर्मदा महाविद्यालय, होशंगाबाद (म.प्र.) भारत

भारतीय शास्त्रों के विषय में समादर बृद्धिगंत करती है उसमें नौकाओं के प्रकार, प्रयुक्त सामग्री की विविध जानकारी प्राप्त होती हैं।

संसार में शास्त्र शुद्ध ज्योतिर्विज्ञान एंव खगोल-विज्ञान का श्रीगणेश संर्वप्रथम भारत में हुआ। वेद एवं तैतरीय ब्राम्हण में उसका विवेचन है। दिशा जानने के लिए वे इस ज्ञान का उपयोग करते थे। 'मत्स्मयंत्र' (मैरिनर्स कम्पास) का कुछ स्थानो पर उल्लेख मिलता हैं। भारतीय नाविक लौहमत्स्य का प्रयोग करते थे। ऐसा उल्लेख कुछ अरब यात्रियों ने किया हैं सातवीं सदीं में भारत आये हुये चीनी यात्री 'इत्सिंग' ने अपना यात्रा-वृत्त लिख रखा है। वह चीन के कैन्टौन बंदरगाह से चलकर श्रीविजय अर्थात सुमात्रा द्वीप में आया। वहॉ से पुन: भारतीय जलपोत से उसने श्रीलंका की यात्रा की और श्रीलंका से समुद्र मार्ग से ही वह ताम्रलिप्ति आया।

नाविको की पश्चिम की ओर यात्रा मुख्यत: व्यापार हेतु होती थी, किन्तु वे जहॉ भी जाते अपना धर्म और संस्कृति साथ ले जाते। मिश्र और यूनान में भारतीय व्यापारियों ने अपने उपनिवेश स्थापित किये थे। पश्चिम में मिश्र, यूनान, और पूर्व में जापान, कोरिया, कम्बोडिया, इण्डोनेशिया आदि सब स्थानो की बडी मात्रा में वस्तुओं का निर्यात होता था। रोमन महिलाए भारतीय वस्त्रो पर टूट पड़ती थी। भारतीयो ने व्यापार को प्रधान लक्ष्य कभी भी नहीं माना। उनका लक्ष्य था भारतीय संस्कृति का प्रसार। शस्त्र-बल से बलात् मतान्तर करने का विचार भी कभी उनके मन में नहीं आया।

मूल बात यह है कि जब भारतीय वीर अपनी संस्कृति का शुभ संदेश लेकर चले तब ईसा मसीह का जन्म भी नहीं हुआ था। पैगम्बर मुहम्मद का जन्म तो तब से सैकड़ो वर्ष बाद हुआ। चीनी यात्री फहियान के शब्दो के नीति-नियमो का वर्णन करना हो तो ताला नाम की वस्तु की खोज अभी होनी थी, क्योकि उसकी कभी आवश्कता नहीं पड़ती थी। वास्तव में वह शासन था ही नहीं, वह था 'अनुशासन' महर्षि व्यास की प्रेरणा से वर्णन करना हो तो महाभारत के अनुसार- 'स्वधर्मेण प्रजास्तावत् रक्षन्ति स्म परस्परम्' ऐसी स्थिति थी।

इण्डोनेशिया, कम्बोडिया, इण्डोचायना, बोर्निओ आदि स्थानो पर प्राप्त हुए सैकड़ो संस्कृत भाषा के शिलालेख इसके प्रमाण हैं। जावा में अभी भी प्रचलित शक कालगणना भारत से अपना प्रत्यक्ष नाता बनाती है इस सभी देशो में प्रचलित वर्तमान साहित्य रामायण, महाभारत से अपना साम्य दर्शाता है। स्थान-स्थान के शिव, विष्णु और बुद्ध के मंदिर वहॉ के समाज का हिन्दुधर्म से निकट का संबंध प्रकट करते है। अंगकोरवाट (काम्बोडिया) तथा बोरोबुदर (इंडोनेशिया) के भव्य शिल्प अजिन्टा, बेरूल (अजंता-ऐलोरा) के शिल्प से सामीप्य बताते हैं। चम्पा, अनाम, पाण्डुरंग, बाली, कलिंग जैसे नगरो या राम, वर्मा आदि व्यक्तियों के अनेक विध नाम भारतीय परम्परा से अपना मधुर संबंध दर्शाते हैं। उनका रहन-सहन, परम्परा , पूजा-पद्धति, शास्त्र विधि, नीति-कल्पना, आचार -व्यवहार सबके पीछे से भारतीय परम्परा झॉकती है।

यह कैसे घटित हुआ ? किसके द्वारा घटित हुआ? उसका यह चमत्कार पूर्ण इतिहास है।''

म्यॉमा (ब्रम्हदेश)- म्यॉमा अर्थात का पगान नगर के समीपस्थ नत्लांग परिसर..... अतीत की रम्य स्मृतियॉ जगाने वाला .....पर इसी उदास भूमि पर एक प्राचीन विष्णु मंदिर के अवशेष खडे दिखाई देते हैं। निर्जन प्रदेश की नीरव शांति की पार्श्वभूमि पर सदियो से खड़ा यह खण्डहर रूप मंदिर अत: करण में एक अनामिक अस्वस्थता निमार्ण करता है।

म्याँमा का प्रचीन विष्णु मंदिर-

' नास्था धर्मे न वंसुनिचये नैतकामोपभोगे
यद् यद्भाव्यं भवतु भगवन् पूर्वकर्मानुरूपम्।
एतत् प्रार्थ्यं मम बहुतमं जन्मजन्मान्तरेऽपि
खत्पादाम्भो सहयुगगता निश्चला भवितरस्तु।।'

पगान से लगभग दो क्रिलोमीटर दूरी पर यह अभिलेख प्राप्त हुआ। अभिलेख का प्रारंभ इस श्लोक से होता है। केरल के प्रख्यात प्राचीन कवि कुलशेखर की 'मुकुंदमाला' की प्रार्थना है। कलियुगाद की 44 वीं शति में केरल का एक श्रेष्ठी (व्यापारी) म्यॉमा गया था, जब उसने इस प्राचीन विष्णु मंदिर का दर्शन किया, मंदिर में एक सभा मंण्डप बनवाया एक द्वार लगवाया और मंदिर में एक नन्दाद्वींप की स्थापना की।

चीन के मंगोल वंशीय सम्राट कुबलई खॉं के आक्रमण में मंदिर का विध्वंश हुआ फिर भी बचे हुये अवशेष प्राचीन शिल्पकारो के कलाकौशल का प्रमाण देते हैं। दक्षिण दिशा के प्रकोष्ठ में नरसिंह अवतार का दर्शन होता है वराह अवतार की भग्न मूर्ती में कमलासन और वाम स्कन्ध पर आरूढ़ भूदेवी स्पष्ट दिखाई देती है। भारत के प्राचीन साहित्य में म्याँमा का विशेषण दिया गया है स्वर्ण भूमि। म्यॉमा में प्राचीन काल से तीन प्रमुख जनजातिया रहती आई हैं। प्यु मोन, और भ्रम्म। तीनो जातियॉ लगभग 2200 वर्ष पूर्व ही भारतीय संस्कृति को स्वीकार चुकीं थी।

विश्व का महान सुवर्ण बुद्ध मंदिर, म्यॉमा की अस्मिता। कलियुगाब्द 4096 (ई.पू.994) में मृगदीपंक (मिगदीपग्ग) राजा था। उसके काल में हंसावती (पेगु) विशाल पगोड़ा का निमार्ण हुआ पगोड़ा याने चैत्य बुद्ध मंदिर अधिष्ठान पर 288 फुट उँचे शिखर से इस मंदिर को म्यॉमा के राष्ट्रजीवन में विशेष महत्व है। पगोड़ा का शिखर सुवर्ण का बना था। तथागत भगवान के दो बाल इस पगोडा स्तूप में हैं। इस चैत्य को 'श्वेमॉडो' पगोड़ा कहते हैं।

पेगुनगर के पश्चिम में भगवान बुद्ध की 181 फुट लम्बी सिंह शय्या पर लेटी मूर्ति हैं भगवान बुद्ध निर्वाण मुद्रा में हैं। मर्ति पर सुवर्ण का असली रंग किया गया है। पेगु में और तीन प्रसिद्ध पगोड़ा हैं, महाजेड़ी श्वेगुगाले और चायेकपियेन। अराकान के क्षेत्र में म्रोहाङ् के निकट वैभवशाली नगर वैशाली के खण्डर दिखाई देते हैं। कलियुगाब्द 3891 में टगौ वंश के सूर्यकितु का पुत्र महातेनचन्द्र ने इस वैशाली नगरी का निमार्ण किया था। स्तम्भ पर के अभिलेख में उनके शुद्ध हिन्दु नाम उत्कीर्ण हैं। बालचन्द्र, देवचन्द्र, यज्ञचन्द्र, प्रातिचन्द्र, नीतिचन्द्र, महावीर, धर्मासुर, श्रीधर्मविजय, नरेन्द्रविजय, नरेन्द्रचन्द्र और आनंदचन्द्र जी मृद्रा पर शिव तथा विष्णु की प्रतिमाएँ हैं।

पगोड़ा म्यॉमा के आध्यात्मिक जीवन की आत्मा है। लक्ष-लक्ष पगोड़ा का देश है म्यॉमा। जातक कथाओ ने इसे सुवर्ण भूमि कहा है। रंगून के प्रत्येक पगोड़ा के साथ प्राचीन इतिहास की स्मृतियॉ गाथा के रूप में जुड़ी हुई हैं। म्यॉमा आज भी बौद्धधर्मी (हिन्दुधर्मी) हैं। उसके तीर्थ क्षेत्र भारत में हैं। म्यॉमा में पॉली भाषा का अध्ययन एवं अध्यापन होता हैं। म्यॉमा की राजनीति और विधि (कानून) जिस पर आधारित हे वे ग्रंथ हैं। 'धम्मसध'। इनकी रचना मनु, नारद, याज्ञवल्क्य आदि के धर्मशात्रो के आधार पर पॉली भाषा में की गई थी। मनुसार की रचना मनुस्मृति के आधार पर की गई थी।

कम्बोडिया (कम्बुज देश) - एशिया में आग्नेय (दक्षिण पूर्व) दिशा की ओर सागर में असंख्य द्वीप हैं। श्याम, कम्बोडिया, लाओस, वियतनाम आदि देशो का समावेश इस दीपकल्प में होता हैं। ऐसे द्वीपसमूह की स्वामिनी थी एक नागकन्या 'सोमा'। कौडिन्य ने उसके साथ विवाह संबंध स्थापित करके

कंबुज देश को अपनी संस्कृति प्रदान की। मायसोन में प्राप्त चम्पा नरेश प्रकाश धर्म का शालीवाहन शक 597 (क.यु.3859) का संस्कृत शिलालेख है इस लेख में शैलराज कौडिन्य और नागकन्या सोमा के विवाह तथा राज स्थापना का वृत आता है।

(तत्र) स्थापितवान् षूलं कौडिन्यस्तद् द्विजर्षभ:.....
भविष्यतोर्थस्य निमित्तभावे विधेर चिन्त्यं खलु चेष्टितंहि।।

द्रोणाचार्य के चिरंजीव पुत्र अश्वत्थामा ने कौडिन्य को अभिमंत्रित भाला दिया था। कौडिन्य ने उस भाले को धुकाकर दूर फेंका, वह जहॉ गिर पड़ा, वहीं राज्य की राजधानी बसायी गई। नाम व्याधपुर रखा गया। आज का कम्बोडिया नाम वस्तुत: मूल 'कम्बुज' का पाश्चात्य रूप है। महेन्द्र वर्मा के पश्चात ईशान वर्मा वैदिक धर्म का अनुयायी था। उसने अनेक यज्ञ किये। सन्यास धर्म को प्रोत्साहन दिया इसके समय शिव व विष्णु की उपासना प्रचलित थी। नगर के मध्य में विशाल चतुष्पथ केन्द्र था इस केन्द्र पर पर्वताकार उत्तुंग शिखरों का मंदिर बनवाया था इसे स्थानीय भाषा में वरवंग कहते है। वेथोन घने अरण्य से घिरा हुआ स्थान है, जहाँ पर यशोवर्मा ने भव्य एवं अतिरम्य शिव मंदिर का निमार्ण किया। वेथोन के शिव मंदिर के साथ ही एक विलक्षण विष्णु मंदिर का निमार्ण यशोवर्मा ने आरंभ किया। यह मंदिर नाग कथाओं से संबंधित है।

कम्बुज भारतीय संस्कृति एंव परम्परा का प्रभावी केन्द्र था ही। राजभाषा संस्कृत थी। सांस्कृतिक जीवन का केन्द्र बिन्दु हिन्दुधर्म था। वेद और उपनिषद इसी दृष्टि से समादत थे, समाज जीवन का अधिष्ठान रामायण, महाभारत एवं पुराण ग्रंथ थे। विश्व का प्रथम आश्चर्य है अंकोरवाट, जिसका निर्माण सूर्यवर्मा ने किया। कम्बुज के विलक्षण प्रतिभाशाली कलाकारो के स्थापत्य एंव शिल्प का यह महाकाव्य है। इन्द्रलोक के भवन कैसे होते है तो चलिये कम्बोडिया में और देखिये अंकोरवाट। चार किलोमीटर परिखा के विशाल सरोबर में बना हुआ जल मंदिर। बायोन कां मंदिर अपने आप एक ओर आश्चर्य है। बायोन के अलावा बन्ते स्त्रोई, पनोम, वखेंग, फिमानक, ताकेओ का मंदिर वक्सेई चमक्रोड् ऐसे कतिपय विशाल मंदिरो के अवशेष नगर के विशाल क्षेत्र में विखरे पड़े हैं।

थाईलैंड (श्यामदेश)– थाईलैंड का प्राचीन पॉली नाम श्याम हैं। भविष्य पुराण में श्याम देश का उल्लेख है। इसी का अपभ्रंश है, सियाम या सयाम। अंकोरवाट की दिर्घाओ में जो उत्कीर्ण चित्र है, उसमें श्याम के सौनिको के पथक है। सियामी भाषा में शब्द है सामदेश। आज से लगभग 2000 वर्ष पूर्व हिन्दुओं का प्रवेश श्याम में हुआ। साहसी थाई जाति के थाई वंश के कारण नाम पड़ा थाईलैंड। थाई जनजीवन में इन्द्र का प्रमुख स्थान है, गाथा है कि इन्द्र ने ब्रम्हदेश, भारत, मलाया, चीन, से लोगों को लाकर बसाया। श्याम के 'प्र प्रथोम' नामक स्थान पर खोदाई में दो हजार वर्ष पूर्व की हिन्दु देवताओं की मूर्तिया प्राप्त हुई। पोंगतुक नामक स्थान पर प्राचीन मंदिर के भग्नावशेष और बुद्ध की मूर्ति मिली है। मुंग सी तेप नामक स्थान पर तो शैव, वैष्णव मूर्तियो के साथ एक संस्कृत अभिलेख प्राप्त हुआ है।

सियाम के पुराणो के अनुसार 'द्वारावती' राज्य की राजधानी 'लोबपुरी' (लवपुरी) की नींव क.यु. 3677 में पड़ी थी। रामायण में प्रभु श्री रामचन्द्र के पुत्र लव के नाम पर इस पुरी का नाम रखा गया। इस नगर के मध्य में प्रमुख महाधातु मंदिर था। मंदिर की स्थापत्य शैली गुप्तकालीन है। शिखर रचना दक्षिण भारतीय शैली की है।

बंगकोक में दूसरा दर्शनीय मंदिर है 'अरूणबाट'। यह मीनाम नदी के तट पर है। स्तूपाकार है। 'रामकियेन' (श्यामदेश का रामायण) यह मूलत: बाल्मिकी रामायण पर आधारित है। थाईलैंड के राष्ट्रीय जीवन में रामायण के उत्सवो का विशेष स्थान है। श्याम के नाटको का प्रधान विषय रामायण ही रहता है श्याम की भाषा में सीता को सीदा, दशरथ को तसरथ, रावण को तशकंथ (दशस्कंध) और लक्ष्मण को लक कहा जाता है। शूपणखा–सम्मनखा, जटायु–सदायु, सुग्रीव–सुक्रीव, किष्किन्धा नगरी–खिदखिन्त्र नगरी, इस प्रकार के अपभ्रंषित रूप आते हैं। एवं भारतवर्ष के पूर्वजो का अपने को वंशज बताते हैं।

लाओस (लवदेश)– वर्तमान लाओस वास्तव में लवदेश है वर्तमान लाओस का नाम लव जनजाति का निवास स्थान होने से प्रचलित हुआ संस्कृत लव अर्थात लवस् जब पाश्चारम शषा में अनुवाहित होकर 'लाओस' LAOS' बन गया। लक्ष–लक्ष हाथियों की भूमि के नाते लवदेश प्रसिद्ध था। 'कृ0वन्तो विश्वंआर्यम्' की प्रेरणा लेकर भारत के वीर पुत्रो ने महासागर लांघकर अपने सांस्कृतिक उपनिवेश स्थापित किए। यूनान व गांधार से जब थाई एवं लव जातियॉ चीन आक्रमणो के कारण निष्कासित हुई तो दक्षिण दिशा में मॉ गंगा (मेकांग) के घाटी में पहुची। उपनिवेश स्थापित किये जो उससे पूर्व ही भारतीय संस्कृति को स्वीकार कर चुके थे।

श्रेष्ठ वर्मा ने चम्पासक 'माँ गंगा' (मेकांग) नदी के तट पर 'बाट फू लिन्ङ' पर्वत पर एक सुन्दर वाट (मंदिर) का निमार्ण किया। मंदिर में श्री भद्रेश्वर (महादेव) देवता की स्थापना की गयी। चम्पा, लव, कम्बुज देशो के राजा शिवभक्त ही थे। साथ में विष्णु की उपासना श्री थी। श्रेष्ठपूर नगरी का मंदिर तो नहीं रहा। वहॉ पर वह कभी बुद्ध विहार में परिवर्तित हो गया। परंतु विहार का रूप मंदिर समान ही है। विहार के द्वार पर एक ओर नागराज वासुकि तथा दूसरी ओर 'पक्षिराज गरूड' है। विहार में एक से बढ़कर एक सुंदर भगवान बुद्ध की मूर्तिया है। लव देश में महायान पंथीय, स्तूप, चैत्य व विहार है तथा शैली गांधार है। बुद्ध की पुनर्जन्म की गाथाऍ शिल्पांकित हैं।

वर्ष प्रतिपदा, व्यास पूर्णिमा, विजया दशमी प्रजा के प्रिय पर्व थे। उत्सव प्रसंग पर विष्णु, शिव एवं बृद्ध की प्रतिमाओ को स्नान कराया जाता था। फिर उनकी यात्रा निकाली जाति थी। लवदेश में भगवान बुद्ध के पदचन्हि है। चैत्र अष्टमी से चैत्री पूर्णिमा तक सात या आठ दिन का बसंतोत्सव चलता था। कम्बुज नरेश सप्तम जयवर्मा के प्रोहा अभिलेख में यह वर्णन आता हैं।

लवदेश में आज भी कालगणना के तीन संवत् प्रचलित है कलियुगाब्द 3180 में भारत में शालीवाहन शक का आरंभ हुआ। लवदेश में इस शकराज कहते हैं। अभिलेखो में इसी कालगणना का प्रयोग किया हुआ है। दूसरा संवत है जो कलियुगाब्ध 2558 (ई.पू0 544) में प्रारंभ हुआ। उसे महाशकराज कहा जाता है। एक संवत लगभग कलियुगाब्द 4672 (खि. 1570) से तीन सौ वर्ष तक प्रचलित था। उसे चुल्ल शकराज कहा जाता है। ल्बांग प्रबांग के एक मंदिर से 'वाट विक्षुण' से प्राप्त शिलालेख में एक ग्रंथालय का वर्णन है। ग्रांथालय में बुद्ध तत्वज्ञान के 2823 ग्रंथ थे। पंचतंत्र पर आधारित ग्रंथ भी लवदेश में विख्यात हैं।

वियतनाम (चम्पा) –

भूताभूतेष भूता भुवि भवविभवोद्धाव भावात्मभावा .....
काये कायेशकाया भगवति नमतो नो जयेव स्वसिद्धया।।

वियतनाम में 'पो नगर ' नामक स्थान है वहॉ के मंदिर के द्वारा के दक्षिण स्तम्भ पर अभिलेख उत्कीर्ण किया हुआ है, कलयुगाब्द 4152 का चम्पा नरेश जय परमेश्वर वर्मा का यह संस्कृत अभिलेख देवी भगवती की स्तुति से प्रारंभ होता है, यह श्लोक कालीदास, भास, भारवि भारत के कवियो का स्मरण कराता है। भारतीय सस्कृति का यह अद्भुत अविष्कार सुदूर पूर्व में स्थित वियतनाम में दिखाई देता है।

चम्पा में मायसोन एक अद्भुत मंदिरो की नगरी थी आज वहं घने जंगल के बीच छुपे हुये खण्डरो में परिवर्तित हो गई है। मंदिरो के बारह समूह यहॉ खड़े है । मंदिर भगवान शिव के हैं। यहॉ 'कुवेर' की मूर्ती भी दिखाई देती हैं। जिसकी ऑखे पीली हैं। चम्पा के रामायण में उसके संबंध में एक रोचक कथा है।

चीनी शासको से निरंतर संघर्ष बना रहा उन्होंने भद्रेश्वर स्वामी के मंदिर का भी विध्वंश किया शम्भूवर्मा के अभिलेख में इस संदर्भ में कहा है–

सृष्टं येन त्रियतमखिलम भू भुर्व: स्व: स्वशक्त्या।
चम्पा देशे जनयतु सुखं षम्भू भद्रेश्वरोऽयम।।

धर्म, भाषा वेशभूषा, खानपान, उत्सव , कुल परम्परा, राजनीति, राजवंश और राजकीय व्यवहार, सामाजिक प्रथायें आदि सब दृष्टि से चम्पा का इतिहास सुंदूर पूर्व के एक छोटे भारत का ही इतिहास प्रतीत होता हैं। चम्पा में मानव धर्मपर आधारित न्याय व्यवस्था थी। मनु, नारद, और भार्गव की स्मृतियॉ प्रयोग में लाई जाती थी, दूसरे अभिलेखो में राजा केा मनु द्वारा प्रतिपादित मार्ग का अनुशरण करने वाला, शास्त्रज्ञ, 'लोकधर्मवित्' कहा है। भारत से आये हुये व्यक्ति विशेषत: भिक्षु, आचार्य, पंडितो का सम्मान होता था। भारत के प्रति अपार श्रृद्धा का भाव था। चम्पा का प्रमुख धर्म पौराणिक हिन्दु धर्म ही था, मायसोन के राजा प्रकाशधर्म ने विष्णु मंदिर का निमार्ण किया तथा शिलालेख में कहा है–

इदं भगवत: पुरूषोतमस्य विष्णोरनादिनि धनस्याशेष.....
भुवनं गुरो: पूजा स्नानं श्री प्रकाश धर्मणा कारित्।।

चम्पा के अभिलेखो में देवताओ की महिमा को जिस ढंग से वर्णित किया है, वह पुराणो में प्रतिपादित गुण एंव कथाओं के पूर्णतया अनुरूप है चम्पा ने बौद्ध धर्म को भी स्वीकार किया। परन्तु उनके लिये सब पंथ सम्प्रदाय उपासना के मार्ग मात्र थे।

मलेशिया (मलयद्वीप)– वायुपुराण मलयद्वीप का नि: सन्द्धिता से इतना सुंदर परिपूर्ण वर्णन करता है। वर्तमान पश्चिम मलेशिया (मलाया द्विपकल्प) ही प्राचीन मलयद्वीप है। रामायाण, महाभारत, पुराण आदि ग्रंथो मे प्राचीन काल का भूगोल वर्णित है। 'कथासरित सागर' द्वारा वर्णित कथाओ में भी भारत के निकटस्थ सागर संबृत्त द्वीपो के कतिपय उल्लेख आते है। बाल्मीक रामायण में –

यत्नवन्तो यवद्वीपं सप्तराज्योयप षोभितम्।
सुवर्णरूप्यकद्वीपं सुवर्ण करमण्डितम्।।

उल्लेखित यवद्वीप वर्तमान जावा (इन्डोनेशिया) है, और सुवर्ण रूप्यक द्वीप वर्तमान मलेशिया है। हरिवंश पुराण, रामायण, मंजरी, और 'सद्धर्मस्मृत्युपस्थानसूत्र' में भी इन द्वीपो का उल्लेख है महर्षि बाल्मीकी ने न्यूगिनी को ही उदयवर्ण द्वीप कहा है। 'जय' शिखर युक्त पर्वत को लोकालोक पर्वत कहा है। विशाल प्रशांन्त (पैसिफिक) महासागर के उत्तर में हवाईद्वीप है, दक्षिण में जय है। इस विशाल भयंकारी सागर का वर्णन भी रामायण में है, वायु पुराण भारत के दक्षिण में स्थित छ: द्विपो का वर्णन भी करता है। इनमें मलयद्वीप भी है 'मंजूश्री मूलकल्प' में कर्मरंङ, नाडिकेर, वारूसक, बलि, यवद्वीप और नग्नद्वीप का वर्णन है। यह सभी द्वीप दक्षिण पूर्व एशिया के ही है।

भारतस्यास्य वर्षस्य नवभेदा प्रकीर्तिता.....
योजनानां सहस्रं तु द्वीपोयं दक्षिणोत्तरम्।।

वायु पुराण, वामन पुराण, अग्नि पुराण में भी यह भुगोल आता है। मान्धाता के जिस साम्राज्य पर पुराणो के अनुसार कभी सूर्यास्त होता ही नहीं था। दूसरे साम्राट है 'रधु' जिसके अधीन नवद्वीपात्मक भारत वर्ष था, संकल्प में यजमान 'जम्बुद्वीप' (एशिया खण्ड) का ही उद्घोष करता है। 'भरतखण्ड' प्राचीन काल का भारत है।

चैया के भवन अवशेषो में दो संस्कृत अभिलेख प्राप्त हुये, लिगोर में पॉच लेख प्राप्त हुये। केड्डा (केदाह) एवं लकुआपा (तक्कोला) से भी एकेक संस्कृत लेख प्राप्त हुआ। लिगोर से प्राप्त शिलालेख बैसाख शुद्ध एकादशी कलियुगाब्द 3877 (इ.पू. 775) का है, धर्मपाल (लिगोर) शैलेन्द्रनृपति श्री महाराज विष्णु द्वारा निर्मित मंदिरो का वर्णन है। 'तकुआपा' मलयद्वीप में भारतीय संस्कृति का प्रभाव, केन्द्र रहा था।

'मलयु' भाषा में जावा, बुगी, ब्रम्ही, मुण्डा, आन्ध्र, गुजराती, कतिपय, भाषाओ का मिश्रण है। संस्कृत शब्दो का भी प्रभाव है। ततापि (तथापि), तत्काल (तत्काल), पुन (पुन:), वड्स (वंश), किच्चि,(किन्चित) इत्यादि। प्राचीन साहित्य में 'हिकायत पिडण्व' महाभारत की पाण्डव कथा है, 'पुत्ति कोल विष्णु' में विष्णु पुराण तथा 'पिण्डव जय' में पाण्डव विजय का कथासार है।

इन्डोनेशिया (जावा, सुमात्रा, वोर्निओ ,सुंदद्वीप समूह) – महाभारत कालीन 'आजीशक' (अजिसक) क.यु. 3179 में सुवर्ण द्वीप जावा पर पहुॅचकर अपना सास्कृतिक उपनिवेश बनाया। यहॉ की भाषा में कानो (कर्ण), पुलसर, अविआस (व्यास) महाभारत कालीन शब्दो का मिश्रण है। पूर्णबम्मा विष्णुभक्त था। उसके अभिलेख को राजा को विष्णु का अवतार मानने की प्रथा है यह अभिलेख क0यु. 37 वीं शति का है। जावा में मेरवबू पर्वत की उपत्यका में तुम–शक नामक स्थान पर एक अभिलेख मिला है। जिनमें 16 चिन्ह उत्कीर्ण है शंख, चक्र, गदा, त्रिशूल, परशुमाला, कमल, और कुम्भ की आकृतियॉ है। वायु पुराण में वरहिण द्वीप ही आज का बोर्निया है। यह यव (जावा) से सात गुना बड़ा है। बोर्नियो का प्राचीन नाम 'कालिमन्तान' अर्थात हीरे की नदी है। यहॉ महाकाम नदी के तट पर क.यु. 36 वीं शति के अभिलेख प्राप्त हुए है। यज्ञ के यूप (स्तम्भ) पर ये लेख उत्कीर्ण हैं। अभिलेखो में शिवपूजा के संकेत मिलते हैं।

सुवर्णद्वीप (सुमात्रा) में कलयुगाब्द 39 वीं शति में शैलेन्द्र वंश राज्य कर रहा था। श्रीविजय (पलेम्बंग) राजधानी थी। क.यु. 3494 में भिक्षु कालादेक ने एक बौद्ध ग्रंथ का चीनी भाषा में अनुवाद किया जिसमें जम्बूद्वीप वर्णन करते हुये लिखता है कि– 'समुद्र में 250 राज्यो की सत्ता है उनमें एक 'विजय' नामक राजसत्ता है। क.यु. 3877 में श्री विष्णु नाम के सम्राट जो बौद्ध पंथी था। उसने शाक्यमुनी, अवलोकितेश्वर बज्रपाणि के मंदिरो का निर्माण कराया ऐसा वर्णन आता हैं। प्राचीन बौद्ध जगत का आध्यात्मिक स्मारक बोरोबुदुर के स्तूप के रूप में खड़ा है। शैलेन्द्र काल का सबसे पुराना चैत्य या मंदिर है 'चण्डी कलसन' का। मध्य जावा की प्रम्बनन घाटी में प्राचीन काल में साक्षात अलकापुरी अवतरित हुई। देवताओं ने घाटी को अपना निवास बनाया। यही पर जगतजननी, जो वहॉ 'लारा जोग्रंग' नाम से विख्यात थी। उसके 156 मंदिरो केा समूह हैं। यहॉ आठ मुख्य मंदिर है। यहॉ शिव, दुर्गा की प्रतिमाऍ है। प्रदक्षिणा पथ पर रामायण कथा के अद्भुत शिल्प साकार हुए हैं। दिएंग के पठार पर पहाडियों की श्रखला के मध्य प्राचीन भव्यमंदिर है। जो पाण्डवो के मंदिर नाम से विख्यात है कुल आठ है समीप प्राप्त मूर्तियॉ शिव, दुर्गा, गणेश, ब्रम्ह, विष्णु देवताओ की है जो गुप्त कालीन शैली के है।

इंडोनेशिया की सांस्कृतिक परम्परा आज भी भारतीयता की झलकदेती हैं। ब्रम्हांड पुराण, रामायण ग्रंथो पर यहॉ जनश्रद्धा दिखलाई देती हैं। यहॉ की मुद्रा का नाम 'राम' है उस पर गणेश जी का चित्र अकित है तथा एयरलाइन्स

का नाम 'गरूड इंडोनेशिया' है यहॉ की जनता भारतीयों के पूर्वजो को अपना वंशज मानती है यही है वास्तविक सच्चाई।

चीनी ग्रंथो के अनुसार बाली में कौडिन्य का वंश राज्य करता था। वाली के राजा ने मुस्लिम आक्रमण का यशस्वी प्रतिकार किया। अपने हिन्दु धर्म, संस्कृति एंव परम्परा नहीं छोड़ी। जनश्रुति के अनुसार डेलपसार की ईशान्य दिशा में बेदौंलु में 'मय' दानव का राज्य था। बेदौलु याने मायावी। मय के रक्त की नदी मेतान कहलाती है इन्द्र के प्रहार के इन्द्रतीर्थ (एम्पुल) सरोबर का निमार्ण हुआ। जिसके पके रिसान नदी प्रावाहित हुई। यह बालीद्वीप की गंगा है। बाली में वेदविद्या विद्यमान हैं। परंतु उसका स्वरूप बदल गया हैं। पूर्वी लोम्बोक में 'सुरनदी' है जिसके तट पर बाली शैली का सुंदर शिव मंदिर है। सुम्बाबा द्वीप पर 'ससक' राज्य करते है। ससक जाति आज मुस्लिम बन गयी है। लोम्बोक का 'रिंजनी पर्वत' ससक जनजाति के लिए भी पवित्र है पूर्णिमा के दिन ससक जन यहॉ के गर्मपानी के कुण्ड में स्नान करते हैं।

तिबेट (त्रिविष्टप) – हिमालय के उत्तर में मध्य एशिया के पठार पर स्थित देश 'तिब्बत' का नाम महाभारत के भीष्म पर्व में आता हैं। यही है प्राचीन उत्तर कुरू। 'आर्यविद्या सुधाकर' इस ग्रंथ में त्रिविष्टप का नाम आया है अन्य नाम किन्नर खण्ड, कि पुरूषखण्ड और स्वर्ग भूमि इत्यादि हैं। लगभग तीन हजार वर्ष पूर्व हिमालय की गोद में कपिलवस्तु में तथागत (बुद्ध) ने जन्म लिया। ध्रूव ने अटल पद प्राप्त किया। तिब्बत में चौदह सौ वर्ष पूर्व विलक्षण संयोग से बौद्ध धर्म का प्रवेश हुआ। तब से आजतक तिब्बत बौद्ध धर्मी है।

दलाई लामा स्वर्णश्रेष्ठ धर्मपुरूष यहॉ माने जाते है। संस्कृति, शिक्षा, धर्म, उपासना, साहित्य, कला आदि सभी में तिब्बत का मार्गदर्शन भारत ने ही किया हैं। आध्यात्मिक दर्शन का मौलिक प्रवाह भारत से अव्याहत रूपेण तिब्बत की और बहता रहा और ज्ञानातुर त्रिविष्टक ने उसे प्रवाह का हृदय से स्वागत कर उसमें अवगाहन किया। तिब्बत में सैकड़ो बौद्ध विहार हैं। जहॉ 'बुद्धम्शरण गच्छामि' उद्घोष गूँजता रहता है। तिब्बत में एक हजार दो सौ वर्ष पूर्व की रामायण की हस्तलिखित प्रतियॉ उपलबध हैं। बौद्ध धर्म द्वारा वहॉ पर रामकथा गई। इस रामकथा पर गुणभद्र के उत्तर पुराण का प्रभाव है। तिब्बत के रामायण में सीता रावण की कन्या है।

चीन– कल्गन से बीजिंग (पेकिंग) जाने वाले मार्ग पर एक बौद्ध शिलालेख है। संस्कृत सहित छः भाषाओ में यह अभिलेख है। चीन में एक भारतीय सम्राट का दिग्विजय दर्शाने वाला यह अभिलेख भारतीय संस्कृति की विजय ध्वजा है। चीन में बौद्ध प्रचारक मार्तण्ड और धर्मरक्ष का हानवंशीय नरेश मिंग ने दोनों आचार्यो का सत्कार किया। बौद्ध धर्म को रामाश्रण्य प्राप्त हुआ। राजधानी लोयांग के समीप 'श्वेताश्व' विहार का निमार्ण सम्राट मिंग ने करवाया। बौद्धधर्म के माध्यम से भारतीय संस्कृति चीन पहुंची। इन्द्र, ब्रम्हा, विष्णु, महेश, विनायक आदि देवताओं के रूप में गौतम की प्रतिमाओ की उपासना होने लगी। चीनी यात्री भारत भूमि की ओर आकर्षित होने लगे।

चीन के प्रांत मंगोलिया में बौद्ध धर्म के माध्यम से ही ब्रम्ह, सरस्वती, गणेश, महाकाल, कालभैरव आदि देवता मंगोलिया में प्रतिष्ठित हुए। राजधानी अलान, बाटोर प्राचीन मंदिरो, बिहारो और स्तूपो की नगरी थी। मंदिरो में महाभारत की कथाओं पर नाट्य और लीलाएँ चलती थी। क.यु. 5019 में मंगोलिया साम्यवादी क्रांति, साम्राज्यवाद की चपेट में आ गया। हजारो भिक्षु और लामा निष्कासित हुए। किंतु आज भी बिहारों में महायान चर्चा चलती है। गायत्री मंत्र की उपासना होती है वर्तमान पर अतीत की छाया का आभास तो होता ही है।

कोरिया– क.यु. 3149 (ख्रि. 47) की घटना हे कि कोरिया के राजा सुरो और अयोध्या की राजकुमारी स्युई का विवाह एक स्वप्न की घटना से मिलन के परिणाम स्वरूप विस्मयकारी घटना के रूप में हुआ। जहॉ राजकुमारी ने पूजा की थी। उस स्थान को रेशमी पहाड़ी के नाम से मंदिर बना दिया गया। कोरिया की कन्याएँ विवाह के पूर्व धरती माता को रेश्मी वस्त्र अपर्ण करके पूजा करती है। चीनी भिक्षु, सुग्ङ बुद्ध की दो मुर्तियॉ, धातुएँ और बुद्ध का संदेश लेकर कोगुर्यू में पहुचा, राजा ने सम्मान किया व बौद्ध धर्म में दीक्षित हुआ। उसने दो बुद्ध मंदिर बनवाये। प्राचीन राजधानी 'क्याइ' मंदिरो की नगरी, तीर्थ क्षेत्र है। राजसी कंगूरो, बौद्ध मंदिरो, पगोडाओ से समृद्ध है। चीन से कोरिया ने 'ध्यानी' बुद्ध को प्राप्त किया। ध्यान द्वारा समाधि योग प्राप्त करने वाला पंथ 'झेनबुद्धिक्षम' नाम से विख्यात हुआ। कोरिया से पंथ जापान में भी फैला। चीन, जापान व कोरिया का यह राष्ट्रीय धर्म बन गया।

जापान– भारतीय संस्कृति का स्पर्श जापान को बौद्ध धर्म के माध्यम से हुआ। बौद्ध धर्म में जापान को दीक्षित किया कोरिया ने। कोरिया के कुडार राज्य के राजा ने अपने राजदूत के साथ बुद्ध की मूर्ती , बौद्ध सूत्र, बुद्ध का केश इत्यादि उपहार के रूप में भेजे। चीन, कोरिया के बौद्ध आचार्य जापान में जाते रहे। चीनी बौद्ध ग्रंथो का अध्ययन जापान विहारो में आरंभ हुआ। राजापुत्र सोटोकु ने 46 बुद्ध मंदिर बनवाये। 816 भिक्षुओं तथा 569 भिक्षुणियों के संघ धर्मप्रसार में कार्यरत हुए। भारतीय बौद्ध भिक्षु बोधिसेन चीन की यात्रा करते हुये जापान पहुचे एवं विहारो में संस्कृत का अध्ययन प्रारंभ हुआ। यह संस्कृत विद्यालयों की परम्परा 1400 वर्षो से आज तक अक्षुण्ण चलती आ रही है। होयुजी–मंदिर आध्यात्मिक केन्द्र था। जापान मंदिरो का देश है कोयासान् में 120 मंदिर है सारे देवताओं की स्थापना (प्राण प्रतिष्ठा) संस्कृत मंत्रो से हुई है। क.यु. 4125 (ख्रि1023) में सम्राट शिराकावा ने यहॉ से प्राचीन मंदिर में एक दीप प्रज्जवलित किया था। यह जापान का अक्षयदीप है। 'क्योटो' में आज लगभग 1400 बुद्ध मंदिर हैं। 400 शिंतो देवताओं के मंदिर है। जापान का प्रत्येक घर मंदिर होता है। घर–घर में 'शिचिफ कुजिन' सात मांगलिक देवताऍ होती है। 'कांगितेन् शोतेन' अर्थात गणेश जी। 'दाईकोकू अर्थात दण्डधारी महाकाल, दिशामोन् कुबेर, बेन्तेनु वीणाधारी सरस्वती है। कोयासान् जापान की काशी बन गया है। टोक्यो में महाकाल का मिमेगुरी मंदिर है। कुवेर का तामोन्जि मंदिर है। नववर्ष के प्रथम दिन जापनी सुख समृद्धि के लिए उपासना करते हैं।

रूस – रूस या 'रशिया' शब्द भी ऋशिय शब्द का रूप हो सकता है। रूस के अनेक नगर नाम संस्कृतोद्भव है। सैबेरिया वास्तव में शिविर है। साईबेरिया के बैकल सरोबर परिसर में बुर्यात जनजाति का प्रमुख स्थान है। कालांतर में मंगोलिया के बौद्ध बुर्यात जाति शिविर में चले गये। जो सूर्य व अग्नि के उपासक थे। साथ में भगवान बुद्ध की प्रतिमाए भी ले गए। इन्होने क.यु. 4791 में रूसी नागरिकता स्वीकार की शिविर के एक मेधावी व्यक्ति 'जयलामा' बुद्धविहार की अनुज्ञा हेतु मास्को गये जहाँ उनका सत्कार हुआ। उन्हे रूसी सम्राट ने 'खम्पोलामा' के पद पर नियुक्त किया। क.यु (ख्रि. 1744) में चोंघोल में बुद्ध मंदिर का निमार्ण हुआ। तथा प्रमुख देवता के रूप में महाकाली की स्थापना की गई। प्रख्यात 'अगिन्सकी' विहार की स्थापना की गई। शिविर (सैबेरिया) का यह अध्ययन केन्द्र है। तत्वज्ञान, तंत्र, ज्योतिष (कालचक्र), आयुर्वेद में शिक्षा के प्रमुख विषय है। बौद्ध बिहार (मंदिर) में नित्य गंगाजल प्रमुम्त होता है। भगवान बौद्ध का नित्य अभिषेक होता है शिविर (सैबेरिया) में रामायण कथा लोकप्रिय है।

अफगानिस्तान– ऋग्वेद की एक ऋचा में अफगानिस्तान की 'रसा' अनितभा, 'कुभा' (काबुल), ऋगु (कुर्रम) नदियो का वर्णन आता है एक ऋचा में 'सुरर्तु' (सिरदर्या), तुष्टा (टोची), श्रेत्या इत्यादि नदियो का वर्णन आता हैं। वेदकाल में भारत की उत्तर पश्चिम सीमा हिन्दुकुश पर्वत से भी आगे वर्तमान ईरान से सटी थी। पक्थ, भलानस् अलिन, विषाणिन, जातियों का वर्गीकरण कुछ भी हो। ऋग्वेद इन जातियों का समावेश आर्यो में ही करता है। पक्थ आज की पठान जाति है। जो मुस्लिम बनी हुई है। पश्तो उनकी भाषा है। संभवत: भलानस जाति ही बलुचि के पूर्वज हों। महाभारत के अनुसार महाराज पाण्डु की पत्नी माद्री इसी मद्र देश की राजकुमारी थी। गांधार की राजकुमारी गांधारी महाराज धृतराष्ट्र की पत्नी थी। रामायण काल में कैकई पुत्र भरत के पुत्र 'तक्ष' के नाम पर तक्षशिला तथा 'पुष्कल' के नाम पर पुष्कलावती नगरी का नाम पड़ा। तक्षशिला विश्वविद्यालय बारह सौ वर्षो तक विश्व ज्ञान व संस्कृति का केन्द्र बना रहा। मिस्र बैबिलोनिया, अनातोलिया, ईरान, ग्रीक व रोम इन सभी प्राचीन सभ्याताओ का तक्षशिला विश्वविद्यालय से संबंध था। विश्व के विद्धानों ने इन्ही ऋषि मुनियों से ज्ञान गृहण किया जो भारत में युग युग से वेद विदान्त की शिक्षा देते आ रहे थे। इस बात की पुष्टि सर विलियम जोन्स ने भी की हैं। महाभारत में बर्बर, शक पुलिन्द, यवनो के साथ कम्बोज वासियो का नाम आता हैं। भारतीय युद्ध के समय 'युद्धक्षण' नामक कम्बोज नरेश था। वर्तमान राजौर (पूँछ–कश्मीर) इस जनपद की राजधानी थी। पुराणो में बाश्कल जनपद का उल्लेख है। यहाँ बास्गुल जाति जो मूर्ती पूजक थी निवास करती थी। महाभारत काल में बाल्हीक में प्रातिपिय' राजा का उल्लेख आता है। हरित वर्ष (हेरात) उत्तरी पश्चिमी भाग में 'हरि' नदी बहती है। वर्तमान में तुर्कमेनिस्तान मे यह 'हरिरूद' कहलाती है जो हिन्दु नाम है।

गांधार में 'मुन्जवन्त' पर्वत है। ऋग्वेदानुसार जहाँ रूद्र का स्थान माना गया है। 'कपिसा' के आस–पास शिव पार्वती की अनेक भव्य मूर्तिया मिली है। काबुल के पास खैरखाने में चकमक पत्थर की सूर्य मूर्ती प्राप्त हुई। गांधार के विहारो में बुद्ध के साथ इन्द्र और ब्रम्हा की सुंदर मूर्तियॉ है बामियान की पहाडियों में बुद्ध की 53 मीटर ऊॅची भव्य मूर्ती उत्तीर्ण की हुई थी। बामियान ही पूर्वकाल में रामयान था। गर्देज के परिसर में 1500 वर्ष पूर्व की एक और मूर्ती प्राप्त है। जो तुन्दिल तनु विनायक की है। दुर्भाग्य से विद्धेषवश तालीवान शासको ने इस हिन्दु धरोहर वामियान मूर्तियों को खण्डित कर दिया। सम्राट कनिष्क के काल में अफगानिस्तान बौद्ध राष्ट्र था। आज भी माहाराणा प्रताप के पूर्वज बप्पारावल के वंश के लोग रावलवंशीय मुल्लिम के नाम से जाने जाते हैं। अफगानिस्तान की संस्कृति, परम्परा, नाम, वंश, नदियो, स्थानो में भारतीय संस्कृति का प्रतिबिम्ब स्पष्ट दिखाई देता है।

ईरान(आर्यान)। मत्स्य पुराण के अनुसार 'सुशा' नगरी सुसियाना, पर्वत के उत्तर में और मानस के मुर्धा में वरूण की 'सुसा' नामक रम्य नगरी है। प्रथम मन्वन्तर में स्वयंभुव मनु की संतान 'एलाम' जिसकी राजधानी सुसा थी। वहॉ भारतीय संस्कृति का लेकर जा पहुची। 'मिन' मिनोस, मनस, मनिस आदि नाम 'मनु' इस नाम के ही रूप है। चाक्षुस मनु के 10 पुत्रो में अभिमन्यु की राजधानी सुशा थी। जिसका संदर्भ वेदकाल से है। भारत की मुद्राओं (सिंधु सरस्वती सभ्यता) का उर में प्राप्त होना भारतीय संस्कृति को प्रभाव को स्पष्ट करता है। उर में नन्ना (चंद्रदेवता) के विशाल मंदिर के अवशेष प्राप्त हुए है। अभिमन्यू व कर के भाई पुर ने अपने नाम पर 'पुर' नगर का निमार्ण किया था।

ईरान की परम्परानुसार वैवस्वत यम (सिम) उनका मूल पुरूष है। श्रुति के अनुसार उनका प्राचीन नाम आर्यान है जो कालान्तर में ईरान हो गया। उनका प्राचीन ग्रंथ संस्कृत में है। भारतीय परम्परानुसार 'यम' सूर्य के पुत्र तथा मनु के भाई थे। जरथुष्ट्र से पूर्व ईरानी 33 देवताओं को मानते थे। अभि भी होम (सोम), जौतर (होतृ), अथ्रवन(अथर्वण) , मन्थ्र (मंत्र) आजुइति (आहुति), यस्न (यज्ञ) भारतीय शब्द प्रचालित हैं। जरथुष्ट्र ने मूर्ती पूजा का निषेध किया। सिर्फ अग्नि की उपासना प्रचलित की।

ईरान में 'मग' नामक एक जाति प्राचीन काल में थी। मग जाति में मग(ब्राम्हण), मगग (क्षत्रिय), गानग (वैष्य), मंदग (शुद्र) इस प्रकार चर्तुशर्ण थे। वे सूर्योपासक थे। वेद जानते थे। भविष्य पुराण अनुसार जम्बुद्वीप के परे शकद्वीप उनका निकास स्थान था। महाभारतानुसार श्रीकृष्ण जी के पुत्र साम्ब 18 मग पुरोहितो को सूर्योपासना के हेतु भारत में लाये थे। उनके द्वारा उपासना करने के पश्चात सूर्य की कृपा से साम्ब का दुर्धर रोग नष्ट हुआ। मग अग्निहोत्री थे। और अव्यंग (यज्ञोपवीत) धारण करते थे।

एलम् के पूर्व परशु (Faras– फारस) प्रांत ने इस जातियो (देऊशियन, पेशापियन, मरफिअन, पेन्थिली) जातियो का निवास था। जिसके कारण ईरान का 'फारस' नाम पड़ा। कुछ धर्मनिष्ट पारसी मुस्लिम आक्रांताओ के द्वारा खोरासान की पहाड़ी से निष्कासित होकर मुमराह के संजान बंदरगाह पर उतरे। जहाँ यादव नरेश जदिराणा शासक था। पारसियो के मोवेद (धर्मगुरू) ने आश्रय देने की प्रार्थना की। एवं पूछे जाने पर अपने आचार के संबंध में कहा–'हम सूर्य, चन्द्र, जल और अग्नी के पूजक है। और कस्ती (यज्ञोपवीत) पहनते हैं। अपने आगमन की स्मृति में संजान में 'अग्निस्तम्भ' का निमार्ण किया

युरोप – इटली में रामकथा– इटली के सर्वेतेरी से प्राप्त पटिया पर राम, सीता, लक्ष्मण के वनगमन का चित्र है रामायण की कतिपय घटनाओ के चित्र इटली के तर्किनिया और सर्वेतेरी प्रदेश में पटियो पर, दिवारो पर, कास्यदर्पण, फूलदान आदि पर प्राप्त हुये हैं। ये सभी चित्र एत्रुस्कन कला का अविष्कार हैं। क.यु. 2000 (इ.पू. 1100) के लगभग मिनोनियअस लिडियनस के मूलपुरूष ने फ्रिजियन सत्ता को पराजित करके एशिया माइनर में लिडियन वंश की स्थापना की। वे सूर्यपूजक थे। शिवपूजक थे। इटली में प्रवेश से पूर्व एत्रुस्कन्स भारतीय संस्कृति से प्रभावित थे। साथ ही देवताओ की मूर्ती बनाकर उसकी पूजा करते थे। प्रत्येक गॉव में मंदिर थे। गॉव का पश या चौराहा देवता के नाम किया जाता था।

रोम के संस्कृति का अधिष्ठान एत्रुस्कन संस्कृति था। रोमन्स की भाषा लैटिन थी पाश्चात्य पण्डित लॉटिन व संस्कृत दोनों भाषाओ को इन्डोयुरोपियन मानते हैं। दोनों में साम्य हैं। भारत के साथ रोम के व्यापारिक व सांस्कृतिक संबंध थे। दक्षिण भारत में रूध्र एवं तमिलनाडु में सैकड़ो की संख्या में रोमन स्वर्णमुद्राएँ प्राप्त हुई हैं। ग्रीक संस्कृति में यज्ञ होते थे। ग्रीक संस्कृति का प्रभाव रोम तट पर था। 'ज्यूपिटर' प्रधान देवता था। वैसे भी 'रोम' शब्द राम के कॉफी करीब परिलक्षित होता हैं। 'मिनोस' मनु का अपभ्रंशित रूप है। भारतीय परम्परा, देवता,उपासना, नीति, मूल्य, कुल, परम्परा, वास्तुविद्या, दशमान, पञ्रति का अंकन पुरोहितोव अमाव्य की राजनीति, नक्षत्र विद्या इत्यादि सांस्कृतिक धार्मिक, सामाजिक, राजनैतिक, संकल्पनाऐं सुदुर क्रीट जैसे इनकी प्राचीन सभ्यता में प्राप्त होती है, यह केवल संयोग की बात नहीं हो सकती। यूनान में भारतीय देवता कृष्ण व शिव को हिराकिल्स व डायनिसस कहा जाता हैं।

जर्मनी – मॅक्समूलर ने ऋग्वेद का अंग्रेजी अनुवाद किया एवं 'जर्मन' शब्द शर्मन, 'मक्स' को 'मोक्ष' का अपभ्रंश रूप माना। जर्मनी का एक नमा प्रशिया। संभवत: 'ऋषीय' मूल शब्द का वह रूपान्तर हो। भारत में मूलमर्ग, मूलवर्मा,

मर्ग, वर्मा, वर्ग शब्द दिखाई देते हैं। जर्मनी में हन्डेन बुर्ग, हायडेल वर्ग, हम्बुर्ग दिखाई देते है यह विचारणीय हैं। हन्डेन बुर्ग में हिन्दु और हुर्म इन दो मूल शब्द का प्रत्यय प्राप्त होता हैं। 'रामस्टेन' जर्मनी का एक नगर 'रामस्थानं' शब्द का स्मरण कराता है। जर्मनी में भारतीय संस्कृति के अनेको प्रमाण मिलते है। स्वामी अवधेशानंद गिरी महाराज अपने एक संस्मरण में कहते हैं कि – 'मैक्सूलर जब मर रहा था। अपने पलग पर अन्तिम सांसे ले रहा था, उसके शिष्यो ने उससे पूछा! महाराज आपके जाने के बाद हमारे प्रश्नो का उत्तर कौन देगा? तब वह बोला, विश्व का मानचित्र लाओ, शिष्यो ने मानचित्र लाकर उसे दिया। उसने अपने हाथ में छड़ी लेकर घुमाते हुये उसे 'भारत के उत्तराखण्ड' पर ले जाकर रोका। मेरे जाने के बाद अब सारे प्रश्नो के उत्तर (भारत–उत्तराखण्ड, आध्यात्मिक चेतना का ध्रुव केन्द्र हिमालय) से प्राप्त होंगे।' मैक्समूलर स्वयं भारत का विद्यार्थी था। और भारत विश्वगुरू था।

स्कैन्डिनेविया– यहॉ के साहित्य में पद्यमय रूप में ऋग्वेद का नासदीय सूक्त दिखाई देता है। जो सृष्टि पूर्व का वर्णन करता है यहॉ की प्राचीन गद्य–पद्य रचनाओ के संकलन को 'एददा' कहा जाता हैं। एददा स्कैन्डिनेविया के वेद हैं। उसमें 37 मण्डल है। पैराणिक वीरो की गाथाएँ हैं। यहाँ गोत्र को 'गोथ' कहा जाता है। नार्वे का प्राचीन नाम 'नार्गे' था। स्वीडन 'स्वेर्गे' था। नरक 'नार्गे' तथा स्वर्ग (स्वर्गे) यही मूल नाम होने की संभावना हैं। नार्वे यानी उत्तरापथ। उत्तरीध्रुव के निकट का बर्फीला स्थान जो सत्य हैं। 'असेर' (ईश्वर), वनेर (वानर) मूलशब्द हैं। स्वीडन में एक सुवर्ण मंदिर था जिसमें ओथिन, फिग्ग, थोर (शिव, उमा,स्कंद) की श्रेणी में देख सकते है।

यूगोस्लाविया के सोप्ते नगर में स्थित एक जाति अपने को 'रामजाति' कहलाती है। उनके नाम सुधाकान्त, रामकली, मीनाक्षी इत्यादि पूर्व भारतीय हैं। ओंक वृक्ष के तले 'स्लाव' यज्ञ करते है। अल्वानिया की भाषा में ब्रात (भ्राता), स्मृत (मृत), नोस (नासिका), झेम्प (जमीन) शब्द भारतीय संबंध दर्शाते हैं। अंग्रेजी के फादर (पितर), ब्रदर (भ्रातर), सिस्टा (स्वसा), मदर (मातर) शब्द संस्कृत से लैटिन में और लैटिन से आंम्ल भाषा में आये। 'मैन' शब्द 'मनु' (प्रथम मनुष्य) से ही बना है। मंक, मोनास्टिक शब्द 'मुनि' से बना। पाश्चात्य विद्धान रेव्हरंड थोमस मोरिस भी कहते हैं। कि– 'मेरा विश्वास है कि इन द्धीपो पर (ब्रिटिश आर्य लैड्स) का यही प्रथम भारतीय उपनिवेश था।

आफ्रिका (शंखदीप)– क.यु. के 300 वर्ष (ई.पू. 3400) के लगभग उत्तरी आफ्रिका में एक महान संस्कृति का अर्विभाव हुआ। इतिहास बिद् सेमाईट वंशीयो की इस सभ्यता का निर्माता मानते है। सुमेरियन, आर्मेनियम अक्कदियन इत्यादि अपने मूल पुरूषो को पूर्व दिशा से आने का संकेत करते हैं। कर्नल अलकाट के अनुसार– 'प्राचीन इजिप्त अन्स निष्कासित भारतीय थे। ज्यूधर्मी मोझेस से लेकर ग्रीक तत्ववेता प्लेटो तक लगभग सभी विख्यात तत्ववेताओं ने इजिप्त जाकर उनसे ज्ञान प्राप्त किया था। 'इजिप्त के प्रथम नरेश का नाम 'मिन' या मिनोस था। 'यूनेसको हिस्ट्री ऑफ मनकाइन्ड' के अनुसार– 'जिन्होने अफ्रीका को बसाया, ज्ञान, संस्कृति, प्रदान की वे– वे धातु विद्या के ज्ञाता, श्रेष्ट संस्कृति पुरूष, ईसा पूर्व चौथी सहस्राब्दी के द्धितियार्ध में इजिप्त में प्रवेश किया, दक्षिण भू प्रदेशो में बसे, शांति के रूप में, अतिथि के रूप में, समृद्ध ताम्र पाषाण संस्कृति का निमार्ण किया, वे सूर्य उपासक थे।'

विश्व की सभी सभ्यताओ में 'मनु' नाम प्रथम शासनकर्ता (प्रथम पुरूष) के रूप में जुड़ा हुआ हैं। इजिप्त में मनु (मिनीस), राम (रामसेस) हैं। मिनीस के काल में मेम्फिस, कोरनाक, थिब्स आदि नगरो में भव्य मंदिरो का निमार्ण हुआ। मिश्री सूर्यपूजक थे। राज्य विभाजन प्रांतो (नोम्स) में था। राजा ईश्वर का प्रतिरूप था। राजा (रामसेस) की उपाधि (रामईश) रामेश का मिश्री रूप है मिश्र के भी 'कोरनाक' में भी सूर्यमंदिर बनवाया गया। क्या यह एक आश्चर्यजनक संयोग की बात बस हैं। भारतीय इतिहास अनुसार इजिप्त, सहारा प्रदेश, सुडान, नुबिया व एथोपिया, मिलकर 'कुशद्धीप' था। इजिप्त के रिकार्ड में नुविया को कुशद्धीप कहा है। एक खरोष्ट्री अभिलेख के अनुसार 'कुश' जनसमूह मध्य एशिया का निवासी था। मालि व घाना उत्तर अफ्रीका के पश्चिम भाग में स्थित देश है। घाना एक उपाधि है घन यानि गण। मालि की भाषा में मघ यानि राजा अर्थात इन्द्र। पुराणानुसार आफ्रीका शंख आकृति जैसा दिखाई देता है। जिसे 'विक्टोरिया लेक' कहा जाता है। वह (अमर सरोबर) के नाम से प्राचीन काल में जाना जाता था। नजदीक ही चन्द्रपर्वत भी है। कतिपय पर्वतो के नाम 'मेरू' है। इसका अर्थ ही पर्वत होता है। घाना, माली, सुमाली, कुरू, मोम्बासा, किसुमु (केन्या), मेरू, अरूषा, किलिमार्जार आदि नाम केवल संयोग से भारतीय मूल के नहीं हो सकते हैं। माली, सुमाली का नाम तो रामायण में रावण के सबंधियो के लिये आया है। इसी प्रकार 'सुन्द' व 'उपसुन्द' नाम भी पुराणो में प्राप्त होते हैं। कस्साइट कुश से तथा फिनिशियन 'पणि' से संबंधित माने जा सकते है।

दक्षिण अमेरिका (पेरू, बोलिबिया, चिली, इक्वादोर, कोलंबिया)– धर्म, संस्कृति, परम्परा ,उपासना पद्धति, और स्वभाव की कसौटी पर 'इंका' जो इस दक्षिण अमेरिकी साम्राज्य के निर्मात थे, शुद्ध भारतीय थे। 'अन्देश' पर्तत के निकट 'तितिकाका' सरोबर हैं। इस तिवानको नगर के खण्डहर अत्यंत वैभवशाली सभ्यता के संकेत देते हैं। 'तुंका पुंकू' (दशद्धार) में कतिपय मंदिरो एंव देवताओ की मूर्तियो के खण्डहर प्राप्त हुए। तिवानको नगरवासी सूर्य उपासक थे। सुमेर के शिलालेखो में अनेक बार मनु की भूमि का संदर्भ आता है। जनश्रुतियाँ सुर्यास्त की इस भूमि को मनु भूमि कहती हैं। यह वर्णन तितिकाका (तितिक्षा) सरोबर जिसके तट पर सूर्य मंदिर है श्रुर्तियों के अनुसार इसके निर्माता पूर्वी दिशा से आये थे।

मध्य अमेरिका के देश और मेक्सिको की मय सभ्यता पूर्ण रूप से भारतीय दिखाई देती है। उनके मंदिर, देवी देवताएँ, सा0 प्रथाएँ नैतिक मूल्य आदि भारतीय तत्वों के साथ अपना घनिष्ठ संबंध प्रकट करते है। इका जनश्रुतियाँ कहती है कि उनके पूर्वज चार अय्यर इंका थे। जो पूर्वी दिशा से सागर पार से आये। वीरकोच इंका संस्कृति का महानायक था। जो तितिकाका सरोबर पर निवास करता था। उसी ने सारी सृष्टि का निमार्ण किया अर्थात– ब्रम्हा। इंका देवताओ की प्रार्थना के सूक्त वैदिक सूक्तो का स्मरण कराते हैं। सृष्टि की व्युत्पत्ति के सूक्त ऋग्वेद में वर्णित विज्ञान से साम्य रखते है। सूर्य के लिए इंका भाषा का शब्द है। 'इंदि' आदित्य। 'ममाकोच' सागर देवी थी। साहस व सम्पत्ति की देवी अर्थात लक्ष्मी थी। इंका तत्ववेताओं को 'अमौतस' कहा जाता था। ऋग्वेद में अग्निदेवता केा अर्थात सूर्य को अन्न ओर औषधि का निर्माता और रक्षणकर्ता कहा है। यही कल्पना एक इंका सूक्त में प्रकट होती है। यूरोप जब अंधकार से बाहर निकल रहा था उस समय इंका सभ्यता अपने चरम पर थी।

मध्य अमेरिका (मैक्सिको, बलिझ, ग्वातेमाला, होन्दुरास, निकारागुआ, एल् साल्वाडोर)– मध्य अमेरिका में मेक्सिको की घाटी और प्युब्ला की घाटी केा जोडने वाला वर्तमान मार्ग ..... इस मार्ग पर 7660 फुट की ऊँचाई पर स्थित प्राचीन 'मय' नगरी। नाम है, नगरी का 'देवदिवाकान'। अर्थात देवलोक का नगर। इस प्राचीन नगरी के खण्डरो में विशाल पिरामिड सदृश मंदिरो के शिखर झॉकते रहते हैं। महानगर के उत्तरी

भाग में चन्द्रमंदिर है प्रशस्त प्रमुख मार्ग पर केत्सल कोरल मंदिर और चन्द्र मंदिर के बीच में है विशाल सूर्य मंदिर। यह चार मंजिला पिरमिड के आकार का भव्य मंदिर 210 फुट ऊँचा हैं।

रामायण में–'मय तनया सुंदरकरतारी' चौपाई मंदोदरी जो रावण की पत्नी थी का संदर्भ आता है। यह अमेरिका मय दानव का क्षेत्र (मय सभ्यता) जान पड़ती है। मध्य अमेरिका के मैक्सको, ग्वातेमाला, होन्दूरास, आदि देशो पर मय संस्कृति का प्रभाव रहा है। जिसे ढाई हजार वर्ष पूर्व की 'ओल्मेक सभ्यता' नाम से जाना जाता है। इस लगभग 20 लाख वर्गकिलोमीटर के विस्तीर्ण भूभाग पर हजारो पिरामिड मंदिर है। वेराक्रूज में तातोनाक्स की भूमि पर पहाडियो के बीच ' एलताजिन' का सबसे बड़ा पिरामिड 116 फिट लम्बे और चौकोर अधिष्ठान पर सात मंजिला मंदिर है।

वर्तमान मेक्सिको नगर के पास किकिल्को का गोलाकार मंदिर है जो सबसे प्राचीन सात पिरामिड वाला है। मय स्थपतियो ने ये मंदिर खगोलशास्त्रो के तत्वज्ञान पर बनाये थे। आकाश निरीक्षण, नक्षत्राअवलोकन और कालगणना से इसका संबध दिखाई देता है। ग्वातेमाला में स्थित पेतेन के जंगल में मय संस्कृति का पवित्र नगर था। उसका नाम था 'तिकल'। 'चिचेन इत्सिा' लगभग 1200 वर्ष पूर्व की मय नगरी, यहाँ का मंदिर योद्धाओ का मंदिर कहलाता है। होन्दूरास में स्थित 'कोपेन' के मंदिर पर हाथी पर सवार इन्द्र, दुर्गा, हनुमान की मूर्तियो के शिल्प मिले है। भारतीय परम्परा मानती है कि अमेरिका ही पौराणिक पाताल देश है। सुर और असुर दोनों कश्यप ऋषि की संतान थे। महान स्थापत्य विद् मायासुर महाभारत के समय 5000 वर्ष पूर्व निष्कासित हुआ। मध्य अमेरिका की स्थापत्य में ख्याति है। डॉ. चक्रवर्ती ने इन सात पतालो की पहचान अमेरिकी भूप्रदेश से की है। अटलांटिक महासागर का किनारा (अतल), वेराक्रूज (वितल), ग्वातेमाला (सुतल), उकतान (तलातल), मेक्सिको (महातल), एक्वाडोर (रसातल) और पेरू (पाताल) ये सप्त पाताल के प्रदेश हैं।

मेक्सिको के उकतान प्रांत में थोसुडे के पास ब्रम्हीलिपि में एक अभिलेख प्राप्त हुआ। इसमें महानाविक बसुलुण के साहसी सागर प्रवास की जानकारी है। यह मध्य अमेरिका से भारत के संबंधो केा स्थापित करता है। लिपि सरस्वती हडप्पा की मुद्राओं पर प्राप्त लिपि से साम्य रखती हैं। मध्य अमेरिका की मय संस्कृति भारतीयों की देन है, इसमें संदेह नहीं।

मध्य अमेरिका के ग्वातेमाला, होन्दूरास, साल्वाडोर, वेलीझ, निकारागुआ, कोस्टारिका, एंव पनामा ये सारे वर्तमान प्रजा सत्तात्मक देश भी अपनी सांस्कृतिक परम्परा का स्त्रोत भारत को मानते हैं। बनावकु सर्वश्रेष्ठ मय देवता था। वह विश्व निर्माता था। किनिकआवा अर्थात सूर्यदेव और इक्षेल (चन्द्र) उसके ही रूप माने जाते थे। 'चक' पर्जन्य का देवता था। अहपुच मृत्युदेवता था। कुकुलकन (वायुदेवता) थे। चिचेन इत्सा का मंदिर मय वेधशाला थी। अस्तेक जाति अपने को सूर्यपुत्र मानती है वे भारतीय कालगणना, चतुर्युग सिद्धान्त मानते है। इंका व मय दोनों के पुरखे भारत से आये थे। मेक्सिको के एक लोकगीत में यह भावना व्यक्त होती है। तभी तो भारतवर्ष आदिकाल से जगत्गुरू (विश्वगुरू) कहलाता रहा है। यहॉ की आध्यात्मिकता ने सारे विश्व को आप्लावित किया था। एवं सारे विश्व को परिवार मानकर व्यवहार किया। इसी लिये तो भारतवर्ष ने कभी किसी देश पर आक्रमण नहीं किया। वरन प्रेम, बन्धुत्व, करूणा, सेवा व उदात्त भाव को लेकर (कृण्वन्तो विश्वम्आर्यम्) विश्व में सभी द्वीपो पर संचार किया। एवं विश्व को 'जीवन जीने की कला' सिखाई।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. ओक पुरूषोत्तम नागेश– वैदिक विश्व राष्ट्र का इतिहास, खण्ड 4, मुम्बई 1986।
2. जगन्नाथ प्रभाकर– प्राचीन भारतीय विदेश यात्री, दिल्ली 1974।
3. दमोदर झा– भारतीय कालगणना की रूपरेखा, जालंधर 1985।
4. भगवदत्त– भारतीय संस्कृति का इतिहास, दिल्ली 1965।
5. वासुदेव पौद्दार– विश्व की कालयात्रा, नई दिल्ली, 2000।
6. शर्मारामविलास– पश्चिम ऐशिया और ऋग्वेद, दिल्ली, 1994।
7. रामजी उपाध्याय– भारत की संस्कृति साधना, बराणसी 1985।
8. शिवाजी सिंह– ऋग्वैदिक आर्य और सरस्वती सिन्धु सभ्यता, बराणसी, 2004।
9. डॉ. शरद हेबालकर– कृणवन्तोविश्वमार्यम्, अ.भा.इ.स.यो. नई दिल्ली, 2010।
10. डॉ. ए.पी.जे. कलाम– इण्डिया 2020, पृष्ठ 27–28, नई दिल्ली।
11. सुरेन्द्रनाथ गुप्त– सोने की चिड़िया लुटेरे अग्रेज, पृ. 10, नई दिल्ली, 1996।
12. सुरेश सोनी– भारत में विज्ञान की उज्जवल परम्परा, भोपाल, 2003।
13. भीखूचमनलाल– हिन्दू अमेरिका, चमनलाल, न्यूयार्क, 1966।
14. शर्मा आचार्य श्रीराम– मत्स्यपुराण बरेली 1970, मार्कण्डेय पुराण 1969, विष्णु पुराण 1970।
15. गुरूदत्त– वयं रक्षाम:।
16. देवीशंकर मिश्र– जगद्गुरू भारत।
17. महर्षी बाल्मीकी– रामायण, गीताप्रेस गोरखपुर, उ.प्र. ।
18. महाभारत, गीताप्रेस गोरखपुर, उ.प्र.।
19. सातवलेकर श्री. दा.–ऋग्वेद सहिंता।
20. रामप्रताप त्रिपाठी– वायुपुराण (चौखाम्बा सीरीज)।
21. ठाकुर प्रसाद वर्मा–भारतीय संस्कृति का इतिहास, दिल्ली, 1965
22. M.Winternitz- Histry of Indian literature, vol.1, Calcutta 1927.
23. Sankarananda- Hindu states of Sumeria, Calcutta 1962.
24. Shastri. A.M.- Brihat Sanhita of Varahamihira. Delhi 1969.
25. Zimmer H.- Art of Indian Asia, vol.1-2, Newyork 1955.
26. UNESCO- History of mankind vol.2-3, London 1975.
27. kane V.S.- Weatern Aryasthan.Ekta Pub. Trust Pune 2001.
28. Michael Grant- History of Rome, London 1978.

****

प्रेस की आजादी के लिए संघर्ष (राष्ट्रीय आन्दोलन के सन्दर्भ में)

डॉ. पदमा सक्सैना *

प्रस्तावना – ईस्ट इण्डिया कम्पनी के विकास के साथ साथ भारत के समाचार पत्रों का भी विकास हुआ। अपने प्रांरभिक दौर में समाचार पत्र ज्ञानवर्द्धन एवं मनोरंजन समाचार प्रकाशित करते रहे और ब्रिटिश प्रशासन की आलोचना से वे दूर रहे। उसी प्रकार ब्रिटिश सरकार ने भी कुछ मामूली नियमों के अतिरिक्त प्रेस की स्वतंत्रता में किसी प्रकार हस्तक्षेप नहीं किया।

मैंसूर युद्ध के दौरान जबकि कुछ समाचारपत्रों ने अंग्रेजी सेना की दुर्बलता के बारे में लिखा तो लार्ड वेलेजली ने (1799) सर्वप्रथम प्रेस पर सेंसरशिप लगा दी। जिसके अन्तर्गत युद्ध से संबंधित कोई समाचार प्रकाशित नहीं किया जा सकता था, और, समाचार पत्र को भी सभी समचार छापने से पूर्व सेंसर के लिये प्रस्तुत करना अनिर्वाय था। सन् 1818 में लार्ड हेस्टिंग्ज ने इस सेंसरशिप को समाप्त कर दिया। लार्ड हेस्टिंग्ज की इस उदारनीति के परिणामस्वरूप समाचार दपर्ण, सम्वाद – कौमुदी इत्यादी समाचार पत्र प्राकशित होने लगे। सन् 1822 में लार्ड मुनरों की अध्यक्षता में गठित आयोग ने समाचार पत्रों के प्रति नियंत्रण की नीति अपनाने पर बल दिया। आयोग का मत था कि अंग्रेजी प्रेस की अपेक्षा भारतीय प्रेस से सरकार को अधिक हानि होने की संभावना थी। अत: भारतीय समाचार पत्रों के लिए लाईसेंस लेना अनिवार्य कर दिया गया। इसके साथ प्रत्येक समाचार पत्रों को अपनी प्रति सरकार को देना अनिवार्य था। 1823 में चार्ल्स मेटकॉफ ने इन समस्त प्रतिबंधों को समाप्त कर समाचार पत्रों को पूर्ण स्वतंत्रता प्रदान की और यह स्वतंत्रता सन् 1856 तक चलती रही है।

सन् 1857 के विद्रोह के पश्चात ब्रिटिश सरकार की नीति में परिर्वतन आया और प्रेस की आजादी पर अंकुश लगा दिया गया। अब समाचार पत्रों के लिये लाईसेंस लेना अनिवार्य कर दिया गया। सरकार किसी भी समाचार पत्र या पुस्तक को निषिद्ध कर सकती थी। 1867 में चार्ल्स मेटकॉफ द्वारा प्रेस को स्वतंत्रता दी गई।

19 वीं शाताब्दी के प्रारंभ से ही जबकि राजनैतिक चेतना की लहर चारों ओर फेल रही थी, उस समय ब्रिटिश शासन के विरूद्ध कई निर्भीक अखबारों ने जन्म लिया। जैसे सुब्राहयमन् अय्यर के सम्पादन में द हिन्दू और स्वदेश मित्रम: तिलक के सम्पादन में केसरी और मराठा, मोतीलाल घोष के सम्पादन में अमृत बाजार पत्रिका दादा भाई नौरोजी के सम्पादन में हिन्दुस्तानी और द ट्रिव्यून इत्यादि अखबार प्रकाश में आये। इन समाचार पत्रों ने ब्रिटिश सरकार के विरूद्ध शक्तिशाली विपक्ष की भूमिका निभाई। ये सभी अखबार सरकारी नीतियों और कानूनों का जमकर विरोध करते थें।

उस समय भारतीय प्रेस का एक ही उद्देश्य था विरोध सम्पूर्ण विरोध और विरोध। लेकिन महत्वपूर्ण बात थी कि वह विरोध हल्के स्तर का नहीं होता था और ब्रिटिश सरकार ने भी इस विरोध से निबटने की पूरी तैयारी की और प्रेस की इस बढ़ती आजादी पर अंकुश लगाने के उद्देश्य से सन् 1870 में भारदीय दण्ड संहिता या इण्डियन पेनल कोड की धारा में धारा 124 ए को जोड़ा। इस धारा के अन्तर्गत भारत में विधि द्वारा स्थापित ब्रिटिश सरकार के प्रति विरोध की भावना भडकाने वाले व्यक्ति को तीन साल कैद से लेकर आजीवन देश निकाला तक की सजा दिये जाने का प्रावधान था और बाद में इसमें कई अन्य कड़े प्रावधान जोड़ दिये गये। सन् 1876 में बंगाल के अकाल पीडितों के प्रति ब्रिटिश सरकार के अमानवीय रूख की समाचार पत्रों ने कटु आलोचना की ओर इसी समय (1878) जबकि रानी विक्टोरिया के भारत अगमान पर दिल्ली दरबार के आयोजन पर ब्रिटिश सरकार के द्वारा अत्याधिक धन व्यय किया तो समचार पत्रों ने खुलकर सरकार की आलोचना की। अतः जनता के असंतोष को दबाने के लिये और प्रेस की बढ़ती आजादी पर नियंत्रण रखने के उद्देश्य से लार्ड लिटन ने 1878 में देशी भाषा समाचार पत्र अधिनियम अथवा वर्नाक्यूलर प्रेस एक्ट लागू किया। इस एक्ट के अनुसार 'समाचार पत्र' कोई ऐसी सामग्री प्रकाशित नहीं करेंगे, जिससे सरकार विरोधी भावना भड़के। आज्ञा भंग होने पर जिला मजिस्ट्रेट को यह अधिकार होगा कि वह उस समाचार पत्र को जब्त कर ले।

इस अधिनियम के अन्तर्गत सोमप्रकाश,– भारत मिहिर, ढाका प्रकाश, सहचर, इत्यादि समाचार पत्र जब्त कर दिये गये। अंग्रेजी भाषा के समाचार पत्रों पर नहीं। भारतीय राष्ट्रवादियॉ ने इस कानून का जमकर विरोध किया और इसे मुँह बंद कर देने वाला अधिनियम कहा। इस अधिनियम के विरूद्ध कलकत्ता के टाउन हाल में एक विशाल सार्वजनिक सभा हुई। किसी सार्वजनिक प्रश्न को लेकर यह पहला बड़ा प्रदर्शन था। इस कानून के विरूद्ध भारतीय प्रेस और दूसरे अन्य संगठनों ने भी संघर्ष छेड़ दिया। परिणाम स्वरूप 1881 में लार्ड रिपन को यह कानून: रद्द करना पड़ा।

1881 में प्रमुख उग्रवादी नेता तिलक ने केसरी और मराठा समाचार पत्रों के माध्यम से ब्रिटिश प्रशासन के विरूद्ध जनता को जागरूक करने का कार्य शुरू किया। 1893 में उन्होने अपने समाचार पत्रों के माध्यम से शिवाजी जयंती तथा गणपति उत्सव के महत्व को उजागर किया और इन्हें पूर्ण उत्साह से मानने पर बल दिया। 1896 में पूना के अकालग्रस्त क्षेत्रों के लिये सरकार द्वारा तय की गई संहिता की मराठी प्रतियॉ छपवाकर उन्हें हजारों की संख्या में बंटवाया और किसानों से अपील की कि वे सरकार को कोई टैक्स न दें।

1897 में पूना में प्लेग फैल गया। तिलक स्वयं पूना में उपस्थित थे। उन्होनें अपने समाचार पत्रों में प्लेग पीडितों के प्रति सरकारी अफसरों के हदयहीन रवैये की कटु आलोचना की परिणामस्वरूप सरकारी अफसरों के प्रति जनता में क्रोध जागृत हो गया और 27 जून सन् 1898 को चापेकर बंधुओं ने पूना की प्लेग कमेटी के अध्यक्ष (रैंवरैण्ड) और उनके सहायक की हत्या कर दी।

ब्रिटिश सरकार ने इस हत्या काण्ड के लिये पूर्ण रूप से तिलक को दोषी ठहराया और भारतीय दण्ड संहिता अथवा Indian Pannel Code की धारा 124 ए के तहत उन्हें गिरफ्तार कर लिया। तिलक पर यह अभियोग लगाया गया कि वे अपने समाचार पत्रों के द्वारा भारतीय जनता को अंग्रेजों के

* सहायक प्राध्यापक (इतिहास) महारानी लक्ष्मी बाई शासकीय उत्कृष्ट महाविद्यालय, ग्वालियर (म.प्र.) भारत

विरूद्ध भड़का रहे है। ज्यूरी की असहमति के बाद भी तिलक को 18 महीने की कड़ी कैद की सजा दी गई।

तिलक को सजा दिये जाने के निर्णय का देश भर में जर्बदस्त विरोध किया गया। प्रमुख अखबारों और राजनैतिक संगठनों ने मानव अधिकारों और प्रेस की आजादी पर हुये हमले के विरूद्ध देश व्यापी आंदोलन छेड़ दिया। कई अखबारों ने अपने प्रथम पृष्ठ पर चारों तरफ काली पटिट्यों छापी और कई अखबारों ने विशेष संस्करण निकाले जिसमें प्रेस की आजादी के लिये आवाज उठायी गई। लंदन की एक सभा में भाषण करते हुये दादा–भाई नौरोजी ने कहा था कि प्रेस का गला घोटने का नतीजा ब्रिटिश सरकार के लिये आत्मघाती सिद्ध होगा।

ब्रिटिश सरकार ने भी प्रेस की इस बढ़ती हुई आवाज को दबाने के लिये भारतीय दण्ड संहिता अथवा Indian Pannel Code में एक नई धारा ए–153 जोड़ दी जिसके अनुसार वे व्यक्ति अथवा समाचार जो सेना में असंतोष फैलायें अथवा किसी व्यक्ति को सरकार के विरूद्ध कार्य करने की प्रेरणा दे उन्हें दण्डित किया जा सकें।

1905 में लार्ड कर्जन की नीतियों एवं बंगाल विभाजन समाचार पत्रों की सुर्खियॉ बने रहे। समकालीन समाचार पत्रों ने जी भरकर कर्जन की नीतियों की आलोचना की। परिणामस्वरूप भारतीय राजनीति में उग्रवादी, आतंकवाद (बंगाल) का जन्म हुआ और कई हिंसक घटनायें प्रकाश में आयी।

1908 के प्रारंभ से ही ब्रिटिश अफसरों पर बम फेंके जाने की कई घटनायें हुयी, जिनमें कई ब्रिटिश अधिकारी घायल हुये अथवा मारे गये ।बम फेंके जाने की घटनाओं ने ब्रिटिश सरकार के छक्के छुड़ा दिये। उसने एक बार पुन: समाचार पत्रों को निशाना बनाया। परिणामस्वरूप सन् 1908 का Indian News Paper Act पारित किया गया।

इस अधिनिमय के अनुसार जो समाचार पत्र आपत्तिजनक सामग्री, जिससे लोगों को हिंसा अथवा हत्या की प्रेरणा मिले, प्रकाशित करेगा उसकी सम्पत्ति अथवा प्रेस को जब्त कर लिया जायेगा। (इस अधिनियम के अंतर्गत सरकार ने 9 समाचार पत्रों पर मुकदमें चलाये और 7 प्रेस जब्त कर लिये) इस तरह प्रेस की आजादी को कुचलने का पूरा–पूरा प्रयास किया गया। ऐसे भय और आतंक के वातावरण में तिलक ने एक बार पुन: अपनी निर्भीक आवाज उठायी । अपने समाचार पत्रों के माध्यम से उन्होंने भारतीय राजनीति में बम और हिंसा' के प्रवेश पर एक लेखमाला प्रकाशित की। जिसमें उन्होनें व्यक्तिगत हत्याओं और हिंसा की निंदा करते हुये ब्रिटिश सरकार को इस आतंकवाद के जन्म के लिये दोषी ठहराया।

इन लेखों को प्रकाशित करने के कारण एक बार पुन: तिलक को गिरफ्तार कर लिया गया। मुकदमें की कार्यवाही के दौरान तिलक ने स्पष्ट रूप से कहा कि क्या ब्रिटिश सरकार प्रेस की आजादी के प्रति वास्तव में ईमानदार है ? क्या वह भारत में प्रेस को उतनी ही आजादी देने को तैयार है जो आजादी इंग्लैण्ड में प्रेस को मिली हुई है? ज्यूरी की असहमति के बाद भी तिलक को सजा सुना दी गई। तिलक को सजा सुनाये जाने की व्यापक प्रतिक्रिया हुयी। समाचार पत्रों ने इसका विरोध करते हुये घोषणा की कि वे तिलक का अनुकरण करते हुये जी जान से प्रेस की आजादी के लिये संघर्ष करेगें।

ब्रिटिश सरकार ने भी अपनी स्थिति को और मजबूत करने के लिये सन् 1910 का भारतीय समाचार पत्र अधिनियम अथवा (Indian Press Act. 1910) पारित किया। इस अधिनियम के अनुसार प्रत्येक प्रकाशक को अपने समाचार पत्र की दो प्रतियॉ बिना मूल्य के अनिवार्य रूप से सरकार को देनी थी। आपत्तिजनक स्थिति में सरकार प्रकाशक की जमानत जब्त कर सकती थी और प्रेस का रजिस्ट्रेशन रद्द कर सकती थी।

20वीं शताब्दी के चौथे दशक में गांधी जी के आगमन से राजनैतिक आंदोलन में गति आयी। (1919–1922) ब्रिटिश सरकार की नीतियों के विरूद्ध गांधी जी के कुछ लेख Young India समाचार पत्र में प्रकाषित हुये। जिसके लिये ब्रिटिश सरकार ने सन् 1922 में उन पर धारा 124 ए के तहत मुकदमा चलाया और उन्हें 6 साल कैद की सजा सुनाई। जब गांधी जी ने सविनय अवज्ञा आंदोलन प्रारंभ किया तो सरकार ने समाचार पत्रों पर नियंत्रण लगाने के उद्देश्य से 1931 में The Indian Press Emergency Power Act. पारित किया। इस अधिनियम के अन्तर्गत प्रांतीय सरकारों को सविनय अवज्ञा आंदोलन के प्रचारको को दबाने के लिये अत्याधिक शक्तियॉ दे दी गई। इस अधिनियम के अन्तर्गत सरकार को किसी शब्द संकेत, मुद्रा अथवा आकृति द्वारा किसी की हत्या, अथवा अपराध की प्रेरणा देने पर कड़ा दण्ड देने का अधिकार था। प्रेस की आवाज को और दबाने के लिये इस अधिनियम को विस्तृत किया गया और 1932 में Criminal Amendment Act. या (अपराधिक संशोधित अधिनियम) पारित किया गया। इसके अन्तर्गत वे समस्त गतिविधियां शामिल की गई जिससे सरकार की प्रभुसत्ता को हानि पहुॅचायी जा सकती थी। इसी प्रकार द्वितीय विश्व युद्ध (1939) एवं भारत छोड़ों आंदोलन (1942) के दौरान, सुरक्षा नियमों के अन्तर्गत समाचार पत्रों पर प्री सेंसरशिप (Pre) लागू कर दी गई। साथ ही राष्ट्रीय कांग्रेस के विषय में समाचार प्रकाशित करना भी अवैध घोषित कर दिया गया।

मार्च 1947 में भारत सरकार ने एक समाचार पत्र जांच समिति का गठन किया और उसे आदेश दिया कि वह संविधान सभा में स्पष्ट किये गये मौलिक अधिकारों के प्रकाश में समाचार पत्र कानूनों की समीक्षा करें। इसके अन्तर्गत कई पुराने और कठोर नियमों को (1931 से) रद्द किया गया।

अखिल भारतीय समाचार पत्र सम्पादक सम्मेलन अथवा (All India News Paper's Editor's Confrence) तथा भारतीय कार्यकर्ता पत्रकर संघ अथवा (Indian Fedration of working Journalist) के अनुरोध पर भारत सरकार ने न्यायाधीश जी.एस. राजाध्यक्ष' की अध्यक्षता में एक समाचार पत्र आयोग अथवा (Press Commission) गठित किया जिसने कि 1954 में अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की इसमें यह सिकारिश की गई कि प्रेस को पूर्ण स्वतंत्रता प्रदान कर अखिल भारतीय समाचार पत्र परिषद का गठन किया जाये तथा समाचार पत्रों में पन्ना मूल्य पद्धति अथवा (Page Prise) एवं विज्ञापन (Advertisenemt) की एक कड़ी संहिता अपनायी जाये। भारत सरकार ने इन सभी सिफारिशों को स्वीकार करते हुये प्रेस को पूर्ण आजादी प्रदान की। इस प्रकार एक लम्बे संघर्ष के उपरांत प्रेस को पूर्ण आजादी प्राप्त हुई।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. Barns – Margarita - The Indian Press (1940).
2. Gates – Reed - The Indian Press Yeur Book Anuhal.
3. Ghose – H.P. - The News Paper in India (1952).
4. Lovatt- Pat - Journdisn in India (1928).
5. Reports of the Press Commission - 3 Parts).
6. Chaterjee – A.C. - India's struggle for freedom.
7. Majumdar. R.C. - Struggle for freedom.

****

उदयपुर जिले की गरासिया जनजाति का भौगोलिक अध्ययन

श्वेता मिश्रा * डॉ. धीरसिंह शेखावत **

प्रस्तावना – राजस्थान में मुख्यक रूप से तीन जनजाति पाई जाती है भील, मीणा व गरासिया है यह तीनों जनजातियां राजस्थान के उदयपुर जिले में मुख्य से पाई जाती है।

गरासिया जनजाति राज्य की कुल जनजाति जनसंख्या का 67 प्रतिशत है गरासिया जाति राजस्थान की तीसरी बड़ी जनजाति है यह दक्षिणी राजस्थान में अधिकांशत: पाई जाती है। समस्त गरासिया जाति का 5663 प्रतिशत भाग राज्य के उदयपुर और राजसंमद जिलों में पाई जाती है। अब इसके अलावा झालावाड़, कोटा, सिरोही, बारां जिलों में भी पाई जाती है। अब गरासिया जनजाति सूक्ष्म रूप में पाई जाती है व उदयपुर के कोटड़ा तथा गोगुन्दा में अधिक है।

अध्ययन क्षेत्र – उदयपुर जिला जो की मेवाड़ में स्थित है इसका प्राचीन नाम 'शिवी' था इसका विस्तार राजस्थान के दक्षिणाचल में 23'46'से 250 5', उत्तरी अंक्षाश तथा 73'9' से 74035' पूर्वी देशान्तर के मध्य है उदयपुर जिले का पूर्ण भोगोलिक क्षेत्रफल 13419.14 वर्ग किलोमिटर है।

अध्ययन क्षेत्र की परिकल्पना – वर्तमान समय में सभी व्यक्तियों का विकास तेजी से हो रहा है परन्तु उदयपुर जिले की गरासरिया जनजाति आज भी अपना जीवनयापन आदिम प्रकार से ही कर रही है तथा अपने प्राकृतिक पर्यावरण में सामंजस्य बनाए हुऐ है।

अध्ययन का उद्देश्य – गरासिया जनजाति का भौगोलिक अध्ययन करने के निम्न उद्देश्य है :-

1. गरासिया जनजाति में पाई जाने वाली अशिक्षा को दूर करना है।
2. इस जनजाति में पाई जाने वाली कुछ कुप्रथाओं के दूर करना है जैसे :- मोर बन्धिया विवाह, पहरावना विवाह, तल्ला विवाह, बाल विवाह, सती प्रथा आदि।
3. इस जनजाति की सभ्यता एवं संस्कृति को उदाहरण स्वरूप पूरे विश्व को बताना है।
4. इस की घटती जनसंख्या के कारणो का अध्ययन करना है।

आँकड़ों का संग्रहण एवं विधि तंत्र – ऑकड़ों का संग्रहण प्राथमिक एवं द्वितीयक ऑकड़ों पर आधारित है उदयपुर जिलें की कुल 11 तहसीलों में सबसे अधिक गरासिया जनजाति पर अध्ययन किया है तथा इसके अतिरिक्त जनगणना पुस्तकों, पत्र पत्रिकाओं, एवं समय-समय पर प्रकाशित प्रतिवेदनों के आधार पर आंकडें एकत्र किये गये है।

गरासियों की उत्पति – गरासिया जनजाति के लोग चौहान और अन्य राजपूतों की सन्तानें मानी जाती है। प्रारंम्भ में लोग बकोहा के पास चनपारिन क्षेत्र मे रहते थे, जहॉ से चित्तौड के समीप राजस्थान में आकर बस गये। इन लोगों के भील जाति से सम्पर्क होने के कारण इनमें भील जाति के गुण आ गयें।

गरासियों के भोजन – गरासिया लोग भी गेहूँ, मक्का, जौ, चना का प्रयोग करते है तथा त्यौहारों होली, दिवाली, दशहरा, गणगौर, जन्माष्टमी पर विशेष पकवान बनाते है।

गरासियों के वस्त्र –

1. **पुरूषों के वस्त्र –** पगड़ी, पाग, पेंचा, बागा या साफा – सिर को ढकने के लिए पहना जाने वाला वस्त्र। यह प्रतिष्ठा का सूचक भी माना जाता हैं अलग-अलग त्यौहारों व उत्सवों पर अलग-अलग पगड़ी बांधी जाती है जैसे – विवाह या शुभ अवसर पर रंगीन व मृत्यु या अशुभ कार्य पर सफेद व युद्ध में जाते समय केसरिया पगड़ी बांधी जाती है।
2. **अंगरखी :-** पुरूषों द्वारा बदन पर पहनी जाती है जो दो प्रकार के होते (1) कमर तक (2) घुटनों तक

1. **आतमसुख –** तेज सर्दी में पुरूषों द्वारा चोगा व अंगरखी के ऊपर पहना जाने वाला वस्त्र।
2. **पायजामा, बिरजस या ब्रीचेस –** अंगरखी, चूगा और जामें के नीचे पहना जाने वाला तथा बिरजस चूड़ीदार पायजामें के स्थान पर काम आता है।

गरासिया महिलाओं के वस्त्र –

1. **कुर्ती और कांचली –** शरीर के ऊपरी हिस्से में पहना जाने वाला वस्त्र।
2. **घाघरा –** कमर के नीचें एड़ी तक पहना जाने वाला घेरदार वस्त्र, जो कई कलियों को जोड़कर बना होता है।
3. **तिलका –** यह मुस्लिम औरतों का पहनावा है।
4. **अन्य वस्त्र** – सलवार, कुर्ता, चूडीदार पायजामा, शरारा, स्कर्ट आदि।

आभूषण – हाथी दॉत के चूडिया, प्लास्टिक की चूडियाँ, चाँदी के कड़ें आदि पहने जाते है।

* शोधार्थी, ज्योति विद्यापीठ महिला विश्वविद्यालय, झरना, जयपुर (राज.) भारत
** मुख्य सलाहकार, ज्योति विद्यापीठ महिला विश्वविद्यालय, झरना, जयपुर (राज.) भारत

गरासियों का भौगोलिक क्षेत्र – गरासिया जनजाति राजस्थान के मुख्यत: उदयपुर, डूंगरपुर, बासंवाड़ा, चितौड़गढ़ जिले में अधिक निवास करती है राजस्थान मे गरासिया सर्वाधिक उदयपुर, बांरा, सिरोही जिलो में मिलते है। उदयपुर जिले के गिर्वी, गोगुन्दा, खेरवाड़ा, रिशादेवों, मावली, वल्लभनगर, कोटड़ा, झाड़ोल आदि में मिलते है।

ये लोग भगवान 'शिव' के उपासक है, गरासिया शब्द की उत्पति 'गिरास' शब्द द्वारा हुई है।

उदयपुर जिले में मुख्यत: भील, मीणा, गरासिया, जनजाति मूल निवास करती है चूंकि इनका कार्य शिकार खेलना, खेती करना, लूटमार करना, मछली पकड़ना, खन्न कार्य कर जीवनयापन करना से है।

गरासिया जनजाति के लोग भीलों के साथ रहकर उनके जीवनयापन से प्रभावित होते जा रहे हैं।

गरासिया व भील जनजाति के लोग राजस्थान के नाथद्वारा में श्रीनाथ जी के अन्नकूट समारोह में सम्पूर्ण लूट मार के हकदार है।

त्यौहार – गरासिया लोग होली व गणगौर त्यौहार को बड़े श्रद्धा, उल्लास एवं प्रेम से मनाते है इन अवसरों पर स्त्री एवं पुरूष प्रसन्नता से एक साथ नृत्य करते है तथा गीत गाते है स्त्रियॉ जो कि बालिया को अपने सामने रखकर गोले में गीत गाती है तथा पुरूष गोले के बाहर रहकर गीत गाते है और नाचते है।

गरासियों का प्रमुख आन्नदमय नृत्य गरबा है जिसमें लक्ष्मी को सम्बोधित करके नाचते है। इसके अलावा बालट नृत्य व गैर नृत्य भी प्रसिद्ध है।

सामाजिक पारिवारिक जीवन – गरासियां लोगों में पितृसत्तात्मक परिवार की व्यवस्था है। पिता या परिवार के मुखिया की आज्ञा सर्वोपरि होती है। तथा प्रत्येक परिवार के सदस्य को उनकी आज्ञा का पालन करना होता है परिवार के मुख्या का उत्तरदायित्व होता है कि वह परिवार के प्रत्येक सदस्य की इच्छाओं का ध्यान रखे उनकी पूर्ति करने का पूण्र रूप से प्रयास करें तथा सामाजिक उत्तरदायित्व का वहन करें।

गरासिया स्त्रियां परिवार की सभी गतिविधियों में खुल कर हाथ बटॉती है तथा कठोर परिश्रम, कर्तव्य–परापणता एवं ईमानदारी से परिवार के विकास में अपनी सक्रिय भागीदारी निभाती है।

गरासिया स्त्रियाँ अपने परिवार एवं पति की सेवा करने तथा बलिदान करने की दृष्टि से सर्वविदित है।

प्रतयेक गॉव में पंचायत होती हैं पंचायत का प्रधान मुखिया होता है जिससे 'पावली' भी कहते है। पंचायत गांव के लोगों के व्यवहार को निर्धारित करती है तथा उनके झगड़ें –टन्टों का निपटारा करती है। पंचायत मुखिया के आदेशों को गांव का प्रत्येक व्यक्ति मानता है और सम्मान देता है।

वाधं यंत्र – गरासियां लोग अवसरों पर बांसुरी, नगाड़ा, अलगोजा आदि वाध यंत्र बजाते है।

गरासियों के प्रकार – गरासियों के तीन प्रकार है –

1. भील गरासिया
2. गमेती गरासिया
3. परिवार

1. भील गरासिया – यदि कोई गरासिया पुरूष किसी भील स्त्री से विवाह कर लेता है तो ऐसे परिवार को भील गरासिया कहा जाता है।

2. गमेती गरासिया – यदि कोई भील पुरूष किसी गरासिया स्त्री से विवाह कर लेता है तो ऐसा परिवार गमेती गरासिया परिवार कहलाता है।

3. परिवार – पितृ सत्तात्मक , परिवार का मुखिया – पिता, स्त्रीयाँ पुरूषों के कंधे से कंधा मिलाकर प्रत्येक कार्य बड़ें साहस व परिश्रम के साथ करती है।

धर्म व अन्धविश्वास – गरासिया लोग 'शिव' के उपासक है ये लोग जादू–टोना, जन्तर–मन्तर में विश्वास करते है इनमें अन्धविश्वास बहुत होता है इन लोगों द्धारा श्वेत पशु चाहे वह गाय, बकरी, घोड़ा आदि हो उसे पवित्र मानते है तथा उसकी पूजा करते है सफेद मोर को ईश्वर का रूप मानते है।

विवाह पद्धति – गरासियों में तीन प्रकार के विवाह प्रचलित है –

1. मौर–बंधिया विवाह ।
2. पहरावना विवाह ।
3. ताणना विवाह ।

1. मौर बंधिया विवाह – हिन्दुओं के समान ही मोरबन्ध विवाह सगाई, फेरे चौरी एवं ब्राहम्ण को साक्षी समान रूप से होते है अग्नि को साक्षी करके दुल्हा, दुल्हन सात फेरे लेते है तत्पश्चात् वर– वधु एक दूसरे के जीवन साथी हो जाते है ब्राहम्ण को पूर्ण दक्षिणा दी जाती है।

2. पहरावना विवाह – पहरावना विवाह में नाममात्र के फेरे होते है इसमें ब्रहाम्ण को नकारा गया है उसकी आवश्यकता नहीं होती।

3. ताणना विवाह – वर पक्ष, कन्या पक्ष को कन्या मूल्य वैवाहिक भेंट के रूप में देता है वर वधु को स्वयं पंसद कर लेते है। जंगल में पशु चराते समय उस पंसदीदा लड़की को छू लेता है तत्पश्चात् पंच लोग एकत्र होकर दूल्हा पक्ष तथा धन देने पर विवाह सम्पन्न हो जाता है भेंट के रूप में लगभग 12 बछड़ें, 12 थान कपड़ा होता है प्रत्येक पंच को भी एक बछड़ा व एक थान भेंट के रूप में देते है इसके बाद वह कन्या को ले जा सकते हैं । इस विवाह में सगाई, फेरे व चौरी की रस्में नहीं होती है।

विधवा –विवाह का प्रचलन व प्रेम विवाह का प्रचलन है।

कर्मकाण्ड – ये लोग मृत्य शरीर को हिन्दुओं के समान ही जलाते हैं तथा बाहरवें की सम्पूर्ण रस्में पूर्ण करते है तथा श्यादन (सुखसेज) भी देते है।

अर्थव्यवस्था – गरासिया लोग अधिकांशत: दक्षिणी राजस्थान के कटे–फटें, ऊबड़ खाबड़, क्षेत्र में निवास करते है कुछ गरासिया लोग आबू पर्वत के दक्षिण में भी निवास करते है। अधिकांश गरासिया लोगों (35 प्रतिशत) की जीवोकोपार्जन का साधन कृषि एवं पशु पालन है। 85 प्रतिशत गरासिया लोग कृषि कार्य में व्यस्त है तथा साथ–साथ पशुपालन भी करते है प्राय: ये लोग एक फसल प्राप्त करते है तथा शेष समय में लकड़ी काटना, गौवंश को चरना, शिकार, मजदूरी करना आदि व्यवस्था करते है अब ये लोग मजदूरी करने बड़ें–बड़ें शहरों यथा आबू रोड़, उदयपुर, अहमदाबाद आदि में चले गये है कई लोग दूध का धन्धा भी करते है इनमें से नौकरी में बहुत कम लोग आ पावें है।

धार्मिक जीवन – गरासिया लोग शिव, भैरव व दुर्गा के उपासक है, अंधविश्वासी है व गणगौर प्रमुख त्यौहार।

ग्राम प्रशासन – पंचायतों का गठन, पंचायत बड़े– बुढों का गठन उसका प्रधान गांव का मुखिया होता हैं।

निष्कर्ष एवं सुझाव – उपरोक्त अध्ययन में गरासियों की समस्याओं के बारे में निम्न निष्कर्ष प्राप्त हुए है।

1. सांस्कृतिक सम्पर्क की समस्या।
2. आर्थिक समस्या ।
3. सामाजिक संगठन की समस्या।
4. शिक्षा की कमी।

समाधान एवं सुझाव – गरासिया जनजाति की अधिकांश समस्याऐं अशिक्षा के कारण है लोग अपनी जिम्मेदारियों को समझ नहीं पा रहे है। तथा सरकार द्धारा चलाई गई योजनाऐं अशिक्षा के कारण इन तक पहुँच नहीं पा रही है।

यद्यपि इन पर सरकार द्धारा ध्यान दिया जाना चाहिए। शिक्षा के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए तथा आश्रम बनाये जाने चाहिए शिक्षा को मात्भाषा बनाया जाना चाहिए एवं युवक युवतियों के लिए कुटीर उद्योगों का प्रशिक्षण जैसे – रंगाई, छपाई, बुनाई, आदि का प्रशिक्षण दिया जाना चाहिएं।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. कौशिक, एसड़ी, अहमद, नसीफ, 'मानव भूगोल के सरल सिद्धान्त', 2011, नई दिल्ली।
2. गुर्जर रामकुमार, जाट, बी.सी., 'संसाधन भूगोल', 2012, जयपुर।
3. गुर्जर, रामकुमार, जाट, बी.सी., जाट, 'भारत का भूगोल', 2013, जयपुर।
4. मामोरिया, चतुर्भुज, मिश्रा, जे.पी., 'भारत का वृहत् भूगोल', 1977, 2010, आगरा।

****

कबीर धार्मिक दृष्टिकोण की प्रासंगिकता

डॉ. वन्दना अग्निहोत्री * भावना बर्वे **

शोध सारांश – मध्यकाल के भक्ति काल में सामाजिक संकीर्णता एवं साम्प्रदायिकता का प्रभाव था जो आज भी कुछ अंश तक विद्यमान है। कबीरदास जी के विचारों को जानकर, समझकर एवं उनके उपदेशों को सुनकर यदि तत्कालीन समय में ही अपेक्षाकृत कुछ सुधार हो जाता तो आज ये जाति भेद–भाव की लड़ाई और न लड़नी पड़ती। कबीर ही क्यों उनके पश्चात् महात्मा गाँधी, राजा राममोहन राय एवं डॉ. अम्बेडकर जैसे और भी कई अन्य लोगों ने जाति भेद–भाव की लड़ाई में योगदान दिया। आधुनिक युग के नोबेल पुरस्कार प्राप्त कैलाश सत्यार्थी जैसे कई व्यक्ति जाति भेद–भाव को मुद्दा बनाकर लड़ रहे हैं, जिससे आंशिक सफलता तो है पूर्णत: नहीं। आज भी साम्प्रदायिकता एवं संकीर्णता समाप्त करने के प्रयास जारी है।

प्रस्तावना – कबीर का साहित्य जन–जीवन को उन्नत बनाने वाला एवं मानवतावाद का पोषक है, विश्व बंधुत्व की भावना को जाग्रत करने वाला है। तत्कालीन समय में हिन्दू और मुसलमानों में पारस्परिक कटुता एवं वैमनस्य की भावना को दूर करने के लिए भक्ति–धारा को प्रवाहित करना चाहते थे जिसमें राम और रहीम, कृष्ण और करीम, महादेव और मुहम्मद की एकरूपता स्थापित हो सके। एक ही ईश्वर की उपासना पर जोर दिया गया था। ईश्वर की इस एकता के आधार पर मानव मात्र की एकता प्रचार किया।

'हमरै राम रहीम करीमा केसौ अलह राम सति सोई,
बिसमिल मेटी बिसींभर एकै और न दूजा कोई।
कहकर समाज में एकता स्थापित करना चाही।
'एक जोति में सब उतपनां, कौन ब्राह्मन कौन सूदा '[1]

जिस प्रकार एक ही सोने से बने गहनों के विविध नाम होते हैं, उसी प्रकार पूजा एवं नमाज में भी कोई अंतर नहीं है।

'काशी काबा एक है, एकै राम रहीम।
मैंदा इक पकवान बहु, बैठि कबीरा जीम।।' [2]

हिन्दू–मुस्लिम एकता का स्वरूप सामाजिक अंधविश्वास को मिटाकर हो सकता है। गाँवो में आज भी कबीर का प्रभाव दिखाई पड़ता है, मुस्लिम हो हिन्दू दोनों ही उनके पद गाकर एकता का साक्ष्य स्थापित करते है। कबीर ने उन संकुचित विचार धाराओं को परिमार्जित कर समाज को जागृत करने का प्रयास किया है।

'कह हिन्दू मोंहि राम पिआरा, तरूक कहै रहिमाना।
आपस में ओउ लरि लरि मूये मरम न काहू जाना।।' [3]

कबीर जातिवाद को केवल मिथ्या मानते थे। वे तो मानव मात्र को ही एक जाति के रूप में देखते थे। उनके अनुसार सभी जीवों की उत्पत्ति ब्रह्म के एक बिन्दु से ही होती है। सभी एक ही मार्ग से इस संसार में प्रवेश करते हैं तो जातिगत विभेद कैसे हो सकता हैं ?

' जल में कुम्भ कुम्भ में जल है, बाहर भीतर पानी।
फूटा कुम्भ जल जलहि समाना, इहि तथ्य कथ्यौ ग्यानी।। [4]

साम्प्रदायिकता के भेद–भाव को समाप्त करने के लिए एवं जनता के बीच खुशहाली लाने के लिए संत कबीर अपने समय के एक हठी स्तम्भ साबित हुए। तत्कालीन समय की साम्प्रदायिक कटुता को मिटाकर भाईचारे की भावना का प्रसार करना चाहते थे। उन्होंने आध्यात्म के सागर में डूबकर अपने शब्दों या उपदेशों द्वारा ही एकता का पाठ जन–जन तक पहुँचाया वे 'शब्द' को 'सबद' कहते थे।

'सबद सरूपी जिव–पिव बुझौं,
छोड़ो भय की टेक।
कहे कबीर और नहिं दूज, जुग–जुग हम तुम एक।।' [5]

वे शब्द साधना पर जोर देते थे उनके अनुसार शब्द–साधना अमृत की तरह होती है जिसके पीने से भेद–भाव का भरम दूर होगा। कबीर ने इस विश्वास के साथ ही दोनों जातियों के मध्य भाई–चारे की भावना को उत्पन्न करने का प्रयास किया।

'हम वासी उस देस के जहा जांति–पांति कुल नाहिं।
सबद मिलावा है रहा, देह मिलावानाहिं।।' [6]

कबीर ने बड़ी ही निर्भीकता एवं निडरता के साथ हिन्दुओं के पूजा–पाठ, व्रत–उपवास, तीर्थाटन आदि कृत्यों का विरोध करके मिथ्याचारियों को फटकारा और समाज में व्याप्त अंधविश्वास, जड़ता, रूढिग्रस्तता एवं आडम्बर के विरूद्ध आवाज उठाई।

हिन्दुओं की ही भाँति मुसलमानों में भी बाह्य आडम्बरों का बोल–बाला था। अतएव उस समय किसी ऐसे धर्म–प्रवर्तक की आवष्यकता थी, जो धर्मो की बुराईयों का अध्ययन करके उनसे उपर उठकर उन बुराईयों को दूर कर सके। हिन्दू–मुस्लिम एकता स्थापित कर सके। ऐसे ही समय संत कबीर जैसे महात्मा का प्रादुर्भाव हुआ था, जिन्होंने आडम्बर प्रियता, रूढिवादिता एवं मिथ्या धार्मिकता को दूर करने का बीड़ा उठाया।

'काँकर पाथर जोरि के, मसजिद लई बनाय।
ता चढ़ी मुल्ला बाग दै, बहिरा हुआ खुदाय ।।' [7]

आज भी हम सोचें तो कबीर के इन दोहों को अपने अन्तर्मन में उतारकर उसका अनुकरण कर सकते हैं। गौ मांस पर रोक लगाकर गौ हत्या को कुछ प्रतिशत तक कम कर सकते हैं। कुछ प्रदेशों में इस का शुभ कार्य की शुरूआत हो चुकी है, अब हम सबको मिलकर गाय का वास्तविक स्वरूप लौटाना है। यह वही देश है जहाँ गाय को माता कहकर पूजा जाता है।

* विभागाध्यक्ष (हिन्दी) माता जीजा बाई शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत
** शोधार्थी, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इन्दौर (म.प्र.) भारत

'दिन रात रोजा धरत हो, रात हनत हो गाय।'

कबीर के समय से लेकर आज तक हम उनके दोहो को विचारे तो लगेगा हम आज भी उसी सदी में खडें हैं। विविध स्थनों पर पत्थर पर सिदुंर लगाकर आज पूजा होती है जो साक्ष्य है इस बात का कि लोग आज धर्म आडम्बरी है।

'पाहन पूजै हरि मिलै तो मैं पूजू पहार।
ता ते या चाकी भली, पीस खाय संसार।।'[8]

पाखण्डी महात्माओं की तो इस युग में कोई कमी नहीं रही अज्ञानी लोगों को ठगना एवं उनकी धार्मिक भावनाओं के साथ खिलवाड़ करना आम बात हो गई है।

कबीर ने उन सभी साधु सन्यासियों के आडम्बरों का विरोध किया– 'माला पहरया कुछ नहीं, काती मन के साथ' कहकर माला धारण करने वालो को मिथ्या बताया है।

'छापा तिलक बनाइ के दगध्या लोक अनेक'[9]

कहकर तिलक छापे आदि को भी व्यर्थ बताया है।

आज उनके यह दोहे प्रासंगिक है। संत कबीर ने जो कार्य उस समय किया, आज भी आवश्यकता है हमें संत कबीर जैसे मार्गदर्शक की।

भोगी एवं ढोंगी बाबाओं की तो आज भी तादात बढ़ती जा रही है, इसके लिए हमें ज्ञान चक्षु खोलना अनिवार्य है। अत: कबीर ने जो तत्कालीन समय में व्याप्त वैषम्य का विरोध करके उसमें साम्य स्थापित करने का प्रयत्न किया था वह आज भी किया जा रहा है। पाखण्ड एवं पाखण्डी दोनों का विरोध करके आन्तरिक साधना का एवं अंत:करण को शुद्ध करके, पशु वध एवं बाह्य आडम्बरों का विरोध करके जन साधारण में अहिंसा एवं सहिष्णुता का प्रचार आज भी प्रासंगिक है। समाज में नैतिकता एवं सदाचार की प्रतिष्ठा करनी है।

'सतनाम निजु सार है, सतहि करो विचार,
जो दरिया गुअं गहि रहे, तो मिले शब्द सार।' [10]

ज्ञान की प्राप्ती के लिए मार्ग दर्षक होना अनिवार्य है उसके साथ ही साथ सत्य का चिंतन भी।

परोपकार, सेवा, क्षमा, दान, धैर्य, अहिंसा आदि का प्रचार करके जन–जीवन में शुद्ध आचरण एवं सात्विकता की वृद्धि पर जोर दिया है। कबीर ने तत्कालीन जन–जीवन में व्याप्त पारस्परिक वैषम्य को दूर करके उसके स्थान पर साम्य एवं एक्य स्थापित करने का बड़ा ही सराहनीय कार्य किया है।

'सो हिन्दू सो मुसलमान, जाका दुरूस रहे ईमान' [11]

कहकर कबीर ने घोषणा की है कि जिसका ईमान दुरूस्त है, जो अपने धर्म पर सत्य के साथ चले वही सच्चा हिन्दू या वही सच्चा मुसलमान है। कबीर की भक्ति का मूल आधार परमात्मा के नाम के साथ ही समाज–सुधारक का रूप भी था। वे पुस्तकीय ज्ञान की अपेक्षा अनुभव को महत्व देते थे।

'पोथी पढ़ि–पढ़ि जग मुआ, पण्डित भया न कोय।
ढ़ाई आखर प्रेम का, पढे सो पण्डित होई।।'[12]

आपसी भेद–भाव मिटाकर प्रेम भाव में वृद्धि करो। प्रेम से भरे हुए समाज की स्थापना करो। प्रेम का भाव हमें दूसरो के प्रति ईमानदार बना देता है। प्रेम हमें सरलता एवं विनम्रता सिखता है। जिससे हम सन्मार्ग पर चलकर अनंत धैर्य प्राप्त कर सके।

'विद्या न पढूँ बाद नहीं जानूं, हरि गुन कथत सुरत बौरांग।'[13]

कबीर दास ने व्यवहारिक शिक्षा एवं अनुभव को अधिक महत्व दिया है। उन्होंने भौतिक जीवन की अपेक्षा अध्यात्मिक जीवन जीने की सलाह दी है। मानव मन आज भी भौतिक सुख सुविधाओं में इतना रम गया है कि जीवन के वास्तविक आनंद को भूलकर वह आर्थिक–सम्पन्नता पर अधिक ध्यान देने लगा है। यह पैसे की तृष्णा कब जाएगी ? जीवन में कुछ ऐसा भी होता है जिन्हें मूल्य चुकाकर खरीदा नहीं जा सकता जैसे शांति, प्रेम, आनंद आदि। आज भी मनुष्य अर्थ और ज्ञान के पीछे उसे पाने की होड़ में लगा हुआ है।

कबीर का ज्ञान अथाह है, कहते हैं उनके दोहो में ज्ञान का ऐसा रहस्य है जो खुलता जाए फिर भी समाप्त न हो।

कबीर के बारे में प्रसिद्ध है कि –

'मसि कागद छूयो नहीं, कलम गहीं नहीं हाथ।
चारिउ जुग के माहत्मा, कबीर मुखिह जनाई बात।।'[14]

कबीर व्यवाहारिक ज्ञान एवं अनुभव के आधार पर अनवरत रूप से हमें शिक्षा प्रदान कर रहे हैं। वे दूर द्रष्टा थे। कबीर ने उस सदी में जो सोच रखी थी अचम्भित करने वाली है।

वर्तमान शिक्षा प्रणाली में भी आंशिक रूप से बच्चों को प्रयोग के द्वारा शिक्षा दी जा रही है, जो कुछ हद तक सफल भी हो रही है। कई संस्थाओं ने तो प्रायौगिक परीक्षा पर ही अधिक जोर दिया है। छात्रों के भविष्य में भी पुस्तक–ज्ञान के स्थान पर व्यवहारिक ज्ञान या प्रायोगिक ज्ञान का अधिक उपयोग हैं।

कबीर ने अपने अनुभव के द्वार ही गंगा नदी में जितनी रेत के कण हैं लगभग उतने ही दोहो की रचना की है। उनकी इस अनुभूति का मूलाधार प्रत्यक्ष जीवन है। कबीर कहते हैं उन ज्ञानी उपदेशकों से जो पढ़े–लिखे हैं कि –

'तू कहता कागद की लेखी, मैं कहता आँखिनी की देखी'

कहकर अपनी अपरोक्ष अनुभूति की वास्तविकता को स्पष्ट कर दिया है।

'सामाजिक शोषण अनाचार और अन्याय के विरूद्ध संघर्ष में आज भी कबीर का काव्य एक तीखा अस्त्र है। कबीर से हम रूढ़िगत सामन्ती दुराचार और अन्यायी सामाजिक व्यवस्था के विरूद्ध डटकर लड़ना सीखते हैं और यह भी सीखते हैं कि विद्रोही कवि किस प्रकार अंत तक शोषण के दुर्ग के सामने अपना माथा ऊँचा रखता है।'[15]

कबीर मध्यकाल के क्रांति पुरूष थे। उन्होंने देश की परिस्थितियों के अनुरूप ही उपदेश दिए है। समाज सुधारक के रूप में संत कबीर को विस्मृत करना असंभव है। उनका साहित्य तत्कालीन समाज की दुर्बलता को देखकर ही रचा गया है। कबीर हिंसा, असत्यता एवं दुराग्रह को मानव का शत्रु मानते थे, उनका मानना था कि इन शत्रुओं का विनाश होने पर ही जीवन का उद्देश्य सफल हो सकता है। उनका उद्देश्य जीवन के प्रति उम्मीद को कायम रखना था।

साम्प्रदायिक दंगो का कारण अज्ञानता एवं नासमझी है। इस नासमझी को दूर करने के लिए हमे कबीर के दोहों का गहन अध्ययन करना चाहिए। कबीर की वाणी समस्त समस्याओं का निराकरण करने में समर्थ थी। ऊँच–नीच, जाति–पाति का भेद मिटाकर सबमें एकता स्थापित करने का कार्य किया, आज के संदर्भ में इसी चीज की आवश्यकता है।

'गुप्त प्रगर है एकै दुधा, काको कहिए वामन–शुद्रा।
झूणे गर्व भूलो मति कोई, हिंदू तुरूक झूठ कुल दोई।।

वर्तमान साम्प्रदायिक समस्याएँ समुचित समाधान नैतिक मूल्य प्रस्तुत करती हैं। आज के संदर्भ में देखा जाये तो नैतिक मूल्यों की उपयोगिता में वृद्धि हुई है।

निष्कर्ष – कबीर की रचनाओं में संदेश देने की प्रवृत्ति होती है। उनके वही संदेश वर्तमान एवं भविष्य में आगे आने वाली पीढ़ी के लिए प्रेरणादायी एवं पथ–प्रदर्शक हैं। उनकी रचनाओं मे उनका व्यक्तित्व छिपा हुआ है, उनकी रचनाओं में सांसारिक क्लेश, दुख और विपत्तियों से मुक्ति कराने वाली सीख विद्यमान हैं। उनकी रचनाओं में मानवमात्र के कल्याण की भावना सन्निहित है। उन्होने असत्य, परनिंदा, वासना, लोभ, क्रोध, मोह, छल–कपट को त्यागने का एवं दया ,अहिंसा, प्रेम, सहिष्णुता, दान, धर्म वचन आदि को पाने का आग्रह किया है। त्याज्य भावों के साथ ही साथ वे विविध जातियों का त्याग करने के लिए भी कहते हैं –

'कबीर हरदी पीयरी, चुना उजल भाय।
राम सनेही यूँ मिले, दन्यूं बस गमाय।।'[16]

राम भक्त विभिन्न जातियों का त्याग कर एकाकार हो जाते हैं, अपने विभिन्न सामप्रदायिक भाव ईश्वर प्रेम की लालिमा में समाहित कर देते हैं। कबीर ने शताब्दियों की संकुचित विचार धारा को परिमार्जित कर समाज के प्रत्येक व्यक्ति को अधिक उदार बना दिया है। यही उनकी विशेषता है। धर्म के नाम पर किए गए अनाचार के विरोध का जन साधारण के भाव द्धारा समाज को जागृत करने में कबीर का स्थान सर्वप्रथम है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :–

1,2. कबीर ग्रन्थावली, पारसनाथ तिवारी पृष्ठ सं. 82
3. कबीर वचनावली द्धितिय खण्ड–182
4,5. कबीर ग्रन्थावली, श्याम सुदंर दास पृष्ठ सं. 39
6. कबीर ग्रन्थावली, पारसनाथ तिवारी पृष्ठ सं. 174
7. कबीर ग्रन्थावली, पुष्पलता सिंह पृष्ठ सं. 65
8. कबीर ग्रन्थावली, पुष्पलता सिंह पृष्ठ सं. 65
9. कबीर ग्रन्थावली, पृष्ठ सं. 36
10. कबीर ग्रन्थावली, रामकिशोर शर्मा
11. कबीर ग्रन्थावली, पृष्ठ सं. 207
12. कबीर ग्रन्थावली, श्याम सुदंर दास पृष्ठ सं. 39
13. कबीर ग्रन्थावली, परिशिष्ट पृष्ठ सं. 317
14. बीजक पृष्ठ सं. 103
15. कबीर दर्शन पृष्ठ सं. 435
16. कबीर ग्रन्थावली, साखी पारसनाथ तिवारी पृष्ठ सं. 209

****

समकालीन हिन्दी कविता में दलित चेतना

डॉ. स्वामीराम बंजारे 'सरल' *

प्रस्तावना – 'कविता में हम अपनी भावनाओं की सच्चाई खोजते हैं। उस खोज में उस सच्चाई का अपना खास रूप भी हमें मिलना ही चाहिए, जिस हद तक भी मुमकिन हो। क्योंकि किसी भी चीज का असली रूप उस चीज से अलग तो सम्भव नहीं।'

साहित्य के माध्यम से हमें समाज और वस्तु जगत को वैज्ञानिक और समाजशास्त्रीय ढंग से समझने की कोशिश करनी चाहिए। मनुष्य की स्वतंत्रता, गरिमा और व्यक्तित्व का विकास करने के लिए समान अधिकारों जैसे मानवीय मूल्यों की पक्षधरता स्थापित करनी चाहिए। साहित्य, समाज, राजनीति एक–दूसरे के पूरक हैं। समाज में व्याप्त पूर्वाग्रहों, खोखले आदर्शो, मानव विरोधी मूल्यों तथा असमानता पर आधारित समाज– व्यवस्था का विरोध दलित चेतना के प्रमुख सरोकारों में है।

डॉ. अम्बेडकर और ज्योतिबा फुले के जीवन–संघर्ष ने दलित चेतना को जन्म दिया है, जिसकी वैचारिक अभिव्यक्ति दलित साहित्य के रूप में उभरकर साहित्यजगत में जीवंतता ले आई है। इसका मूल स्वर समकालीन रचनाकारों की कविताओं में भी सुनाई देता है। इस प्रकार की कविता कवि को अलग पहचान देती है। वर्ण और जाति प्रथा के आधार पर फैलाई गई विषमता के विरूद्ध उसने संघर्ष की भूमिका अपनाई है।

उत्तर छायावादी काव्य में दलित वर्ग की पीड़ा साफ झलकती है। बकौल नरेन्द्र शर्मा, जिस समय देश की दलित और शोषित जनता दैन्य की पीड़ा से कराह रही हो। उस समय कवि का प्रेम और रास–रंग के गीत गाना शोभा नहीं देता। सामाजिक सत्य की प्रस्तुत भावना नरेन्द्र के काव्य में प्रचुर मात्रा में दिखाई देती है।'

हरिवशं राय बच्चन के मतानुसार 'यदि समाज में इस तरह का उपेक्षा भाव एवं ऊँच–नीच का भेद बना रहा तो सही मायने में स्वतंत्रता मिलना निरर्थक और मिथ्या है। आजादी के बाद का चित्र अंकित करते हुए बच्चनजी लिखते हैं –

'अगर विभेद ऊँच–नीच का रहा ,
अछूत–छूत भेद जाति ने सहा,
किया मनुष्य और मनुष्य में फरक़
स्वदेश की कही नहीं,
कुहेलिका।'[3]

इसी तरह के कुछ गीत, कविताएं, प्रयोगवादियों, प्रगतिवादियों तथा जनवादियों द्वारा दलित जीवन की विसंगतियों पर लिखे गए, जिनमें धर्मवीर भारती, अज्ञेय, गिरिजाकुंमार माथुर, प्रभाकर माचवे, रघुवीर सहाय आदि प्रमुख थे लेकिन उनकी कविताओं में दलित साहित्यकारों जैसी बेबाकी न थी। वे एक ओर परम्पराओं का पालन भी करते रहे थे और दूसरी तरफ उन्हें बस यूँ ही शिष्टाचार वश नकारने के बहाने भी करते थे। इसलिए आंबेडकर उनकी कविताओं में रच बस नहीं सके।

आजादी के बाद दलित साहित्य में सबसे अधिक कविताऐं लिखी गई। रामदास शास्त्री की प्रसिद्ध कविता 'माथे के सिन्दूर हैं'

हम माथे के सिन्दूर हैं'
मानो हम मजदूर है – मानो हम मजबूर हैं,
किन्तु सभ्यता के माथे के, हम ही तो सिन्दूर है।
मंदिर मस्जिद बने हमीं से,
बने हमीं से गिरजाघर।
गुरूद्धारे भी बने हमीं से,
जुटे सभी जब हम आकर।
हम तो सबके साथ रहे हैं–पर सब हमसे दूर हैं।
कुंआ, बावड़ी, ताल बनाए,
हमने नहर निकाली।
अधर हमारे फिर भी प्यासे,
पड़ी गगरिया खाली।
अभी हमारी मंजिले–कोसों हमसे दूर है।'

इसी तरह राजस्थान के दलित कवि भागीरथ मेघवाल अपनी कविता में विषमता से जूझ रहे।

खुल गई हैं खिड़कियां
आने लगी है ताजी हवा
युगों–युगों की घुटन
अब घट रही है
तुमने तो हमें बना दिया था
अभागा और पतित अधिकारों से वंचित
सेवा भर करने वाला
मानव–पशु।
किन्तु तुम्हारा वह सच
दुनिया का सबसे बड़ा झूठ था।
हम जान गए है कि
हम अभागे नहीं है।
हमारा भी हक़ हिस्सा है
देश के धन
देश की धरती
और सत्ता में।
हमें इनसे वंचित करने की

* विभागाध्यक्ष (हिन्दी) भा.प्र.दे.शासकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, कांकेर (छ.ग.) भारत

तुमने जो साजिश की थी
उसकी अब पोल खुल चुकी है
तुम्हारे जुल्मों की खाता–बही
अब हम पढ़ सकते हैं
उनका हिसाब भी माँग सकते हैं।
भरपाई भी कर सकते हैं।
यह सवाल हमारे अकेले का नहीं
पीढ़ियों का है
जिसका उत्तर तुम्हारे पास नहीं है।'[5]

बिहार से वरिष्ठ कवि दयानंद बटोही की कविता 'यातना की आंखें' में दलित चेतना की एक बानंगी दृष्टव्य है –

जिसमें मादा जीव पेशेवर डॉक्टरों और अल्ट्रासाउंड से लेकर गर्भ से मृत्यु तक, शब्द से शून्य तक, विकृत द्वन्दों में जूझकर अंकुरित हो उठता है, तब पितृसत्ता की चट्टान ही खंडित नहीं होती, बल्कि युवा दम्पत्ति के पारंपरिक रिश्ते भी चटकने लगते है। इसके बावजूद आज की नारी नए युग का शिलालेख लिखती जा रही है। कवयित्री नारी की पीड़ा, उसकी पारम्परिक मूल्यों के प्रति छटपटाहट के साथ उसकी अलग पहचान और स्वतंत्र अस्तित्व की लड़ाई को रेखांकित करती है।

आज की कविता अपने समय और समाज के साथ जुड़कर आगे बढ़ती है और प्रक्रिया में अपनी ठीक–ठीक पहचान कराती है। यही वजह है कि उसके और संवेदना में विविधता ही नहीं, ताजगी भी बनी हुई है। आज का समय दलितों की मुक्ति का भी समय है और इसी में दलित कविता अपनी मुक्ति का रास्ता तलाशती है। कवि मुकेश मानस अपनी कविता में कहते हैं

अगर आज
मनुओं का और
उनकी सलीबों का समय है।
तो उन सलीबों को
उतार फेंकने का भी समय है।

अत: स्पष्ट है कि आज की कविता समय की वास्तविकता को ईमानदारी से अभिव्यक्त करने की कोशिश करती है। वरिष्ठ कवि/कथाकार तथा पत्रकार डॉ. सोहनपाल सुमनाक्षर की कविता में नए तेवर उभरते हैं –

'ओ मेरे भिक्षुओं
मेरे साधु–महात्माओं।
मंदिर और बौद्ध बिहारों की आत्माओं
तुम मूर्ति बन/चार दीवारी में ही
मत बंधों/जनकल्याण के लिए
दीवार लांध बाहर आओ और
दलितों को/उन्नति का
मार्ग बतलाओं।'
यों तो मंदिरों/घाटों/श्मशानों में
पंडितों की बाढ़ आई है
पर तुम्हारे और उनमें अन्तर है
तुम्हें अपने समजा का/अभी
निर्माण करना है
सिर मुड़ाकर या जटा रखकर
दलितों को। तुम जगा नहीं सकते।
इन मंदिर/बौद्ध विहारों को छोड़
दलितों के घर जाओं।
उन्हें संघर्षशील बनाओ।
उन्हें नई रोशनी दो। उनमें
आत्म विश्वास भरो। उनमें
ज्ञान की ज्योति जलाओं।'[9]

डॉ. विवेक कुमार की 'मैं धोबी हूं 'कविता जैसे कपड़े की गंदगी के साथ सफेदपोश वर्ग के मन की मैल को भी साफ करती है मैं धोबी हूं।

बहुत दिन मैंने धोई है तुम्हारी गंदगी ताकि तुम साफ रहो
भीषण गर्मी, मुसलाधार बारिश या फिर रही हो कड़कडाती सर्दी
उफ़ नहीं किया मैंने फिर भी ताकि तैयार कर सकूं आपकी वर्दी
अब बहुत हो चुका, तोड़ना चाहता हूं जजमानी का यह रिश्ता
जो चुसता है मेरा खून और दे नहीं सकता रोटी एक भी जून
ऐ ऊँची जात के कहलाने वालों, तुम्हारे कुकर्मो की कहानी है तुम्हारी
पतलूनों, धोतियों, लहंगों, चादरों आदि में लगे दाग
जिनकी धुलाई का कर्ज आज भी तुम पर बाकी है।

इसी तरह युवा कवि और कथाकार सूरजपाल चौहान अपनी एक कविता संग्रह में 'क्यों विश्वास करूँ, कविता में बेकाकी से अपनी बात रखता है –

'मैं तुम्हारे
झूठे धर्म पर
करता रहा गर्व
लेकिन
तुम्हारा मेरे प्रति
छिपा रहा सदैव
अपमान का भाव ही
तुम्हारी नैतिकता की छतरी में
छेद–ही–छेद है।

अतीत से वर्तमान में आते–आते जीवन मूल्य बदल जाते है। भारत की महानता न जाने कहां गुम हो गई है। स्वयं सूरजपाल चौहान के शब्दों में –

मेरे भारत में अब परियों ने आना छोड़ दिया,
और माताओं ने भी लोरी गाना छोड़ दिया।'

नई शताब्दी में ही कवि नवेन्द्र महर्षि का कविता संग्रह संसद तो स्वर्ण है आया है इसमें नवेन्द्र की यह घोषणा कि –

रोटी की न भात की
जंग यह तो जात की।

बहुत ही उत्तेजक और महत्वपूर्ण लगती है।
कविवर नवेन्द्र की धारणा बिलकुल स्पष्ट है –

'कदम कदम पर
हमारी अस्मिता को
घृणा के तीरों से कोंचते हो
तो फिर तुम
धर्म परिवर्तन करने से हमें
किस अधिकार से रोकते हों ?

इसी तरह नई सदी की कविताओं में दलित चेतना का स्वर मुखर है। अंत में कवि को कहना पड़ता है –

जाग गये शोषित पीड़ित उठ गये हैं बेबस बेचारे।
सीने में क्रांति का तूफां, आंखों में बिजली के शरारे।।
मजदूरों के बिगड़े तेवर, आई क्रांति किसानों में।

आवाज बुलंद हो गई, सदियों से बंद जुबानों में ।
हक इन्सानों के मांग रहे, सदियों से दुखी ये दुखियारे
जाग गये शोषित पीड़ित, उठ गये हैं बेबस बेचारे ।।
मानवता हो धर्म हमारा सभी बराबर हो इन्सान ।
है निदान शिक्षा समता भाई चारे की आवश्यकता है
भेद प्रकृति ने किया नहीं फिर क्यों यहां विषमता है ।
तूने अपना सब कुछ किया औरों पे कुरबान ।
अपने बच्चों को शिक्षित कर बना इन्हें इन्सान ।
भूल गया मानव परिभाषा, मानव की पहचान की
भेदों की दीवार तोड़ दो, जड़काटो अज्ञान की
लड़ना है तो लड़ो लड़ाई, मानव के कल्याण की ।।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची :-

1. समकालीन हिंदी आलोचना, संपादक परमानन्द श्रीवास्तव, साहित्य अकादमी प्रकाशन पुनर्मुद्रण 2013 पृ. 21
2. हिंदी साहित्य में दलित चेतना डॉ. जयप्रकाश कर्दम -पृ. 52
3. आजादी के बाद, धार के इधर-उधर, डॉ. हरिवंश राय बच्चन पृ. 81
4. दलित पतवार, (पत्रिका) नईदिल्ली पृ. 07
5. पीढ़ियों का सवाल, भागीरथ मेघवाल, भारतीय दलित पैंथर 8 मनहर नगर,राजपुर गोमतीपुर अहमदाबाद 1991, पृ. 19-20
6. यातना की आँखे, दयानंद बटोही, ज्योत्सना गहलौत प्रकाशन,पुराना बाजार,चंद्रपुरा गिरीडीह (बिहार) 1986
7. धम्म दर्पण, जनवरी-मार्च 1985 पृ 16
8. सम्यक भारत, नईदिल्ली नवम्बर 2004
9. मिशन अंबेडकर, ए-14 राजूपार्क, देवली, नईदिल्ली 62, जून-जुलाई 2004
10. 'क्यों विश्वास करूँ ' (कविता संग्रह की भूमिका से)डॉ. सूरजपाल चौहान वाणी प्रकाशन नईदिल्ली 2004 पृ. 53
11. वही.....
12. 'संसद तो सवर्ण है' नवेन्द्र महर्षि, मेघा बुक्स एक्स-11 नवीन शाहदरा दिल्ली ।

****

हमीदुल्ला के नाटकों में प्रतिबिम्बित राजनीतिक परिदृश्य

अन्नू यादव *

प्रस्तावना – राजनीति मानव अस्तित्व का अपरिहार्य सत्य है। प्रत्येक व्यक्ति किसी न किसी रूप में राजनीतिक व्यवस्था में संलग्न है। जैसे– प्रतिदिन समाचार सुनते है, देश में होने वाली घटनाओं के प्रति अपनी प्रतिक्रिया देते हैं, अपने पसंदीदा व्यक्ति या संस्था से जुड़े रहते हैं, उन्हीं के पथ का अनुसरण करते हैं जैसे अन्ना हजारे के धरने। जहाँ न जाने कितने ही उनके समर्थक उनके साथ थे। उसी प्रकार जब महाराष्ट्र के प्रभावी नेता बाला साहब ठाकरे का निधन हुआ, तो वहाँ अथाह भीड़ उनके अंतिम संस्कार पर उमड़ी, केवल वही नहीं, जिनके साथ जनता जुड़ी होती है प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से उनका सहयोग समर्थन करती है।

धर्म, विज्ञान, शिक्षा, संस्कृति और साहित्य का विकास तत्कालीन राजनैतिक गतिविधियों के अनुरूप होता रहा है। तत्कालीन नाटकारों पर भी इसका प्रभाव पड़ना स्वाभाविक ही था। उनकी नाट्य–कृतियों में राजनैतिक प्रभाव प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप में अवश्य ही रहता है। ऐतिहासिक घटनाओं को आधार बनाकर लिखे गए नाटकों के द्धारा एक ओर जहाँ शासक के अधिकार कर्त्तव्य और राज्य–व्यवस्था का ज्ञान मिलता है, वहीं, दूसरी और युगीन घटनाओं के आधार पर रचित नाटकों में प्रशासन, न्याय व्यवस्था, जनतंत्र, चुनाव पद्धति, मन्त्री, राष्ट्रीय, अन्तर्राष्ट्रीय एकता आदि विषयों का ज्ञान मिलता है। जैसे मोहन राकेश द्धारा रचित नाटकों में अंग्रेजी शासन, उनकी न्याय प्रणाली, शासन के तरीके आदि का पता चलता है। किसी देश की उन्नति जब तक सम्भव नहीं, जब तक वहाँ के नागरिकों में कर्त्तव्यनिष्ठा, स्वार्थत्याग, व देशोत्थान की भावना के साथ राजनीतिक चेतना का अभाव है।

किसी भी राष्ट्र, समाज और मनुष्य के निर्माण व उत्थान में वहाँ की राजनीति का महत्वपूर्ण योगदान होता है। 'साहित्य और राजनीति का कोई विरोध नहीं है वरन् साहित्य में युगीन राजनीतिक चेतना स्वभावत: समाविष्ट रहती है, और यह चेतना जिस साहित्य में प्रखर होती है, समाज को बदलने में उससे उतनी ही सहायता मिलती है।'[1]

राजनीति को अपने नाटकों का आधार बनाकर नाटककार समाज में राजनीतिक चेतना जाग्रत करने का काम करता है। ऐसे अनेक नाटककार हुए हैं जिन्होंने राजनीति को अपने नाटकों का आधार बनाया है जैसे– लक्ष्मीनारायण लाल, सर्वेश्वरदयाल सक्सेना, सुशील कुमार सिंह, मणिमधुकर आदि।

भारतीय राजनीति का स्वरूप सदा से एक ही रहा है बल्कि पहले से बुरा ही हुआ है। ऐसे ही नाटककारों में हमीदुल्ला हैं। जिन्होंने अन्य कलाकारों की भाँति अपने नाटकों में तत्कालीन राजनीतिक समस्याओं, बुराईयों, राजनीतिक उठा–पटक को दर्शाया है। इन्होंने एक रचनाकार के दायित्वों का पालन किया है। एक आम आदमी के नाते सामाजिक–राजनीतिक परिवेश के प्रति सदा जागरूक रहे और समाज के प्रति एक साहित्यकार के नाते इन्होंने राजनीतिक जागरूकता फैलाई। मोहन राकेश के विचार रहे हैं कि 'एक लेखक की प्रतिबद्धता किसी विशेष विचाराधारा से नहीं होती, बल्कि वह अपने समय की उभरती हुई यथार्थता से जुड़ा होता है।'[2] हमीदुल्ला जी ने वर्तमान राजनीति के हथकण्डों, भ्रष्टाचार, न्याय व्यवस्था के खोखलेपन आदि को सजीव और प्रभावशाली रूप में प्रस्तुत किया है, इससे दर्शक भविष्य में छाने वाले इस संकट को गहराई से अनुभव करने लगता है। वर्तमान में राजनीति का प्रत्यक्ष सम्बन्ध शक्ति, सत्ता और संघर्ष से हो गया है। 'राजनीति, महज राजनीति नहीं रही। अब वह समूचे समाज की नियति हो चुकी है और इसलिए यह समाज के सभी वर्गों के कर्त्तव्यों का निर्धारण करती है।'[3]

हिन्दी नाटकों में शासक वर्ग के भ्रष्ट–चरित्र का खुलासा हुआ है– भारत की राजनीति को स्वार्थी नेताओं ने अपने हाथों में लिया हुआ है। वासनालोलूपता, घूसखोरी, बेईमानी, झूठे वादे, लूट–खसोट तो नेताओं के गुण हैं। राजनीति भ्रष्ट नेताओं का अड्डा बन गई है। जहाँ पदार्पण के लिए किसी विशेष योग्यता की आवश्यकता नहीं होती। भ्रष्ट चरित्र के लोगों की योग्यताएँ पुलिस थाने मे दर्ज होती है। आज राजनीति में युवा वर्ग केवल इसीलिए अपना योगदान देने से कतराते हैं क्योंकि राजनीति अब देश चलाने की नीति नहीं बल्कि भ्रष्टाचार का गढ़ बन गई है। एक ऐसा दलदल जहाँ एक बार जो फँस गया उसका निकलना नामुमकिन है। राजनेताओं के चरित्र पर अनेक फिल्में भी बनी है जैसे– राजनीति, डर्टी पॉलिटिक्स, सत्याग्रह गंगाजल आदि। फिल्मों के साथ–साथ साहित्य के क्षेत्र में राजनीति एक ज्वलंत विषय रहा है। राजनीति को लेकर अनेक नाटकों की रचना हुई है जैसे – ज्ञानदेव अग्निहोत्री का 'झूठे वादे, झूठी उम्मीदें' 'बकरी', 'सिंहासन', लक्ष्मीनारायण लाल के – 'यक्ष प्रश्न', 'पंचम पुरूष', जिसमें उन्होंने राजनेताओं के वासनालोलुप चरित्र को दिखाया है।

हमीदुल्ला जी ने भी अपने नाटकों के माध्यम से राजनेताओं की चारित्रिक दुर्बलताओं को उजागर किया हैं हमीदुल्ला जी ने अपने नाटक 'उलझी आकृतियाँ' में 'विकास' के वासना लोलुपता को दिखाया है, वह 'मिस बेला' पर मुग्ध रहता है, उसकी प्रशंसा करता है, उसे पिक्चर, डिनर पर ले जाना चाहता है। 'विकास –यह साड़ी तो आप पर सचमुच बहुत फबती है।'[4]

'विकास (बेला से) तो तय रहा। आज शाम पहले पिक्चर, फिर डिनर क्यों?'[5] चारित्रिक वासनालोलुपता राजनीति में सदा से रही है राजाओं फिर अंग्रेजों, फिर नेताओं में। आज के समय में राजनेता खुलेआम किसी भी सामाजिक या राजनीतिक कार्यक्रमों में बार बालाओं की नृत्य प्रस्तुति का आयोजन करते हैं और उनके साथ खुद भी आनंद उठाते हैं यह एक आम बात हो गई है। किसी भी कार्यक्रम की शुरूआत ऐसे ही होती है। (जैसे कुछ समय

* शोधार्थी (हिन्दी) वनस्थली विद्यापीठ (राज.) भारत

पहले उत्तर प्रदेश में साम्प्रदायिक दंगे हुए थे, उन दंगों की आग शांत भी नहीं हुई थी कि अखिलेश यादव अपनी सभी जिम्मेदारियाँ छोड़कर ऐसे ही किसी कार्यक्रम में सम्मिलित हुए थे।) यही नेताओं के चरित्र की सच्चाई है। उनके अन्दर संवेदनशीलता खत्म हो गई है।

इसके अलावा हमीदुल्ला जी ने दिखाया है कि नेतागण जनता से झूठे वादे करते हैं उन्हें अंधेरे में रखते हैं। झूठे आश्वासन देकर खुश करते हैं। आए दिन कहीं ना कहीं कोई किसान आत्महत्या करता है। कहने को तो उनके लिए बहुत सी योजनाएँ है परन्तु सच अगर यही होता तो क्यों वे आत्महत्या करते। असहाय व्यक्ति को कोई सहारा नहीं मिलने पर ही वह यह कदम उठाता है। हाल फिलहाल उत्तर प्रदेश में लगातार बहुत से किसानों की मृत्यु हुई है और सरकार उनके प्रति संवेदनहीन हैं। कहने को सरकार ने मुआवजा दिया है परन्तु यह कहाँ तक सच है कि यह तो सरकार ही जानती है। उनके लिए यह एक आम बात है। हमीदुल्ला जी ने अपने नाटक 'दरिंदेय में इसी सत्य को उद्घाटित किया है। 'वि.दा– सबको अंधेरे में ही दूर की सूझती है। सब एक दूसरे को अंधेरे में रखकर अपना काम निकालते हैं।'[6]

राजनीति में उत्तराधिकारी की परम्परा बहुत पुरानी है। राजा–महाराजा के पुत्र ही उनके बाद उनकी गद्दी पर बैठते थे। यह परम्परा आज भी है। भाई–भतीजावाद राजनीति में खुलकर होता है। एक परिवार के सभी सदस्य एक ही क्षेत्र में मिलेगें, कहीं और जाने के लिए मेहनत करने की भी आवश्यकता नहीं होती। भारत के भी लंबे समय से कांग्रेस का शासन रहा है और सत्ता में बने रहने के लिए जोड़–तोड़ सभी करते हैं। हर पार्टी में पिता फिर पुत्र, फिर उसका पुत्र यही चलता रहता है जैसे महाराष्ट्र मे पहले बाला साहब ठाकरे फिर उद्धव ठाकरे फिर आदित्य ठाकरे राजनीति में आए और शिव सेना के सदस्य रहे। हमीदुल्ला जी ने 'ख्याल भारमली' नाटक में इसी उत्तराधिकारी की समस्या को दिखाया है जहाँ मालदेव अपने उत्तराधिकारी पाने की इच्छा कि खातिर भारमली को त्याग देता है क्योंकि वह दासी है और एक दासी का पुत्र उत्तराधिकारी कैसे हो सकता है 'संवेत स्वर – तुम दासी हो। क्या दासी की कोख से जन्मा शिशु बनेगा राजा'[7]

अफसरशाही में भ्रष्टाचार की समस्या भारतीय समाज की नियति बन चुकी है – आम आदमी से लेकर राजनीतिक सत्ताधारी सभी अफसरशाही के हाथों नाचने को विवश है। कार्यालयों में आलम यह है कि बिना रिश्वत या सिफारिश के या चापलूसी के कोई काम पूरा नहीं हो सकता। इसलिए सत्ताधारियों को भी भ्रष्ट अफसरों से हाथ मिलाकार काम करना पड़ता है, पिसता है तो सिर्फ आम आदमी। सरकारी कार्यालय बिजली, पानी, निर्माण विभाग, पेंशन विभाग, सहायता कोश, सभी जगह भ्रष्टाचार व्याप्त है। दिल्ली में पानी की समस्या सबसे जटिल है, दिल्ली जल बोर्ड के अधिकारियों की काली करतूतों का पर्दाफाश करने के लिए तत्कालीन मुख्यमंत्री अरविंद केजरीवाल जी ने स्टींग ऑपरेशन करवाए। जिससे जनता का उनके काले धंधों का पता चला। आए दिन कहीं कोई पुल टूटता है, कहीं सड़के गद्डो में तब्दील हो जाती है, कहीं बिजली के इंतजार में सुबह से शाम हो जाती है, परन्तु इनसे संबंधित अधिकारियों को इनसे कोई सरोकार नहीं होता। रिश्वत खाकर निर्माण सामग्री बेचकर खराब माल लगाकर निर्माण करवाते हैं, जिससे निर्दोष लोगों को अपनी जान गवानी पड़ती है। इस भ्रष्टाचार से न अदालते अछूती है न प्रशासन सभी जगह यह जहर विद्यमान है। हमीदुल्ला जी ने अपने नाटक उलझी आकृतियाँ में सरकारी कार्यालयों में रिश्वत, कार्यकर्ताओं की अवसरवादिता, नौकरशाही के खोखलेपन को दिखाया है। नाटक में 'नवयुवक' 'विकास' अधिकारी से नौकरी के सिलसिले में मिलने आता। रामदीन द्वारा रिश्वत देने पर विकास से मिलने और मदद करने का प्रस्ताव मिलता है, रामदीन द्वारा मदद करने पर नवयुवक उसे रिश्वत देता है – 'नवयुवक ओह समझा। अजी साहब आप को कैसे नहीं शरीक करेगें, आप ही तो मेरी खुशी के निर्माता है। (जेब से कुछ निकालकर रामदीन के हाथ में रखता है)। रामदीन: यह हुई न कोई बात।'[8]

इसी प्रकार अदालतों की तस्वीर स्पष्ट की है 'समय–संदर्भ' में जहाँ न्याय पाने के लिए कीमत चुकानी पड़ती है। 'सू.दो : सरकार, ये चाय–पानी मांगते हैं, न्यायमूर्ति : क्या हरज है। सुना नहीं, कानून अन्धा होता है। वह किसी को नहीं देखता . . . न्यायमूर्ति : चाय–वाय की बात धीरे–धीरे की जाये वरना अदालत खुद चाय की तलब महसूस करने लगती है।'[9]

'घरबन्द' नाटक में हमीदुल्ला जी ने देशव्यापी हड़तालों और आए–दिन किए जाने वाले बदों की ओर ध्यान आकृष्ट किया है। इन बदों और हड़तालों से सबसे अधिक नुकसान गरीब जनता को ही होता है उनकी आर्थिक स्थिति और अधिक दयनीय हो जाती है।

चोर पुलिस की सांठ–गांठ भी अब आम बात है जिसे चले आओं नाटक में दिखाया है। इस नाटक में चोर चोरी करने चित्रकार के घर जाता है उसे पकड़े जाने पर बताता है कि वह पुलिस से पूछ कर ही आया था – 'चोर– यह चोर सिपाही का खेल है जी। यह आम आदमी की समझ में नहीं आएगा।'[10] हमीदुल्ला के अलावा 'मुद्राराक्षस' के आला अफसर, सर्वेश्वर दयाल सक्सेना के 'बकरी', मणिमधुकर के 'रसगंधर्व' और 'दिल्ली ऊँचा सुनती है।' कुसुम कुमार के आदि नाटकों में भी इन्हीं समस्याओं का चित्रण मिलता है।

प्रशासन की लापरवाह कार्यशैली पर व्यंग्य – भारत में प्रशासन के कार्यों में देरी एक आम बात है देरी भी इतनी की पीढ़ियाँ गुजर जाती है पर काम नहीं होते। यह प्रत्येक आम आदमी का अनुभव होता है। प्रशासन के हर स्तर पर नीचे से ऊपर तक कुछ व्यक्ति सच्चे ईमानदार होते हैं तो कुछ केवल खाकर पचाने वाले। कुछ अपना काम समय पर करते हैं तो कुछ खाने की फिराक में समय बर्बाद करते हैं। सरकार द्वारा चलाई जा रही योजनाओं का लाभ जनता तक पहुँचाने के बजाये कुछ लोगों में बंट कर ही रह जाता है, फलस्वरूप बेईमानी, झूठ, रिश्वत, चाटुकारिता ने प्रशासन में अपने पैर जमा लिए हैं। हमीदुल्ला जी ने अपने नाटकों में इस समस्या को भी अभिव्यक्ति दी है। जैसे 'एक और युद्ध' में गरीब किसानों का पैसा पोस्टमास्टर, अफसर, तहसीलदार सभी आपस में बाँट लेते हैं, इसके बाद कुछ बचे हुए पैसे किसानों में बाँट देते हैं। 'अफसर – ठीक। तुम्हारे और तहसीलदार के हिस्सों के बाद जो बचे उसे किसानों में बांट देना।'[11] कहने को सरकार द्वारा किसानों की दशा सुधारने के लिए कितनी ही योजनाएँ और सहायता की घोषणा की जाती है पर मिलता कुछ नहीं। ज्यादा बारिश होने, सूखा पड़ने पर न जाने कितने ही किसान आत्महत्या कर लेते हैं। उन्हें अपनी फसल तक का उचित दाम नहीं मिलते। कर्ज में दबे रहते हैं उम्रभर।

एक ओर समस्या जो प्रमुख है वह है शहीदों की विधाओं के साथ नौकरशाही का व्यवहार एक ओर तो उन्हें राष्ट्रीय पुरस्कारों से सम्मानित किया जाता है, वहीं दूसरी ओर उनकी सहायता करने का वादा कर पीछे हट जाते हैं। ऐसी कितनी ही घटनाएँ आए दिन टी.वी. व अखबारों में आती है। 'एक और युद्ध' में सुशीला एक शहीद की पत्नी है जो मुआवजा पाने के लिए सरकारी कार्यालयों के चक्कर लगाकर थक जाती है। पर कुछ हासिल नहीं होता। 'नेता : देवी जो हमसे बन पडेगा हम आपके लिए करेंगे। हमें अपना

दास समझिए।'[12] इसके अलावा मंहगाई, बेबुनियादी योजनाओं आदि की कुछ समस्याएँ हैं जिनका उल्लेख हमीदुल्ला जी ने अपने नाटकों में किया है। जैसे 'शेष कुशल है' नाटक में बढ़ती किमतों पर व्यंग्य किया है। 'रेडियो – उन्होंने बताया पेटरोल में मिट्टी के तेल की मिलावट रोकने के लिए मिट्टी के तेल के दाम बढ़ाये गये हैं।'[13] तत्कालीन समय में बढ़ती किमते ही सबसे बड़ी समस्या है। आम आदमी पिसता रहता है। कभी प्याज, कभी टमाटर, कभी दाल के दाम आसमान छूते ही रहते हैं। कभी पेट्रोल, कभी डीजल महंगा। हालत यह होती है कि गरीब आदमी प्याज के साथ रोटी खाने को भी तरस जाता है। घरों की हालत होती है कि एक प्याज दो दिन चलती है। और अमीरों के घरों में आए दिन दावत, जश्न होते हैं।

सरकार द्वारा इन सभी प्रशासनिक समस्याओं के हल का प्रयत्न किया जाता है परन्तु असर बहुत कम होता है। अधिक सम्पत्ति या दफ्तर समय पर नहीं आना आदि की रोकथाम के लिए कदम उठाए गए हैं सभी को अपनी सम्पत्ति का ब्यौरा देना अनिवार्य किया गया। इनकम टैक्स का प्रावधान आदि कुछ कदम है। अधिकारियों के खिलाफ शिकायत हेतु सभी संस्थाओं में शिकायत पेटी या अन्य उपाय होते हैं।

हमीदुल्ला जी द्वारा लिखे गए इन नाटकों का उद्देश्य जनता को जागरूक व सचेत करना और सामाजिक, राजनीतिक समस्याओं को उजागर करना है। ताकि जनता अपने साथ होने वाले धोखे, छलावे के खिलाफ आवाज उठा सके। अपना शोषण होने से खुद को बचा सके। वस्तुत: नाटक की सफलता मंच पर निर्भर है। हमीदुल्ला के नाटक मंचीय धरातल पर भी आधुनिक राजनीतिक परिदृश्य को अभिव्यक्त करने में सफल है। समस्त नाटक भ्रष्टाचारी शासन व्यवस्था पर एक व्यंग्य है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची :–

1. डॉ. ममता, साठोत्तर हिन्दी नाटक और राजनीति, पृ.सं. 23
2. वही, पृ.सं. 23
3. वही, पृ.सं. 3
4. हमीदुल्ला 'उलझी आकृतियाँ' – भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण–1973, पृ.सं. 154
5. वही, पृ.सं. 161
6. हमीदुल्ला 'दरिन्दे' – भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण–1974, पृ.सं.22
7. हमीदुल्ला 'ख्याल – भारमली' – शब्दकार प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण–1981, पृ.सं.50
8. हमीदुल्ला 'उलझी आकृतियाँ' – भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण–1973, पृ.सं.172
9. हमीदुल्ला 'समय संदर्भ' – भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण–1973, पृ.सं.31,32
10. हमीदुल्ला 'चले आओ' – राजस्थान साहित्य अकादमी, उदयपुर, अंक–4, पृ.सं.61
11. हमीदुल्ला 'एक और युद्ध' – भारतीय ज्ञानपीठ प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण–1973, पृ.सं. 113
12. वही, पृ.सं.125
13. हमीदुल्ला 'शेष कुशल ह' – राजस्थान साहित्य अकादमी, उदयपुर, अंक–4, पृ.सं

****

पत्रकारिता के विविध आयाम–सामाजिक सन्दर्भ में

प्रो. डी.पी. चन्द्रवंशी *

शोध सारांश – जनसंचार माध्यमों का सामाजिक सरोकारों से गहरा संबंध है। पत्रकारिता समाज का प्रतिबिम्ब प्रस्तुत करती है, तथा युग परिवर्तन व युगचेतना की संवाहक बनकर अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। हिन्दी पत्रकारिता का लक्ष्य और स्वरूप समय–समय पर परिवर्तित होता रहा है। कभी मिशन रही पत्रकारिता, आज व्यावसायिकता की ओर उन्मुख हुई हैं। जनसंचार क्रांति के साथ ही संचार के माध्यमों का विकास भी आज बहुत तेजी के साथ हुआ है।

स्वदेशी पत्रकारिता का अतीत, जहाँ नवचेतना तथा राष्ट्रीय जागरण से जुडा रहा है, वहीं स्वातंयोत्तर पत्रकारिता ने नवभारत के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन किया है। जनमानस में लोकतांत्रिकक संस्कृति के विकास से लेकर राज्य के चतुर्थ स्तम्भ के रूप में पत्रकारिता का स्थापत्य उसकी महत्ता का परिचायक है।

प्रस्तावना – पत्रकारिता समाज का प्रतिबिम्ब प्रस्तुत करती है आज पत्रकारिता की बहुआयामी भूमिका व उसके सामयिक सरोकारों पर इस आधार पर बहस जारी है कि यह भूमिका सकारात्मक है या नकारात्मक। राजकिशोर के अनुसार – 'बेचैनी का कारण है समकालीन पत्रकारिता की मूल्यमूढ़ता। पत्रकारिता का यह एक मूल स्वभाव है कि वह नकारात्मक होती है। हर उस जगह, जहाँ गड़बड़ी है, विच्युति है, अस्वाभाविकता है, मौजूद रहना वह अपना कर्तव्य समझती है।.....इस दृष्टि से समकालीन पत्रकारिता काफी सफल और ऊर्जावान कही जायेगी क्योंकि वह काफी श्रमपूर्वक हमारी विकृतियों को हमारे सामने रखती है लेकिन, सवाल उसके पीछे काम कर रही दृष्टि का है। क्या विकृतियों का ऐसा बखान उपयोगी हो सकता है, जिसके पीछे मूल्यों के प्रति कोई प्रतिबद्धता न हो? जाहिर है, जब हमारे सामने एक स्वस्थ स्वाभाविक समाज का कोई सपना नहीं होता, हम विकृतियों की खोज करते हुए एक अंधी गली में पहुँच जाते है और अपने चारों ओर हताशा फैलाते है।'

लोकतंत्र का चौथा स्तम्भ कहा गया है। प्रेस को स्वस्थ समाज का निर्माण व सुरक्षा की जिम्मेदारी प्रेस की बनती है। इसीलिए तो कार्यपालिका, विधायिका और न्यायपालिका की भी जरूरत प्रतीत होती है। स्वस्थ समाज लोकतंत्र के चारों स्तम्भों से ऊपर है। लोकतन्त्र भी तो साधन है। साध्य तो एक मात्र मानवीय समाज है। इसलिए लोकतन्त्र के चारों स्तम्भ भी मानवीय समाज के ही निमित्त है, समाज इनके लिए नहीं। समाज की स्वस्थता के लिए मानवीय मूल्य, प्राण वायु के मानिंद ही तो है। इस प्रकार पत्रकार के लिए मानवीय मूल्यों अर्थात् मानवता से ओत प्रोत होना प्रथम शर्त बन जाती है। यह शर्त प्रत्येक काल, परिवेश और परिस्थिति में उपस्थित रहे, यह सामयिक सरोकार के लिए नितान्त अपरिहार्य है। स्वतन्त्रता पूर्व की पत्रकारिता में यही बात मुख्य रूप से देखी जा सकती है, 'स्वतंत्रता संघर्ष के दिनों की पत्रकारिता को याद करें, तो पता चलता है कि वह भी अधिकांशत: नकार और दोष दर्शन की ही पत्रकारिता थी, लेकिन इसके साथ ही वह कुछ मूल्यों, आदर्शो और सबसे अधिक संघर्ष के प्रति आस्था पैदा करती थी। अब वह विरल होता जा रहा है।'

'टेलीविजन का ही उदाहरण लें। यह ऐसा माध्यम है, जो अपनी दृश्य–श्रव्य शक्ति के कारण करोड़ो लोगों को प्रभावित कर सकता है। यह एक माने में सिनेमा से ज्यादा खतरनाक साबित हो सकता है। इसने दृश्य माध्यम को इतना सुलभ बना दिया है कि किसी कला के आस्वादन के लिए किए जाने वाले प्रयत्न के लिये भी कोई जगह नहीं बची है। जब चाहें, बटन दबाएं, टी.वी. ऑन करें और प्रोग्राम देखें। एक चैनल के बाद दूसरा चैनल, और दूसरे चैनल के बाद तीसरा चैनल। चैनलों के इस अम्बार में यह तय करना मुश्किल हो रहा है कि क्या देखें और क्या न देखे। लेकिन क्या जीवन का यही अर्थ रह गया है कि खाओ, पीओ और टीवी देखों? टीवी के रूपहले पर्दे पर दुनिया जहान की खबरे, हर तरह का मनोरंजन, और जिस किसी चीज की इच्छा और कल्पना की जा सकती है, वह मौजूद है। न हमें सोचने की जरूरत , न करने की जरूरत।

संचार के बारे में इससे नकारात्मक दृष्टिकोण पनप सकता है। बहुत से लोग संचार को दूसरे स्थान पर रखते है और पहला स्थान सामाजिक यथार्थ को देते है। यह उचित भी है, लेकिन इससे हमारी समस्याओं का समाधान नहीं होता। सामाजिक परिवर्तन और विकास के जितने भी साधन और संस्थाएं मौजूद है, उन्हें लोगों तक पहुंचाने और उनमें लोगों को शामिल करने के लिए जरूरी है कि जनसंचार के साधनों की हम सही समझ विकसित करें। यदि हम पहले से ही मानकर चलते है कि जनसंचार का उपयोग जनता को जागरूक बनाने और उन्हें सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया में शामिल करने के लिए नहीं किया जा सकता, तो इसका अर्थ यह है कि हमने जनसंचार के साधनों को निहित स्वार्थ के भरोसे छोड़ दिया है।'

यही पत्रकारिता का सामयिक सरोकार है कि वह अपने काल की गति पर दृष्टि जमाए हुए उन कारकों को निरंतर खंगालती रहे जो गति को ऊर्जा दे रहे है, लेकिन इसका मतलब यह कदापि नहीं है कि उन तथ्यों से नजर फेर ली जाए, जिनके कारण गति में मंथरता आने का भय हो। ये कारण ही तो है जिनकी जानकारी देकर पत्रकार अपने पाठकों को सचेत किए रखता है, उनका मार्ग निर्देशन व दिशा – निर्देशन करता है और उन्हें शिक्षित भी करता है। ताकि समय आने पर पाठक उन खतरों से न केवल लड़ सके बल्कि

* सहायक प्राध्यापक (हिन्दी) शासकीय जे.एम.पी. महाविद्यालय, तखतपुर, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

उनसे निजात पा सके। ऐसा करके पत्रकार स्वस्थ समाज का निर्माता और रक्षक होने का दायित्व पूरा करता है, क्योंकि पाठक ही तो समाज की इकाई है। यदि उसका पाठक मानसिक रूप से स्वस्थ है तो निश्चित रूप से समाज भी स्वस्थ होगा ही स्वातन्त्र्य संघर्ष युगीन पत्रकारिता का काम ऐसे समाज का निर्माण करना था, जिसमें विदेशी शासकों के विरूद्ध खड़ा होने का साहस और रूचि एक साथ हो। जबकि स्वतंत्रता के बाद भी पत्रकारिता के सामने उसका साध्य बदल गया है। पूर्व कालिक पत्रकारिता का साध्य स्वतन्त्रता प्राप्ति था तो स्वतंत्रयोपरान्त पत्रकारिता के सामने स्वतंत्र राष्ट्र के निर्माण का साध्य सम्मुख था और राष्ट्र निर्माण लिए आर्थिक, सांस्कृतिक, नैतिक व राजनीतिक मूल्यों की नव – स्थापना और फिर उसके विकास का होना ही साध्य रहा है।

विकास के लिए पहली शर्त होती है 'अर्थ' की। आर्थिक स्थिति की मजबूती के बाद ही विकास का समुचित फलसफा मुखरित हो पाता है। शिक्षा आदि इस फलसफे में ही समाहित हो जाती है, क्योंकि शिक्षा भी अन्य बातों के साथ साथ अर्थोपार्जन में मुख्य घटक साबित होती है, इसीलिए पत्रकारिता में भी अर्थ का जिक्र परोक्ष या अपरोक्ष रूप से उभर कर आया। इसी दृष्टिकोण से 'अर्थ जगत' तमाम अखबारों में छाने लगा और कितनी ही पत्र–पत्रिकाएं तो विशुद्ध रूप से अर्थ व्यापार से ही सम्बद्ध हो गई। विज्ञापनों से आर्थिक क्षेत्र में दोहरा कार्य होने लगा। एक तो व्यापार के प्रचार–प्रसार में सहायक, जिससे व्यापार का क्षेत्र वृद्धि पा सका और इसी के साथ विज्ञापन अखबार के लिए भी व्यापार का रूप धर कर आया। ऐसे में जो लोग वर्तमान पत्रकारिता पर यह दोष लगाते है कि आज की पत्रकारिता व्यावसायीकरण हो गया है, वे पत्रकारिता की वास्तविकता से आँखें चुरा रहे है। पत्रकारिता का व्यावसायीकरण भी सामयिक सरोकार का ही एक आयाम हैं जिस प्रकार अन्य उत्पाद होते है, वे लोगों द्वारा उपभोग किए जाते है, उसी प्रकार स्वांयोत्तरकालीन पत्रकारिता विशेषकर इक्कीसवीं शताब्दी की पत्रकारिता भी समाचारो और अन्य पाठ्य चीजों का उत्पादन करती है और पाठक के रूप में लोग उसके उपभोक्ता ही तो है।

कैरियर, स्वास्थ्य, फैशन और विज्ञापन अदि से लोग उसी प्रकार तो अपनी जरूरतों की पूर्ति कर रहे है जिस प्रकार खाद्य–उत्पादों, कपड़ो व मशीनरी आदि के उपयोग से अपनी आवश्यकताओ को पूरा करते है। इस सम्बंध में कृपाशंकर चौबे का कथन अत्यंत सटीक बैठता है। श्री चौबे जी का कहना है कि – 'पत्रकारिता की व्यावसायिक वृत्ति पर कई तरह की बातें होती है। मेरा मानना है कि पत्रकारिता जब मिशन थी जब भी वृत्ति (पेशा) थी। आज जब वह व्यवसाय या उद्योग है, तब भी वृत्ति है। पत्रकारिता प्रवृत्ति भी है, वह अनुभूति भी है, वह कला भी है, और जब समाज के हर क्षेत्र में विकार आ गए है तो सिर्फ पत्रकारिता से विकार मुक्त होने की उम्मीद ही कितनी वाजिब है।' ..... जब पत्रकारिता उद्योग है तो जाहिर है कि उद्योगों की जो विकृतियाँ होती है, वे इसमें आएंगी ही क्योंकि उद्योग का तो काम ही धन कमाना और व्यापार बढ़ाना होता है। कुछ लोगों का ऐसा भी मानना है कि आज मीडिया और बाजार एक दूसरे के पर्याय बन चुके है। वास्तव में यह एक ऐसा पक्ष है कि जो वर्तमान में मीडिया कर्मियों और मीडिया विशेषज्ञों को ही नहीं, बल्कि उन सभी संवेदनशील व विवेकशील भारतीयों को परेशान करता है, जिनके सरोकार एजेंडे पर भारत और उसकी जनता प्रथम व अन्तिम प्राथमिकता पर है। इसलिए आज मीडिया व 'बाजारवाद' एवं मीडिया की तटस्थ व लोकोन्मुख भूमिका आदि पर लगातार बहस जारी है। फिर भी समकालीन पत्रकारिता अपवादों को छोड़कर व्यावसायिक हित और जनहित में संतुलन बनाए हुए है। और अपने सरोकारों पर दृष्टि जमाए हुए है। किंतु इतने पर भी एक बात तो माननी ही पड़ेगी कि पत्रकारिता एक स्थान पर मात भी खा रही है और वह स्थान है कि अब वह जनता को शिक्षित नहीं कर पा रही है। पत्रकारिता अपने इस महत्वपूर्ण कर्तव्य और सरोकार से भटकी हैं यह इसलिए लिखना पड़ रहा है कि जनता चाहें कितनी ही बड़ी–बड़ी डिग्रियों से खुद को सजा ले लेकिन राष्ट्रीय, अंतर्राष्ट्रीय, सामाजिक और राजनीतिक आदि क्षेत्रों में जनता की समझ विकसित करने का काम पत्रकारिता ही तो करती है। इतिहास इस बात का साक्षी है कि स्वराज्य संघर्ष के युग में जनता जनार्दन का और आन्दोलनकारियों का उचित मार्ग दर्शन तत्कालीन पत्रकारिता ने ही किया था। तथ्य यह भी है कि उस काल के तमाम पत्रकार देश प्रेमी होते थे। पारिवारिक और अन्य सामाजिक जिम्मेदारियाँ उनकी भी होती थी और विदेशी शासकों द्वारा प्रलोभन उन्हें भी मिलते थे, लेकिन देश प्रेम के वे दीवाने सब कुछ सहन करके भी तत्कालीन सरोकारों से विमुख नहीं होते थे। कबीर के वंशज वे पत्रकार धन के दरोगा से डरकर घबराकर नहीं बल्कि व्यक्तिगत स्वार्थपूर्ति से ऊपर उठकर उन राय साहबों, जमीदारों और लम्बरदारों के द्वारा प्रदत्त प्रलोभनों को पत्रकारिता के धर्म सामाजिक सरोकारों पर बार देते थे। अत: आज यह भी जरूरी है कि पत्रकारिता अपने अतीत को उद्घाटित करने के साथ–साथ, मनुष्य की, समाज की धड़कनों को भी विश्लेषित करने का प्रयास करे। बदलते परिवेश में पत्रकारिता प्रतियोगिता, प्रतिस्पर्द्धा व प्रतिष्ठा की भावना से सम्पृक्त होकर निश्चय ही व्यावसायिकता की ओर भी उन्मुख हुई है। फलत: आज की पत्रकारिता का प्रहरी, लोकतन्त्र के चौथे स्तम्भ का आधार अपने उस धर्म से थोड़ा बहुत स्खलित अवश्य हुआ है। आज उसका कोई आदर्श नहीं दिखलाई पड़ता। आज उसे देश व समाज की दुर्गति व बदनामी की चिंता उस तरह नहीं है, जिस तरह उसके पुरखे पत्रकारों को भी 'आज का पत्रकार समाज के दूसरे वर्गो के लोगों की तरह ही निजी समृद्धि और विलास–वैभव में जीने की आकुल स्पृहा से आन्दोलित होकर रंगीन राहों–घाटों पर दौड़ता नजर आता है।'

कृष्ण बिहारी मिश्र के अनुसार कहें तो 'पत्रकारिता की विकसित सुविधाओं और अनुकूल साधनों का विधायक दिशा में नियोजन नहीं हो रहा है और यथार्थ स्थिति यह है कि समाज–संस्कार की सजातीय और विशिष्ट भूमिका से सांप्रतिक पत्रकारिता काफी हद तक विरत हो चुकी है, इससे यह धारणा पुष्ट होती है कि पत्रकार के व्यक्तित्व में स्खलन आया है और पत्रकारिता की उज्जवल विरासत मैली हो रही है। अपनी पुरानी तेजस्वी भूमिका स्वाधीन देश की पत्रकारिता में नहीं दिखलाई पड़ती। स्वाधीन देश में चुनौतियों का अभाव नहीं रहा है। प्रत्यक्ष–अप्रत्यक्ष चुनौतियाँ बुद्धिजीवियों को ललकारती रही है। लेकिन स्वदेशी शासकों की तरह ही बुद्धिजीवी भी अपने दायित्व के प्रति उदासीन और व्यक्तिगत महत्वकांक्षा के प्रति अतिशय सजग रहे है'।

तमाम बातों के बाद इतना अवश्य कहा जायेगा कि अपने सीमित संसाधनों के चलते हुए भी पत्रकारिता बदलाव की दुर्गति के साथ, कदम से कदम मिलाते हुए तमाम सरोकारों की बखूबी पूर्ति करती जा रही है। पर, यहाँ यह ध्यान रखा जाना भी अपेक्षित है कि अपनी सभ्यता व संस्कृति के रेहन रखकर मीडिया के दीर्घ जीवन नहीं चाहिए। अपसंस्कृति, चरित्र हीनता और चाटुकारिता से पत्रकारिता का कोई मेल नहीं होना चाहिए।

ग्लोबलाइजेशन के चलते पत्रकारिता के सामयिक सरोकार भी बदले हैं, जिन्हें पत्रकरिता ने उभारा है। आज कृषि सुधार, किसानों व मजदूरों की

स्थिति और उनकी हालत में सुधार से सम्बन्धित संभावनाओं की तलाश, पानी, पर्यावरण, आतंकवाद, नारी मुक्ति, बेरोजगारी, जनसंख्या, सम्प्रदायिकता, मानवाधिकार, राजनीतिक विकृतियाँ संसद व विधान सभाओं की चारित्रिक गिरावट, शिक्षा और वैश्विक, राष्ट्रीय सामाजिक, पारिवारिक, सांस्कृतिक, विज्ञान, खेल आदि सम-सामयिक मुद्दों पर पत्रकारिता ने अपने विचारों द्वारा जो टिप्पणियाँ प्रस्तुत की हैं और जो सुझाव दिए जा रहे हैं, उनसे राष्ट्रीय अन्तर्राष्ट्रीय व सामाजिक विकास के पथों को नये आयाम प्राप्त हो सके हैं।

'जनसंचार माध्यमों ने सूचनाओं को भी खरीदे और बेचे जाने की चीज बना दिया है। 'कौन बनेगा करोड़पति' जैसे कार्यक्रम ज्ञान को सूचनाओं से स्थानापन्न कर रहे हैं। इसका नतीजा यह हो रहा है कि लोगों का अपने विवेक पर से भरोसा उठ रहा है।

'आज चारों ओर मार्केट का इस हद तक दबाव है, कि हम हर वक्त बाजार में खड़े नजर आते हैं, जहाँ हमारी हैसियत सिर्फ उपभोक्ता की है, और कुछ नहीं रेमण्ड विलियम्स ने सही कहा था कि नयी सूचना प्रणाली पर वित्तीय संस्थानों, मार्केटो ट्रेवल एजेंसियों और सामान्य विज्ञापनों का प्रभुत्व होगा। वे ही हमारे मनोरंजन और सूचना की अन्तर्वस्तु को तय करेंगे, जो आर्थिक प्रणाली की ताकत को व्यक्त करेगा। रेमण्ड विलियम्स की बात आज सही साबित हो रही है।

'मौजूदा दौर में सांप्रदायिकता और पृथकतावाद की शक्तियों ने राष्ट्रीय एकता और अखण्डता की शक्तियों को चुनौती दी है। सांप्रदायिक पृथकतावादी शक्तियों का चौतरफा उभार हुआ है। इस उभार को पैदा करने में संचार माध्यमों की जबरदस्त भूमिका रही है। संचार माध्यमों के प्रसारण तंत्र सबसे विराट है, और यह माध्यम सबकुछ सार्वजनिक कर देता है। राष्ट्रीय एकता, एकता और धर्मनिरपेक्षता के स्वरूप को बनाए रखने का दायित्व संचार माध्यमों का है।'

निश्चय ही, आज मीडिया ने एक नयी चुनौती दी है, जिसे हम जनसंचार क्रान्ति का नाम दे सकते हैं। मिशनरी पत्रकारिता से खोजी पत्रकारिता, और स्टिंग आपरेशन से रूबरू होती पत्रकारिता तक एक नयी संस्कृति का उदय हुआ है। व्यावसायिक प्रतिस्पर्धा के मध्य जहां आर्थिक प्रगति अथवा अर्थ-सम्पन्नता पत्रकारिता के मूलभूत ढांचे व अन्तर्राष्ट्रीय मानकों के स्तर पर व्यावसायिक स्थापत्य के लिए आवश्यक है, वहीं पत्रकारिता के जन सरोकारों से कदापि इन्कार नहीं किया जा सकता, क्योंकि जनमुद्दों के अभाव में पत्रकारिता का मूल लक्ष्य ही बेमानी है। वास्तव में मूल इकाई तो मानवता ही है, फिर इसके व्यापक संदर्भ में केवल मानव ही क्यों, जीवमात्र यहाँ तक कि जड़ और चेतन भी क्यों नहीं नि:संदेह पत्रकारिता का लेखन जनसमस्याओं और बुनियादी ढांचे तक ही नहीं, वरन् पर्यावरण संरक्षण, वन्यजीव-वन संरक्षण, आपदा प्रबन्धन, कूटनीति, मानवाधिकार, कृषि व भूमि जैसे मानवोचित नैतिक, चारित्रक, प्राकृतिक व भौतिक आदि विषयक मुद्दों संसाधनों व संवेदनाओं पर भी रचनात्मक लेखन क्या उतना आवश्यक नहीं है? यदि हाँ, तो पत्रकारिता आज भी व्यावसायिक होते हुए भी मिशन कैसे नहीं? और यदि नहीं तो फिर पत्रकारिता का न तो कोई औचित्य ही है, और न ही सार्थकता।

संदर्भ ग्रंथ सूची:-

1. समकालीन पत्रकारिता : मूल्यांकन और मुद्दे-संपादक श्री राजकिशोर, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, 1994, संपादक की बात, पृष्ठ-1
2. पूर्वोक्त, पृष्ठ-2
3. डॉ. जबरीमल्ल पारख : जनसंचार के सामाजिक संदर्भ, अनामिका पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, प्रा0लि0,पृ0 फ्लैप से, प्रथम संस्करण-2001
4. मीडिया और बाजावाद, सम्पादक-श्री रामशरण जोशी, राधाकृष्ण प्रकाशन प्रा. लिमिटेड, नई दिल्ली, 2002
5 श्री कृपाशंकर चौबे: पत्रकारिता के नए परिदृश्य, मानक पब्लिकेशंस, प्रा.लि. दिल्ली 1999, पृ.-7, 8.
6. श्री एन.सी.पंत:हिन्दी पत्रकारिता का विकास, राधा पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 2002
7. डॉ. कृष्ण बिहारी मिश्र: नवजागरण की विरासत उद्धृत-समकालीन पत्रकारिता:मूल्यांकन और मुद्दे सं. राजकिशोर वर्मा, पृ. 16
8. पूर्वेक्त, पृष्ठ 17.
9. वंदना मिश्रा (सम्पादक) : पत्रकारिता मिशन से मीडिया तक-राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2004
10. डॉ. जबरीमल्ल पारख: जनसंचार के सामाजिक संदर्भ, अनामिका पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, प्रा.लि.पृ.-फ्लैप से, प्रथम संस्करण-2001
11. उपरोक्तानुसार
12. डॉ. राजेन्द्र मिश्र/डॉ. देवीसिंह राठौर : पत्रकारिता के विविध आयाम, तक्षशिला प्रकाशन, नई दिल्ली प्रथम संस्करण-2003, पृ.-29

****

हिन्दी कहानी की विकास गाथा

डॉ. कल्पना मिश्रा *

प्रस्तावना – हिन्दी कहानी के इतिहास पर दृष्टि डालें तो सर्वप्रथम बचपन में दादा–दादी या मॉ से सुनी कहानी ध्यान आती है। एक था राजा या एक समय की बात है। इस शैली में अनगिनत कहानियॉ पढ़ी और सुनी हैं। राजा रानी, देवताओं, राक्षसों पशु–पक्षियॉ की परी रानी की और इनके अलावा भी कई अजीबों गरीब घटनाओं और चमत्कारों की कहानियॉ हमारे अतीत का हिस्सा रही हैं। पुराण पंचतंत्र महाभारत बेताल पच्चीसी, जातक कथायें आदि कई प्राचीन ग्रन्थों में हजारों कहानियॉ भरी पड़ी हैं जिन्हें हमने सुना या पढ़ा है। इस कहानियों को पढ़ने से जहां हमारा मनोरंजन होता था, वहीं उनके माध्यम से तरह–तरह की शिक्षा और उद्देश्य भी मिलते थे इनमें वर्णित घटनाऍ महत्वपूर्ण नहीं होती थी बल्कि उनके माध्यम से व्यक्त उपदेश महत्वपूर्ण होता था निश्चय ही वे कहानियॉ हमारी परम्परा का महत्वपूर्ण हिस्सा है किन्तु जिस कहानी विधा पर हम चर्चा करने जा रहे हैं वह उन पुरानी कहानियॉ से नितांत भिन्न हैं।

हिन्दी कहानी (साहित्य विधा) का इतिहास बहुत पुराना नहीं है। इसका आरंभ 19 वीं शताब्दी के पहले दशक में हुआ। आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी के संपादन में निकलने वाली पत्रिका **'सरस्वती'** ने कहानी लेखन को प्रोत्साहित करने का बीड़ा उठाया। बाद में तो कई पत्रिकाऍ केवल 'कहानी' को ही केन्द्र में रखकर निकाली गयी जिनमें कहानी, 'नई कहानी', 'सारिका' आदि प्रमुख हैं।

हिन्दी की पहली कहानी कब लिखी गई और किस कहानी को हिंदी की पहली कहानी कहा जा सकता है इसे विषय में मत मतांतर हैं। हिंदी कहानी की परंपरा में प्रेमचंद का स्थान केन्द्रीय महत्व का है। प्रेमचंद ने लगभग तीन सौ कहानियॉ लिखी। उन्होंने हिन्दी कहानी को श्रेष्ठता का वह मानक प्रदान किया जो हिंदी साहित्य में मील का पत्थर माना जाता है। अत: प्रेमचंद जी को केन्द्र में रखते हुए हम कहानी की विकास–यात्रा को तीन चरणों में बॉट कर अध्ययन करने का प्रयास करेंगे।

1. प्रेमचंद पूर्व युग की कहानी (1901 से 1914)
2. प्रेमचंद युग की कहानी (1914 से 1936)
3. प्रेमचंदोत्तर युग की कहानी (1936 से आजतक)

प्रेमचंद पूर्व युग की कहानियॉ – प्रेमचंद पूर्व युग की कहानी 1901 से 1914 तक माना जाता है। हिन्दी की पहली कहानी कौन सी है यह आज तक विवाद का विषय है। हिंदी के आरंभिक दौर में मुंशी इंशाअल्ला खां ने 'उदयभान चरित्र' या 'रानी केतकी की कहानी' की रचना की थी। समय की दृष्टि से यह सबसे पुरानी कहानी कही जा सकती है। परन्तु आधुनिक कहानी कला की दृष्टि से यह उतनी महत्वपूर्ण रचना नहीं है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का विचार है यह मुस्लिम (फारसी) प्रभाव की अंतिम कहानी है यद्यपि इसकी भाषा और शैली में आधुनिक कहानी कला का थोड़ा आभास मिलता है। राजा शिव प्रसाद सितारे हिंद(1832–1895) की रचना 'राजा भोज का सपना' भी ऐसी ही आरंभिक (रचना) कहानी है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने हिंदी की आरम्भिक कहानियों में किशोरीलाल गोस्वामी (इंदुमती) रामचंद्र शुक्ल(ग्यारह वर्ष का समय) बंग महिला(दुलाई वाली) आदि को सम्मिलित किया है। इन कहानियों को हम आरंभिक प्रयोगशील कहानियॉ कह सकते हैं जिनमें कहानी कारों में विदेशी या बंगला कहानियों के प्रभाव में आकर हिन्दी में भी कहानियॉ लिखने का प्रयास किया था। 1901 में प्रकाशित माधवराव सप्रे की कहानी 'एक टोकरी भर मिटटी' को हिन्दी की पहली कहानी माना जाता है।

प्रेमचंद पूर्व युग की कहानियॉ प्राय: आदर्शवादी हैं जिनमें भावुकता के साथ किसी भारतीय आदर्श की कथा कही गई हैं। भाषा की दृष्टि से भी उनमें वैसी प्रौढ़ता नज़र नहीं आती जैसी प्रेमचंद्र युग की कहानियॉ में आती है।

प्रेमचंद युग की कहानियॉ – हिन्दी कहानी विधा का वास्तविक आरंभ तो प्रेमचंद के द्वारा ही हुआ जो यद्यपि 1900 के आसपास से ही रचना कर रहे थे किन्तु हिन्दी कहानियॉ 1914–15 में प्रकाश में आई। अत: हिन्दी कहानी का प्रेमचंद युग 1915 से माना जाता है। प्रेमचंद जिस दौर में कहानियॉ लिख रहे थे, उस दौर में और भी कई कहानीकारों की रचनाऍ प्रकाशित हो रही थी, जिनमें जयशंकर प्रसाद, चन्द्रधर शर्मा गुलेरी, सुदर्शन आदि प्रमुख हैं। इनके अतिरिक्त विश्वंमर नाथ शर्मा 'कौशिक', चतुरसेन–शास्त्री, राज राधिकारमण प्रसाद सिंह, शिवपूजन सहाय, वृन्दावन लाल वर्मा, गोपाल राम गहमरी, रायकृष्णदास, पदमलाल पुन्नालाल बख्शी, ज्वाला दन्त शर्मा, गंगाप्रसाद श्रीवास्तव आदि कहानीकारों की रचनाऍ भी प्रकाशित हुई और हिन्दी का कहानी साहित्य तेजी से आगे बढ़ा।

अगर आधुनिक कला की दृष्टि से मूल्यांकन किया जाय तो हिंदी की पहली श्रेष्ठ कहानी चन्द्रधर शर्मा गुलेरी की 'उसने कहा था' (1915) है। इस कहानी का कथ्य सार्वदेशिक और सार्वकालिक है। गुलेरी जी ने इसके अतिरिक्त सिर्फ दो कहानियॉ और लिखी हैं– **'सुखमय–जीवन'** और **'बुद्धु का कांटा'**। प्रेमचंद युग में ही प्रसाद जी ने कई कहानियॉ दी। प्रसाद जी मूलत: कवि थे, इसलिए उनकी कहानियों में भावात्मक संघर्ष और मनोवैज्ञानिक अंतर्द्वंद्व का चित्रण अधिक है। आपकी अधिकांश कहानियों की कथावस्तु ऐतिहासिक हैं। उनकी भाषा संस्कृतनिष्ठ, भावप्रवण, आलंकारिक और काव्यात्मक है। किंतु बाद की कहानियॉ यथा– मछुआ और गुंडा आदि में यथार्थ चित्रण पर बल दिया है। 'आकाश दीप', 'पुरूस्कार', 'इन्द्रजाल', 'छाया', 'आंधी', 'दासी' आदि उनकी प्रसिद्ध कहानियॉ हैं।

* विभागाध्यक्ष (हिन्दी) शासकीय कला एवं वाणिज्य (नवीन) महाविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

प्रेमचंद की कहानियों का प्रकाशन हिन्दी साहित्य की महत्वपूर्ण घटना है। उनकी पहली कहानी 'पंच परमेश्वर' (1915) प्रकाशित हुई थी। यद्यपि यह एक आदर्शवादी कहानी थी किन्तु इसमें मनुष्य के अंदर छिपे दैवत्व को उजागार कर उसके हृदय की विशालता और पारस्परिक विश्वास को स्थापित किया गया था।

'प्रेमचंद शताब्दियों से पद दलित, अपमानित और उपेक्षित कृषकों की आवाज थे, पर्दे में कैद, पग-पग पर लांछित और असहाय नारी जाति की महिमा के जबरदस्त वकील थे, गरीबों और बेबसों के महत्व के प्रचारक थे।'

(हजारी प्रसाद द्विवेदी: हिन्दी साहित्य:उद्भभव और विकास 1 से 266)

प्रेमचंद ने अपनी कहानियों के द्वारा सामाजिक कुरीतियों और विडंबनाओं पर गहरी चोट की है। आरंभ में तो उन्होंने भाववादी आदर्शवाद का सहारा लिया था, लेकिन बाद में उनका ऐसे किसी आदर्शवाद पर विश्वास नहीं रहा। प्रेमचंद ने अपनी कहानियॉ द्वारा जहॉ गरीबों बेबसों और उत्पीड़ितों की कारूणिक पीड़ाओं का यथार्थ चित्रण किया है, वहीं उनके अन्दर हुये मानवतावाद को उजागार कर उन्हें मानवीय गरिमा प्रदानी की है। भाषा की दृष्टि से भी प्रेमचंद ने बोलचाल की हिन्दी को ऐसा सहज, लोकभाषा का रूप दिया है जो आज भी हमारे लिए अनुकरणीय है। शैली की दृष्टि से प्रेमचंद ने सर्वाधिक प्रयोग किए हैं। उनकी प्रसिद्ध कहानियॉ हैं, 'कफन', 'पूस की रात', 'शतरंज के खिलाड़ी','दूध का दाम', 'नशा', बड़े भाई-साहब यथार्थवादी कहानियॉ हैं। आरंभिक दौर में लिखी गई आदर्शवादी चर्चित कहानियों में 'अलग्योझा', 'नमक का दरोगा', 'पंच परमेश्वर','ईदगाह', 'मंत्र', आदि प्रमुख हैं।

प्रेमचंदोत्तर युग की कहानियॉ में प्रमुखत: दो धाराऐं उभरकर आई। एक तो प्रेमचंद परम्परा अर्थात यर्थाथवादी जिसे प्रगतिवादी कहानियॉ कहा गया और दूसरी बिल्कुल अलग नई धारा जिसे हम मनोवैज्ञानिक कहानियों के नाम से विभाजित करते हैं।

प्रगतिवादी कहानियॉ- 1936 में प्रगतिशील लेखक संघ की स्थापना हुई। यथार्थवादी प्रेरणा से लिखी गई कहानियॉ प्रगतिवादी कहानियॉ कही जाती हैं। इस काल के रचनाकारों ने सामाजिक समस्यायें को कहानी का विषय बनाया इनमें प्रमुख रचनाकार हैं-यशपाल, उपेन्द्रनाथ अश्क, पहाड़ी पांडेय बेचन शर्मा उग्र, विष्णु प्रभाकर, अमृतलाल नागर आदि। पूर्व परंपरा (प्रेमचंद की) के अनुसार ही धार्मिक अंधविश्वासों, सामाजिक रूढ़ियों और आर्थिक शोषण पर आधारित कहानियॉ लिखी गयी। मध्यमवर्गीय जीवन की विडम्बनाओं पर भी अच्छी कहानियॉ सामने आयी पर अधिकांशत: गरीब असहाय वर्ग को केन्द्रित कर रचनाऍ लिखी जाने लगी। यशपाल की कहानियॉ एक अलग स्थान रखती है । उन पर मार्क्सवाद के साथ-साथ फ्रायड के मनोविश्लेषणवाद का प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है। उनकी 'महाराज का इलाज', 'परदा', 'उत्तराधिकारी', 'काला आदमी', फूलों का कुर्ता', 'दासधर्म' आदि चर्चित कहानियॉ है।

मनोवैज्ञानिक कहानियॉ- इसी दौर के कुछ ऐसे कहानीकार हैं जिन्होंने अपनी कहानियॉ का केन्द्र सामाजिक समस्याओं को न बनकर व्यक्ति की मानसिक पीड़ाओं और अन्तर्द्वन्द को बनाया। इन कहानियों में मानव चरित्र की वैयक्तिक विशिष्टता एवं उसके पीछे छिपे मनोवैज्ञानिक सत्य को कहानी का आधार बनाया। इस मिजाज के कहानीकारों में जैनेन्द्र कुमार, इलाचंद्र जोशी और अज्ञेय प्रमुख हैं।

स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद कहानियॉ का एक नया स्वरूप सामने आया जिसे नयी कहानी का नाम दिया गया। 'नयी कहानियॉ' में यथार्थवादी और मनोवैज्ञानिक कहानियॉ मानो एक रूप में समाहित हो गयीं। इस युग की कहानी में पारिवारिक और मानवीय संबंधो में आने वाले परिवर्तन चित्रित किये गये। नयी कहानी का केन्द्रीय कथानक स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद मध्यम वर्गीय जनमानस की आशाओं, आकांक्षाओं और स्वप्नभंगों से संबद्ध है। इस युग में महिला कथाकारों ने भी श्रेष्ठ कहानियॉ लिखी कृष्णा सोवती, मन्नू भंडारी और उषा प्रियंवदा आदि सशक्त हस्ताक्षर हैं। इस युग के कथाकारों में भैरव प्रसाद गुप्त, भीष्म साहनी, मार्कंडेय , फणीश्वर नाथ रेणु, राजेन्द्र यादव, निर्मल वर्मा, मोहन राकेश, शेखर, शैलेश मटियानी, कमलेश्वर, कृष्णबल देव वैद, रामकुमार, शिवप्रसाद सिंह, शानी, धर्मवीर भारती, अमरकांत, हरिशंकर परसाई आदि प्रमुख हैं। नयी कहानी के बाद भी अकहानी संचेतन कहानी जनवादी कहानी जैसी प्रवृत्तियॉ सामने आई। यदपि 'नयी कहानी' जैसा समर्थ आंदोलन नहीं आया किन्तु कई प्रभावशील रचनाकारों द्वारा कहानी की परम्परा को समृद्ध करने का सिलसिला जारी है यथा-काशीनाथ सिंह, ज्ञानरंजन, रमेश उपाध्याय, गोविंद मिश्र, मुद्रा राक्षस, मृदुलागर्ग, मृणाल पांडेय की रचनाऍ कहानी विधा का समृद्ध कर रहीं है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. हिन्दी साहित्य का इतिहास-लक्ष्मी सागर वार्ष्णेय ।
2. हिन्दी साहित्य का इतिहास-नागपाल ।
3. हिन्दी साहित्य उद्भभव और विकास- हाजरी प्रसाद द्विवेदी ।
4. आधुनिक हिन्दी कहानी- लक्ष्मी नारायण लाल ।

****

Text To Screen : A Study Of The Differences Between Original And Adaptation

Dr. Mukta Sharma * Shweta Maheshwari **

Abstract - The impact of literature on films is almost as old as filmmaking itself. Film producers and directors have directly or indirectly influenced from various dramas and texts in order to make their films. During recent years the attention of film industry has been rapidly drawn towards literary texts. And the influence of literature, on film industry has been wide and all pervasive. These texts are getting entries on screen because of the interest of audience towards them. But the directors of the movie bring some changes while getting the text on screen and the changes are necessary.

The present article studies about the difference and the importance is therefore written to delve to find out the differences between the screen adaptation and the original text.

Key Words - Cinematic Techniques, Faithful Translation, Screen Adaptation, Literary Texts.

Introduction - All the texts that have been converted into movies 'translate' texts from the verbal language of print culture into the visual sign system of cinema, a shift which inevitably creates difference. The film makers who translate the text to the cinema or television screen have in mind the concept of making their movies a super hit. If a film director wants his movie to be a super hit he must be tempted towards the mindset or demands of youngsters therefore the movie makes itself somewhat different from the original text.

Film director's first thought is always 'Is this a bore?'The fear of creating something 'too serious' something which would somehow announce itself as intimidating and boring and not bright enough, compels him to bring some changes while adapting a text into screen.

The texts are written centuries ago so the principles and the ideas and social setup in such novels cannot survive at present time or every time in film world. Film makers have to take care of the interests of the people of a particular country or area for whom it is being made. It becomes inevitable for a film maker to bring about major changes in the film at the level of locale, dialogue, situation and relationships etc. Texts when they have been adapted on screen in the same language, there are changes if they are compared to the original texts. If they are transformed in an alien language for the people of different culture then there may be major changes to suit that land and its culture and language.

There is a great craze among the film makers to transform the popular dramas and novels into films. Therefore it is worthwhile to take a closer look at differences between the original texts and adaptation of the same on the silver screen. When audience demands 'faithful translation' on screen they may be asking the impossible. There are many reasons which open up even wider distances form texts.

Granted, that a movie need not to be 'just like the book' in order to be good, differences occur in translating texts into films. Cinematic techniques however erase many elements of the original text while adapting it on screen. The process of making a movie upon a text invites the directors to hold text as well as the new concepts simultan- eously in the mind.

A reader after reading a text when goes to see its screen adaptation, forgets about the original one though the target work is different, even it is being called the second hand product but what is the reason of liking the text more on screen is the special characteristics of its being as a movie, that may be called here 'difference'. It's pretty certain that film industry will keep adapting, borrowing from, and ripping off the classics for many years to come.

Everything whether it is a literary work or something else, whenever put to be changed its uniform, it must adapt some changes. The movie draws its essential elements from the original text but renews them completely. Movie stands on its own feet.

The text is only to read, that is only for the reader but a movie is to be viewed and listen as well. Theatres are full not to look at an author's point of view but the audience is there to enjoy. The text only helps as being the story or plot of the movie, and all the other things and entertainment provided by, are the inevitable ingredients of the movies itself.

The movie can be different from the original text on the ground

* Professor and Head (English) Manikya Lal Verma Shramjeevi College, J.R.N. Rajasthan Vidyapeeth (Deemed) University, Udaipur (Raj.) INDIA

** Research Scholar (English) Manikya Lal Verma Shramjeevi College, J.R.N. Rajasthan Vidyapeeth (Deemed) University, Udaipur (Raj.) INDIA

of following features:-

1. Title
2. Culture
3. Situation and Plot Structure
4. Attire
5. Periods
6. Locality
7. Dialogues

Usually a movie takes three hours, while a fictional work is not bound by the time. There is almost no limit of time, no limit of words etc. So whenever a director brings a text on screen he has to make some changes as it is going to be a movie. A text is the reflection of author's imagination or his view but the movie is for the spectators. The director of the movie, hence, often changes the location, the names of the events as the movie should be easily embraced by the memory.

Whenever something is changed into any other form, in the target form there occur some changes. The changes are placed as regarding contemporary conventions and conditions. The target form always displays some difference. It has been observed since a long time, the literary texts have always been the point of attraction for the movie makers. And that is a fact that whatever the movie maker is presenting, is for the viewers, so if the literary texts are on demand, the reason behind it is the taste of viewers or the audience for them. Director of the movies has to be aware of the mindset of the audience first, because only audience can make a movie flop, hit or super duper hit. That means the content, the message, the star cast of the movie etc. matter a lot so while changing an original text into a movie, all the above aspects have to be kept in mind. The creativity of these aspects brings all the difference.

Some film theorists argue that a director should be entirely unconcerned with the source, as a text is a text, while a film is a film and the two works of art must be seen as separate entities. Since an exact transcription of a text into film is impossible, holding up a goal of accuracy is absurd. Others argue that in a film adaptation only very essential changes should be made and the film must be accurate to either the effect (aesthetics) of a text or the theme of the text or the message of the text and that the film maker must introduce changes only where it is necessary according to the demands of time and should try to maximize faithfulness as far as possible.

The directors refrain from attempting to put everything that's there in the text into a film. Therefore elision is a necessity. In some cases however film adaptation interpolates some other scenes or invents characters that are not there in the original text.

Changes in the plot in adaptation from the original source is essential, inevitable and practically unavoidable, mandated both by the constraints of time, medium and language, But how much? A balance has to be maintained. If it is overlooked the films do not remain faithful to the original story. Thus the dramas undergo a lot of change when brought on to the silver screen.

Conclusion - It can be concluded by stating that the film makers have to take care of the interests of the people of a particular country or area for whom it is being made. Therefore it becomes inevitable for a film maker to bring about major changes in the film at the level of locale. Dialogues, situation and relationships, attire and also the plot structure.

Adapting a novel into a two-hour movie is a big challenge in itself as sometimes, accommodating the story to fit in the time length messes up the whole essence of the original art. Consequently, there have been so many movie adaptations that haven't worked well on the box-office despite being inspired from some famous works of literature.

Movie makers give different colours to the movie as it is to present on screen. The difference of including songs is inevitable. To make the movie a hit or super hit the director changes the original text. With the changing generation the taste, the ideas, the thinking, the mind set, the situations and the demands also get changed. Every director wants his movie to be super hit. The budget of the movie is to be fulfilled by the earnings of the movies. The movie will earn if it is made according to the contemporary generation.

References :-

1. Mercado, Gustavo. The Filmmaker's Eye: Learning (and Breaking) the Rules of Cinematic Composition. New York: Focal Press, 2010.
2. Alter, Stephen. Fantasies of a Bollywood Love Thief: Inside the World of Indian Moviemaking. New Delhi: Harper Collins, 2007.
3. Adapting Stories for Screen, http://www.search.informit.com.all/document summary.html.

****

Spiritual Love portrayed by Shakespeare in Romeo & Juliet

Sehba Jafri *

Abstract - Romeo and Juliet is the love story of star-crossed lovers. The love of Romeo and Juliet is beyond the full-stop. It is like a love song never ends. The play composed in 1591 is a remarkable link between the stylistic devices and beautiful imagery. It is also popular for long lyrical similes but no one discusses its emotional twists for which Shakespeare is called the apostle of English Drama. His concept of love is specific and lyrical. It is different from the way of all other poets and playwrights. The audience, mesmerised by its lyrical flow, talk about the passionate love-situations created by Shakespeare but they do not comment about the certain point from where they can have a grip over Shakespeare's concept of ordinary romance changing in the spiritual love. Apart from ideal concept of love, Romeo and Juliet share the passionate bond. Simply started by a sensual attraction, it converts into an answer of the question of their existence. Their minds become dead and their passion becomes alive. Enlightened by the beam of love, they enter in the divine kingdom of God. The perfection and growth of their love finally leads to the ultimate joining with God and they teach the world that love is superior to all other emotions.

The present paper is the small effort to trace Shakespeare's treatment of love which starts from the passion and finally preaches in spiritual tone that love is not a relationship it is always 'relating'.

Keywords - Melancholy, Passion, Bliss, Love, Harmony, Suicide, Hate, Mind, Divine, God and Sex.

Introduction - The Tragic story of Romeo and Juliet is collected by Shakespeare from a translation of a narrative poem from Italian literature by Arthur Brooke named Romeus and Juliet. The poem ends with the destiny of a failure love which creates a feeling of terror and forces not to love but the end of Shakespeare's Romeo and Juliet leaves a message that lovers end but love does not. Besides, describing the love-hate battle, the play has deep divine message of spiritual love. The story is started with a traditional enmity which has existed over the years between two prominent families in the kingdom of Verona. The families are called Capulet and Montague. This long stand feud between these two families has become so deep-rooted that it has spread even to the servants.

Romeo the son of Montague and a broken-heart lover of Rosaline has another view for this enmity. He observes that here's much to do with hate, but more with love with his angelic eyes. This attitude of Romeo and a deep urge to see the more beautiful face than Rosaline forces this young Montague to attend a banquet at Capulet's house in disguise way, where he gets fascinated by a very charming face of a young Capulet mermaid named Juliet. Their love for each other is so pure, passionate and thrilling that they willingly agree to surrender themselves to each other. Their regular meetings and passionate love ultimately leads to the tragedy which is the theme of the play. Although it causes much chaos, destruction and death but it is victorious over a long family quarrel of two ill-tempered families of Capulet and Montague.

A noble young kinsman to the Prince named Paris wishes to marry Capulet's daughter. Capulet invites him to attend the banquet to look at the many beautiful girls of the Capulet- family. Capulet says that if, after looking at all the beautiful maidens, Paris still wants to marry Juliet, then his proposal can be considered. As we know that he is already impressed by the nobility and luxury of Capulet's family, he does not change his decision. Lady Capulet has formed a very high opinion about the attainments and character of Paris. She now forces to her daughter to marry with Paris.

Romeo fascinated by Juliet's beauty, falls in love with her. They love each other and secretly marry after some intimate conversations. Suddenly the story takes a twist. Mercutio a young kinsman and a friend of Romeo has some hot talk with 'Tybalt', Lady Capulet's nephew and a cousin of Juliet. The matter fires and rage results into the death of Mercutio and Tybalt. Juliet comes to know about the terrible news of Tybalt's death at Romeo's hands. She feels shocked and dismayed both by news of her cousin's death and her husband's banishment. Banishment from Verona means permanent separation from Juliet, to whom he was married a few hours ago. Romeo feels that it is better to kill him rather than banishment but he is rebuked by the Frair Laurence the Priest of Verona, for wishing to follow such a desperate and sinful course of action. Friar suggests a desperate plan of Juliet's death to make them joint again but Romeo considers it a real death and commits suicide. Romeo's Grief and death becomes the cause of Juliet's suicide and the play ends with the death of enmity between both the families with the death of Romeo and Juliet.

Suggestions and findings - Just like a beautiful Psalter, the play involves the spiritual level of consciousness. It

* **Research Scholar, Vikram University, Ujjain (M.P.) INDIA**

reaches to all the three layers of consciousness and becomes the spiritual song. These youths from Montague and Capulet fall in love. Juliet "the girl who teaches torches to burn bright and looks like the moon hung upon the cheek of night" makes the Romeo Crazy. The physical description of a 'Snowy-Dove' involves the physical layer. Romeo first touches the Juliet's hand and then takes the liberty of kissing her hand. Juliet does not mind that also. Evidently Juliet too has fallen under Romeo's spell, just as he had fallen under her spell at first sight. They completely forget the world. On realising that the girl with whom he is in love is Capulet's daughter, Romeo says to Juliet: I take thee at thy word./ Call me but love, and I'll be new baptizd:/ Henceforth I never will be Romeo. His preference to change the name rather than the beloved touches the psychological layer, the mind and finally their never ended honeymoon crosses the stars, touches the soul, the eternal self.

Here, the remarkable thing is the portrait of Love by Shakespeare which is existed on all the three planes. It is almost different in its qualities at every level. It is simply a sexual pleasure on the plane of body or physiology. It is a 'need' on emotional level but it is a 'stage of tranquillity' like a river of melody flowing unending on spiritual level. One can call sex 'the love', because ninety-nine percent people call their sex, 'love'. Their love becomes the subject of death and decay as the time passes but Shakespeare's love, in the play, seems to be an eternal spiritual beauty. It is beyond death; it is beyond the biological or physiological limits also. The chemistry of Romeo and Juliet is beyond the materialistic involvement.

Although Romeo's Love for Rosaline was a failure one, yet is was the first beat of his heart. We come to know about this love, just then Romeo appears on the stage. His parents quickly withdraw from the palace, in order to let Benvolio speak to Romeo and try to find out the reason for Romeo's continuing despondency. Romeo then opens the secret; it is the love of Rosaline that made him more than a mad man. This passionate love of Rosaline and Romeo is not a futile activity by Shakespeare, but it is the first sexual attraction of Romeo's mind which moves him towards the living things. According to spirituality, sex is the most alive thing in human activities which activates the consciousness of human body which is said by Osho as "Mind is the deadest thing in you and sex is the most alive thing in you." Rosalin's love Portrayed by Shakespeare is the first beat of Romeo's heart; the first awakening call of his soul for which the Indian Sages called "Tamaso Ma Jyotirgamay"

Instead of the love of opposite sex, one more love is portrayed by Shakespeare in the play which is love of Paris for Capulet family. He is a rich and handsome young nobleman wants to marry the 'daughter of Capulet' not Juliet. The same love can be seen in the eyes and mind of Capulet when he accepts the proposal of Paris and invites him to attend the banquet. This love for wealth, reputation, name fame and money is the status-frenzy. This Frenzy of high class people, and love for ritual, customs and status is also a part of Lady Capulet's character who keenly wants that her daughter should marry the Paris because she is already fourteen, an age of compromise; an age at which many girls of Verona normally get married. She then strongly recommends Paris who is a candidate for Juliet's hand. Juliet is not Ibsen's Nora. She has no experience of love. She never came into the contact of any young man. She is perfectly raw girl, knowing nothing about love and marriage. So that she is unable to give a committal reply. These deeds are not life; they are actually fighting against life. It is not for the peace of mind but it is something beyond the peace of mind. It is actually an ego trip. It is the way to satisfy the false notions like 'I am great rich man whose daughter got married with a great rich kinsman' or 'My daughter is happier than other girls in Verona' that is what happened to thousands of rich people so called civilized citizens; moralists, kings and noble men. They just play ego games. Hence, Shakespeare wants to cut the very root of it from the very beginning and teaches life is not an ego game; it is a song to be sung, a dance to be danced.

Conclusion -The theme of love in Romeo and Juliet indicates that love cannot be inhibited or produced; it is not simply the union of truth with pleasure; it is a powerful weapon in the positive-hands to quarrel against the negatives. It is something by which the hypocrite society is always afraid. It continues and covers the heart. It is a continuum. It is over-mastering and all-absorbing. It is not a noun but a verb. It is not a chain or a bond to bind the bodies but an eternal music heals the wounds of souls by its purity and softness.

Both Montague and Capulet are now filled with grief and remorse. They realise the surface and circumference of their quarrel, their false ego problems and think that the death of Romeo and Juliet has given them the true lesson of life. They are not passed, but they reached somewhere deep within themselves. They realised that enough time is already wasted, now they should reconcile. The golden statue of Romeo and Juliet finally teaches the audience that life is more than a game; an ego game, a money game and a game of name and customs. Even if you have everything you desire and the money of the whole world, you will still die as a beggar. You will not be immortal. The wealth, name and fame cannot make you rich; games cannot make you rich or immortal. It is the rays of love that can help you to enter the enlightened kingdom of God. The vitality, the bliss, the harmony, and the beauty of two lovers echo the spiritual truth of their soul, the truth which is universal, beautiful and so called in Indian philosophy 'Satyam Shivam Sundaram'.

References :-

1. G.B. Harison (2005). Shakespeare's Tragedies, Psychology Press. U. S. A.
2. William Shakespeare (2001) Romeo and Juliet Penguin Publishers, U.K.
3. Swami Bodhteerth (1989) Kudlini Jagaran Gita Press Gorakhpur
4. Swami Sukhabodhananda (1995) Bhaj Govindam, jaico Publishing House. Mumbai.

An Analytical Study Of The Theme Of Love In Nicholas Spark's Novels- 'The Notebook' And 'A Walk To Remember'- Two Marvelous Tales On Love, Tragedy, And Positivity

Apurva Upadhyay *

Abstract - Author Nicholas sparks has persuasively presented his literary techniques in the novels "a walk to remember" and "the notebook". Both the tales are surrounded by romance, tragedy, positivity and faith. Based on youthful thoughts and tender love, the novels develop a high emotional flow in readers mind throughout the story. This research paper delineates, with regard to author's ideology, the vital force among those love stories which are tragedy struck and the positive outlook which ultimately is required to cope with such situations.

Introduction - There is hope in dreams, imagination, and in the courage, of those who wish to make those dreams a reality- Jones salk, This quote perfectly depicts the feel of the novel "A walk to remember" by Nicholas sparks. For more than a decade now, sparks has been writing love stories and have been receiving high acclaim in those stories. The status of romantic-fiction writer is undeniable for him. Sparks novels reach readers at a number of different levels, giving them appeal, no matter what their intellectual intent is. "A walk to remember" is amongst such discrete creations of Nicholas sparks which certainly touches hearts of readers, with its passion and fidelity towards love. The relation between the main characters of the story named Jamie and Landon expresses the importance of having faith and positivity in adverse conditions. The theme of novel exhibits the inspiration which one can derive from positive attitude towards life and believing in god.

The story revolves around the peaks and valleys in the relation of Landon, Jamie and their reliance on the love they share. Landon, who is the protagonist in the story, gets frustrated with his life, on knowing of the truth that his beloved Jamie has been diagnosed with leukemia, which would soon result in her demise. He gets shattered and the confidence in pure love and devotion which he has for Jamie is seen to get blur. The thought to fulfill Jamie's dream to get married in a church full of people remains intact though, and he tries to gather some strength in the situation. When Jamie sees Landon struggling of this fact, she gifts him a bible, which develops a ray of hope in Landon.

Despite of critical illness Jamie suffered from, they both loved each other intensely with a positive outlook for life and, this sets the theme of this novel by Nicholas sparks. After reading the bible Landon was more confident with a thought that a positive thing can always come out from unfavorable situations of life, if one is hopeful. He was so propitious towards their relation that despite of Jamie's critical illness he asked her for marriage. Though, for Jamie, this decision was not usual because of uncertainty on her life, but then, the sole power, 'the hope' compels her and she gives the consent to this proposal. Their marriage ceremony is arranged by Landon in a manner which can give immense happiness to his lady love, breaking all the negativity, the confusions, and every other thing which is invaluable in front of true love and hope. As dreamt once by Jamie, they both got married in a church full of people, who witness this emotional event, where despite being on a wheelchair, Jamie decides to walk, and walk in a way which leaves Landon to think of it, in every possible manner as "a walk to remember".

"The notebook" is another of Nicholas sparks novel which is based upon the theme of unconditional and everlasting love, it is a story which has been truly effective in enlighten sparks thoughts on tender as well as mature love. The story starts with a man (Noah) reading from a notebook to his wife (Allie) in flashback, who is suffering from Alzheimer's disease and does not recognize him. It is about the youthful days when the two main characters named Noah and Allie are into love with one another, despite being at odds in socio-economic status. The novel depicts how the affection between the two evolves through meetings and love epistles. A time comes, as in most of the stories, when efforts are made to separate them. Allie's family, who was rich and reputed, was against this bond. Her mother started keeping letters written by Noah for Allie. This was the time when the sweetest of the relation between the two, started scattering. Unfortunately they both got separated. Noah leaves for world war, fulfilling his duty to the nation. Meanwhile, Jamie also tries to move on. Years passed and after a long stretch of time which counted 7 years, Noah returns back to the town. When Allie gets to know this, she decides to pay him a visit. Seeing each other after so long

* Research Scholar (English) Pacific University, Udaipur (Raj.) INDIA

brings on a flood of memories and strong emotions in both of them. After having dinner together they start to talk about the lives of each other and these years which passed. Allie gets to know that Noah was writing her letters constantly but it was her mom who kept them from her.

A feeling of guilt develops within Allie to think that Noah had forgotten her. They decide to meet again the next day and moments at prepossessing sights are shared the other day. While reading this entire story from notebook the man explains that he is also ill, battling a third cancer, and suffering heart disease, kidney failure, and severe arthritis in his hands. Thereafter he starts describing their life with one another, their children, their happiness, their sorrows, and the diagnoses of Alzheimer's to Allie. The man stops reading the notebook at this point, and they both after having the dinner, embrace and talk. But after almost four hours, Allie fades; she forgets who Noah is again. The story continues depicting a scene wherein Noah, after he had a stroke and recovered, goes to Allie's room at night to see her. She remembered who he was, despite the Alzheimer's, and she says that she had missed Noah. Suddenly she could not recognize Noah anymore and nurses had to come for handling the situation. After some days, Noah visits her again; she wakes up recognizing him and tells that she loves him. Some moments of intimacy are shared then and while the story comes to an end they both are shown leading towards a peaceful demise.

These novels perfectly show the ideology of Nicholas sparks towards the way he treats love in his novels, and the moment anyone finishes up reading his stories, a strong emotional drive is felt within. He can certainly be regarded as one of the all-time bestselling authors in the sensitive genre of romance tragedy.

Conclusion - Nicholas sparks novels are the ones flooded with emotions which has an ability to bring audiences to tears, and readers intellect is often left pondering of the positive approach his characters possess in the situations he create in his stories. The conflict in the tales and solving them ultimately with the power of love is sparks signature style. The novels, on which this research paper is based, are also from the same league. The merry in initial days of love, followed by a tragic event and then coping with them by a positive outlook is all what Nicholas sparks novels depict. A critic view on his writing leads to a thought that sparks is too predictable in his stories, but although a similar structure and repetitive themes occur throughout all of Sparks' novels, his use of different literary devices, ranging from symbolism to epistolary, imagery to flashbacks, etc. highlights him as a strong author in his genre.

References :-

Novels -

1. Sparks Nicholas- "A Walk to Remember" publishing year, October 1999.Publisher- Warner books.
2. Sparks Nicholas-"The Notebook" - publishing year, October 1996. Publisher- Warner books.

Movies based on novels -

1. "A Walk to remember" (2002movie)-directed by Adam Shankman, initial release: January 25, 2002 (USA) based on the novel 'A Walk to remember'written by Nicholas Spark.
2. "The Notebook" (2004 movie)-directed by Nick Cassavetes, initial release: June 25, 2004 (Canada) based on the novel 'The Notebook' written by Nicholas Spark.

****

कालिदास कृत ऋतुसंहार में पर्यावरण

डॉ. वेदप्रकाश मिश्र * सिद्धि तिवारी **

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध पत्र में महाकवि कालिदास की प्रथम कृति ऋतुसंहार में पर्यावरण की खोज की गयी है। पर्यावरण शब्द दो शब्दों परि+आवरण से मिलकर बना है। जिसका अर्थ परि (चारो ओर आवरण घेरा अर्थात् हमे चारों ओर से घेरने वाला पर्यावरण ही है।) वर्तमान समय में पर्यावरणीय समस्या समूचे विश्व में विकराल रूप ले रही है, अब इस समस्या की कोई परिधि नहीं रह गई, आज वर्तमान समय में स्वच्छता और पर्यावरण की दृष्टि से एक ऐसा महौल बनाना चाहिए जिससे क्षेत्र की जनता को स्वास्थ्य की दृष्टि से सही तौर पर एक नवीन स्वास्थ्य वर्धक वातावरण निर्मित हो सके। परन्तु समय के बदलाव के साथ-साथ प्रगति के नाम पर अनेक कल कारखाने, फैक्ट्रीयां, पावर प्लांट आदि स्थापित होती चली गई, जिससे औद्योगिक दृष्टि से परिवर्तन ही देखने को मिलता है। पृथ्वी पर नदियों का महत्वपूर्ण योगदान है, जिस प्रकार से शरीर को धमनियां संचालित करती हुई, विकास करती है, उसी प्रकार से नदियां सम्पूर्ण पृथ्वी को हरा-भरा एवं सशक्तशाली एवं समृद्धशाली बनाती है, इनका जलकुण्ड अमृत तुल्य औशधमिश्रित होता है। इनका धार्मिक रूप से बड़ा महत्व है। सम्पूर्ण जड़ चेतन के लिए महाकवि कालिदास ने नदियों (जल), वायु, अग्नि, पर्वत, वन, वृक्ष वनस्पत्तियां, पशुपक्षी, जीव-जन्तुओं की महत्ता को प्रदर्शित करते हुए उनका वर्णन किया है।

प्रस्तावना – 1. वैदिक वाङ्मय में पर्यावरण – संस्कृत साहित्य के वैदिक एवं लौकिक साहित्य में पर्यावरणीय चिन्तन ऋषियों एवं कवियों के द्वारा किया गया है। महाकवि कालिदास ने अपने सम्पूर्ण साहित्य में पर्यावरण को अत्यधिक महत्व प्रदान किया है। लेकिन ऋतु संहार का पर्यावरण एक अनुठा एवं अनुपम है।

प्राचीन संस्कृति वाङ्मय के अध्ययन से यह ज्ञात होता है, हमारे ऋषिमुनियों के लिए मनुष्य एवं पर्यावरण दोनों ही अतिप्राचीन काल से चिन्तन का विशय रहा है। ऋशियों का उद्देश्य बाह्य प्रकृति में प्रविष्ट होकर तथा उससे भी परे परब्रह्म का अनुभव करना था। जब मनुष्य विशुद्धचित्त तथा आनन्द में समवर्तन करे तब 'सत्यम् शिवम् सुन्दरम्' की अनुभूति होती है। इसी अनुभूति की प्राप्ति हमें प्राचीन संस्कृत साहित्य में देखने को मिलती है।

पर्यावरण की दृष्टि से वैदिक साहित्य का अध्ययन करे तो पर्यावरण उभरकर सामने आता है। वैदिक यज्ञ उपासना कर्म का सीधा संबंध पर्यावरण की स्वच्छता से है। अग्नि, पर्जन्य, सोम, मरूत पृथ्वी, उषा, सविता, रात्रि आदि प्राकृतिक शक्तियां वैदिक ऋषियों के प्रमुख उपास्य देवता रहे है। ऐसा प्रतीत होता है कि प्राचीन काल में वैदिक ऋषि इन प्राचीन शक्तियों से परिचित थे, इन्हीं प्रकृतिक शक्तियों को प्रसन्नता एवं अपने सुख-शांति की प्राप्ति के लिए ऋषियों द्वारा वेदों में स्तुतियों का विधान किया गया है। अच्छी तरह से देखे तो पर्जन्य वर्षा के देवता है। वरूण जलो के स्वामी है। सविता प्राणों के संचालक है। सोम औशधियों के स्वामी है। इसी प्रकार पृथ्वी, वायु, अग्नि, रात्रि, उषा आदि सभी वैदिक देवता किसी न किसी रूप में प्राणियों के हितो से संबंधित है। यद्यपि प्राचीन काल में पर्यावरण की कोई समस्या नहीं थी। फिर भी पर्यावरण के संबंध में हमारे वैदिक ऋषियों के चिंतन एवं मनन अत्यंत गुण एवं तथ्यपूर्ण रहा है। पर्यावरण से संबंधित वेदों में कई उदाहरण दिये जा सकते है।

जैसे –

मधुवाता ऋतायते मधुक्षरन्ति सिन्धव:।
माध्वीर्न: संत्वोशधी:।।
मधुनक्तोशसो मधुमत् पार्थिवं रज:।
मधुद्यौरस्तु न: पिता।।
मधुमान्नो वनस्पर्तिमधुमाँ अस्तु सूर्य:।
माध्वीर्गावो भवन्तु न:।। (1)

स्पष्ट है कि जो वायु संचरण कर रही है वह मधुर एवं पवित्र है। नदियां पवित्र है। औषधियां वनस्पति मधुर रस से युक्त हो पृथ्वी भूलोक अथवा सभी लोक प्रसन्न हो सभी जगह प्रसन्नता, निर्मलता एवं स्वच्छता रहे। जगत के सृश्टिकारक तत्व पृथ्वी, जल, वायु, अग्नि और आकाश है। यह तत्व प्राणीमात्र के जीवन के आधारभूत है। यह स्वच्छ रहेंगे, तभी प्राणियों के जीवन का अस्तित्व है और यदि इनको प्रदूषित किया गया तो जीवन का संकट उत्पन्न हो जाएगा। इसलिए ऋषि इनकी पवित्रता तथा शान्ति के लिए प्रार्थना करता है।

'द्यौ: शान्तिरन्तरिक्षं शन्ति:
पृथिवी शान्तिराप: शान्तिरोशधय: शान्ति:।
वनस्पतय: शान्तिर्विरवे देवा: शान्तिब्रह्म शान्ति:।
सर्व शान्तिरेव शान्ति: सामा शान्तिरेधि (2)

भूमि, जल, वायु, अग्नि और आकाश यह पांच तत्व प्राकृतिक है इनके संरक्षण के लिए वेदों मे भी वर्णन मिलता है। यजुर्वेद में ऋषि कहता है, कि मन की पवित्रता से ही सब कुछ पवित्र हो सकता है, इसलिए मन को शिवसंकल्प स्वरूप होना चाहिए –

जैसे –

'तन्मे मन: शिवसंकल्पमस्तु'।।3।।

इसी प्रकार अथर्ववेद में भी कहा गया है, कि

'माताभूमि: पुत्रो अहं पृथिव्या:' ।।4।।

ऋषि प्रार्थना करता है कि पृथ्वी माता है, हम सब उसके पुत्र है, इसलिए हम सभी को उनकी पवित्रता एवं संरक्षण का कार्य करना चाहिए।

2. ऋतु संहार में पर्यावरण – महाकवि कालिदास प्रकृति के कवि माने जाते है। उनकी उपमाएं प्राकृतिक है, कालिदास जैसा प्रकृति का वर्णन एवं

* एसोशिएट प्रोफेसर (संस्कृत) डॉ. सी. वी. रमन् विश्वविद्यालय, करगी रोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत
** शोधार्थी (संस्कृत) डॉ. सी. वी. रमन् विश्वविद्यालय, करगी रोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

पर्यावरण संरक्षण संस्कृत के अन्य कविओं में नहीं मिलता। मानवीय संवेदना एवं चेष्टाओं से ओत-प्रोत कालिदास का साहित्य वास्वत में प्रकृति एवं पर्यावरण का सजीव चित्र प्रस्तुत करता है। उन्होंने अपने गीतिकाव्य, ऋतुसंहार में पर्यावरणीय चिंतन का अनोखा चित्र प्रस्तुत किया है। अत: महाकवि कालीदास के ऋतुसंहार में पर्यावरण का स्वरूप इस प्रकार दृष्टव्य है।

जैसे - 1. नदी 2. वन 3. वृक्ष 4. पर्वत 5. ऋतुएँ आदि।

1. नदी - महाकवि कालिदास ने अपनी कृति ऋतुसंहार में नदी के सौन्दर्य का वर्णन इस प्रकार किया है -

'कारण्डवाननविघट्टितवीचिमाला: कादम्बसारसचया कुलतीरदेश:।
कुर्वन्ति हंसविरूतै: परितो जनस्य प्रीतिं सरोरूहर जो
रूणितास्तास्तटिन्य:' ॥5॥

महाकवि कालिदास ने यहॉ शरतकाल में होने वाली नदी की स्वाभाविक शोभा का चमत्कारिक ढंग से वर्णन करते हुए कहते है, कि कारण्डव नामक पक्षी नदियों के लहरों में अपने खाद्य पदार्थ मत्स्य आदि को प्राप्त करने के लिए बहती हुई नदी में डुबकी मारते है। इससे नदियों की लहरें टूटती रहती है। अतएव उन पक्षियों से नदी का तट हमेशा भरा पूरा रहता है। खिले हुए कमलों के लाल-लाल पराग से नदियों का जल भी लाल-लाल हो जाता है। उसे देखकर हंस पक्षी कलरव करते रहते हैं इस प्रकार की नदियॉ दर्शक के मन में एक विशेष प्रकार का आनन्द उत्पन्न करती है।

आगे भी नदियों का वर्णन रमणियों के समान एक रूपक के माध्यम से प्रस्तुत करते है।

'चञ्चन्मनोज्ञशफरीर शनाकलापा: पर्यन्तसंस्थित सिताण्डजपंक्ति
हारा:।
नद्यो विशालपुलिनान्तनितम्ब बिम्बामन्दं प्रयान्ति समदा: प्रमदा
इवाद्य ॥6॥

अर्थात- जिस तरह रमणियॉ अपने कमर में चमकती हुई चन्चल करधनी धारण करती हैं, उसी तरह नदी रूपी नायिका भी चमकती हुई चन्चल मछलियॉ ही करधनी का काम करती हैं, रमणियॉ जिस प्रकार सफेद मोतियों का हार धारण करती हैं, उसी प्रकार नदी रूपी नायिका भी अपने सन्निकट में बैंठी हुई सफेद पक्षियों की पंक्ति रूपी हार को धारण करती है। रमणियों का नितम्ब जिस तरह मोहित करता है उसी प्रकार नदी के भी विस्तृत नितम्बबिम्ब का काम उनका विस्तृत पुलिनान्त करता है। इस तरह से नदी नायिका और रमणियों में स्मगरूपक के माध्यम से साम्य निर्देश महाकवि ने किया है। यहॉ कालिदास ने नदी को नायिका की भॉति प्रस्तुत किया है। नदी में महाकवि की मानवीय संवेदना दिखाई पड़ती है। जिस प्रकार से नायिका के आभूषण रूप का वर्णन किया है, उसी प्रकार नदी रूपी नायिका का वर्णन कर प्रकृति के प्रति प्रेम प्रकट होता है।

2. वन - महाकवि कालिदास ने ऋतुसंहार में वनों के विभिन्न रूपों एवं तपोवन की पर्यावरणीय विशेषताओं का चित्रण इस प्रकार किया है-

'कदम्बसर्जार्जुनकेतकीवनं विकम्पयंस्तत्कुसुमाधि वासित:।
ससीकराम्भोधरसगशीतल: समीरण: कं न करोति सोत्सुकम्' ॥7॥

प्रस्तुत श्लोक में महाकवि वर्षा ऋतु में विध्यांचल वनों के विभिन्न वृक्षों से शीतल वायु चल रही है। यह वायु कदम्ब, साल, अर्जुन तथा केतकी के वनों को कंपाने वाला उस वन के पुष्पों की सुगंधि से सुगंधित जल भरे बादलों के संसर्ग से शीतल यह वायु ठण्डी हो गयी है। अर्थात् यह किसके मन उत्कण्ठा नहीं उत्पन्न करती है।

इसी प्रकार कालिदास वर्षा ऋतु के वर्णन के प्रसंग में वनान्त का वर्णन करते हुए कहते है, कि

'मुदित इव कदम्बैर्जातपुश्पै: समन्तात्
पवन चलित शाखै: शाखिभिर्नृत्यतीव।
हसित मिव विधत्ते सूचिभि: केतकीनां।।
नवसिलिल निषेका छिन्नतापो वनान्त:'॥8॥

ग्रीष्म ऋतु के दिनों में प्रचण्ड धूप से वनान्त संतप्त हो गया था, किन्तु वर्शा ऋतु में वह वर्षा के जल से सींचित हो गया है। उसका ताप समाप्त हो गया है। जिस तरह सन्ताप रहित मनुष्य अत्यधिक प्रसन्न हो जाता है, हंसता है और नाचने लगता है, उसी प्रकार वर्षा ऋतु में वन भी विकसित कदम्ब पुष्पों के माध्यम से मानों प्रसन्नता को प्रकट कर रहे है, मन्द-मन्द चलने वाली वायु के झोकों से जिनकी डालियॉ झूम रही है, ऐसा लग रहा है मानों वृक्षों के माध्यम से वह नाच रहा है, तथा केतकी के वृक्षों की कलियों के माध्यम से मानों वह हॅस रहा है, इस तरह महाकवि ने यहॉ मानवीकरण का आरोप किया है। साथ ही उन्होंने यह भी सूचित किया है, कि बरसात में कदम्ब पुष्प खिल जाते हैं और केवड़ा के फूल भी निकलने लग जाते है।

3. वृक्ष- वनस्पतियॉ - वृक्ष- कालिदास ने अपनी गीति काव्य ऋतुसंहार में विभिन्न प्रकार के वृक्षों जैसे पलाश, कंकेली, अशोक, वनस्पतियॉ आदि का वृहद चित्रण इस प्रकार प्रस्तुत किया है।

पलाश वृक्ष -

'आदीप्तवहिनसदृषैर्मरूतावधूतै: सर्वत्र किंशुकवनै: कुसुमावनम्रै:।
सघो वसन्तसमयेन हि समाचितेयं रक्तांशुका नववधूरिव भाति
भूमि:'॥9॥

पलास वृक्ष के वर्णन में कवि कहते हैं कि -बसन्त ऋतु में पलाश के वन विकसित हो गये है। उनके फूलों की शोभा पूर्ण रूप से प्रज्वलित अग्नि के समान लाल-लाल है, पलाश पुष्पों से परिपूर्ण यह पृथ्वी इस तरह दिखाई दे रही है, जिस तरह से कोई लाल वस्त्रों को पहने हुई नयी नवेली वधू मनोहर प्रतीत होती है।

कुरूबक वृक्ष - महाकवि कालिदास ने ऋतुराज बसन्त का वर्णन करते हुए कुरूबक वृक्ष के विषय में इस प्रकार वर्णन किया है:-

'कान्तामुखद्युतिजुषायपि चोद्भतानां शोभां परां
कुरबकद्रुममञ्जरीणाम्।
दृष्टवा प्रिये सहृदयस्य भवेन्न कस्य कंदर्प बाणपतनव्यथितं हि
चेत:'॥10॥

यहॉ कुरूबक वृक्ष की मंजरियां निकल आयी है, उनकी शोभा प्रियतमा के मुख की शोभा के समान गौर वर्ण की है, उन मंजरियों को देखकर सहृदयों के अन्त: करण में काम के आवेग का संचार हो जाता है। और काम के बाणों के लगने से उनका अन्त:करण व्यथित हो जाता है, अर्थात् सुन्दरियों के मुख के शोभा की समान षोभा वाले उगी हुई मंजरियों से युक्त कुरूबक वृक्ष की शोभा को देखकर किस सहृदय पुरूष का अन्त:करण काम के बाणों के लगने से व्यथित नहीं होता।

अशोक वृक्ष - अशोक वृक्ष का प्रयोग औषधि के रूप में प्राचीन काल से किया जाता रहा है, अत: अशोक वृक्ष वातावरण को शुद्ध एवं स्वस्थ रखने में सहायक है, जिसका वर्णन कालिदास के द्धारा ऋतुसंहार में इस प्रकार से किया गया है-

'आमूलतो विद्रुमरागताम्रं सपल्लवा: पुष्पचयं दधाना:।
कुर्वन्त्यशोका हृदयं सशोकं निरीक्ष्यमाणा नवयौवनानाम्'॥11॥

यहॉ महाकवि बसन्त ऋतुओं के वैभव का वर्णन करते हुए कहते है, कि इस ऋतु में अशोक के वृक्षों में मूँगे की लालिमा के समान लाल-लाल पुष्प एवं पल्लव निकल आए है, वे आमूल चूड़ विकसित एवं पल्लवित हो गए है। इस

वृक्षों को देखकर प्राय: सब लोगों के मन में प्रसन्नता उत्पन्न होती है, किन्तु वे युक्तियां जिनके प्रियतम उनके पास नहीं है, पोषित पतिका है, वे उन अशोक वृक्षों को देखकर दु:खी हो जाती है, उनका मन शोक से भर जाता है। अशोक वृक्ष का वर्णन रामायण में भी आदि कवि बाल्मीकी ने किया है।

वनस्पतियॉ – वृक्षों के वर्णन के बाद महाकवि कालिदास वनस्पतियों का वर्णन बखूबी करते है। जो इस प्रकार है–

'श्यामलता: कुसमुमभारनतप्रबाला: स्त्रीणां हरन्ति धृतभूषणबाहुकान्तिम्।
दन्तावभासविषदस्मितचन्द्रकान्तिं कङ्केलिपुश्परूचिरा नवमालती च'॥12॥

शरद ऋतु में श्यामलता विकसित हो गयी है उसके फूलों के भार से उसके पल्लव भी झुक गए है, कंकेली के फूल भी खिले हुए है, उनके साथ खिलि हुई सफेद पुष्पों से लदी हुई मालती लता की शोभा अत्यन्त रमणीय हो गयी है, अनेको प्रकार के आभूषणों से अलंकृत रमणी की भुजा वाले भुजलता जिस प्रकार मनोहारिणी होती है, उसी तरह से श्यामलता की शोभा भी अत्यन्त मनमोहक है, जिस तरह से उजले दॉतों की शोभा से मनोज्ञ तथा मुस्कान मनोहर रमणी के रक्त होठों की शोभा होती है। उसी तरह से कंकेली के सफेद पुष्पों से मनोहर रक्त पुष्पों वाली मालती लता भी अत्यन्त मनोहर लगती है, अर्थात् फूलों के भार से झुके हुये पल्लवों वाली श्यामलता आभूषणों से समलकृत रमणी की भुजाओं की शोभा को चुरा ले रही है। खिले हुये कंकेली के पुष्पों की शोभा से मनोहर नव मालती लता दॉतों की चमक से युक्त तथा मन्द मुस्कान भरे रमणियों के मुखचन्द्र की शोभा को तिरस्कृत कर रही है।

4. पर्वत – इसी प्रकार कालिदास विन्ध्यपर्वत के प्रसंग में कहते है, कि

'नानामनोज्ञ कुसुम द्रुमभूशितान्तान्हृष्टान्य पुश्टनिनदाकुलसानुदेशान्।
शैलेय जालपरिणद्धशिलातलान्तानदृष्टवा जन क्षितिभृतो मुदमेति सर्व:'॥13॥

अर्थात्– यहॉ महाकवि पर्वतों का वर्णन करते हुए कहते है, कि पर्वतों के प्रान्त भाग अनेक प्रकार के मनोहर फूलों के वृक्षों से समलंकृत है, बसन्त ऋतु के आनें से प्रसन्न रहने वाली कोयलों की मधुर ध्वनि से जिनके शिखर व्याप्त है, तथा मैनशिल के जाल से जिनके पाषाणतल व्याप्त है, उन पर्वतों को देखकर लोगों का मन प्रसन्न हो जाता है, यहॉ महाकवि ने पर्वतों की तीन विशेषताओं का उल्लेख किया है।

1. पर्वतों के प्रान्त भाग अनेक प्रकार के सुन्दर पुष्पों के वृक्षों से सुशोभित है।
2. उन पुष्प वृक्षों पर रहने वाली कोयलों की मधुर ध्वनि से पर्वतों के शिखर गुञ्जित हो रहे है।
3. मैनशिल के जाल से उन पर्वतों के पाषाणतल परिव्याप्य है। इस प्रकार के पर्वतों का अवलोकन बड़ा ही आनन्दप्रद होता है। अर्थात् इस तरह के पर्वतों को देखकर सब लोग प्रसन्न होते है।

5. ऋतु – महाकवि कालिदास ने ऋतुसंहार में षड् ऋतुओं का प्राकृतिक स्वरूपों का वर्णन इस प्रकार से किया है–

1. ग्रीष्म ऋतु –

'गजगवयमृगेन्द्रा वह्निसन्तप्तदेहा:
सहृद इव समेता द्वन्द्व भावं विहाय।
हुतवह परिरवेदादाशु निर्गत्य कक्षा॥
द्विपुलपुलिन देशाम्निम्नगां संविशन्ति॥14॥

यहॉ महाकवि कालिदास नायक के माध्यम से नायिका से कह रहा है, कि ग्रीष्म ऋतु में जब आग लग जाती है, तो वन के सभी जीव–जन्तु अत्यधिक व्याकुल हो जाते है, वे अपने स्वाभाविक बैर–भाव को भूल जाते है, उन्हें एकमात्र चिन्ता होती है, तो पानी की कहॉ पानी मिले कि अपने शरीर का सन्ताप मिटाया जाय। वन के हाथी, नीलगाय, शेर, सभी एक साथ मिलकर बैठते है, और शीतलता की खोज में नदी के किनारे से उतरकर नदी में प्रवेश करते है, आपस में एक–दूसरे को कोई नहीं सताता है, जिस प्रकार किसी प्रभाव सम्पन्न राजा के राज्य में राजाज्ञा के उल्लंघन के भय से कोई भी किसी दूसरे को नहीं सताता है, सभी एक दूसरे से परस्पर स्नेह करते है, उसी तरह से यहॉ ग्रीष्म ऋतु रूपी राजा का इतना प्रभाव है, कि सभी छोटे–बड़े जीव–जन्तु अपने परस्पर स्वभावगत बैर भाव को भूल गए है।

अर्थात् कहने का तात्पर्य यह है, कि दावानल से संतप्त शरीर वाले हाथी, नीलगाय और सिंह अपने परस्पर बैर भाव को त्यागकर मित्र के समान एक साथ नदी के पाट से नदी में प्रवेश करते है।

2. वर्षा ऋतु–

'बहुगुणरमणीय: कामिनी चित्तहारी
तरूविटपलतानां बान्धवो निर्विकार:।
जलदसमय एश: प्राणिनां प्राणभूतो॥
दिशतु तव हितानि प्रायशो वाञ्छितानि'॥15॥

प्रस्तुत श्लोक में महाकवि वर्षा ऋतु का वर्णन करते हुए कहते है, कि वर्षा ऋतु के जो गुण बताये गये है, उन समस्त गुणों से सम्पन्न होने कारण यह ऋतु अत्यन्त मनोहर लगती है, अपने गणों से युक्त होने के कारण ही सुन्दरियों के चित्त को चुरा लेता है। यह पेड़–पौधे, लता आदि स्थावरों के लिए तो स्वभाविक रूप से बान्धव है, बिना किसी कारण के जल प्रदान करके यह उनका उपकार किया करता है, समस्त प्राणियों को जल प्रदान करने के कारण यह सभी के प्राणस्वरूप है, जल ही प्राणों को आप्यायित करता है, जल के बिना किसी भी प्राणी के लिए प्राणधारण करना असम्भव है, इस प्रकार का यह समय सभी के लिए कल्याणप्रद है।

3. शरद ऋतु–

'काशांशुका विकच पद्म मनोज्ञवक्त्ता
सोन्मादहंसरवनू पुरनादरम्या।
आपक्वशालि रूचिरा नतगात्रयश्टि:
प्राप्ता शरन्नववधूरिव रूपरम्या॥16॥

अर्थात्– महाकवि ने शरद ऋतु का अत्यन्त सुन्दरी के रूप में एक रूपक के माध्यम से वर्णन किया है, वे कहते है, कि शरद नायिका का कमल समूह ही मनोहर मुखमण्डल है, खेतों में पककर पीले और कृष धान के समान उनका गौर वर्ण का दुबला पतला शरीर है तथा उन्मत्त हंसों का कलरव ही उसकी मधुर मज्जीर ध्वनि के समान है। इस तरह ही इस शरद नायिका का सौन्दर्य उपभोगार्ह है।

यहॉ महाकवि कालिदास यह बताना चाहते है, कि शरद ऋतु में कास खिल जाते है, सरोवरों में लाल कमल विकसित हो जाते है, हंस सभी जगह कलरव करने लगते है, तथा खेतों में धान की फसल पककर कृष हो जाती है। महाकवि शरद नायिका को मनमोहक स्वरूप का वर्णन आगे करते हुए कहते है, कि

'विकचकमलवक्त्रा फुल्लनीलोत्पलाक्षी
विकसित नवकांश श्वेतवासो वसाना।
कुमुदरूचिरकान्ति: कामिनीवोन्मदेय:
प्रतिदिशतु शरद्धश्चेतस: प्रीतिमग्र्याम्'॥17॥

इस श्लोक के माध्यम से महाकवि शरदऋतु का एक कामोन्माद सम्पन्न नायिका के रूप में वर्णन करते है, शरद ऋतु में विकसित लाल कमल ही इस नायिका का मुखमण्डल है। खिले हुए नीलकमल ही इस नायिका के नीले-नीले मनमोहक नेत्र है। सर्वत्र खिले हुए नये-नये काश की ही शरद नायिका के शुभ्र वस्त्र है। उस वस्त्र में लिपटी हुई शरद नायिका की उसी तरह मनोहर कान्ति लगती है, जैसे कुमुदनी की उजली-उजली कान्ति होती है। इस प्रकार यह शरद नायिका आप सभी को उत्तम स्नेह प्रदान करें।

4. हेमन्त ऋतु -

'नवप्रवालोद्गम सस्यरम्य: प्रफुल्ललोध्र: परिपक्वशालि:।
विलीनपद्म: प्रपततुशारो हेमन्त काल: समुपागतोऽयम्'॥18॥

इस श्लोक के माध्यम से महाकवि हेमन्त ऋतु का वर्णन करते हुए कहते है, कि इस ऋतु में गेंहूँ आदि अनाजों के अंकुर निकल आने से खेती सुन्दर लगने लग गयी है। वनों में लोध्र के पीले पुष्प खिल गए है, खेतों में धान पके हुए है। इस ऋतु में ओस अधिक पड़ने लग गयी है, अतएव अब सरोवरों में कमल के फूल नहीं खिल रहे है, ओस (ठण्ड) के कारण वे नष्ट हो गए है। शरद ऋतु के बीत जाने से इस हेमन्त ऋतु का आगमन हो गया है।

हेमन्त ऋतु का आगे वर्णन करते हुए महाकवि कहते है, कि

'बहुगुण रमणीयो योशितां चित्तहारी
परिणतबहुशालि व्याकुल ग्राम सीम:।
सततमति मनोज्ञ: क्रोच्चमाला परीत:
प्रदिशु हिमयुक्त: काल एश: सुखं व: '॥19॥

अर्थात् अनेक गुणों से युक्त होने के कारण मनोहर रमणियों के चित्त को आकर्षित करने वाला पके हुए धानों से गॉवों की सीमाएँ परिपूर्ण हो गयी है, हमेशा अच्छे लगने वाले कौच्च पक्षियों से परिपूर्ण यह समय आप सभी को आनन्द प्रदान करें।

5. शिशिर ऋतु -

'प्ररूढशालीक्षुचयावृताक्षितिं क्वचित्स्थितक्रौच्चनिनादराजितम्।
प्रकामकामं प्रमदाजनप्रियं वरोरू कालं शिशिराहयं शृणु'॥20॥

महाकवि इस श्लोक में शिशिर ऋतु का वर्णन करते हुए इस ऋतु की तीन विशेषताओं को उपन्यरत करते है।

1. इस ऋतु में धान पक जाते है, अतएव धानों की शोभा से यह ऋतु भरी हुई है।
2. जलाशयों के समीप बैठे हुए कौच्च पक्षी कलरव कर रहे है, जो इस ऋतु की शोभा और बढ़ा देता है।
3. इस ऋतु में काम वेग बढ़ जाता है, अतएव यह ऋतु रमणियों के लिए अत्यन्त प्रिय है।

शिशिर ऋतु का आगे वर्णन करते हुए महाकवि बतलाते है कि,

'प्रचुरगुडविकार: स्वादु शाली क्षुरम्य:
प्रबलसुरत केलिर्जातकंदर्पदर्प:।
प्रियजन रहितानां चित्तसंतापहेतु%
शिशिर समय एश श्रेयसे वोडस्तुनित्यम्'॥21॥

महाकवि कहते है, कि शिशिर ऋतु में अनेक प्रकार के गुड के विकार उत्पन्न हो जाते है। यह ऋतु स्वाद युक्त धान तथा गन्ने से मनोहर लगता है। इस ऋतु में काम आवेग अत्यधिक बढ़ जाता है, जिस लोगों के सन्निकट उनके प्रियजन नही है, इस ऋतु में उनके मन में सन्ताप उत्पन्न हो जाता है। अतएव वियोगियों के लिए यह ऋतु कष्टप्रद है। कवि के कहने का तात्पर्य है, कि यह शिशिर ऋतु आप सभी का कल्याण करें।

6. बसन्त ऋतु -

'प्रफुल्लच्ताडकुरतीक्ष्णसायको: द्विरेफमालाविलसद्धनुर्गुण:।
मनांसि भेतुं सुरतप्रसङ्गिनां बसन्तयोद्धा समुपागत: प्रिये ॥22॥

यहॉ महाकवि बसन्त ऋतु का वर्णन एक योद्धा के रूप में करते हुए कहते है, कि इस बसन्त रूपी योद्धा के खिलि हुई आम्र मज्जरी ही तीक्ष्ण बाण है। भ्रमर पंक्ति ही उनके धनुष की प्रत्यञ्चा है। वह काम क्रीडा में आसक्ति रखने वाले लोगों के मन का वेधन करने के लिए आ गया है। यहॉ महाकवि के कहनें का तात्पर्य यह है, कि बसन्त रूपी योद्धा कमियों के मन का वेधन करने के लिए आ गया है।

अत: उपर्यक्त विवेचन से स्पश्ट है कि ऋतुसंहार का पर्यावरण संक्षरण के विकास में महत्वपूर्ण योगदान है। जो पर्यावरण प्रदुषण के रोकथाम में सहारा सिद्ध होगा इसमें महाकवि कालिदास ने जो पर्यावरण में विभिन्न स्वरूपों का चित्रण वृहद ढंग से प्रस्तुत किया है, वह मानव और पर्यावरण के प्राचीन एवं उदात्त संबंधों का परिचायक है क्योंकि मनुष्य और प्रकृति एक दूसरे के अभिन्न अंग है, अत: महाकवि के पर्यावरण का चित्रण वैज्ञानिक तथ्यों के अनुरूप है। ऋतुसंहार प्रकृति चित्रण का अनोखा गीतिकाव्य है। सम्पूर्ण काव्य में ऋतुओं का वर्णन किया गया है। इसमें महाकवि कालिदास ने नदी, वन, वृक्ष वनस्पति, ऋतुएं इत्यादि पर्वतों व वनस्पत्तियों के सौन्दर्य वर्णन के क्रम में प्रकृति का चित्र अंकित किया है। ऋतु संहार के माध्यम से महाकवि पर्यावरण के संरक्षण एवं रख रखाव व पर्यावरण प्रदूषण से होने वाली भयावह समस्या से अवगत कराकर वैज्ञानिक तथ्यों को उजागर करने में सफल रहा है। इस शोध पत्र में यह बताया गया है कि मानव का पर्यावरण से संबंध प्राचीन काल से है। यह शोध पत्र सभी संकायों एवं पर्यावरण अध्ययन आदि के लिए उपयोगी तथा लोगो के लिए लाभदायी है। ऋतुसंहार पर्यावरण के प्रति जागरूकता लाने में प्रयासरत रहेगा। यही इसका प्रमुख उद्देश्य है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. यजुर्वेद - 13/27, 28
2. यजुर्वेद - 36/9
3. यजुर्वेद - 36/1
4. अर्थर्ववेद - 12/1/12
5. ऋतुसंहार -तृतीय सर्ग का 8 श्लोक
6. ऋतुसंहार तृतीय सर्ग का 3 श्लोक
7. ऋतुसंहार द्वितीय सर्ग का 17 श्लोक
8. ऋतुसंहार द्वितीय सर्ग का 24 श्लोक
9. ऋतुसंहार षष्ठ सर्ग का 21 श्लोक
10. ऋतुसंहार षष्ठ सर्ग का 20 श्लोक
11. ऋतुसंहार षष्ठ सर्ग का 18 श्लोक
12. ऋतुसंहार तृतीय सर्ग का 18 श्लोक
13. ऋतुसंहार षष्ठ सर्ग का 27 श्लोक
14. ऋतुसंहार प्रथम सर्ग का 27 श्लोक
15. ऋतुसंहार द्वितीय सर्ग का 29 श्लोक
16. ऋतुसंहार तृतीय सर्ग का 1 श्लोक
17. ऋतुसंहार तृतीय सर्ग का 28 श्लोक
18. ऋतुसंहार चतुर्थ सर्ग का 1 श्लोक
19. ऋतुसंहार चतुर्थ सर्ग का 19 श्लोक
20. ऋतुसंहार पंञ्चम सर्ग का 1 श्लोक
21. ऋतुसंहार पंञ्चम सर्ग का 16 श्लोक
22. ऋतुसंहार षष्ठ सर्ग का 1 श्लोक

वेणीसंहार में त्रासदीय तत्त्वों का अरस्तू विषयक दृष्टिकोण

एकता चौधरी *

प्रस्तावना – वेणीसंहार भट्टनारायण (सातवीं शताब्दी उत्तरार्ध) द्वारा रचित युद्ध कथानक पर आधारित वीर-रस प्रधान नाटक है। द्रौपदी के केश-संवरण इस नाटक की मुख्य घटना है कौरवों की द्यूत सभा में दु:शासन एवं दुर्योधन के द्वारा द्रौपदी के अपमान से विक्षुब्ध होकर भीम ने यह प्रतिज्ञा की थी कि वह युद्ध में दु:शासन का वक्ष:स्थल चीरकर उसका रक्तपान करेगा तथा दुर्योधन की जंघा को विदीर्ण करके रक्त-रंजित हाथों से द्रौपदी के खुले हुए केशों को बाँधेगा। नाटक के आरम्भ से ही भीम की रोषपूर्ण उक्तियाँ युद्ध और विनाश की सम्भावनाओं को प्रस्तुत करती हुई नाटक में त्रासदीय स्थिति की उद्भावना करती हैं।

मथ्नामि कौरवशतं समरे न कोपाद्
दु:शासनस्य रूधिरं न पिबाम्युरस्त:।
संचूर्णयामि गदया न सुयोधनोरू
सन्धिं करोतु भवतां नृपति: पणेन।।[1]

'त्रासदी' शब्द का प्रयोग सर्वप्रथम, अरस्तू द्वारा किया गया था उनका कहना था कि त्रासदी ऐसे कार्यव्यापार की अनुकृति को कहते हैं जो गम्भीर, स्वत:पूर्ण तथा कुछ निश्चित आयाम से युक्त हो। जिसका माध्यम नाटक के विभिन्न भागों में भिन्न-भिन्न रूप में प्रयुक्त सभी प्रकार के आभूषणों से अलंकृत भाषा हो, तथा जो आख्यान के रूप में न होकर कार्यव्यापार के रूप में हो, जो करूणा और भय उद्बुद्ध कर मनोभावों का उचित विवेचन कर सके।[2]

मानव-मन अनेक मनोविकारों से आक्रान्त रहता है। जिसमें करूणा और भय दो मनोवेग मूलत: दु:खद है। त्रासदी मानव जीवन के दिन-प्रतिदिन के कार्य-व्यापार अथवा सुख-दु:ख के अनुकरण रूप में है जिसमें भाषा, लय, संगीत, शैली आदि तत्त्व सम्मिलित हैं ।

अरस्तू ने ' त्रासदी के छ: अंग बताये हैं – कथानक, चरित्र-चित्रण, पद-रचना, विचार-तत्व, दृश्य विधान, गीता। इस शोध-पत्र के माध्यम से वेणीसंहार में कथानक तत्व को प्रस्तुत किया जायेगा।

कथानक एक महत्त्वपूर्ण अंग होता है। जिसे कवि भाषा के माध्यम से प्रस्तुत करता है। त्रासदी-रचना में भी सर्वप्रथम तत्त्व 'कथावस्तु' या 'विषय' ही है, जो गम्भीरता से भव्य भाषा में अभिव्यक्ति पाता है। कथावस्तु ही कार्य-व्यापार को प्रेरित करती है अंग्रेजी का Drama शब्द यूनानी के Dram शब्द कार्य-व्यापार से पुष्ट होता है। बिना कार्य-व्यापार (Action) के कोई नाटक अभिनीत नहीं होता। सम्पूर्ण त्रासदी-रचना प्रमुख कार्य-व्यापार का अनुकरण करती हुई प्रभावी होती है और चरित्र भी उस महत्त्वपूर्ण कार्य को प्रस्तुत करते हैं। कथानक कहानी-मात्र नहीं होता, वरन् सम्पूर्ण त्रासदी-रचना की आत्मा होती है।[3] वह व्यक्ति का अनुकरण न करके कार्य और जीवन का अनुकरण था अनुकीर्तन करती है, जीवन से जुड़े होने के कारण ही कार्य-व्यापार का महत्त्व है। मानव जिस उद्देश्य के लिये जीता है और जिस माध्यम से जीता है वह जीवन का कार्य-व्यापार ही है। अत: उद्देश्य कोई गुण विशेष नहीं है। व्यक्ति के गुणों का निर्धारण चरित्र से होता है और चरित्र का मूल्यांकन कार्य-व्यापर से। कार्य-व्यापार से ही वह सुखी व दु:खी होता है। अत: चरित्र कार्य-व्यापार का निर्मित फल है त्रासदी कार्य-व्यापार के बिना सम्भव नहीं है, जबकि चरित्र-चित्रण के बिना उसकी सफलता सम्भव है। अत: कथानक मुख्य तत्त्व है।

कथानक का आधार – अरस्तू ने तीन प्रकार के कथानक का संकेत दिया है-

1. दन्तकथा-मूलक, 2. कल्पना-मूलक, 3. इतिहास मूलक।

1. दन्तकथा मूलक – दन्तकथाओं में सत्य और कल्पना दोनों का सुन्दर समन्वय होता है सत्य अपनी विश्वसनीयता के कारण और कल्पना अपनी सम्भव्यता के कारण काव्य-गुण की श्री वृद्धि करती है।

2. कल्पना-मूलक – यह कल्पना पर आधारित होते है। इसमें घटना और नाम दोनों काल्पनिक होते है।

3. इतिहास-मूलक – इसमें कथानक इतिहास प्रसिद्ध होता है। कोई ऐसी घटना नहीं होती जो वास्तव में घटी न हों।

वेणीसंहार नाटक दन्तकथा मूलक प्रतीत होता है क्योंकि इसमें भट्ट नारायण ने ऐतिहासिक घटना के साथ-साथ अपनी कल्पनाओं को भी इधर-उधर बिखेर कर कथानक की सुन्दरता को बढ़ा दिया है। जो कथानक में अनेक स्थानों पर देखने को मिलती है। जैसे- नाटक के शुरू में ही भीम क्रुद्ध होकर नेपथ्य से दुर्योधन के कुकृत्यों की चर्चा करता है।[4] जबकि महाभारत में इन कुकृत्यों की चर्चा भीमसेन दुर्योधन को मारने के समय करता है।[5] महाभारत में दु:शासन के द्वारा भीमसेन के लिए (गौ:) शब्द का प्रयोग किया गया है।[6] जबकि वेणीसंहार नाटक में दुर्योधन की उक्ति से ऐसा प्रतीत होता है कि द्रौपदी ने ही स्वयं को (गौ:) की संज्ञा दी है।[7] इसी प्रकार पाँचवें अंक में भी बन्धु-बान्धव के मारे जाने के उपरान्त दुर्योधन के माता-पिता धृतराष्ट्र और गान्धारी उसे सन्धि की सलाह देने आते है।[8] जबकि महाभारत में कृपाचार्य दुर्योधन को ऐसी सलाह देते है।[9] इन उदाहरणोसे ऐसा प्रतीत होता है कि वेणीसंहार दन्तकथा-मूलक है। जिसे लेखक ने कल्पना से संजोया है।

कथानक के आयाम – अरस्तू के अनुसार उचित आयाम से अभिप्राय ऐसे आकार से है जिसे दृष्टि एक साथ समग्ररूप में ग्रहण कर सके।[10] स्पष्ट शब्दों में, कथानक का विस्तार ऐसा हो जो सरलता से स्मृति में धारण किया जा सके- न इतना सूक्ष्म हो कि व्यक्ति के मन में उसका स्वरूप स्पष्ट न हो पाये और न इतना विस्तृत हो कि व्यक्ति का मन उसे समग्र रूप से ग्रहण न कर पाये।

* शोधार्थी (संस्कृत) वनस्थली विद्यापीठ (राज.) भारत

कथावस्तु के मूल गुण

1. एकान्विति – एकान्विति के सम्बन्ध में अरस्तू का अभिप्राय ऐसे कथानक से है जो कार्य का एक्य हो, अर्थात् कथानक ऐसा हो यदि उसका कोई अंग इधर–उधर हो जाये, तो सम्पूर्ण कथानक ही छिन्न–भिन्न हो जाये।[11] भारतीय नाट्यशास्त्र में एकान्विति पंचसंन्धियों पंचअवस्थाओं के रूप में दृष्टिगोचर होती है। क्योंकि इनके माध्यम से ही कथानक के अंग एक सूत्र में बंधे रहते हैं।

विश्वनाथ ने सन्धियों का लक्षण देते हुए कहा है कि एक प्रयोजन में अन्वित अर्थो के अवान्तर सम्बन्ध को सन्धि कहते है।[12] ये सन्धियाँ अवस्थाओं और अर्थप्रकृति के सम्बन्ध से उत्पन्न होती है।[13] इन्होंने पाँच सन्धियामानी है। मुख, प्रतिमुख, गर्भ, विमर्श और निर्वहण। कथावस्तु का एकान्विति गुण वेणीसंहार में स्पष्ट रूप से परिलक्षित होता है। क्योंकि इसमें सन्धियों, और अवस्थाओं का उचित रूप से प्रयोग किया गया है।

वेणीसंहार के प्रथम अंक में श्रीकृष्ण के अपमान से युधिष्ठिर के क्रोध की उत्पत्ति दिखलाई गई है।[14] यह कथावस्तु का बीज है, क्रोधरूपी बीज से युद्ध की घोषणा ही मुखसन्धि के अन्तर्गत है। द्वितीय अंक के विश्व में युधिष्ठिर का क्रोधरूपी बीज भीष्मादि के मरण से लक्षित, किन्तु कर्णादि के वध के अभाव में अलक्षित होने से 'प्रतिमुख' सन्धि की व्यंजना करता है तीसरे अंक में कर्ण और अश्वत्थामा के वाक्कलह से कौरवों की सेना में भेद हो जाने पर पाण्डवों की विजय तथा राक्षस–राक्षसी के वार्त्तालाप से कौरव पक्ष के वीरों की मृत्यु की सूचना ये दोनों गर्भसन्धि को दृष्टिगोचर करती है।[15] छठे अंक के आरम्भ से दुर्योधन के रक्त से लथपथ भीमसेन के आगमन तक विमर्श सन्धि चलती रही है। छठे अंक में जब कंचुकी दुर्योधन के रक्त से रंजित भीम को पहचानता है[16] तब भीम के पुन: स्मरण द्वारा वहाँ द्रोपदी के केशसंयमन तथा दुर्योधन के वध आदि से मुखसन्धि के बीज एकत्रित हो जाते है, अत: निर्वहण सन्धि एवं 'फलागम' नामक अवस्था है।[17]

2. सम्भाव्यता – कथानक का दूसरा गुण सम्भाव्यता है। सम्भाव्यता से अरस्तू का अभिप्राय कथानक के ऐसे प्रसंग से है। जो आवश्यकता के नियम के अधीन हो। इसका अभिप्राय है कि जो घटित हो चुका है कथानक में वही पर्याप्त नहीं है, वरन् जो घटित हो सकता है वह भी मान्य है, परन्तु जो हो सकता है वही, जो नहीं हो सकता वह नहीं। अत: घटनाएँ असम्भाव्य नहीं होनी चाहिए।[18]

3. पूर्णता – पूर्णता के विषय में अरस्तू का मत ऐसे कथानक से है जिसमें घटनाएँ ऐसी सुसम्बद्ध एवं विनियोजित हों कि पूर्ववर्ती घटना आगामी घटना का पूर्व संकेत दे सके और परवर्ती घटना पूर्ववर्ती का ही परिणाम हो। वेणीसंहार नाटक में यह कथानक गुण पूर्ण रूप से देखने को मिलता है।[19]

4. कौतूहल – कथानक का एक–गुण कौतूहल भी है। अरस्तू के अनुसार, नाटक में कौतूहल होना चाहिए।[20] इसके लिए आवश्यक है कि घटनाएँ हमारे समक्ष अचानक ही उपस्थित हो, ऐसी स्थिति में त्रासदीय विस्मय का भाव अधिक प्रबल होता है।

वेणीसंहार नाटक में अनेक स्थानों पर कौतूहल उत्पन्न करने वाला वृत्तान्त दिखाई देता है जैसे– द्वितीय अंक में प्रेमालाप प्रसंग में दुर्योधन भानुमती को अपने उरुयुगल पर बैठने के लिए कहता है इस कथन के दूसरे ही क्षण कंचुकी की **'भग्नम् भग्नम्'** जैसी उक्ति है, यानी **'पर्याप्तमेव करभोरू ममोरूयुग्मम्'** सुनने के पश्चात् सामाजिक तुरन्त ही कंचुकी के मुख से **'भग्नम्'** उक्ति सुनकर सहम जाते हैं। यह वृत्तान्त मन में कौतूहल को उत्पन्न करता है।

कथानक के अंग

1. अभिज्ञान – अरस्तू ने कथानक का पहला अंग अभिज्ञान बताया है 'अभिज्ञान' से अभिप्राय है 'अज्ञान की ज्ञान में परिणति'।[21] कथानक और कार्य–व्यापार के साथ सबसे घनिष्ठ संबंध अभिज्ञान का होता है क्योंकि अभिज्ञान विपर्यय के साथ मिलकर करूणा और त्रास को जगाता है। 'अभिज्ञान' का सुन्दर दृश्य छठे अंक में देखने को मिलता है। छठे अंक में युधिष्ठिर एवं द्रौपदी के चिता प्रवेश से पूर्व ही खून से सने हुए शरीर वाला भीम प्रवेश करता है ऐसी दशा में युधिष्ठिर उसे पहचान नहीं पाते और दुर्योधन समझकर उस पर आक्रमण करने की कोशिश करते हैं। यह दृश्य त्रासदीय विभ्रम का व्यंजक है

2. स्थिति विपर्यय – कथानक का दूसरा अंग स्थिति – विपर्यय है। यह दृश्य वेणीसंहार में तब दिखलाई देता है जब दुर्योधन का पक्षपाती राक्षस चार्वाक मुनि के वेश में प्रवेश करके भीम की मृत्यु तथा अर्जुन के साथ दुर्योधन का गदायुद्ध झूठा संदेश युधिष्ठिर को सुनाता है। कृष्ण द्वारा भेजे गए सन्देश से विजय की आशा मुनि के झूठे–वृत्तान्त से निराशा में परिणम हो जाती है। क्षण भर में आशायें एवं उत्साह, निराशा की तीव्र वेदना, रूदन में परिवर्तित हो जाते है। यहां स्थिति – विपर्यय का दृश्य दिखलाई देता है।

निष्कर्ष – इस प्रकार वेणीसंहार नाटक में कवि ने अनेक प्रकार से त्रासदीय तत्त्वों को दर्शाया है। कला–कौशल, भाषा–कौशल, चरित्र–चित्रण हर प्रकार से नाटक को सुन्दरता प्रदान की है। गौरीनाथ शास्त्री ने उन्हें एक कुशल कारीगर की संज्ञा दी है।[22] नाटक के आरम्भ में कवि ने प्रभावपूर्ण रचना–विधान कौशल का परिचय दिया है पात्रों की चारित्रिक विशेषता के अनुरूप ही नाटक में भीम के गर्वीले स्वाभिमान, द्रौपदी की व्यथा, दुर्योधन की दर्पान्धता तथा कृष्ण एवं युधिष्ठिर के शान्ति–प्रयासों की सुन्दर अभिव्यंजना की है। इसके अतिरिक्त कवि ने नाटक में गाम्भीर्य स्थितियों को भी पूर्ण रूप से दर्शाया है जो हृदय में करूणा और त्रास उत्पन्न करती है। जिससे स्पष्ट होतहै कि कवि के नाटक में त्रासदीय तत्त्वों का समावेश है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. वेणीसंहार – 1.15
2. अरस्तू का काव्यशास्त्र, लेखक – डॉ.नगेन्द्र, प्रकाशन – भारती–भण्डार, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण, 2014, पृ.सं.65
3. अरस्तू का काव्यशास्त्र, लेखक– डॉ.नगेन्द्र, प्रकाशन, भारती–भंडार, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण – 2014, पृ.सं.66
4. लाक्षागृहानलविषात्रसभाप्रवेशै:
   प्राणेषु वित्तनिचयेषु च न: प्रहृत्य।
   आकृष्य पाण्डववधूपरिधानकेशान
   स्वस्था भवन्तु मयि जीवनित धार्त्तराष्ट्रा:।। वेणीसंहार, 1/8
5. महाभारत, शल्यपर्व, 5620, 21, 22
6. एष ते रूधिरं कण्ठात् पिबामि पुरुषधम।
   ब्रूहीदानीं तु संहृष्ट: पुनर्गौरिति गौरिति।।
   महाभारत, कर्णपर्व, अध्याय, 8342
7. हस्ताकृष्टविलोलकेशवसना दु:शासनेनाज्ञया
8. पाचाली मम राजचक्रपुरतो गौर्गोरिति व्याहृता।
   वेणीसंहार, 225

9. वत्सानां निधनेन में त्वयि रिपुः शेषप्रतिज्ञोऽधुना
मानं वैरिषु मुञ्च तात पितरावन्धाविमौ पालय।
वेणीसंहार, 55
अपि च धृतराष्ट्र-वत्स, किं विस्तरेण। सन्धत्तां भवानीदानीमपि युधिष्ठिरमीप्सितपणबन्धनेन।
वेणीसंहार अंक - 5
10. महाभारत, शल्यपर्व, अध्याय - 444
11. अरस्तू का काव्यशास्त्र, डॉ. नगेन्द्र, प्रकाशन- भारती भंडार, इलाहाबाद प्रथम संस्करण- 2014, पृ.सं.70
12. वही, पृ.सं.72
13. अन्तरैकार्थसम्बन्धः संधिरेकान्वये सति।
मुखं प्रतिमुखं गर्भो विर्मश उपसंहृति।।
साहित्यदर्पण, 675
14. यथासंख्यमवस्थभिराभिर्योगात्तु पञ्चाभिः। पञ्चधवेतिवृत्तस्य भागाः स्युः पञ्च सन्धयः।।
साहित्यदर्पण, 674
15. यत्सत्व्रतभ्रंभीरूमनसा यत्नेन मन्दीकृत
यद्धिस्मर्तुमपीहितं शमवता शान्तिं कुलस्येच्छता।
तद्द्यतारणिसम्भृतं नृपसुताकेशाम्बराकर्षणैः
क्रोधज्योतिरिदं महत् कुरूवने यौधिष्ठिरं जृम्भते।
वेणीसंहार 1/24
16. वासगन्धे, अद्य खल्वहं स्वामिन्या हिडिम्बादेव्या सबहुमानं शब्दाय्याऽऽज्ञप्तः - यथा रूधिरप्रिय, अद्य प्रभृत्ति त्वया आर्यपुत्रस्य भीमसेनस्य पृष्ठतोऽनुपृष्ठं समर अहिण्डिव्यतमिति। तत्तस्यानुमार्गगामिनो हतमानुषशोणितनदीदर्शनप्रनष्टबुमुक्षापिपासस्येहैव में स्वर्गलोको भविष्यति। त्वमपि विस्त्रब्धा भूत्वा रूधिरवसाभिः कुम्भसहस्त्रं संचिनु। वेणीसंहार, तृतीय अंक
17. कञ्चुकी अयं खल्वायुष्मान् भीमसेनः सुयोधनः सुयोधनक्षतजारूणीकृतसकलशरीरो दुर्लक्ष्यव्यक्तिः। अलमधुना सन्देहेन वेणीसंहार, षष्ठ अंक
18. साऽवस्था फलयोगः स्याद्यः समग्रफलोदयः।
साहित्यदर्पण, 673
19. अरस्तू का काव्यशास्त्र, लेखक डॉ.नगेन्द्र, प्रकाशन- भारती भंडार, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण - 2014, पृ.सं.73
20. पाश्चात्य समीक्षा सिद्धान्त, लेखक- रमेश चन्द्र मिश्र, पृ.सं.103
21. अरस्तू का काव्यशास्त्र, लेखक- डॉ.नगेन्द्र, प्रकाशन- भारती भंडार, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण - 2014, पृ.सं.74
22. पाश्चात्य काव्य शास्त्र की परम्परा, सम्पादक - डॉ.नगेन्द्र, दिल्ली विश्वविद्यालय, पृ.सं.34
23. A Concisl History of Classical Sanskrit Literature : Ghurinath Shastri, P.N. 112
24. अरस्तू का काव्यशास्त्र, अनुवादक, डॉ.नगेन्द्र, प्रकाशन- भारती भंडार, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण, 2014
25. पाश्चात्य समीक्षा सिद्धान्त, लेखक- रमेश चन्द्र मिश्र
26. पाश्चात्य काव्य-शास्त्र की परम्परा, सम्पादक- डॉ.नगेन्द्र, दिल्ली विश्वविद्यालय
27. महाभारत : गीता प्रेस, गोरखपुर
प्रथम खण्ड : चतुर्थ संस्करण
द्वितीय खण्ड : द्वितीय संस्करण
तृतीय खण्ड : तृतीय संस्करण
28. वेणीसंहार, भअाँनारायण, व्याख्याकार - डॉ.कृष्णकान्त त्रिपाठी, प्रकाशन - साहित्य भंडार, मेरठ, संस्करण - 2

****

वाल्मीकीय रामायण में प्रतिपादित तप मानव जीवन के आनन्द का मूलाधार

नित्यानन्द चतुर्वेदी *

शोध सारांश – अनादि काल से तप भारतीय संस्कृति की प्रमुख विशेषता रही है। हमारे यहाँ सदैव से **'त्याग तपस्य तपोबलम्'** का उद्घोष किया जाता रहा है। अर्थात् त्याग, तपस्या एवं तप मनुष्य की शक्ति है। वैदिक साहित्य एक स्वर से तप की महत्ता को स्वीकार करते हैं। आज भी हम किसी वस्तु की प्राप्ति हेतु कठोर परिश्रम करते हैं। कठोर परिश्रम तप का ही प्रसंस्कृत रूप है। सम्पूर्ण विश्व इस बात का साक्षी है कि मनुष्य ने किसी नवीन वस्तु की प्राप्ति कठोर साधना से ही की है। चाहे वह थामस एल्वा एडीसन का बल्ब का आविष्कार रहा हो, चाहे वह पाणिनि मुनि का व्याकरण को एक सुव्यवस्थित एवं वैज्ञानिक प्रारूप देने का कार्य रहा हो। सबने कठोर साधना से ही सफलता अर्जित की थी। तप मनुष्य को संयमित जीवन जीने की कला सिखाता है, जिससे मनुष्य इहलोक की भौतिक वस्तुओं का उपभोग त्यागपूर्वक करता है। फलस्वरूप उसे आनन्द की प्राप्ति होती है।

आदिकवि वाल्मीकि ने **'तप'** शब्द से अपने ग्रन्थ को आरम्भ करके एवं इसके महात्म्य को उद्घाटित करके इसे गौरवपूर्ण पद पर प्रतिष्ठापित किया है। तप के बल से ही आदि कवि आदिकाव्य का प्रणयन करने में समर्थ हो सके थे। भरत का राज–त्याग, राम का स्वेच्छा से वनगमन, लक्ष्मण द्वारा राम का अनुगमन आदि त्याग के अद्भुत दृष्टान्त इस ग्रन्थ में वर्णित हैं, जो तप के ही अभिव्यञ्जक हैं। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में वैश्विक स्तर पर तप के रहस्य को समझने की नितांत आवश्यकता है। इसके रहस्य को समझने के पश्चात् भूमण्डलीय स्तर पर व्याप्त मानव जगत् की विकट समस्यायें जैसे भूमण्डलीय तापन, भ्रष्टाचार, आतंकवाद स्वत: ही समाप्तप्राय हो जायेंगी एवं मानव जीवन आनंद से परिपूर्ण हो जायेगा।

प्रस्तावना – तप शब्द 'तप्' धातु से बना हुआ है। यह व्यापक अवधारणा को सन्निहित किये हुए है। इस धातु के प्रमुख अर्थ कुछ इस प्रकार से हैं:– चमकना, प्रज्वलित होना, गर्म होना, गर्मी फैलाना, पीड़ा सहन करना, जलाना, दग्ध करना, जलाकर समाप्त कर देना[1]

इस प्रकार तप को परिभाषित करते हुए कहा जा सकता है त्याग की पीड़ा को सहन करते हुए, अन्तर्निहित बुराइयों को जलाकर समाप्त करते हुए आत्मबल का उन्नयन करते हुए स्वयं को चमकाना ही तप है। तप से युक्त मनुष्य में ही **मानवता** होती है। तप से परिपूर्ण मानव ही सभ्य समाज का अवयव बनने की क्षमता धारण करता है। वह भौतिक वस्तुओं का उपभोग त्यागपूर्वक करता है। यहाँ त्यागपूर्वक करने का अभिप्राय है कि सांसारिक वस्तुओं का उपभोग मात्र उतना ही किया जाये, जिससे जीवन का निर्वहन सुगमता से हो सके। दूसरे शब्दों में हम कह सकते है कि **'जीने के लिए उपभोग करें ना कि उपभोग के लिए जियें।'**

इस अवधारणा से मानव जगत् की अनेक समस्यायें जैसे खाद्यान्न संकट, जल संकट, पर्यावरणीय संकट स्वत: समाप्त प्राय: हो जायेंगी। मानव चिंतन सशक्त होगा। मानव के बौद्धिक स्तर का उन्नयन होगा। मनुष्य अपने स्वार्थ के अतिरिक्त दूसरे के विषय में भी सोचेगा। एक मनुष्य दूसरे मनुष्य के काम आयेगा। अन्ततोगत्वा 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की भावना से मानव–जगत् ओत–प्रोत होगा।

उद्देश्य–महर्षि वाल्मीकि द्वारा प्रतिपादित तप की अवधारणा को वैश्विक मानव जगत् के समक्ष उद्घाटित करना ताकि मनुष्य संयमित एवं स्वस्थ जीवन जीते हुए लोक हित हेतु बौद्धिक स्तर की व्यापकता को प्राप्त करे एवं विश्व कल्याण की दिशा में चिंतन आरम्भ करे।

व्याख्या–महर्षि वाल्मीकि ने अपने ग्रन्थ का आरम्भ करते हुए कहा है–

'ऊँ तप:स्वाध्यायनिरतं तपस्वी वाग्विदां वरम्।
नारदं परिप्रच्छ वाल्मीकिर्मुनिपुंगवम्।।'[2]

अर्थात् तपस्या एवं स्वाध्याय में निरत विद्वानों में श्रेष्ठ मुनिवर नारद जी से वाल्मीकि जी ने पूँछा। तात्पर्यत: ऐसा व्यक्तित्व जो महर्षि वाल्मीकि को रामकथा लिखने हेतु दिशा निर्देशित कर रहा है वह एक तपस्वी एवं स्वाध्याय में लगा हुआ पुरूष है।

महर्षि ने तप द्वारा ही ब्रह्मा जी का साक्षात्कार किया, रामायण की दिव्यता का आर्शीवाद लिया एवं रामचरित्र का दर्शन किया। वस्तुत: 'तप' शब्द रामायण की पवित्र दार्शनिकता को व्यंजित करता है। वाल्मीकि जी मानव जगत् को यही दार्शनिक उपदेश देना चाहते हैं कि मनुष्य को पवित्रता पूर्वक रहकर तपोऽनुष्ठान करते हुए परम सत्ता की आराधना करनी चाहिए एवं अधर्म से सदा दूर रहना चाहिए।

इस ग्रन्थ में वाल्मीकि जी तप के अद्भुत रहस्य को दर्शाते हैं। विश्वामित्र के विचित्र तप का वर्णन आदिकवि ने करते हुए कहा है–

'पूर्णे वर्षसहस्त्रे तु काष्ठभूतं महामुनिम्।
विघ्नैर्बहुभिराधूतं क्रोधो नान्तरमाविशत्।।'[3]

अर्थात्–एक हजार वर्ष पूर्ण होने तक वे महामुनि काष्ठ की भाँति निश्चेष्ट बने रहे। बीच–बीच में उन पर बहुत से विघ्नों का आक्रमण हुआ परन्तु क्रोध उनके भीतर नहीं घुसने पाया। इस प्रकार से श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण के बालकाण्ड के 65वें सर्ग में विश्वामित्र की घोर तपस्या का वर्णन, उनके ब्राह्मणत्व की प्राप्ति आदि का लोकार्षक चित्रण प्राप्त होता है। इसी प्रकार से आदि कवि ने गंगा जी के आगमन में भगीरथ के अद्भुत तपस्या का वर्णन किया है।

* शोधार्थी, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद (उ.प्र.) भारत

'ऊर्ध्वबाहु: पञ्चतपा मासाहारो जितेन्द्रिय:।
तस्य वर्षसहस्त्राणि घोरे तपसि तिष्ठत:।।
अतीतानि महाबाहो तस्य राज्ञो महात्मन:।'[4]

अर्थात्–वे अपनी दोनों भुजाएँ ऊपर उठाकर पञ्चाग्नि सेवन करते और इन्द्रियों को काबू में रखकर एक–एक महीने पर आहार ग्रहण करते थे। इस प्रकार से घोर तपस्या में निरत राजा भगीरथ के एक हजार वर्ष व्यतीत हो गये। एवंविध श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण के बालकाण्ड का 42वाँ, 43वाँ सर्ग क्रमश: ब्रह्मा जी की एवं शंकरजी की तपस्या में निरत भगीरथ का चित्रण करता है। अन्ततोगत्वा ब्रह्मा जी एवं शंकरजी दोनों ही उनकी तपस्या से प्रसन्न होते है एवं पृथ्वी पर गंगा जी का अवतरण होता है एवं भगवान् शंकर गंगा जी को अपनी जटाओं में धारण करते हैं।

इसी प्रकार वाल्मीकि जी ने चूली ऋषि की तपस्या, भृगु की तपस्या आदि का वर्णन किया है। इनके मतानुसार स्वर्गादि सभी सुखभोगों का हेतु तप है। किमधिकं, रावणादि के राज्य, सुख, शक्ति, आयु आदि के मूल भी तप है। श्रीराम तो शुद्ध तापस हैं। वे तपस्वियों के आश्रम में प्रवेश करते हैं। वहां के वैखानस, बालखिल्य सम्प्रक्षाल मारीचिप ऐसे तपस्वियों से मिलते हैं, जो केवल चन्द्रकिरण पान करने वाले हैं। पत्राहारी, उन्मज्जक ऐसे तापस हैं, जो सदा आकण्ठ पानी में डूबकर तपस्या करने वाले हैं। इसी प्रकार वाल्मीकि जी ने अश्मकुट्ट, दन्तोलूखली, गात्रशय्य, अशय्य, अनवकाशिका, सलिलाहार, वायुभक्ष, आकाशनिलय, स्थण्डिलशायी, आदि 21 प्रकार के तपस्वियों का रोमांचक वर्णन किया है।[5] ये सभी तपस्वी जप में लीन थे।

इस प्रकार से आदिकवि ने तप के रहस्य एवं महात्म्य को अपने ग्रन्थ में प्रतिपादित किया है।

महर्षि के इस मत को पुष्ट करने वाला ईशावास्योपनिषद् का एक मंत्र नितांत प्रासंगिक है–

'ईशावास्यमिदं सर्वं यत्किञ्च जगत्यां जगत्।
तेन त्यक्तेन भुञ्जीथा मा गृध: कस्य स्विद् धनम्।'[6]

अर्थात् विश्व में जो कुछ भी चर तथा अचर वस्तु है, वह सब ईश्वर से आच्छादित है। अत: उसका त्यागपूर्वक उपभोग करो, किसी दूसरे के धन का लोभ मत करो, धन किसका है? अर्थात् किसी का नहीं है।

उपर्युक्त विश्लेषण से स्पष्ट है कि तपोऽनुष्ठान मनुष्य को उपलब्धिपूर्ण बनाता है। मनुष्य के भीतर मानवता उत्पन्न करता है। त्याग की भावना की शिक्षा देता है। इस प्रकार तप के रहस्य को समझकर किसी उपलब्धि हेतु व्यक्ति अनुचित मार्ग का प्रयोग नहीं करेगा। जिससे समाज में व्याप्त भ्रष्टाचार, नैतिक पतन, बेइमानी, धनलोलुपता जैसी समस्याएँ समाप्त प्राय हो जायेंगी।

निष्कर्ष–अत: मानव जीवन के आनन्द का मूलाधार महर्षि वाल्मीकि द्वारा प्रतिपादित **तप** में निहित है।

सुझाव–मनुष्य को किसी उपलब्धि या सम्मान या पद या प्रतिष्ठा की प्राप्ति हेतु कठोर परिश्रम करना चाहिए। उसे कभी भी अनुचित मार्ग का प्रयोग नहीं करना चाहिए।

1. संस्कृत–हिन्दी–शब्दकोष–वामन शिवराम आप्टे ।
2. श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण (बालकाण्ड सर्ग–1, श्लोक–1) गीता प्रेस गोरखपुर।
3. श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण–गी0प्रे0 गोरखपुर बालकाण्ड सर्ग–65, श्लोक–3
4. श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण–गी0प्रे0 गोरखपुर बालकाण्ड सर्ग–42, श्लोक–13
5. श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण–गी0प्रे0 गोरखपुर अरण्यकाण्ड–सर्ग–6
6. ईशावास्योपनिषद् मंत्र संख्या–1

संदर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. संस्कृत हिन्दी कोश–वामन शिवराम आप्टे।
2. श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण–गीता प्रेस गोरखपुर।
3. ईशावास्योपनिषद्–प्रो0 ए0पी0 मिश्र
4. The Hindu-Dailey News Paper

****

संगीत में विभिन्न छात्रवृत्तियों का योगदान

गुन्जन शर्मा *

प्रस्तावना – स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद से अर्थात् 20 वीं सदी में प्रशासन तंत्र द्वारा निश्चित किए गए नीतियों एवं योजनाओं के फलस्वरूप ही शास्त्रीय संगीत को अन्य विषयों के समान महत्व प्राप्त है और इसकी क्रियात्मक, कलात्मक एवं सैद्धांतिक उपयोगिता के साथ-साथ सैद्धांतिक व सौंदर्यशास्त्रीय अध्ययन की उपयोगिता में भी वृद्धि हुई है। स्वतंत्र भारत में शैक्षणिक सुविधाओं को प्रजातंत्रात्मक बनाने के लिए कई छात्रवृत्तियों, वेतनवृत्तियों, नि:शुल्क योजनाओं आदि की व्यवस्था की गई है।

वर्तमान समय की महँगी तथा शिक्षा में पड़ने वाले व्यवधानों को दृष्टि में रखते हुए सरकार ने शिक्षावरोध उत्पन्न करने वाले घटकों का निराकरण करने के उद्देश्य से विद्यार्थियों को आर्थिक सहायता दिये जाने की योजनाओं का गठन किया है। प्रशासन द्वारा एक ओर जहाँ संगीत विषय को विद्यालयीन स्तर पर सम्मिलित किया गया है वहीं दूसरी ओर प्रतिभावान विद्यार्थियों को प्रोत्साहित करने की दृष्टि से छात्रवृत्ति भी प्रदान की जाती है।

भारत सरकार द्वारा सन् 1953 ई. से ललित कला के अंतर्गत नृत्य और नाटक के क्षेत्र में कलाकारों के लिए छात्रवृत्ति की योजनाओं का प्रारंभ किया गया।

मानव संसाधन विकास मंत्रालय द्वारा छात्रवृत्तियों की व्यवस्था– 'भारत सरकार के मानव संसाधन विकास मंत्रालय के सांस्कृतिक विभाग द्वारा युवा कलाकारों के लिए सन् 1989-90 ई. में 150 छात्रवृत्तियाँ देने की घोषणा की गई।'[1] इस योजना द्वारा संगीत, नृत्य, दृश्य कलाओं, नाटक, लोक पारम्परिक और स्वदेशी कलाओं के क्षेत्र में 18-35 वर्ष की आयु वर्ग के विशेष कलाकारों को उच्च प्रशिक्षण हेतु आर्थिक सहायता प्रदान की जाती है।

विश्वविद्यालय अनुदान आयोग द्वारा– सन् 1953 ई. में इसकी स्थापना हुई जो कि देश में उच्च शिक्षा के विकास की एक स्वतंत्र संस्था है। इसके लिए वर्ष में यह दो बार (नेट) परीक्षा आयोजित करवाती है, जिसके लिए स्नातकोत्तर में कम से कम 55 प्रतिशत अंक होना अनिवार्य है।

'विश्वविद्यालय अनुदान आयोग ने मूलभूत विकास के अंतर्गत विश्वविद्यालयीन विकास, महाविद्यालयों के विकास के साथ ही उनमें संगोष्ठियों, परिचर्चाओं, कार्यशालाओं आदि के माध्यम से शैक्षणिक उपयोगिता बढ़ाने के लिए 20,000 रू. से लेकर एक लाख या उससे भी अधिक अनुदान दिये जाने का प्रावधान किया। इसमें राष्ट्रीय अध्येतावृत्ति, शिक्षक अध्येतावृत्ति, अनुसंधान तथा शिक्षण हेतु शिक्षा परीक्षा एसोसिएट -शिप एकेडमी स्टॉफ योजना, सांस्कृतिक विनिमय कार्यक्रम तथा अंतर्राष्ट्रीय सहयोग आदि भी समन्वित हैं।'[2]

इमेरिट्स शिक्षावृत्ति[3]–यह शिक्षावृत्ति योजना उन कलाकारों को आर्थिक समर्थन देने के लिये तैयार की गई है, जो आर्थिक रूप से सम्पन्न नहीं है। इसका उद्देश्य है कि ये कलाकार अपने-अपने क्षेत्रों में उच्च स्तरीय कुशलता प्राप्त कर अपने कला कौशल का प्रयोग करके आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर हो सके। यह फैलोशिप प्रतिमाह 7,500 रू. की है और इसकी अवधि दो वर्ष है। प्रत्येक वर्ष कई प्रतिभागी यह फैलोशिप प्राप्त करते हैं।

कुमार गंधर्व शिक्षावृत्ति – इसकी शुरूआत 1992-93 ई. में हुई। यह फैलोशिप संगीत मंचन और दृश्य कलाओं के क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण वरिष्ठ कलाकारों को सरकार द्वारा प्रदान की जाती है। प्रत्येक वर्ष कुल पाँच लोगों को यह दी जाती है। इसमें 2 वर्ष के लिए 75,000 रू. प्रति माह प्रदान की जाती है।

संगीत रिसर्च अकादमी, कलकत्ता – इस अकादमी की प्रमुख विशेषता यह है कि शिष्य को गुरू के समक्ष अर्थात् उसकी देखरेख में ही शिक्षा ग्रहण करनी होती है। समस्त भारत से विद्यार्थियों द्वारा आवेदन पत्र भरा जाता है जिसमें से समिति द्वारा चयनित योग्य छात्रों को गुरू के पास रहकर दस वर्ष की अवधि तक शिक्षा ग्रहण करनी होती है।

उस्ताद अलाउद्दीन खाँ संगीत अकादमी – 18 अप्रैल 1971 ई. को मध्य प्रदेश सरकार ने इस अकादमी की स्थापना की थी। अकादमी द्वारा दुर्लभ शैलियों जैसे टप्पा, दुर्लभ वाद्यों- पखावज, बीन, सारंगी की शिक्षा का प्रबंध साथ ही इन शैलियों के विशेषज्ञों की आर्थिक सहायता करने का प्रयास किया जाता है। संगीत को सुरक्षित रखने एवं संगीतकारों के लिए संगीत सामग्री उपलब्ध करवाने हेतु भी यह अकादमी सक्रिय है। इस प्रकार अकादमी द्वारा आयोजित विभिन्न समारोह जैसे-ध्रुपद समारोह, उ. अलाउद्दीन खाँ व्याख्यान मेला, घुँघरू अमीर खाँ समारोह, चक्रधर समारोह आदि[4] के जरिए संगीतकारों को अपनी प्रतिभा दिखाने का अवसर मिलता है। इस अकादमी से जुड़ी दो संस्थाऐं ध्रुपद केंद्र, चक्रधर नृत्य केंद्र भोपाल में ही स्थापित है।

कालीदास सम्मान–यह एक राष्ट्रीय सम्मान है। इस पुरस्कार के अंतर्गत कलाकार को एक लाख रू. की धनराशि प्रदान की जाती है। यह पुरस्कार मध्य प्रदेश सरकार द्वारा प्रतिवर्ष प्रदान किया जाता है।

कुमार गंधर्व पुरूस्कार–मध्य प्रदेश सरकार द्वारा कुमार गंधर्व की याद में यह राष्ट्रीय पुरस्कार आरम्भ किया गया है, यह मध्य प्रदेश के देवास नगर में आयोजित समारोह में प्रत्येक वर्ष दिए जाने का निर्णय लिया गया है।

तानसेन पुरस्कार–शास्त्रीय संगीत के क्षेत्र में ख्याति अर्जित कलाकारों को तानसेन समारोह के अवसर पर तानसेन सम्मान से अलंकृत करने का निर्णय लिया गया।

* शोधार्थी, वनस्थली विद्यापीठ (राज.) भारत

फैलोशिप–युवा प्रतिभाओं को आर्थिक सुरक्षा के साथ सृजनात्मक कार्य करने के लिए तीन फैलोशिप स्थापित की गई। 1989 ई. में शास्त्रीय नृत्य, रंगमंच और लोक कलाओं के लिए (चक्रधर) फैलोशिप स्थापित की गई। इसके अंतर्गत प्रत्येक व्यक्ति को एक हजार रू.(अवधि एक वर्ष) मासिक प्रदान की जाती है तथा अनेक अन्य सुविधाऐं दी जाने की व्यवस्था है। इसके साथ अर्थाभाव पीड़ित कलाकारों के पेंशन की व्यवस्था कलाकार कल्याण कोष तथा कला परिषद् इत्यादि सुविधाऐं देने की व्यवस्था है।'[5]

उत्तर प्रदेश संगीत नाटक अकादमी, लखनऊ–संगीत नाटक अकादमी की स्थापना भारत में सन् 1953 ई. में हुई। इस अकादमी द्वारा नए कलाकारों को प्रशिक्षण देने और छात्रवृत्ति प्रदान करने की दो नई योजनाऐं आरम्भ की गई हैं, जिसमें से प्रथम योजना के अंतर्गत, प्रादेशिक संगीत प्रतियोगिताओं में गायन, पखावज वादन और कत्थक नृत्य में प्रथम स्थान प्राप्त करने वाले कलाकारों का चयन करके उन्हें उच्चतर प्रशिक्षण के लिए एक वर्ष तक मासिक छात्रवृत्ति प्रदान करती है। दूसरी योजना में नक्कारा वादक उ. रसीद खाँ वारसी के निर्देशन में शिक्षा प्राप्त करने का अवसर प्रदान करती है।

तरूण संगीत छात्रों को प्रोत्साहन– 18 से 20 वर्ष के युवा कलाकारो हेतु संगीत नाटक अकादमी द्वारा प्रत्येक वर्ष 75 छात्रवृत्तियां प्रदान की जाती हैं। 25 छात्रवृत्तियां घरानेदार अथवा सम्प्रदाय वालो की संतानों को देने के लिए सुरक्षित रखी गई हैं।

असहाय कलाकारो को आर्थिक सहायता–उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा 1986–87 ई. में निर्मित कलाकारों को आर्थिक सहायता प्रदान करने हेतु इस योजना का निर्माण किया गया है। योजना के अंतर्गत वृद्ध और विपिन्न कलाकारों को प्रतिवर्ष वित्तीय सहायता दी जा सकेगी।

प्राचीन कला केंद्र, चंडीगढ़–इस केंद्र द्वारा प्रतिभा संपन्न विद्यार्थियों को छात्रवृत्ति प्रदान की जाती है, केंद्र द्वारा आयोजित परीक्षा में मैरिट लिस्ट में आने वाले छात्रों को छात्रवृत्ति के रूप में उनकी इच्छानुसार नामी शिक्षकों के पास शिक्षा ग्रहण करने हेतु चंडीगढ़ में आमंत्रित किया जाता है। छात्रवृत्ति प्राप्त विद्यार्थी की शिक्षा समाप्त होने पर केंद्र उनको भविष्य में व्यवसाय दिलाने में भी सहायता करता है।

स्पिक मैके–इस संस्था का मूल उद्देश्य भारतीय संस्कृति के प्रति युवा पीढ़ी को जाग्रत करना है ताकि वह अपनी संस्कृति के गरिमापूर्ण सौंदर्य एवं वैभवशाली समृद्ध कलाओं की महिमा को केवल जाने ही नहीं, आत्मसात भी करे। स्पिक मैके इच्छुक छात्रों का योग्य कलाकारों से संपर्क कराकर उनके उन्नयन में भी सहयोग देता है। इस प्रकार यह गुरूकुल परम्परा को फिर से पुनर्जीवित करने को प्रयत्नशील है।

उत्तर क्षेत्र सांस्कृतिक केंद्र, पटियाला–इसकी स्थापना 1986 ई. में स्व. प्रधानमंत्री श्री राजीव गांधी द्वारा हुई थी। प्रतिभा संपन्न विद्यार्थियों को केंद्र द्वारा छात्रवृत्ति प्रदान की जाती है। चयनित योग्य छात्रों को नामी कलाकारों के पास संगीत शिक्षा ग्रहण करने के लिए भेजा जाता है जिसका पूरा खर्च स्वयं केंद्र उठाता है।

वरिष्ठ/कनिष्ठ शिक्षावृत्ति योजना–यह योजना व्यक्तिगत, रचनात्मक प्रयासों को विकसित करने के उद्देश्य से बनाई गई है, जिससे उच्च प्रशिक्षण प्राप्त करने के लिए बुनियादी आर्थिक समर्थन मिलता रहे।

नए क्षेत्रों के लिए शिक्षावृत्ति – यह योजना कला एवं संस्कृति से जुड़े विषयों के लिए 1998–99 ई. में आरंभ हुई। 'इसके अंतर्गत (1) भारत शास्त्र (2) सांस्कृतिक अर्थशास्त्र (3) स्मारकों के संरचनात्मक और अभियांत्रिकी पहलू (4) मृदाविज्ञान (5) संरक्षण के वैज्ञानिक एवं तकनीकि सिद्धांत (6) संस्कृति का समाज शास्त्र (7) धरोहर और कला तथा संस्कृति से संबद्ध संस्थाओं का प्रबंधन किया जाता है।'[6]

सांस्कृतिक स्त्रोत एवं प्रशिक्षण केंद्र–इसकी स्थापना 1979 ई. में एक स्वायत्तशासी संगठन के रूप में की गई थी। वर्ष 1882 ई. से ही इसके द्वारा सांस्कृतिक प्रतिभा खोज छात्रवृत्ति योजना चलाई जा रही है। इसके द्वारा 10–14 वर्ष के योग्य बच्चों को यह दी जाती है जिसमें वे या तो मान्यता प्राप्त स्कूलों में पढ़ते रहे या फिर सम्बन्धित (पारम्परिक मंच या अन्य कलाओं से जुड़े) घरानों में उनकी शिक्षा चलती रहे। यह छात्रवृत्ति 20 वर्ष की आयु तक या विश्वविद्यालय डिग्री के पहले साल तक प्रदान की जाती है।

इस प्रकार अधुना शताब्दी में कई सकारात्मक रूपों में संगीत के प्रति जागरूकता आई है। सरकार द्वारा भी संगीत सेवियों के लिए अनेको वित्तीय सुविधाओं की योजनाएँ कार्यान्वित की गई है। सभी संगीत कलाकारों को छात्रवृत्तियां प्रदान करने से उनको आर्थिक आधार में मजबूती आई है जिसके फलस्वरूप सभी संगीत रसिकजन अपनी संगीत शिक्षण को जारी रख आगामी समय में निरंतर प्रयत्नशील हैं।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. संगीत, जून, 1989, पृ0 सं0 57, संगीत कार्यालय, हाथरस।
2. शर्मा डॉ राधिका, 2006, भारतीय संगीत को संस्थानों और मीडिया का योगदान, पृ0 सं0 111, संजय प्रकाशन दिल्ली।
3. भारत 2002, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय प्रकाशन विभाग, पृ0 सं0 119
4. शर्मा डॉ. राधिका, 2006, भारतीय संगीत को संस्थानों और मीडिया का योगदान, पृ0 सं0 117, संजय प्रकाशन दिल्ली।
5. मध्य प्रदेश प्रकाशित, बुलेटिन पृ0 सं0 6–7
6. शर्मा डॉ. राधिका, 2006, भारतीय संगीत को संस्थानों और मीडिया का योगदान, पृ0 सं0 113, संजय प्रकाशन दिल्ली।

****

संगीत में स्वर साधना

डॉ. जितेन्द्र शुक्ला *

प्रस्तावना – संगीत में रियाज का अर्थ अभ्यास करना होता है। रियाज शब्द की उत्पत्ति उर्दू भाषा से हुई है। हिन्दी में इसे अभ्यास कहते हैं। संगीत में साधना, रियाज,अभ्यास का एक ही अर्थ है। संगीत की विशेषता यह है कि इसमें साध्य और साधना दोनों ही सूक्ष्म रूप हैं। संगीत की कोई भी विधा हो, गायन, वादन या नृत्य इन तीनों में रियाज का बड़ा ही महत्त्व है।

साधना का अर्थ है, मन को किसी विषय में एकनिष्ठ भाव से संयुक्त करना अर्थात् किसी साध्य वस्तु की प्राप्ति के लिए जो प्रयत्न किया जाता है उसे साधना कहते है। संगीत साधना में इन्द्रियों के समाहित होने, मन के ध्यानस्थ होने तथा परब्रह्म के गुणगान में ब्रहम से तादात्म्य स्थापित होने की योग साधना कितनी सुलभ एवं सुन्दर है, इसकी अनुभूति संगीत के अभ्यास द्वारा ही प्राप्त की जा सकती है।

यदि संगीत साधक अपनी कला में माहिर हैं तथा उसने अपनी कला में सही ढंग से प्रतिदिन अभ्यास किया है, तो वह अपनी कला द्वारा प्राप्त सिद्धि से चमत्कृत रुप से समस्त श्रोताओं के मन को एकाग्र कर आनन्द प्रदान करता है। अभ्यास के विषय में कहा गया है कि –

'अभ्यासवैराग्याभ्यां तन्निरोधः'

महर्षि पतंजलि के अनुसार चित्त वृत्तियों का निरोध अभ्यास एवं वैराग्य से होता है, संगीत साधक भी संगीत साधना में अभ्यासरत् रहकर निरन्तर साधना करता है।

संगीत में साधना, रियाज व अभ्यास के अतिरिक्त एक और शब्द होता है 'चिल्ला' यह फारसी भाषा का शब्द है। प्राय: संगीत विद्यार्थी अपने जीवन में संगीत के अभ्यास का संकल्प करते हैं। उन दिनों वे अपनी दिनचर्या में आवश्यकता भर आराम करने के बाद, अतिरिक्त समय रियाज में लगाते हैं।

इसे ही चिल्ला खिंचना कहते हैं। चिल्ला की अवधि 40 दिनों की होती है। जो कलाकार इस प्रकार से रियाज करता है उसे सिद्धी प्राप्त होती है। साधारणत: संगीत का विद्यार्थी एक बार चिल्ला के बाद पुन: भी चिल्ला खींच सकता है।

संगीत में स्वर साधना एक महत्वपूर्ण कार्य है और यह कार्य तभी संभव हो सकता है जब साधक अपना बल सही दिशा में लगाये। स्वर साधना संगीत की आधारभूत प्रक्रिया है। संगीत के साधारण विद्यार्थी से लेकर उच्चकोटि के कलाकार तक को इसकी आवश्यकता होती है। संगीत के क्षेत्र में कोई कलाकार कितना पारंगत है, यह उसकी स्वर–साधना पर निर्भर करता है। रियाज की अवहेलना करके एक अच्छा गायक या वादक बन पाना असम्भव है। अतएव स्वर साधना के महत्व को ध्यान में रखते हुए आज के विद्यार्थियों को इसकी प्रयोगात्मक विधि को जानना और व्यवहारिक प्रयोग करना परम आवश्यक है। स्वर साधना के लिये कुछ महत्वपूर्ण बातों को ध्यान में रखना अत्यन्त आवश्यक है –

1. स्वर साधना के लिये सर्वप्रथम साधक की बैठक सरल और साधना के अनुकुल होनी चाहिये, आड़ा–तिरछा बैठना, मुँह ठेढ़ा करना या अकारण हिलते रहने से स्वर उच्चारण में कई दोष आ जाते हैं। पालथी मारकर, एकाग्रचित्त होकर, बिना हिले–डुले सीधा बैठना चाहिये तथा तानपुरा छेड़ने की प्रक्रिया भी सरल एवं स्वाभाविक होना चाहिये।
2. स्वरों में 'षड्ज' स्वर अत्यन्त महत्वपूर्ण होता है। यह आधार स्वर होता है। षड्ज (सा) स्वर की पहचान हमें ठीक मिले हुए तानपुरे मिलती है। तानपुरे को छेड़ने से हमें जो प्रमुख स्वर मिलता है उसे संगीतिक भाषा में सा कहा जाता है। विद्यार्थियों को इसकी आवाज के साथ अपनी आवाज मिलानी चाहिए। सुविधा के लिये इस ध्वनि पर 'सा' शब्द का उच्चारण किया जाता है परंतु स्वर की पहचान हो जाने पर आकार में अर्थात् ओ शब्द का ही उच्चारण करना चाहिए। जो स्वर नाभि से प्रेरित होकर कण्ठ से विकसित होता हुआ मुँह द्वारा व्यक्त होता है, वहीं स्वर स्वाभाविक लगता है। अत: स्वर के प्रस्फुटन में नाभि, कण्ठ और मुँह का संयुक्त योगदान होना चाहिए। यही कारण है कि स्वर साधक की बैठक का स्वर लगाव पर सीधा प्रभाव पड़ता है। स्वर लगाते हुए अपने श्वास को यथासंभव लंबा करना चाहिए तथा उचित बल से इसका उच्चारण करना चाहिए। इससे आवाज में एक स्थिरता आती है जितनी देर श्वास रहे, आवाज तानपुरे के स्वर से बिल्कुल घुली–मिली रहनी चाहिये। आवाज का ऊंचा–नीचापन हर रोज के अभ्यास से स्वत: अपनी जगह ढूंढ लेता है और वांछित स्वर मिल जाने पर एक गहन रंजकता का बोध होता है। प्रत्येक बार स्वर लगाने पर इसी स्थिति को बनाये रखने की कोशिश करनी चाहिये। अब निरन्तर इस क्रिया के करने से स्वर लगाव की प्रक्रिया में जहाँ आवाज के ऊँचे–नीचे की पहचान करना आवश्यक है, वहीं उसे सही स्थान पर स्थापित करके टिकाऊ बना देना, स्वर का ऊपर–नीचे हिलने नहीं देना, उसका उचित बल के साथ घनत्व बनाये रखना आदि बातें बहुत उपयोगी सिद्ध होती हैं। जब ये सब क्रियाएँ काबू में आ जाएं तो सांस को यथासम्भव ज्यादा देर तक रोककर रखने का अभ्यास करना चाहिए।
3. 'षड्ज' स्वर के लगाने के पश्चात् सप्तक के अन्य स्वरों की बारी–बारी से पहचान करनी चाहिए। सा' स्वर से एक निश्चत अन्तराल पर रे, ग, म, प, ध तथा नि:स्वर स्थित रहते है। इनकी जानकारी किसी योग्य शिक्षक के पास बैठकर करनी चाहिए। सर्वप्रथम पूर्वाङ्ग स्वरों सा रे गा म को लगाने के बाद उत्तरांग स्थित स्वर प ध नि सा को जानना चाहिए। इस प्रकार के ज्ञान से सम्पूर्ण सप्तक के शुद्ध स्वरों का व्यवहारिक ज्ञान प्राप्त हो सकेगा। शुद्ध स्वरों के ज्ञान के बाद विकृत स्वरों (कोमल, तीव्र) के स्वर ध्यानों का ज्ञान करना चाहिए।

* अतिथि विद्वान (संगीत) शासकीय कन्या महाविद्यालय, सतना (म.प्र.) भारत

4. एक सप्तक के कोमल तथा तीव्र स्वरों के स्वरांतरालों की स्थिति के ज्ञान के उपरांत विशेष स्वर साधना आरंभ होती है, जिसे षड्ज-साधना कहा जाता है। इस साधना को तभी किया जा सकता है जबकि सप्तक के स्वरों के स्थानों का सही ज्ञान हो जाए।

षड्ज-साधना में मध्य सप्तक के षड्ज (सा) को लगाने के पश्चात् मन्द्र स्थित स्वरों को लगाया जाता है। मन्द्र स्वरों में क्रम से उतरते हुए प्रत्येक स्वर पर यथासंभव देर तक रुकना चाहिये। इस प्रकार मन्द्र सा स्वर तक जाना चाहिए। मन्द्र षड्ज स्वर को लगाने के लिये जल्दबाजी से काम नहीं लेना चाहिए बल्कि धीरे-धीरे कई दिनों के निरन्तर अभ्यास के बाद मन्द्र षड्ज तक आना चाहिए। साधना के आरंभिक दिनों में मन्द्र 'प' तक आना चाहिए। इसके कुछ दिनों के पश्चात् मध्यम, गन्धार क तथा कई दिनों के निरन्तर अभ्यास के पश्चात् धीरे-धीरे ऋषभ तथा षड्ज स्वर तक उतरना चाहिए। जब मन्द्र 'सा' पकड़ में आ जाए तो इस पर न्यास के समय को प्रतिदिन थोड़ा-थोड़ा करके बढ़ाना चाहिए। आरम्भ में एक मिनिट तक 'सा' पर रुकना भी लाभदायक रहेगा तदोपरान्त प्रतिदिन अभ्यास से यह क्रिया 10 से 15 मिनिट तक भी की जा सकती है। मन्द्र षड्ज के इस स्वर लगाव की प्रक्रिया षड्ज-साधना कहलाती है। यह साधना कठिन अवश्य है पंरतु अत्यधिक उपयोगी भी है। इसे संगीत के प्रत्येक विद्यार्थियों को प्रतिदिन समय एवं सुविधानुसार अवश्यक करते रहना चाहिए। षड्ज-साधना प्रात: नित्यकर्म से निवृत्त होकर आरम्भ करनी चाहिए। प्रात:काल कण्ठ की तंत्रियां सिकुड़कर आराम की स्थिति में होती हैं। अत: जो स्वर सुबह-सुबह निकलते हैं वे स्वाभाविक रुप से मन्द्र सप्तक के होते है। इसलिये यह समय षड्ज साधना के लिये उपयुक्त होता है। दिन की तीव्रता के साथ में खिंचवा आ जाता है। अत: प्रात: काल के अतिरिक्त और किसी समय षड्ज साधना के परिणाम ठीक नहीं होगे।

षड्ज-साधना में मन्द्र, मध्य व तार सप्तक तीनों स्थानों के स्वरों का लगाव आलाप तथा तानों में सहज हो जाता है। इससे स्वर का घनत्व बढ़ता है, टिकाव आता है तथा सुरीलापन बढ़ता है। इसके साथ ही षड्ज-साधना से कण्ठ दोषों से भी मुक्ति मिलती है। षड्ज-साधना के बाद धीरे-धीरे मध्य सप्तक के स्वरों का अभ्यास करना चाहिए।

5. स्वरों को साध लेने के पश्चात् स्वर अलंकारों को साधना चाहिए। अलंकार ऐसी स्वर साधना है जिसमें स्वर, लयबद्ध योजना को प्राप्त होते है। अत: अलंकारों की साधना से जहाँ स्वर की एक सुन्दर योजना तैयार होती हैं, वहीं लय पक्ष की भी पुष्टि होती है। आरम्भ में साधारण अलंकारों का अभ्यास करना चाहिए, फिर धीरे-धीरे कठिन तथा क्लिष्ट प्रकार के अलंकारों की ओर अग्रसर होना चाहिए। अलंकारों की इस साधना से तानों के कई प्रकार स्वत: ही बन जायेंगे। जिन्हें रागों में आसानी से प्रयोग किया जा सकता है।

उपर्युक्त बातों में स्वर-साधना को निर्धारित करने वाले तत्व विद्यामन हैं। यदि आज संगीत का विद्यार्थी अच्छे आचार-विचार, खान-पान, उत्तम व्यवहार तथा चिन्तन, मन की एकाग्रता, लगन तथा संयम से इनका व्यवहारिक प्रयोग करे तो इसमें कोई संदेह नहीं हैं कि कल एक आदर्श तथा उच्चकोटि का संगीतकार बन सकता है।

साधना के विषय में कहा गया है कि -
'सतु दीर्घकालैरन्तर्य सत्कारसेवितो'।

अभ्यास काल में साधक को उकताना नहीं चाहिए, उसे ये दृढ़ विश्वास रखना चाहिए कि किया हुआ अभ्यास व्यर्थ नहीं जायेगा। संगीत साधक को साधना काल में धैर्य की परम आवश्यकता होती है। कई बार एक राग या ताल की साधना करते-करते एकताहट आना स्वाभाविक है, परन्तु निरन्तर धैर्यपूर्वक संगीत का अभ्यास करने से सफलता अवश्य प्राप्त होती है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची : -

1. श्रीवास्तव आचार्य गिरीशचन्द्र, तालकोष, प्रथम संस्करण 1996 ई.।
2. शर्मा डॉ. उमाशंकर, संगीत का योगदान मानव जीवन के विकास में।
3. वर्मा चमनलाल, संगीत पीयूष निधि, प्रथम संस्करण 1998 ई.।

****

मानवीय संवेदनाओ के सृजनशिल्पी डॉ. जगमोहन माथोड़िया

डॉ. अन्नपूर्णा शुक्ला * प्रिया बापलावत **

प्रस्तावना – मानव और कला का सम्बन्ध सहज हृदय से है जो कलाकार के भावों को निरन्तर रूप बद्ध करती है तथा वह अपनी स्वानुभूति की संवेदनाओं को कृति में रेखाओं व रंगों द्धारा व्यक्त करता है यही कारण है कि कला संवेदनाओं की अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम रही है। 'जब तक मनुष्य का अस्तित्व बचा रहेगा, कला भी रहेगी और संवेदना भी।[1] अर्थात् संवेदना का वास्तविक भाव कला ही है। 'कला का सम्बन्ध मनुष्य की चेतना, बुद्धि और कल्पना से ही नहीं अपितु उसके परिवेश, बोध, संवेदन एवं निजी अनुभूतियों की समष्टि से है।'[2] अर्थात् संवेदना ही सृजन का मूल स्त्रोत है जो कलाकार के भीतर भावों की अन्त: गणना करती है। 'एक कलाकार के हृदय से दर्शक के हृदय तक भावों को पहुँचाने में संवेदना एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। यदि संवेदना ही न हो तो कलाकार की कोरी बाते या कोरी कल्पनाएँ दर्शक के मस्तिष्क पर कोई प्रभाव नहीं डालेगी। इसी कारण संवेदना ही कला का मूलाधार है। उसी के कारण कलाकार जीवन की जटिलताओं और कुरूपताओं से भी नई चेतना ग्रहण करता है और उसी के कारण कलाकार मानवीय मूल्यों के विकास की दिशा में अग्रसर होता है।[3]

'जब किसी सृजनधर्मी के मन को परिवेश की विद्रूपताएँ झकझोरती है तो वह उद्धेलित हो उठता है और इस उद्धेलन का प्रवाह इतना तीव्र होता है कि वह अपने मन की अनुभूत पीड़ाओं को साकार रूप देने के लिए बाध्य हो उठता है और उसके मन की संवेदनाएँ कला बनकर कागज़ पर उतरने लगती है जो धीरे – धीरे कलाकृति का रूप धारण कर लेती है ऐसी कला में वेदना की संप्रेषणीयता जितने गहन रूप में अभिव्यक्त होती है।'[3] उतनी ही दर्शक के हृदय को भावविभोर कर पाती है।

'साधारणत: संवेदन या संवेदना शब्द का अर्थ होता है अनुभव, करना सुख–दु:ख आदि की प्रतीति करना, बोध ज्ञान अथवा अनुभूति संवेदन शब्द के मूल में 'वेद' शब्द है वेद से वेदन और वेदन से संवेदन शब्द बना है। यदि संवेदन का उपर्युक्त अर्थ को ग्रहण किया जाए तो 'संवेदनीय' का अर्थ होगा अनुभव करने योग्य अथवा बोध कराने योग्य। अंग्रेजी में संवेदन के करीब पड़ने वाले शब्द हैं – संसेशन, फीलिंग, सेंसेहिविटी। अंग्रेजी पर्याय के अनुसार संवेदना शब्द के अन्तर्गत इन्द्रियानुभव, भावानुभव, सहानुभूति अनुभव की प्रक्रिया आदि का समाहार हो जाता है। मनोविज्ञान के अनुसार जब किसी वस्तु से हमारी इन्द्रियों का साक्षात्कार होता है तो हमारी इन्द्रियों में स्वत: घटित प्रक्रिया के अन्तर्गत वस्तु के संस्पर्श मस्तिष्क में होने वाले विशिष्ट उत्तोजन द्धारा वस्तु का जो बोध होता है वही संवेदन है। संवेदना उत्तोजना के संबंध में देह रचना की सर्वप्रथम सचेतन प्रतिक्रिया है जिससे हमें वातावरण की ज्ञानोपलब्धि होती है इस प्रकार मनोविज्ञान में संवेदना के लिए उत्तोजन या उत्तोजना को महत्व दिया गया है।

समग्रत: संवेदना का अर्थ हुआ वस्तु बोध की प्रक्रिया में मस्तिष्क की विशिष्ट उत्तेजना की भाव विह्वल हृदय से नि:सृत विशिष्ट अर्थ दृष्टि।'[5] भवभूति ने इसी संवेदनीय भाव के विषय में कहा है।

भवभूति ने 'उत्तररामचरित' में दु:खसंवेदनीयरोय चैतन्य मर्पितम् के माध्यम से संवेदना को व्याख्यायित किया है। इसी संवेदनीय भाव को आत्मसात् करते हुए हमारे शास्त्रों एवं पुराणों में भी संवेदना की गहन अभिव्यक्ति हुई जिसे आज तक परिवर्तित समाज के अनुरूप संवेदनाओं के विविध स्वरूप में देखा जा सकता है तथा भारतीय कलाकारों ने अपनी रचनाओं में मानवीय संवेदनाओं की तलाश व्यापक रूप में करते हुए उसे प्रखर रूप में चित्रित किया। अत: कलाकार जगमोहन माथोड़िया ने श्वान की वेदना को देखा जिसके अन्तर्गत सड़को पर भोजन की तलाश में इधर–उधर कचरे के ढेर में मुँह मारते व लोगों द्धारा दुत्कारे तथा वाहनों की चपेट में कुत्तों की दर्दनाक मौत को आम आदमी महसूस नहीं कर पाता मगर राह चलते कलाकर जगमोहन माथोड़िया की तीखी नजर जब इन पर पड़ती तो वे दर्द से आहत हो उठे और यही पीड़ा उनके मन को व्यथित कर देती है इसी सन्दर्भ में चित्रकार माथोड़िया का कहना है कि शिकार होते श्वान को देखकर बचपन से ही मैं व्यथित होता रहा हूँ इसी कारण मैंने इस उपेक्षित नस्ल के पशु को अपनी तूलिका के माध्यम से मानवीय स्वरूप प्रदान करने की ठान ली। अत: इस गहन उद्धेलन ने ही आपको तूलिका उठाने के लिए विवश कर दिया और आप संवेदना के अनन्त बिम्बों के साथ श्वान श्रृंखला के सृजन में जुट गये। सुमित्रा नंदन पंत के शब्दों में –

'वियोगी होगा पहला कवि, आह से उजा होगा गान
उमड़कर आँखों से चुपचाप बही होगी कविता अनजान।'[6]

यह भावपूर्ण प्रक्रियाँ भी इस तथ्य को प्रकट करती है कि संवेदना की गंगोत्री से ही सृजन की गंगा प्रवाहित होती है इस प्रकार कलाकार जगमोहन माथोड़िया ने संवेदना की गंगोत्री में सृजन कर श्वान की पीड़ा का मार्मिक व यथार्थ चित्रण किया है। 'आपकी कृतियों में श्वान जीवन की विविध छवियाँ अंकित हुई तथा श्वान संवेदना को वाणी देने वाली अनेक अनुभूतियाँ कलाकार जगमोहन माथोड़िया की कृतियों में उपस्थित है जब आपकी कृतियों का गहन अध्ययन किया जाता है तो ऐसा लगता है कि माथोड़िया की मूल चेतना का एक हिस्सा श्वान से जुड़ा हुआ है किसी भी कृति में कुछ प्रतीक या बिम्ब ऐसे मिल जायेगें जो कलाकार की श्वान संवेदना को पूर्ण आत्मीयता और सौन्दर्य सूक्ष्मता के साथ व्यक्त करते हुए।'[7] कलाकार के अन्तर्मन के लालित्य को प्रकट करते प्रतीत होते हैं। श्वान श्रृंखला के द्धारा कलाकार माथोड़िया ने 'मानवीय गुणों एवं संवेदना के कलाकार के रूप में न केवल विख्यात हुए हैं अपितु यही संवेदना उनकी कृतियों का एक सशक्त पक्ष

* सहायक प्राध्यापक (कला) वनस्थली विद्यापीठ (राज.) भारत
** शोधार्थी (कला) वनस्थली विद्यापीठ (राज.) भारत

बनकर उभरी है तथा नव्य कलाकारों में जगमोहन माथोड़िया की श्वान श्रृंखला एक मजबूत कड़ी के रूप में है। जिन्होंने श्वान के दु:ख दर्द उसकी दीन हीन दशा एवं व्यथा के प्रति अपनी साझेदारी व्यक्त की ऐसा इसीलिये कि उन्होंने उसमें मानवता देखी और उसके ह्रास का अनुभव किया। इसीलिए आपकी कृतियों में मूल्यों के विघटन और अधिक प्रभावी मार्मिक रूप में उभरे हैं।'[8] अत: आपने रंगों के विराट चित्रफलक पर श्वान जीवन की संवेदना को सशक्त अभिव्यक्ति देते हुए अपनी बहुमुखी रचनात्मक प्रतिभा का परिचय दिया है। अत: माथोड़िया जी का मानना है कि श्वान उनके चित्रों का वह किरदार है जिसे उन्होंने वर्तमान के हर रंग में चित्रित किया है, जिसके अन्तर्गत आपने अपने चित्रों व रेखाचित्रों के माध्यम से प्रेम, वात्सल्य, ममता, त्याग, दया, सहानुभूति, स्नेह व श्रद्धा। जैसे मानवीय गुणों को सौन्दर्य के चित्रफलक पर दर्शित किया है जैसे मकर संक्राति पर शहर की छतों पर लोगों की जगह कुत्ते पतंग उड़ाते नजर आए हैं , तथा आपने श्वान को सूट पहनाकर जेंटलमेन के रूप में दर्शित किया तथा नायक नायिका की जगह श्वान को फिल्म की शूटिंग करते हुए चित्रित किया है इस प्रकार माथोड़िया जी ने वे सभी क्रियाएँ जो मानव दैनिक जीवन में संचालित रहती है। उन सभी को श्वानों में प्रतिबिम्बित करने का प्रयास किया है जिसके कारण कृतियों में फैण्टेसी का प्रभाव दृष्टिगत होता है। अत: आपने अपनी विचित्र कल्पनाओं को रंगों व रेखाओं के द्वारा इतने प्रभावी रूप में प्रस्तुत किया है कि कलाकार के अनुभवों की श्रृंखला स्वयं सौन्दर्य का उद्घाटन करती प्रतीत होती है तथा आपने अपनी आन्तरिक संवेदना को जीवन का अक्षय स्त्रोत बनाते हुए उसे अपनी कृतियों में लयात्मक अनुभव के साथ उद्घाटित किया है।यहाँ पर 'आतंकवाद' नामक संवेदनशील कृति के द्वारा कलाकार की आन्तरिक संवेदना को सहज ही समझा जा सकता है। जिसमें कलाकार ने संवेदना को जिस भावाभिव्यक्ति के साथ उजागर किया है।वह अपने आप में एक महत्तवपूर्ण कारक है कृति में आतंकवाद जैसे गम्भीर व संवेदनशील विषय को गहन विश्लेषण के बाद प्रतीकात्मक रूप में चित्रित किया है।

सम्पूर्ण कृति आतंकवादी घटनाओं की कलात्मक प्रतिक्रिया है जिसे जगमोहन माथोड़िया ने गहन अनुभव व संवेदनशीलता के साथ चित्रपटल पर अंकित किया। कृति में आतंकवाद को बाज पक्षी के रूप में दर्शित किया है। जो एक दिन समस्त मानव जाति को समाप्त कर देगा। सम्पूर्ण कृति में श्वान के मुख को प्रधानता देते हुए उसकी जीवा को लाल रंग में चित्रित किया है जो आतंकवाद के बाद की त्रासदी को दर्शित करने का प्रयास रहा है, जो इस कृति का सबसे संवेदनशील पक्ष है तथा कृति में मानवरूपी श्वान के सम्पूर्ण शरीर पर खून के धब्बों को दर्शित करना आतंकवाद के बाद की विभीषिका का मार्मिक व संवेदनशील चित्रांकन है, जो दशक के मन में संवेदनशीलता के पक्ष को उजागर करने में पूर्णत: सफल रहा है। अत: कलाकार ने प्रतीकात्मक चित्रण द्वारा सामान्य जन को यह सन्देश पहुँचाने का प्रयास किया है कि आतंकवाद से केवल मनुष्य हीं नही अपितु प्रत्येक प्राणी व जीव आहत् है। अत: सम्पूर्ण कृति में कलाकार माथोड़िया की आत्मीयता, संवेदनशीलता तथा भावों की पारदर्शिता दृष्टिगत होती है। (चित्र सं. 1) इस प्रकार आपकी श्वान कृतियों में संवेदना की अविरल गंगोत्री निरन्तर प्रवामान रही है।आपने कृतियों में श्वान की वेदना को अपनी सृजनात्मक शक्ति द्वारा नवीन सौन्दर्यबोध के साथ चित्रित किया है जो कला जगत में एक नूतन सृजन की ओर इंगित करता है 'श्वान की संवेदना को आपने–अपने व्यक्तित्व का अंग ही नहीं बनाया है बल्कि अपनी कृतियों का लक्ष्य तथा उद्देश्य भी बनाया है अत: कलाकार जगमोहन माथोड़िया की श्वान कृतियों में जिजीविषा का अक्षय स्त्रोत संवेदना ही है।'[9] जिसे उन्होंने 'समाजवाद और श्वान' नामक कृति में दिखाने का प्रयास किया है। प्रस्तुत कृति समाज के अदृश्य व अमानवीय चेहरों को दर्शित करती अत्यन्त संवेदनशील कृति है जिसमें कलाकार ने मानवीय संवेदनाओं के साथ समाज के व्यक्तियों के अदृश्य चेहरों को सामने लाने का प्रयास किया है जिसमें समाज के यथार्थ के साथ व्यक्तियों की विसंगतियों व विद्रुपताओं को संवेदनशीलता के साथ उजागर किया है। समाज के टूटते हुए जीवन मूल्यों को कलाकार ने गहन संवेदनशीलता के साथ अनुभव किया और मूल्य विघटन के इस व्यापार को सामाजिक संवेदना के स्तर पर अभिव्यक्त किया। कृति में श्वान का चित्रण एक वफादार जीव के रूप में किया गया है। समाज के व्यक्तियों में वफादारी के अंकुर को पोषित करने का संदेश दिया है। अत: कलाकार जगमोहन माथोड़िया ने सम्पूर्ण कृति में संवेदना के अटूट प्रवाह को एक सूत्र में बाँधने का सतत् प्रयास किया है। (चित्र सं. 2)

ठीक इसी प्रकार आपके द्वारा चित्रित 'श्वान परिवार' नामक कृति कलाकार की गहन संवेदनाओं का सघन है। जिसमें कलाकार के अन्तर्मन की गहराईयों को सहज अनुभव किया जा सकता है जिसे मानवीय मूल्यों की गहन सूक्ष्मता के साथ चित्रपटल पर उकेरा है 'आज का मनुष्य संशय, द्वेष, संत्राय और असुरक्षा के कारण अमानवीय जीवन जीने लगा है। वैज्ञानिक, यांत्रिक औद्योगिक उपलब्धियों से प्राप्त सुखात्मक सुविधायें मानव जीवन के समसामयिक त्रासदी को और भी अधिक त्रासद बनाने लगी है ऐसे परिवेश में व्यक्ति के व्यक्तित्व का विखण्डन तथा पारिवारिक मूल्यों का अवमूल्यन होता जा रहा है। परिवारों में व्याप्त, प्रेम, सौहार्द्र, अपनत्व, भाई चारा, टूटन, कुढ़न, घुटन एवं टकराहट में परिवर्तित हो गया है। यही नहीं भौतिकवादी सामाजिक व्यवस्था में परिवार के अन्य सम्बन्धों के साथ ही माता–पिता और बच्चों के सम्बन्धों में तेजी से बिखराव आता जा रहा है।'[10] अत: इसी गहन अन्तर्मन की संवेदना को कलाकार जगमोहन माथोड़िया ने अपनी कृति के माध्यम से हमारे समक्ष प्रस्तुत किया है। प्रस्तुत कृति में श्वान को मानवीय क्रियाकलाप जैसे प्रेम की अविरल अभिव्यक्ति करते दर्शित करते हैं। तथा साथ ही मशीनीकरण व शहरीकरण के बढ़ते प्रभाव का प्रभावशाली व संवेदनात्मक चित्रण दर्शकों को यह संदेश देने का प्रयास कर रहा है कि जीवन कितना भी व्यस्त क्यों न हो किन्तु प्रेम की प्रगाढ़ता ने अभी भी अपना अस्तित्व बनाये रखा है जिसका संवेदनशील व भावात्मक चित्रण प्रस्तुत कृति में देखने को मिल रहा है। (चित्र सं. 3)

कृति में युगल श्वान को एक दूसरे से प्रेम युक्त दर्शित किया है जो मनुष्य की अन्तर्मन संवेदनाओं को एक स्वर में बाँधते प्रतीत होते हैं। कृति में दायीं ओर दो अन्य श्वानों को शहरी मनुष्य की भाँति संघर्ष करते हुए दौड़ते हुए दर्शित किया है जो शहरी जीवन का यथार्थ सटीक चित्रण दृष्टिगत होता है कार का चित्रण शहरी व्यस्तता के प्रतीक के रूप में तथा पृष्ठभूमि में ऊँची–ऊँची इमारतों का चित्रण जनसंख्या वृद्धि के प्रतीक रूप में चित्रित किया है। इस प्रकार सम्पूर्ण कृति का अवलोकन करने से ज्ञात होता है कि शहरी व्यस्तता का जीवन होने के बावजूद श्वानों में प्रेम की दीप्ति आज भी प्रज्जवलित है जिसे कलाकार ने 'श्वान परिवार' नामक कृति के द्वारा दर्शित किया है। इस प्रकार सम्पूर्ण कृति में श्वान को प्रेम व सामंजस्य के प्रतिनिधित्व के रूप में दर्शित कर श्वान संवेदना को विस्तृत रूप दिया है।

अत: निष्कर्ष स्वरूप कलाकार जगमोहन माथोड़िया का 'कलात्मक संसार भावों का अकूत सागर है जिसमें मानवीय संवेदनाओं का इंद्रधनुष लहराता है।'[11] तथा 'आप मानवीय गुणों से सम्पन्न सहृदय व्यक्ति है

जिसके कारण आपको दु:ख से द्रवित होने वाला हृदय प्राप्त है।'[12] जिसके कारण आपने श्वानों के प्रति मानवीय और संवेदनशील दृष्टि अपनाई है जिसका प्रमाण आपके द्वारा कृतियों में चित्रित जीवानुभूति है। आपने अपनी श्वान कृतियों में पीड़ा, दु:ख व संवेदनशीलता जैसी मानवीय अनुभूतियों को सौन्दर्य की परिधि में संयोजित करते हुए समाज व व्यक्ति के वास्तविक रूप को व्यंग्यात्मक व प्रतीक रूप में चित्रित किया है तथा आपने कल्पना के अनूठे छन्दों द्वारा श्वानों में मानवीय प्रेम, ममत्व, वात्सल्य, जैसी मानवीय अनुभूतियों को अभिव्यक्त करने में विलक्षण प्रतिभा का परिचय दिया है। इस प्रकार कलाकार माथोड़िया ने श्वानों की वेदना को संवेदनात्मक पृष्ठभूमि पर सृजित कर अन्तस् की वेदना को विस्तृत रूप दिया है। जहाँ भावों की गहनता, विचारों की सूक्ष्मता ने कृतियों को सौन्दर्यात्मक अभिव्यक्ति दी है। 'इस प्रकार आपकी श्वान कृतियों में सघन संवेदनशीलता के साथ अनुभूति की गहराई दर्शनीय है।'[13] जिसे आपने रंगों व रेखाओं के पारदर्शी प्रभाव द्वारा चित्रात्मक रूप दिया है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची:–

1. रवीन्द्रनाथ – अन्तिम दशक की हिन्दी कविता, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण–2013, पृ.सं.11
2. वही, पृ.सं. 11
3. विजय, डॉ. कल्पना – लीलाधर जगूड़ी के काव्य में मूल्य बोध, नवजीवन पब्लिकेशन, जयपुर, प्रथम संस्करण–2014, पृ.सं. 239
4. मृदुला, शिव – संवेदना और सृजन, (मधुमती), (अकादमी की मासिकी प्रधान पत्रिका) संपादक आशुतोष, प्रकाशन– ए.टी. पेडणेकर, सचिव राजस्थान साहित्य अकादमी, सेक्टर 4, हिरण मगरी, उदयपुर (राज) 1नवम्बर, 2008, वर्ष–4, अंक 99, 2006, पृ.सं. 90
5. भारद्वाज, सर्वेश्वर वीर वीरेन्द्र – अग्निसागर संवेदना और शिल्प, संजय प्रकाशन दिल्ली, प्रथम संस्करण–2000, पृ.सं. 41, 42
6. मृदुला, शिव – संवेदना और सृजन, (मधुमती), (अकादमी की मासिकी प्रधान पत्रिका) संपादक आशुतोष, प्रकाशन– ए.टी. पेडणेकर, सचिव राजस्थान साहित्य अकादमी, सेक्टर 4, हिरण मगरी, उदयपुर (राज) 1नवम्बर, 2008, वर्ष–4, अंक 99, 2006, पृ.सं. 90
7. शर्मा, डॉ. एलोक – सर्वेश्वर दयाल सक्सेना के साहित्य में सामाजिक चेतना, नवजीवन पब्लिकेशन्स, निवाई, (टोंक), प्रथम संस्करण–2014, पृ.सं. 84
8. सिंह, शरद – जिन्दगी के सशक्त शब्द चित्र, (समीक्षा), पुस्तक समीक्षा एवं शोध की श्रेष्ठ त्रैमासिक पत्रिका, संपादक सत्यकाम, सामयिक प्रकाशन, नेताजी सुभाष मार्ग, दरियागंज, नई दिल्ली अप्रैल–जून, 2014, वर्ष–47, अंक–1, पृ.सं. 1,
9. मिश्रा, शीला – प्रसाद साहित्य का दार्शनिक विवेचन, गंगा सरन एण्ड ब्रदर्स संस वाराणसी, प्रथम संस्करण–2003, पृ.सं. 248
10. यादव, डॉ. वीरेन्द्र सिंह – हिन्दी उपन्यासों में शिल्प एवं संवेदना के बदलते सरोकार, अल्फा पब्लिकेशन्स नई दिल्ली, प्रथम संस्करण–2014, पृ.सं.7
11. गौतम, डॉ. सुरेश – प्रसाद साहित्य की बीजभूमि (मानुष की रस यात्रा) दिव्यम् प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण–2011, पृ.सं. 169
12. शर्मा, भावना – द्विजदेव और उनका काव्य, संजय प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण – 2011, पृ.सं. 68
13. शर्मा, डॉ. हरिचरण – सामाजिक चेतना के शिल्पी कवि महेन्द्र भटनागर, बोहरा प्रकाशन जयपुर, प्रथम संस्करण–1997, पृ.सं. 16

चित्र फलक

चित्र संख्या – 1

चित्र संख्या – 2

चित्र संख्या – 3

प्रकृति की संवेदनाओं के चितेरे लालचन्द मारोठिया

डॉ. अन्नपूर्णा शुक्ला * पारूल बापलावत **

प्रस्तावना – कला संवेदना का सम्प्रेषण है व कलाकार उसका भावपूर्ण संवाहक 'साधारणत: संवेदन या संवेदना शब्द का अर्थ होता है, अनुभव करना, सुख–दु:ख आदि की प्रतीति करना बोध ज्ञान अथवा अनुभूति। संवेदन शब्द के मूल में वेद शब्द है। वेद से वेदन और वेदन से संवेदन शब्द बना है। यदि संवेदन का उपर्युक्त अर्थ ही ग्रहण किया जाए तो 'संवेदनीय' का अर्थ होगा अनुभव करने योग्य अथवा बोध कराने योग्य। अंग्रेजी में संवेदन के करीब पड़ने वाले शब्द हैं– संसेशन, फीलिंग सेंसिहिविटी। अंग्रेजी पर्याय के अनुसार संवेदना शब्द के अन्तर्गत इन्द्रियानुभव भावानुभव, सहानुभूति, अनुभव प्राप्ति की प्रक्रिया आदि का समाहार हो जाता है।'[1] अर्थात् मानव जीवन के अनुभवों के आधार पर जो ज्ञान हमें प्रत्यक्ष अपनी इन्द्रियों के माध्यम से होता है। वह संवेदना की परिधि में आता है।

'साहित्य में इसे 'सिम्पैथी' और 'फैलोफीलिंग' (सहानुभूति और सह–अनुभूति) के अर्थ में ग्रहण करते हुए यू परिभाषित करने की चेष्टा की गई है 'मूलत: वेदना या संवेदना का अर्थ ज्ञान या ज्ञानेन्द्रियों का अनुभव है। इसके अनुसार संवेदना उत्तेजना के सम्बन्ध में देह रचना की सर्वप्रथम सचेतन प्रतिक्रिया है जिसमें हमें वातावरण की ज्ञानोपलब्धि होती है। संवेदना हमारे मन की चेतना की वह कूटस्थ अवस्था है जिसमें हमें विश्व की वस्तुविशेष का बोध न होकर उसके गुणों का बोध होता है।'[2] अर्थात् संवेदना का अर्थ ज्ञान के मानसिक अनुभूति के प्रत्यक्षीकरण से लिया जाता है।

प्रत्येक संवेदनीय कलाकार अपनी युगीन अन्तचेतना से संवेदित होकर चित्र निर्माण की प्रक्रिया की ओर प्रेरित होता है और इस प्रकार कलाकार की संवेदनशीलता अपनी सार्थक अभिव्यक्ति के माध्यम से जीवन्त हो उठती है 'और युगीन बोध जब कलाकार चेतना से सम्पृक्त होकर अपने सम्प्रेषित स्वरूप में लोक चेतना से जुड़ जाता है, तभी श्रेष्ठ कलाकृति का निर्माण होता है। जिसकी सृजनता एवं सार्थकता का मूलभूत तत्व मानव संवेदना ही होती है।'[3] अर्थात् एक कलाकार प्रकृति की सर्जना में ही संवेदना के छंद रचना है। 'प्रकृति का सीधा सम्बन्ध कलाकार का अपना परिवेश तथा विषय वस्तु की संवेदनाओं से रहता है। इन संवेदनाओं में उसके पूर्व अनुभूत क्षण जहाँ शामिल होते हैं, वहीं वह अनुभूत अनुभवों के आधार पर अपनी संवेदना के अर्थ का संयोजन भी करता है। प्रकृति केवल ज्यों का त्यों चित्रण करना ही नहीं अपितु गहरी संवेदनशीलता का ही परिणाम है। जितनी गहन संवेदनशीलता होगी उस सृजन की प्रभावोत्पादकता भी बढ़ेगी। चित्रकार लालचन्द मारोठिया के भावुक मन ने अपने परिवेश संवेद्य विषय को अपने अन्तस की गहराईयों के धरातल पर उतारा है। उनके सृजन संसार में भी इनकी संवेदना ने एक अद्भुत हलचल उत्पन्न कर दी है। इनकी चित्राकृतियाँ नूतनता और प्रयोगशीलता के प्रवाह से बँधी है।'[4] प्रकृति के संस्कारों ने इनकी चित्राकृतियों में अद्भुत सौन्दर्य का विस्तार किया है। मारोठिया की चित्राकृतियाँ संवेदना, सादगी से परिपूर्ण व कलात्मक दक्षता का कौशल लिए हुए है। अत: लालचन्द मारोठिया ने प्रकृति के प्रांगण में ही सौंदर्य व संवेदना की श्री वृद्धि की है। यही बिम्बों की सार्थक अभिव्यक्ति मारोठिया जी के सम्पूर्ण दृश्य चित्रों में स्पष्ट परिलक्षित होती है।

प्रसिद्ध भारतीय विचारक 'रामानुज प्रकृति को ईश्वर का अंश तथा ईश्वर के द्वारा परिचारित मानते हैं। प्रकृति स्वयं सृष्टि नहीं करती, प्रत्युत ईश्वर की अध्यक्षता में ही वह सृष्टि का कार्य करती है। इस प्रकार रामानुज ने ही प्रकृति की सार्थकता को सम्पन्न किया तथा उसके प्रति एक सरस भावना का संचार किया।'[5] अर्थात् रामानुज ने प्रकृति के कण–कण में ईश्वरीय सत्ता के दर्शन किए हैं और उन्होंने सम्पूर्ण प्रकृति को ईश्वर का रूप माना है। जिसके द्वारा सम्पूर्ण प्रकृति चलायमान है। उसी प्रकार मारोठिया ने प्रकृति को ईश्वर का रूप मान उसकी आराधना की है व प्रकृति की संवेदनशीलता को अपने चित्रों का विषय बनाया।

चित्रकार 'लालचन्द मारोठिया का जीवन जीतना ही गुरूत्वपूर्ण और दर्शन जितना उदात्त है, उनका सृजन भी उतना ही भव्य है। कलाकार मारोठिया (जन्म 8 सितम्बर 1949) इसी कोटि के विरल चित्रकारों में से एक हैं। उनका स्नेह संवलित सात्विक जीवन तथा व्यापक अनुशीलन उनकी संवेदनशील रचनाओं में बहुधा प्रतिफलित हुआ है। उनके द्वारा विरचित रेखाचित्र, दृश्य चित्र, ऐतिहासिक, सामाजिक चित्र, धार्मिक चित्र, प्राकृतिक चित्रों में जो भावभीनापन है, का वैशद्य है तथा वस्तु सत्य को देखने की कांत दर्शिता है वह एक प्रकार से उनके व्यक्तित्व का ही प्रतिबिंब है।'[6] अर्थात् मारोठिया का संवेदनशील व्यक्तित्व उनकी कृतियों में निरूपित होता है।

लालचन्द मारोठिया के द्वारा रचित रेखाचित्र उनके संवेदनशील व्यक्तित्व की प्रतिछाया का आभास करवाते हैं। उन्होंने एक कुशल चितेरे की भाँति अपने रेखाचित्रों में सौन्दर्यात्मक भावों की शुद्धता का सृजन कर हर कृति को नवीन भूमि प्रदान की है। जो आपकी सौन्दर्य पूर्ण दृष्टि का द्योतक है। आपने अपनी अद्भुत सौन्दर्य परिकल्पना तथा हृदयगत संवेदनशील भावनाओं से पशु–पक्षियों और मानव व प्रकृति के जीवन चित्रों का सृजन कर ऐसा अद्भुत अलौकिक कला संसार प्रस्तुत किया है जो मानव व प्रकृति के मध्य एक परम्परागत अटूट संबंध का स्मरण कराता है।' जिसमें प्रकृति की अद्भुत सौन्दर्य अभिव्यक्ति है उनकी कृतियों में मछलियाँ, जीवाश्म, आदि

*सहायक प्राध्यापक (कला) वनस्थली विद्यापीठ (राज.) भारत
** शोधार्थी (कला) वनस्थली विद्यापीठ (राज.) भारत

मानव, नारी, पर्वत, शेर, भालू, मोर, कंगारू व प्रकृति के समस्त उपादान मारोठिया की संवेदनशीलता का मूल परिचय रहे हैं।

प्रेम – सृष्टि के आरंभ से ही प्रेम मनुष्य की एक मूल वृत्ति मानी जाती रही है और यह वृत्ति पशु–पक्षी तथा सम्पूर्ण जगत में समान रूप से विद्यमान रहती है। मनुष्य एक संवेदनशील प्राणी है। लालचन्द मारोठिया ने जिस प्रेम की अभिव्यक्ति प्रस्तुत रेखांकन के माध्यम से की है। वह प्रकृति के उपादानों के माध्यम से सांकेतिक रूप से चित्र रूप में अभिव्यक्त हुई है। कलाकार ने मानवीय सम्बन्धों में स्त्री–पुरूष के संस्पर्शिता को परिभाषित किया है। स्त्री व पुरूष के प्रेम सम्बन्धों को रहस्यानुभूति के धरातल पर एक उदात्त वृत्ति के रूप में चित्रित किया है। रेखाचित्र में जीवन की गति की नई छवियाँ मिलती है। आपस में एक दूसरे से लिपटी तो कभी ताने–बाने से रूपाकारों को ग्रहण करती लताएँ मानव की भाँति आलिंगनबद्ध दिखाई दे रही है। रेखाचित्र में आकारों को छायाकृति की भाँति प्रस्तुत कर सफेद कागज पर ठोस काले क्षेत्रों की रचना अथवा बाह्य रेखा को अपनाते हुए आकारों को सजीव रेखाच्छादनों से टैक्सचर की विशिष्टता को उजागर करना मारोठिया के रेखांकन का अंग है। 'प्रेम मनुष्य की मूल–वृत्ति या इच्छा शक्ति है। वही मूल संकल्प है। उसके बिना सृष्टि का विकास सम्भव नहीं है। पाश्चात्य् मनोविज्ञान में प्रेम के लिए, जिसका अर्थ मूल 'कामुकता' है। फ्रायड ने प्रारंभ से इस शब्द का प्रयोग उसके मौलिक अर्थ में ही किया था, पर आगे चलकर मनोविश्लेषण शास्त्र में उसका प्रयोग इच्छा शक्ति अथवा सम्पूर्ण जीवन शक्ति के अर्थ में होने लगा।'[7] 'यह भी ध्यान में रखना चाहिए कि फ्रायड ने 'काम' अथवा 'कामुकता' के अन्तर्गत उन सभी कार्यों तथा व्यवहारों को सम्मिलित किया है। जिन्हें सामान्य रूप से प्रेम, स्नेह, प्रीति आदि शब्दों से सम्बोधित किया जाता है। दूसरे शब्दों में फ्रायड के अनुसार व्यक्ति के वे सभी कार्य कामुक हैं जो किसी न किसी रूप में उसे सुख प्रदान करते हैं।'[8] 'फ्रायड के अनुसार 'लिबिडोय केवल प्रौढ़ कामुकता नहीं है, वह सभी प्रकार का प्रेम है, चाहे वह प्रेम माता–पिता, भाई–बहन, मित्र, संतान और आदर्श के लिए हो या स्वयं ईश्वर की भक्ति हो। 'लिबिडोय वस्तुत: एक तृष्णा है। जिसकी पूर्ति होते रहना मानसिक स्वास्थ्य के लिए जरूरी है। आधुनिक पाश्चात्य मनोविज्ञान में भी प्रेम को मानव जीवन के लिए रचनात्मक और कल्याणकारी बतलाया गया है। आधुनिक पाश्चात्य एवं भारतीय कलाकारों की रचनाओं की तरह लालचन्द मारोठिया की कला पर भी फ्रायड के मनोविश्लेषण का प्रभाव प्रेरक के रूप में पड़ा है। यही कारण है कि मारोठिया की प्रस्तुत कृति में 'लिबिडोय और प्रेम संबंध के ऊपर विचार किया गया है।'[9] रेखाचित्र सं. 1

'मारोठिया ने चित्र सृजन के विविध–पक्षों को अपने चित्रों के माध्यम से संवेदना के धरातल पर उकेरा है। मारोठिया ने अपनी कोमल संवेदनाओं के पंख फैलाकर पशु–पक्षियों और प्रकृति के उन्मुक्त जीवन को अपने चित्रों में यथार्थ पूर्ण जीवन अभिव्यक्ति दी है। पक्षी चित्रण में कहीं पंख फड़फड़ाते और खुले आकाश के विस्तार में उड़ान भरते तो कहीं–कहीं पक्षियों के आपसी प्रेमालाप की मोहक संवेदनाएँ मुखरित होती दिखाई देती है। अपनी अद्भुत सौन्दर्य परिकल्पना तथा संवेदनशील भावनाओं से आज भी मारोठिया पशु–पक्षियों और प्रकृति की उन्मुक्त जीवन के चित्रों का सृजन करके ऐसा कला संसार प्रस्तुत करते हैं।'[10] जहाँ पक्षियों की संवेदनाएँ सौन्दर्यपूर्ण रूप में अभिव्यक्त हुई है।

दो पक्षी – प्रस्तुत कृति में कलाकार ने पक्षियों का सूक्ष्मतम निरीक्षण कर प्रकृति का तादृश्य वर्णन किया है पक्षियों की स्वछन्द उड़ान देख ऐसा प्रतीत हो रहा है मानो दो काले बादलों के बीच बिजली चमक उठी हो बार–बार पंखों को हिलाकर विद्युत की त्वरित गति से ही दृश्यमान कर रहे हो। इन पंछियों की उड़ने की गति को देखकर ऐसा प्रतीत हो रहा है। मानो वे जल से सटकर उड़ रहे हो। तूलिका के सशक्त प्रयोग से इस भ्रम को भावपूर्ण ढंग से प्रस्तुत किया गया है। सूरज की सुनहरी छाँव पृथ्वी के गर्भ से ओझल होती हुई प्रतीत होती है। इन पक्षियों की उड़ान अपने आद्र स्वर में नभ को आन्दोलित करती हुई प्रतीत हो रही है। जिससे आकाश का सुनापन मुखरित हो उठा है। पंख फड़फड़ाते और खुले आकाश के विस्तार में उड़ान भरते पक्षियों के आपसी प्रेमालाप का मोहक दृश्य देखने को मिल रहा है। गहरे हल्के स्लेटी रंग का प्रयोग कर पानी तथा आकाश में श्वेत रंग के बादलों का अंकन किया है, वही लम्बे आकृति के अनूठे वृक्षों को आकर्षक वृक्षावलियों के साथ चित्रित कर भू–दृश्य को अधिक आकर्षक बना दिया है। चित्र में पेड़ों के झुरमुट को हरियाली के साथ उसके चमकते पीताम्बरी धारण करती हुयी वृक्षावलियों की श्रृंखलाओं को भावपूर्ण ढंग से चित्रित किया गया है। चित्र सं. 1

'मारोठिया ने प्रकृति के बहुविध रूपों को अपनी संवेदना से संपृक्त कर इस कला कौशल के साथ चित्रित किया है कि इनके दृश्य चित्रों में जहाँ प्रकृति की उत्फुल्लता है वही मानवीय संवेदनाएँ भी मुखरित हुई है। इन्होंने प्रकृति को अपनी रचनात्मक एवं सृजनात्मक दृष्टि से देखा तथा कलात्मक अन्वेषण के बाद उसे एक संवेदनात्मक रूप में चित्रित किया।'[11]

दृश्य चित्र – प्रस्तुत कृति में टहनियों और जड़ों की विभिन्न आकृतियों का बारीकी से चित्रण किया गया है। मनुष्य और जीव जन्तुओं के भीतर छिपी संवेदना का रागात्मक, अनुरागात्मक तथा भावात्मक लगाव प्रदर्शित हो रहा है। कलाकार ने मानवीय रूप में प्रकृति का चित्रण का आरोपण किया है। आपस में वही उलझी जड़े टहनियां कोमलता के साथ एक–दूसरे में भावात्मक रूप में नजर आ रही। कृति में सम्पूर्ण धरती, मनुष्य, पेड़–पौधों, जल–जीव जन्तुओं में एक गहरा मैत्री भाव या प्रेम भाव प्रदर्शित हो रहा है। पत्थरों को किसी सजावटी उपादान की भाँति अलग–अलग स्थितियों में संयोजित किया हैं। हरे, नीले, पीले, लाल रंगों का प्रभाव दृश्य को ओर अधिक आकर्षक व सौन्दर्य पूर्ण बना रहा है। वहीं दूसरी ओर प्रकृति को कलाकार ने संवेदना व कला के अनुभवों में पिरोया है। 'चित्र में कलाकार की कल्पना के बिम्ब विधान प्रौढ़ और प्रांजल है। मारोठिया ने अपनी प्रस्तुति कृति में बिंबो का सफल प्रयोग किया है। बिंब अंग्रेजी के 'इमेज' (Image) शब्द का हिन्दी रूपांतरण है। बिंब कल्पना और स्मृति की वह क्रिया है, जो शब्दों द्वारा रूप (चित्र) प्रस्तुत करके दर्शक के मन को प्रभावित करता है। बिंब–विधायक कल्पना पुनरूपादक कल्पना होती है। चित्रकार अतीत की घटनाओं, स्थितियों और अनुभूत पदार्थों को उनके रंग ध्वनि गति, आकार–प्रकार के साथ चित्रों के रूप में उपस्थित करता है। इस प्रकार बिंब एक ऐसी प्रक्रिया है जिनके द्वारा एक कलाकार अपने हृदयगत भावों का शेष सृष्टि के साथ संबंध स्थापित करता हुआ सुंदर एवं सजीव कल्पना चित्रों का निर्माण कर और उन चित्रों के माध्यम से कल्पना के सत्य का साक्षात्कार कराता है।'[12]

'मानव शास्त्रियों के अनुसार मानव इस दृश्यमान जगत में अपने इन्द्रिबोध के आधार पर जो भी अनुभव प्राप्त करता है वह अनुभवों की उसके मानस पर पहले कुछ रंगों और रेखाओं वाली एक अस्पष्ट–सी आकृति अंकित हो जाती है। वह आकृति निश्चित रूपेण किसी मूर्त्त पदार्थ अथवा अस्तित्व का आभास देती है। जब हमारे मन: चक्षुओं के समक्ष कोई जागतिक वस्तु भी उसे अपने ध्यान पट पर अंकित किये रहना चाहते हैं तो उस तन्मयता की

अवस्था में हमारे चेतन-अचेतन स्तरों पर वे पूर्ण अनुभूत मूर्त्त आकृतियाँ ही झिलमिलाने लगती है। इस प्रकार बिम्ब का सम्बन्ध मूलत: मानव मन के चेतन अचेतन स्तरों से स्पष्ट ही सिद्ध है।'[13] चित्र सं. 2

चित्रकार मारोठिया के चित्रों में जो प्राकृतिक बिम्ब आए है वे राजस्थान जिले के बेणेश्वर धाम के प्राकृतिक भू-दृश्य को देखकर उन सुरम्य दृश्यों को कैनवास पर अंकित करने से अपने को रोक नहीं पाये। मारोठिया के प्रकृति बिम्ब उनके दृश्यमान में अपने इन्द्रिय बोध के आधार पर जो भी अनुभव प्राप्त किया अपने मानस पर रंगों और रेखाओं की एक आकृति निर्मित कर दी। इस प्रकार मारोठिया के प्रकृति बिम्ब उनके मन के चेतन-अचेतन स्तरों से सम्बन्धित है।

अत: निष्कर्ष लालचन्द मारोठिया ने पेड़, तने, पत्थर, मछलियाँ, मशरूम, प्रकृति के लगभग सभी अवयवों व घटकों में मानवीय संवेदनाओं की ज्योति से प्रज्जवलित कर पर्यावरण संरक्षण का संदेश तो दिया ही है। साथ ही मारोठिया के चित्रों में प्रकृति की संवेदनात्मक अनुभूति का सुमधुर गान सुना जा सकता है। रंगों व रेखाओं की संवेदना सूर्य के आभा मण्डल के समान सर्वत्र सौन्दर्य का प्रसार कर रही है। प्रकृति के सौन्दर्य को चित्रात्मक रूप में दर्शकों के समक्ष प्रस्तुत किया है। और उसे रंग और रेखाओं में आबद्धकर फलक पर अपने चित्रण का विषय बनाया है। इन बिम्बों का आभास एक संवेदनशील चित्रकार ही अनुभव कर सकता है। जिसे मारोठिया जी ने सहज रूप से आत्मसात कर सौन्दर्यपूर्ण भावाभिव्यक्ति दी है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची :-

1. शर्मा, डॉ. हरिचरण, सर्वेश्वर का काव्य सृष्टि और दृष्टि, गौतम बुक कम्पनी, राजा पार्क, जयपुर, संस्करण-2011, पृ.सं.119
2. सिंहन, विमला, समकालीन ललित निबन्ध, श्याम प्रकाशन, चौड़ा रास्ता, जयपुर, प्रथम संस्करण-1998, पृ.सं. 114
3. भारद्धाज, डॉ. वीरेन्द्र, अग्निसागर : संवेदना और शिल्प, संजय प्रकाशन, दिल्ली, प्रथम संस्करण-2000, पृ.सं. 41
4. गौतम, आर.बी., आंतरिक संवेग का प्रतिफलन, जय चक्रवर्ती की कला, कला दीर्घा दृश्य कला की अंतरदेशीय पत्रिका, संपादक अवधेश मिश्र, प्रकाशन, उत्कर्ष प्रतिष्ठान, 1/95 गोमती नगर, लखनऊ, अप्रैल 2013, अंक 26, पृ.सं.29
5. माथुर, डॉ. वीणा, प्रसाद का सौन्दर्य दर्शन, बाफना प्रकाशन, चौड़ा रास्ता, जयपुर,संस्करण-1971, पृ.सं. 93
6. सिंह, डॉ. राधिका, महादेवी वर्मा के काव्य में लालित्य योजना, प्रकाशन नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दरियागंज, नयी दिल्ली, प्रथम संस्करण-1979, पृ.सं. 1
7. वर्मा, महादेवी, सृजन और शिल्प रणजीत सिंह, जय भारतीय प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण-1997, पृ.सं. 158-159
8. जायसवाल, डॉ. सीताराम, मनोविज्ञान की ऐतिहासिक रूपरेखा, हिन्दी समिति सूचना विभाग, उत्तरप्रदेश, लखनऊ, प्रथम संस्करण-1963, पृ.सं. 433
9. वर्मा, महादेवी, सृजन और शिल्प रणजीत सिंह, जय भारतीय प्रकाशन, इलाहाबाद, प्रथम संस्करण-1997, पृ.सं. 159-160
10. मारोठिया, लालचन्द्र, प्रकृति के नये आयाम, टेक्नोक्रेट प्रिन्टर्स प्रा.लि., जयपुर, संस्करण-2011, पृ.सं.57
11. वही, पृ.सं. 12
12. बोरसे, श्रीमती पूनम, नागार्जुन के काव्य में जीवन दर्शन, विकास प्रकाशन, कानपुर, प्रथम संस्करण-2012, पृ.सं. 222-223
13. शर्मा, सन्तोष, महादेवी वर्मा का बिम्ब बोध और प्रतीक सृजन आर्य बुक डिपो, करोल बाग दिल्ली, तृतीय संस्करण-1996, पृ.सं. 4

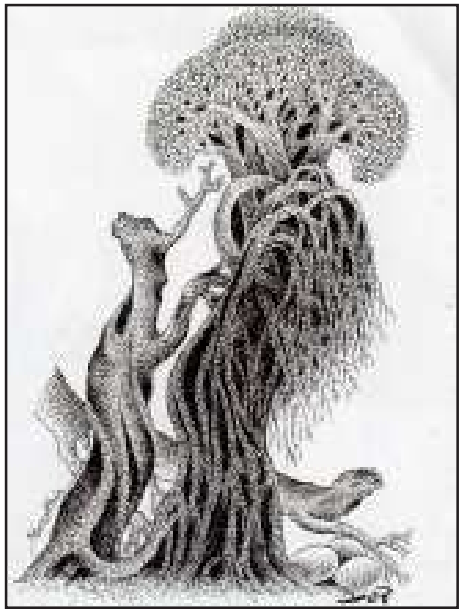

रेखाचित्र सं. 1

चित्र सं. 2

चित्र सं. 3

****

कमजोर वर्गों के मानव अधिकारों के संरक्षण में छत्तीसगढ़ खाद्य सुरक्षा अधिनियम 2012 एक विधिक अध्ययन

जैनेन्द्र कुमार पटेल * विजय यादव **

शोध सारांश – स्थूल रूप से मानव अधिकार वह मौलिक तथा अन्य संक्राम्य अधिकार हैं जो मनुष्यों के जीवन के लिए आवश्यक है, जिसे प्राकृतिक अधिकार या मौलिक अधिकारों के रूप में भी जाना जाता है। प्राकृतिक रूप में मनुष्य समान रूप से अपने व्यक्तित्व के विकास का हकदार होता है लेकिन विश्व समाज व्यवस्था में ऐसा संभव नहीं हो सका और भेदभाव और अभाव जैसे समस्याएँ बढ़ती गयी जिसे समाप्त करने के लिए अनेको संघर्ष और बलिदान भी करने पड़े। वर्तमान समय में जब मानव अधिकारों की बात होती है तब समाज के कुछ ऐसे वंचित वर्ग भी हैं जो सदियों से सामाजिक, आर्थिक एवं शारीरिक रूप से अक्षम हैं जैसे महिलाएँ बच्चे अक्षम व्यक्ति या किसी विशिष्ट मूल वंश से संबंधित व्यक्ति इन्हें ही समाज के कमजोर वर्गों के रूप में जाना जाता है। मानव अधिकारों के संरक्षण में इन वर्गों के हितों की रक्षा के लिए विश्व समुदाय से लेकर भारत में भी प्रयास किए गए हैं। जिसके लिए विश्व समुदाय द्वारा विभिन्न अभिसमयों, प्रसंविदाओं के माध्यम से इनके मानवाधिकारों को चिन्हित कर संरक्षित करने का कार्य किया जाता रहा है। भारत में इन वर्गों के अधिकारों के संरक्षण हेतु भारत के संविधान से लेकर विभिन्न अधिनियमों में प्रावधान किये गये हैं। छत्तीसगढ़ राज्य एक नवीन राज्य है तथा इस राज्य की कल्याणकारी योजनाऐं/अधिनियम सदैव से समाज के कमजोर वर्गों के हित संवर्धन में अग्रणी रही है। इस शोध पत्र के द्वारा छत्तीसगढ़ राज्य के खाद्य सुरक्षा अधिनियम 2012 में कमजोर वर्गों के मानवाधिकारों को संरक्षण के प्रावधानो का अध्ययन प्रस्तुत है।

कुंजी शब्द – मानव अधिकार, खाद्य सुरक्षा, कमजोर वर्ग, भोजन का अधिकार,

अध्ययन का उद्देश्य – इस शोध पत्र का मुख्य उद्देश्य छत्तीसगढ़ राज्य द्वारा अधिनियमित छत्तीसगढ़ खाद्य सुरक्षा अधिनियम 2012 के द्वारा समाज के कमजोर वर्गों के मानव अधिकारों के संरक्षण से संबंधित प्रावधानों का अध्ययन कर मूल्यांकन करना है।

शोध प्रविधि – यह शोध पत्र पूर्णत: सैद्धांतिक विधि पर आधारित है जिसमें विषय से संबंधित सर्वमान्य ग्रन्थ एवं प्रशासकीय दस्तावेजो से प्राप्त सूचनाओं को आधार मानकर अध्ययन किया गया है।

विवेचना – खाद्य सुरक्षा मानवाधिकारो से संबंधित एक महत्वपूर्ण विषय है। भारत में स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात प्रथम पंचवर्षीय योजना से ही खाद्य सुरक्षा को सुनिश्चित किये जाने का कार्य किया जाता रहा है। जैसा कि भारत एक कृषि प्रधान देश है और यहाँ की कृषि व्यवस्था मानसून पर निर्भर होने के साथ ही साथ परम्परागत तकनीकी पर आधारित है। भारत में अकाल (दुर्भिक्ष) से बहुतायत संख्या में भूख से मौते होती थी। लेकिन भारत के स्वतंत्र होने के साथ ही इस समस्या से निजात पाया जा चुका है जिसका प्रमुख कारण हमारी लोक कल्याणकारी संवैधानिक एवं प्रशासनिक व्यवस्था है। संविधान के अनुच्छेद 47 में पोशाहार स्तर को ऊँचा करना और लोक स्वास्थ्य का सुधार करना राज्य का कर्तव्य बताया गया है जो कि मानव अधिकारों की सार्वभौमिक घोषणा सन् 1948 के अनुच्छेद 25 के अनुरूप ही है जिसमें कहा गया है कि प्रत्येक व्यक्ति को ऐसे जीवन स्तर का अधिकार है जो स्वयं उसके और उसके कुटुम्ब के स्वास्थ्य और कल्याण के लिए पर्याप्त है जिसके अन्तर्गत भोजन, वस्त्र, मकान और चिकित्सा तथा आवश्यक सामाजिक सेवाएं भी हैं और बेरोजगारी, रूग्णता, अशक्तता, वैधव्य, वृद्धावस्था या उसके नियंत्रण के बाहर परिस्थितियों में जीवन यापन के अभाव की दशा में सुधार का अधिकार है। इसी प्रकार मानव अधिकारों के आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक अधिकारों की अन्तर्राष्ट्रीय प्रसंविदा के अनुच्छेद 11 में प्रत्येक व्यक्ति को भूख से मुक्त होने के अधिकार को मूल अधिकरों के रूप में मान्यता दी गई है और राज्य पक्षकारों को निम्न उपाय करने होंगे जिसमें खाद्यानों का उत्पादन, संरक्षण वितरण के तकनीकी भी समाहित हैं।

छत्तीसगढ़ राज्य देश का पहला राज्य है जो कि अपने नागरिकों को भोजन का अधिकार अधिनियम पारित कर प्रदान किया। छत्तीसगढ़ राज्य की सार्वजनिक वितरण प्रणाली एक आदर्श प्रणाली के रूप में विख्यात है। यह सत्य है कि छत्तीसगढ़ में प्रति व्यक्ति आय कम होने से गरीबों की संख्या अन्य राज्यों की तुलना अधिक है फिर भी इस राज्य की सार्वजनिक वितरण प्रणाली तथा राज्य के द्वारा अनुदानों से प्राप्त खाद्यान से यहाँ लोगों को भोजन के पूर्ण अधिकार को सुनिश्चित किया गया है। जब भारत सरकार के द्वारा देश के नागरिकों के खाद्य सुरक्षा के लिए प्रयास किया जा रहा था उससे पहले ही छत्तीसगढ़ राज्य ने खाद्य सुरक्षा अधिनियम 2012 इस प्रान्त में सुचारू रूप से लागू कर दिया इस अधिनियम में समाज के कमजोर वर्गों के मानव अधिकारों के संरक्षण में निम्न प्रावधान किये गये हैं –

1. इस अधिनियम का मुख्य उद्देश्य राज्य के निवासियों के लिए खाद्यान्न की पर्याप्त मात्रा तथा आहार की अन्य आवश्यकताओं की पहुँच सुनिश्चित कराते हुए उन्हे सम्मान जनक जीवन यापन करने के लिए सदैव उचित मूल्य पर खाद्य तथा आहार सुरक्षा प्रदान करना है।
2. अधिनियम की धारा 3 में अन्त्योदय परिवारों को रियायती दर पर खाद्य सामग्री प्राप्त करने का अधिकार प्रदान किया है।
3. अधिनियम की धारा 4 में गर्भवती महिलाओं एवं शिशुवती महिलाओं को पोषाहार मानकों को पूरा करने हेतु गर्भावस्था के दौरान बच्चे के जन्म के पश्चात छ: माह तक नि:शुल्क भोजन का प्रावधान किया गया है।

* सहायक प्रध्यापक (विधि) डॉ. सी. वी. रामन् वि.वि. करगी रोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत
** सहायक प्रध्यापक (विधि) डॉ. सी. वी. रामन् वि.वि. करगी रोड, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

4. अधिनियम की धारा 5 में बच्चों के लिए पोषाहार सहायता हेतु 14 वर्ष की आयु तक के प्रत्येक बच्चे को पोषाहार को बनाए रखने का संकल्प है। इसके अतिरिक्त धारा 6 में छात्रावासों तथा आश्रमों में रहने वाले गरीब विद्यार्थीयों के लिए पोषाहार सहायता तथा धारा छ: में बच्चों में कुपोषण का निवारण तथा प्रबंधन के प्रावधान किये गये हैं।
5. समाज के कमजोर वर्गों के मानव अधिकारों के संरक्षण के लिए अधिनियम के अध्याय 3 धारा 8 में निराश्रित, आवासहीन, प्रवासी व्यक्तियों को नि:शुल्क भोजन देने का प्रावधान किया गया है इसके अतिरिक्त अधिनियम की धारा 9 में आपदा की स्थिति में आपदा से प्रभावित व्यक्तियों को तीन माह की अवधि के लिए प्रतिदिन दो समय का भोजन नि:शुल्क उपलब्ध करायेगी।
6. अधिनियम की अध्याय 4 में भुख की दशा में तत्काल राहत प्रदान करने हेतु स्थानीय निकायों को उत्तरदायित्व प्रदान किया गया है जिसमें कि राज्य सरकार भुख से पीड़ित व्यक्तियों या परिवारों को जिसे राज्य सरकार अधिसूचित करे स्थानीय निकायों को उनके भौगोलिक क्षेत्रों में राहत प्रदान करने हेतु उत्तरदायी बनाया गया है जो कि पीड़ित या पहचान किये गये परिवारों को छ: माह तक प्रतिदिन दो समय का नि:शुल्क भोजन उपलब्ध करायेंगे।
7. अधिनियम के अध्याय 7 में यह प्रावधान किया गया है कि राज्य सरकार समय-समय पर अंत्योदय परिवारों की पहचान कर तथा उनकी पात्रता को सुनिश्चित करने हेतु समय-समय पर मार्गदर्शिका तैयार करेगी एवं उन्हे राजपत्र में अधिसूचित भी करेगी।
8. छत्तीसगढ़ खाद्य सुरक्षा अधिनियम एक महत्वपूर्ण अधिनियम इसलिए भी है क्योंकि इसके द्वारा पुरूष प्रधान सामाजिक व्यवस्था को मान्यता न देते हुए महिला सशक्तिकरण पर विशेष ध्यान दिया गया है अधिनियम के अध्याय 8 में प्रत्येक पात्र परिवार की वरिष्ठ महिला को परिवार की मुखिया घोषित किया गया है। यदि किसी परिवार में 18 वर्ष से कम आयु की महिला सदस्य हो तो राशन कार्ड में परिवार का सबसे वरिष्ठ पुरूष सदस्य परिवार का मुखिया होगा और जैसे ही उसके परिवार की महिला सदस्य 18 वर्ष पूर्ण कर लेती है उसका नाम पुरूष सदस्य के स्थान पर प्रस्थापित करने का प्रावधान है।
9. इस अधिनियम के प्रभावी क्रियान्वयन के लिए अध्याय 9 (धारा 18) में स्थानीय निकायों को सार्वजनिक वितरण हेतु पात्र परिवारों की पहचान, उचित मूल्य दुकानों की निगरानी एवं पर्यवेक्षण जैसे उत्तरदायित्व एवं कर्तव्यों के प्रति जवाबदेही भी बनाया गया है।
10. कोई भी कल्याणकारी योजना तब तक सफल नहीं हो सकती जब तक कि उसकी शिकायत निवारण प्रणाली न हो शिकायतों के निवारण हेतु अध्याय 10 में यह प्रावधान किया गया है कि राज्य सरकार एक आंतरिक शिकायत निवारण प्रणाली स्थापित करेगी जिसमें काल सेंटरो, हेल्प लाईन की स्थापना एवं नोडल अधिकारी की पदस्थापना तथा इस योजना को छत्तीसगढ़ लोक सेवा गारण्टी अधिनियम 2011 के अधीन भी अधिसूचित किया गया है।
11. अधिनियम के अध्याय 11 (धारा 21) में लक्षित सार्वजनिक वितरण प्रणाली में सुधार हेतु राज्य सरकार खाद्यानों को उचित मूल्य दुकानों तक पहुँचाने तथा पारदर्शिता सुनिश्चित करने हेतु सुचना एवं संचार प्रौद्योगिकी का प्रयोग कर अधिलेखों को पूर्ण पारदर्शी बनाने का प्रयास किया गया है। उचित मूल्य के दुकानों का संचालन सार्वजनिक संस्थाओं को प्रदान किया गया है जिससे कि कालाबाजारी जैसे समस्याएं समाप्त हो सकें। इसके अतिरिक्त राज्य सरकार खाद्य सामग्रीयों का पर्याप्त भण्डार भी सुरक्षित एवं संरक्षित करेगी।
12. अधिनियम में लक्षित सार्वजनिक वितरण प्रणाली से संबंधित अभिलेखों का प्रकटन तथा सामाजिक अंकेक्षण एवं निगरानी समिति के गठन का भी प्रावधान अध्याय 12 (धारा 22 से 24 तक) किया गया है।

छत्तीसगढ़ खाद्य सुरक्षा अधिनियम 2012 मानव अधिकारों के संरक्षण हेतु भोजन के अधिकार को पूर्णता प्रदान करता है जो कि संविधान के अनुच्छेद 47 जो यह सुनिश्चित करता है कि राज्य का यह कर्तव्य होगा कि वह पोषाहार स्तर और जीवन स्तर को उँचा करने को अग्रसर होगा।

निष्कर्ष एवं सुझाव – छत्तीसगढ़ खाद्य सुरक्षा अधिनियम 2012 छत्तीसगढ़ जैसे जनजातीय बाहुल्य राज्य के कमजोर नागरिकों के मानव अधिकारों के संरक्षण हेतु वरदान सिद्ध हुआ है जहाँ एक ओर भुखमरी एवं दुर्भीक्ष जैसे समस्याएं आती रहती हैं वहीं इस अधिनियम के लागू होने से इस प्रांत के नागरिकों को भरपेट भोजन उपलब्ध होना इस अधिनियम की सफलता है।

छत्तीसगढ़ प्रांत में महिलाओं एवं बच्चों का पोषाहार स्तर में गिरावट एक प्रमुख समस्या थी जिसे कि समय-समय पर दूर करने का प्रयास शासन एवं प्रशासन द्वारा किया जाता रहा है जिसका समुचित निराकरण नहीं हो सका परंतु इस अधिनियम के लागु होने के उपरान्त राज्य के गाँवों से लेकर कस्बों तक महिलाओं एवं बच्चों को उच्च स्तर का पोषाहार का वितरण एवं उसकी सफलता स्पष्ट दिखाई देने लगी है। इस अधिनियम के प्रावधानों में महत्वपूर्ण प्रावधान महिला सशक्तिकरण का है प्रदेश के सभी राशन कार्डो पर महिला मुखिया का होना इस बात का परिचायक है कि छत्तीसगढ़ देश का एकमात्र ऐसा राज्य है जहाँ प्रत्येक परिवार में महिलाओं की भूमिका सुनिश्चित की गई है।

इस प्रकार निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है कि छत्तीसगढ़ खाद्य सुरक्षा अधिनियम अंतर्राष्ट्रीय अभिसमयों, घोषणाओं के अनुरूप कमजोर वर्गों के मानवाधिकारों के संरक्षण में सहायक सिद्ध हुआ है।

सुझाव – इस शोध पत्र के निष्कर्षो के उपरांत निम्नलिखित सुझाव प्रस्तुत हैं –

1. छत्तीसगढ़ खाद्य सुरक्षा अधिनियम के तहत प्रदाय की जाने वाली खाद्य सामग्रीयों की गुणवत्ता के संबंध में नागरिकों की शिकायत को दूर करने हेतु निगरानी समितियों को अधिक पारदर्शिता से कार्य करना चाहिए।
2. वितरण प्रणाली को और अधिक जवाबदेह बनाये जाने की आवश्यकता है तथा सामाजिक अंकेक्षण के द्वारा प्राप्त समस्याओं का तत्काल निराकरण किया जाना चाहिए।,
3. विद्यालयों एवं आश्रमों तथा आंगनबाड़ी केन्द्रों पर वितरण की जाने वाली खाद्य सामग्रीयों को और अधिक पौष्टिक बनाये जाने की आवश्यकता है।
4. छत्तीसगढ़ खाद्य सुरक्षा अधिनियम के तहत प्रदाय की जाने वाली खाद्यानो एवं पके हुए भोजन की गुणवत्ता के संबंध में जनप्रतिनिधियों एवं प्रशासनिक अधिकारियों की उपस्थिति में परीक्षण को सुनिश्चित किया जाना चाहिए।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. अग्रवाल, डॉ. एच. ओ., मानव अधिकार एवं अंतर्राष्ट्रीय विधि, सेन्ट्रल लॉ. पब्लि., इलाहाबाद
2. चतुर्वेदी, डॉ. मुरलीधर, भारत का संविधान, इलाहाबाद लॉ. पब्लि., इलाहाबाद
3. छत्तीसगढ़ खाद्य सुरक्षा अधिनियम 2012
4. कपूर, डॉ एस. के., मानव अधिकार, सेन्ट्रल लॉ. पब्लि., इलाहाबाद
5. पाण्डेय, डॉ. जय नारायण, भारत का संविधान, सेन्ट्रल लॉ. पब्लि., इलाहाबाद

विकासशील देशों में सहकारिता कानून का उद्‌भव एवं विकास

डॉ. ए. बी. सोनी * आर. पी. चौधरी **

शोध सारांश –यूरोप एवं उत्तरी अमेरिका में सहकारिता का उदय 19वीं सदी में (1840–1860)उर्ध्वगामी रहा, जबकि विकासशील देशों में सहकारिता का विकास अधोगामी संरचना के रूप में 20वीं सदी में हुआ (भारत में यह प्रक्रिया 1904 से प्रारंभ हुई)। अमेरिका और यूरोपीय देशों में सहकारिता कानून का प्रारम्भिक विकास उपनिवेशिक प्रशासन का आधार रहा, जबकि भारत वर्ष में सहकारिता का विकास उपनिवेशिक वैचारिक पृष्ठभूमि पर आधारित था। इसके लिए सरकार द्वारा प्रशासनिक ढ़ाँचा तैयार किया गया। जिसका उद्देश्य सहकारी क्षेत्र को विधिक मान्यता देने के अतिरिक्त उनके मार्ग दर्शक के रूप में कार्य करने का उत्तरदायित्व भी था। सहकारिता के विकास के लिए सामान्यत: उपनिवेशिक विकासात्मक परियोजनाओं के पूरक के रूप में सहकारिता कानून परित किये गये। जिससे कृषकों की उपज की मात्रा एवं गुणवत्ता में वृद्धि हो सके, और उसका निर्यात कर स्वदेशी जनों को मौद्रिक अर्थव्यवस्था का लाभ मिल सके, ताकि शासन को करारोपण में सुविधा हो तथा राजनीति नियंत्रित आर्थिक क्रियाओं के लिए एक पद्धति का विकास हो सके। इस आलेख में विकासशील देशों मे सहकारिता कानून के उद्‌भव एवं विकास का ऐतिहासिक विवेचन एवं सहकारिता के सार्वभौमिक सिद्धांतों का अनुपालन किये जाने की सीमा का विश्लेषण प्रस्तुत है।

प्रस्तावना – सहकारिता के सिद्धांतों की विकास यात्रा – सहकारिता के सिद्धांतो का यूरोप एवं उत्तरी अमेंरिका में 19वीं सदी के प्रारम्भ में बहुत तेजी से विकास हुआ। सहकारिता के सिद्धांतो का 19वीं सदी के प्रारम्भ में 'ब्रिटिश रॉकडेल सोसायटी ऑफ इक्विटेबल' अग्रणी रहा। किन्तु 'जर्मन रेफेसेन सेविंग एवं क्रेडिट सोसाइटी' के सिद्धांतों को अग्रदूत माना जाता है। रॉकडेल सोसाईटी द्वारा 1940 एवं 1960 के मध्य में सहकारिता के सिंद्धातो का प्रकाशन किया गया। विश्व के विकासशील देशों ने भी सहकारिता के विकास के लिए इन्ही सिद्धांतो का अनुपालन किया।

ब्रिटिश रॉकडेल सोसाइटी की स्थापना 28 जुलाहों द्वारा 1844 में एक उपभोक्ता सहकारिता के रूप में की गई। इस सोसाइटी के सदस्यों के द्वारा एक स्टार्लिंग पौण्ड का अंशदान दिया जाता था। इस सहकारी समिति का उद्धेश्य जुलाहों के द्वारा बनाये गये कपड़ों को बिना लाभ कमाये बेचना था। धीरे–धीरे इस सोसायटी के कार्यकालापों में वृद्धि होने लगी और इसके सदस्य जुलाहों के उत्पाद को खुदरा बाजार में कुछ लाभ लेकर बेचने लगे, तथा लाभ को विक्रय के अनुपात में विभाजन करने लगे। राकडेल सोसाइटी द्वारा जिन नियमों का पालन किया था उन्ही नियमों को बाद में रॉकडेल सिद्धांत के रूप में स्वीकार करते हुए इग्लैंड एवं अन्य यूरोपीय देशों के द्वारा अपनाया गया।

विश्व के विभिन्न देशों द्वारा रॉकडेल के सिद्धांत में कुछ परिवर्तन के साथ अन्तर्राष्ट्रीय सहकारी आन्दोलन के रूप में पूरे विश्व में स्थापित हुआ। संयुक्त राज्य अमेंरिका में भी 1876 में और अन्तर्राष्ट्रीय सहकारी एलायन्स (सहयोगीयों) ने 1937 में रॉकडेल के सहकारी सिद्धांतों को अंगीकार किया। उपनिवेशिय देशों के द्वारा भी इन्हीं सिद्धांतो के आधार पर सहकारिता आंदोलन का विस्तार किया गया। किन्तु सत्ता पर अधिकार करने के पक्षकार नेताओं द्वारा सहकारिता के प्रजातांत्रिक सिद्धांत, प्रजातंत्रिक नियंत्रण पर प्रश्न चिंह खड़ा किया गया। सन् 1966 में International Co-operative Alliance (I.C.A.) ने पूर्ण विकसित सहकारिता और विकास की प्रक्रिया में सहकारिता के व्यवहारिक सिद्धांतों में अन्तर को स्पष्ट किया। I.C.A. ने इसे स्पष्ट करते हुए सहकारी संगठन के प्रबंधन में प्रजातांत्रिक व्यवस्था को बाह्य नियंत्रण के लिए स्वाशासीय होना आवश्यक बताया, किन्तु नवविकसित या विकासशील राष्ट्रों में जहां लोग सहाकरिता आन्दोलन की नींव रख रहे थे, वहां उन्हें समितियों के सफलता पूर्वक संचालन हेतु आवश्यक प्रबंधन क्षमता में अभाव के कारण प्रबंधन में प्रजातांत्रिक व्यवस्था सफल नहीं हो सकती थी। अत: I.C.A. ने सुझाव दिया कि प्रबंधन क्षमता रखने वाले व्यक्ति को प्रबंधन मंडल में सम्मिलित किया जाना चाहिए। ताकि वह समीति के सदस्यों को प्रबंधन की तकनीकी जानकारी से अवगत करा सके।

सहकारिता के प्रबंधन के संबन्ध में I.C.A. के विचार 1996 – I.C.A. के कथन के अनुसार समान आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक आवश्यकता की पूर्ति के किए व्यक्तियों के स्वौच्छिक समूह को सहकारिता कहा गया। स्व–सहायता, स्वयं की जिम्मेंदारी, प्रजातांत्रिक ढ़ांचा, समानता व एकता को इस आन्दोलन का आधार माना गया। इसके अतिरिक्त कुछ आधारभूत नैतिक मूल्य जैसे इमानदारी, पारदर्शिता, सामाजिक जिम्मेंदारी और दूसरों की सहायता को इस आन्दोलन का आधार माना गया।

I.C.A. द्वारा सहकारिता के मूल्यों को मूर्त रूप देने के लिए निम्नलिखित सिद्धांत बनाये गये है–

1. स्वैच्छिक एवं खुली सदस्यता।
2. सदस्यो का प्रजातांत्रिक नियंत्रण।
3. आर्थिक सहभागिता।
4. स्वशासीय एवं स्वतंत्र नियंत्रण।
5. सदस्यों की शिक्षा एवं प्रशिक्षण।
6. सुदृढ़ सूचना तंत्र।
7. सहकारी संस्थाओं के मध्य सहयोग।
8. समुदायिक विकास का संकल्प।

सन् 1966 में अन्तर्राष्ट्रीय श्रम संगठन [International Labour Organization (I.L.O.)] ने अपनी अनुसंशा क्र. 127 के अन्तर्गत विकासशील देशों के आर्थिक एवं सामाजिक विकास में सहकारी संस्थाओं की भूमिका के संबंध में प्रस्ताव पारित किया। यद्यपि I.L.O. ने सहकारिता के संबंध में कानून सुधार संबंधी व्यवस्था के अंतर्गत सहकारिता के प्रारंम्भिक चरण में प्रशासनिक सहायता, पर्यवेक्षण अधिकार, सहकारिता आधिकारी की नियुक्ति एवं उनको सलाह एवं मार्गदर्शन देने का प्रावधान किया था,

* प्राचार्य,डी.पी. विप्रा विधि महाविद्यालय, बिलासपुर (छ.ग.) भारत
** शोधार्थी (विधि) डॉ. सी. वी. रमन विश्वविद्यालय कार्गी रोड़, कोटा, बिलासपुर (छ.ग.) भारत

किंतु विकासशील देशों द्वारा इस प्रावधान का उपयोग सहकारिता आन्दोलन के नियंत्रक के रूप में किया जाने लगा। इसलिए 1970-80 के दशक में राज्य नियंत्रण के विरोध में कई प्रस्ताव आये जिसमें सहकारिता के विकास में राज्य की भूमिका का पुनर्परीक्षण करने का अनुरोध किया गया। अत: 1995 में अंतर्राष्ट्रीय सहकारी सहयोगी संगठन द्वारा सहकारी आंदोलन को शासन के हस्तक्षेप से मुक्त रखने एवं उन्हें स्वशासी निकाय के रूप में कार्य करने की स्वतंत्रता दी जाने की अनुशंसा की गई। इसके पश्चात् I.L.O. ने सन् 1993 की अपनी अनुशंसा क्र. 193 को जिसके अन्तर्गत राज्य के प्रशासनिक हस्तक्षेप करने का प्रस्ताव किया था को अपने 2002 की अनुशंसा में समाप्त कर दिया और सहकारिता की अपनी अलग पहचान बनाने की अभिस्वीकृति दी। आज विश्व के सभी देश इससे सहमत है कि सहकारिता संस्थाओं को शासन के नियंत्रण से मुक्त रखा जाये। आज इन्हीं आधारभूत सिद्धांतो के आधार पर विश्व में सहकारिता विकसित हो रही है।

भारत में सहकारिता का विकास – भारत में सहकारिता एक राज्य प्रशासित सहकारी आंदोलन के रूप में सहकारी साख समिति अधिनियम 1904 के पश्चात् अस्तित्व में आया। इस अधिनियम का आधार ब्रिटिश इंडस्ट्रियल एण्ड प्रोविडेन्ट सोसायटीज एक्ट था जिसके अन्तर्गत शासन द्वारा विशेष रूप से नियुक्त रजिस्ट्रार ऑफ फ्रेन्डली सोसायटीज के पास अपना पंजीयन कराना आवश्यक था। रजिस्ट्रार को वे सभी अधिकार प्राप्त थे जो एक कम्पनी के रजिस्ट्रार को प्राप्त होते थे। किन्तु भारत में रजिस्ट्रार की भूमिका को विस्तारित करते हुए उन्हें संस्थापक, नियामक और सलाहकार का भी उत्तरदायित्व दिया गया। इस अधिनियम को मिश्रित स्वरूप का कानून कहा गया। इस कानून के अंतर्गत रजिस्ट्रार को सलाह देने, उपनियम बनाने, सहकारी सिद्धांतो की शिक्षा देने का अधिकार था। किन्तु उसे प्रताड़ित करने एवं दण्ड देने का अधिकार नहीं था। समय के साथ जब सहकारी संस्थाएं आर्थिक रूप से सक्षम होती गई एवं स्वशासन (self governance) की भूमिका बढ़ती गयी तो रजिस्ट्रार के अधिकार भी कम होते गये।

इम्पीरियल लेजिस्लेटिव कमेंटी के सदस्य डेनियल हेमिल्टन ने सहकारिता कानून का प्रारूप 1904 में ब्रिटिश शासन के औपनिवेशिक हितों को ध्यान में रखते हुए तैयार किया था। उनका कहना था ब्रिटिश शासन यह कभी नहीं भूलती कि भारत को एक करना है और विश्व में यह बताना है कि यहां ब्रिटिश शासन है और ब्रिटिश शासन के हाथ में पूरे भारत को एक करने में सहकारिता आन्दोलन के रूप में महत्वपूर्ण अस्त्र है।

सहकारिता के विकास में शासन के हस्तक्षेप को कम करने की अवधारणा के विरूद्ध समय-समय पर किये गये कानूनी संशोधन से रजिस्ट्रार के अधिकार बढ़ते ही गये। उदाहरण के लिए बाम्बे को आपरेटिव सोसाइटी एक्ट 1925 के अंतर्गत शासन को सहकारी संस्थाओं की अंश पूंजी में भागीदार बनने का अधिकार दिया गया। इससे शासन का सहकारी संस्थाओं पर प्रत्यक्ष नियंत्रण बढ़ गया। इसी तरह मद्रास को-ऑपरेटिव सोसायटिज एक्ट 1932 में सहकारी प्रबंधन समिति को भंग करने का स्वविवेकाधीन अधिकार रजिस्ट्रार को दिया गया।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् भी सहकारी संस्थाओं पर शासन के नियंत्रण में वृद्धि होती गयी। सन् 1955 में शासन द्वारा नियुक्त अध्ययन दल ने अपने प्रतिवेदन में यह स्पष्ट किया कि ग्रामीण वित्तीय व्यवस्था और किसानों की आवश्यकता को सहकारी संस्थायें पूरा करने में असफल रही। इसलिए अलग-अलग स्तर पर शासन की भागीदारी सुनिश्चित करने का प्रस्ताव रखा। इसके पश्चात् अधिनियमित विधि के प्रावधानों के अंतर्गत रजिस्ट्रार को सहकारी संस्थाओं को भंग करने, उपनियम में संशोधन करने, ऋण की सीमा निर्धारित करने, प्रबंध समीति में सदस्यों की संख्या निर्धारित करने, प्रबंध समिति में नियुक्ति तथा सभी विभागीय मामलों एवं विवादों के निपटारे के न्यायिक अधिकार दिये गये।

उपसंहार – भारत वर्ष में सहकारिता की ऐतिहासिक पृष्ठ भूमि के अनुसार ही विश्व के विभिन्न स्वशासी देशों में भी अपनी स्वतंत्रता के पश्चात् सहकारिता कानून एवं विनियमों में संशोधन कर के सहकारिता में शासन की भूमिका को बढाया। संस्थागत् ढांचे में 1960-70 के दशक में किये गये सभी परिवर्तनों में सामान्य तत्व निम्नलिखित थे –

1. सहकारिता विभाग को सहकारी प्रबंधन के कर्मचारियों की नियुक्ति एवं पदच्युति तथा प्रमुख व्यवसायिक निर्णयों को अनुमोदित करने की शक्ति दी गयी।
2. सहकारिता कर्मचारियों को राज्य कर्मचारियों के समकक्ष माना गया।
3. सहकारी संस्थाओं को न्यायलय में याचिका दायर करने अनुबंध करने और शासन की अनुमति के बिना ऋण लेने पर वैधानिक प्रतिबंध लगाया गया है।
4. सहकारी संस्थाओं को लाभ अर्जित करने हेतु व्यवसाय करना प्रतिबंधित किया गया है।?
5. सहकारी संस्थाओं को अपना संध गठित कर बीमा, शिक्षा एवं अंकेक्षण जैसी सेवायें देना प्रतिबंधित किया गया है।
6. सहकारी संस्थाओं को किसी राजनैतिक दल से संबंधित नहीं होना चाहिए।
7. सहकारिता की सदस्यता आज्ञापक नहीं है अर्थात् उस विशिष्ठ क्षेत्र के लोगों को सदस्यता के लिए विवश नहीं किया जा सकता है।

उपर्युक्त प्रावधानों से सहकारिता पर विपरित प्रभाव पड़ा विभिन्न प्रतिबंधों के कारण सहकारी संस्थायें आर्थिक रूप से कमजोर हुई एवं शासन अधीनस्थ संस्था के रूप में कार्य करने लगी। परिणाम स्वरूप सदस्य संख्या घटने लगी और अनुदान पोषित संस्था मुद्राकोष और विश्व बैंक के द्वारा सहकारिता के शासकीय हस्तक्षेप की इन नीतियों को अनुचित बताते हुए सहकारिता के मूलभूत सिंद्धांतो के आधार पर उनका विकास किये जाने की दिशा में पहल करने की अनुशंसा की गयी।

वर्तमान से विभिन्न राष्ट्रों में यह सहमति दिखाई दे रही है कि सहकारिता में शासन का हस्तक्षेप कम से कम होना चाहिए और विकसित और विकासशील देशों के सहकारिता के कारकों में विविधता नहीं होना चाहिए। इसे शासन के नियंत्रण से मुक्त कर स्वशासी संस्था के रूप में अधिकार मिलना चाहिए

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. Hans – H. Munkner and A. Shah 100 Year of Co-operative Societies Act, India 1904 (2005)
2. Madhav- V. Madane A Century of co-operative Legislation State control to Autonomy to state partnership (2005)
3. David Thompson – Co-operative principles then and now. (1994)
4. I.L.O. office Recommendation 127 – R & 193 Role of the co-operative in the economic and social Development in the Developing countries (1996) & 2002
5. Report of the I.C.A. commission on co-operative principles (1996)
6. International co-operative alliance co-operative values in changing world's 1992.

Web site : -

1. www.cooperativegrocercoop/articles/indexphdid-158.
2. www.wisc.edu/uwcc/icic/def-hist/gen-info/report-of-theICA-commission-on-co-opera1/indexhtml.

विद्यार्थियों की सामाजिक अध्ययन में रूचि व शैक्षिक उपलब्धि का अध्ययन

डॉ. दीपिका गुप्ता *

प्रस्तावना – वर्तमान में हम बेरोजगारी एवं अनुपयुक्त रोजगार जैसी बड़ी समस्या से गुजर रही हैं। देश की उन्नति वहां की शिक्षा व स्वास्थ्य की समुचित व्यवस्था पर निर्भर करती हैं। शिक्षा को उद्देश्यपरक और उपयोगी बनाने के लिए उसमें समयानुसार परिवर्तन अपेक्षित होता है, जिससे बालक एवं बालिकाएं राष्ट्रोत्थान में अपनी सकुशल भूमिका निभा सकें। आधुनिक शिक्षा व्यक्ति की योग्यता पर निर्भर करती है। शिक्षा समाज के सदस्यों में सुधार लाने का साधन है। यह सुधार शिक्षक द्वारा लाया जाता है। शिक्षक उचित वातावरण के द्वारा लाया जाता है। शिक्षक उचित वातावरण के द्वारा व्यक्ति एवं समाज की आवश्यकताओं के अनुसार शिक्षा के प्रक्रिया की व्यवस्था करने के लिजिम्मेदार होता है। आज हमने नामांकन में लगभग 100 प्रतिशत सफलता प्राप्त कर ली है, पर आज भी अपव्यय व अवरोधन की समस्या यथावत बनी हुई हैं जिससे वह परीलक्षित होता है कि कहीं ना कहीं हमने समय की जरूरत व रूचि को पाठ्यक्रम के निर्माण में ध्यान नहीं दिया है।

आज भी स्कूलों से विद्यार्थियों का अपव्यय अवरोधन निरंतर जारी है, जिसमें कहीं ना कहीं पाठ्यक्रम का अरूचिपूर्ण होना भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। अतः हमें छात्रों की रूचि का विशेष ध्यान हर विषय में देना चाहिए।

माध्यमिक स्तर की बात करें तो विषय का दायरा और बढ़ जाता है, अब उनके सामने हिंदी, गणित, विज्ञान के अलावा अंग्रेजी, संस्कृत व सामाजिक अध्ययन सामने आते हैं। अब विद्यार्थियों की रूचि किसी एक या दो विषयों में उभरकर सामने आने लगती है।

उद्देश्य–

1. सामाजिक अध्ययन में छात्र–छात्राओं की रूचि का तुलनात्मक अध्ययन करना।
2. सामाजिक अध्ययन में छात्र–छात्राओं की उपलब्धि का तुलनात्मक अध्ययन करना।
3. सामाजिक अध्ययन में विद्यार्थियों की रूचि व शैक्षिक उपलब्धि के आपसी संबंधों का अध्ययन करना।

उपकल्पना–

1. सामाजिक विज्ञान में छात्र व छात्राओं की रूचि में कोई सार्थक अंतर नहीं है।
2. सामाजिक विज्ञान में छात्र व छात्राओं की शैक्षिक उपलब्धि में कोई सार्थक अंतर नहीं है।
3. सामाजिक विज्ञान के अध्ययन में रूचि व विद्यार्थियों की उपलब्धि में कोई सार्थक संबंध नहीं है।

सीमाएं–

1. यह अध्ययन भोपाल जिसे से प्राप्त न्यादर्श पर आधारित है।
2. इसमें सिर्फ कक्षा 8वीं के 200 विद्यार्थियों के अध्ययन पर आधारित है।
3. शोध के लिए केवल राज्य शासित शासकीय विद्यालयों को चुना गया है।
4. यह अध्ययन केवल भोपाल जिले के संदर्भ में होगा।

अध्ययन की पद्धति– प्रस्तुत अध्ययन हेतु प्रदत्यों का संकलन मध्यप्रदेश के भोपाल जिले में किया गया है। यहां कि विकास खंड़ों के ग्रामीण और शहरी विद्यालयों से कक्षा आठवीं के बालक–बालिकाओं का चयन किया गया, जो राज्य शासित शासकीय विद्यालयों में पढ़ते हैं। प्रदत्तों को यदृच्छिक न्यादर्श के आधार पर चुना गया। क्योंकि इससे पक्षपात से मुक्ति मिलती है। व्यक्तिगत पक्षपात के लिए इस विधि में कोई स्थान नहीं रह जाता। यह समष्टि का पूर्ण रूप से प्रतिनिधित्व करता हैं, समय व धन के दृष्टिकोण से यह विधि कम खर्चीली है। यह विधि वैज्ञानिक तथा सरल है, लेकिन प्रस्तुत अध्ययन में न्यादर्श का चयन सुविधानुसार सोद्देश्य व सादृच्छिक विधि से किया गया हैं।

प्रस्तुत अध्ययन हेतु विद्यालयों के कक्षा आठवीं को चुना जिसमें से 50 प्रतिशत विद्यालय शहरी व 50 प्रतिशत ग्रामीण क्षेत्र के थे। शोध हेतु संपूर्ण कक्षा से 25–25 विद्यार्थियों को चुना। अत: यादृच्छिक न्यादर्श का प्रयोग किया गया। चयन की गई शालाओं में समान सामाजिक, आर्थिक स्तर के बालक–बालिकाएं अध्ययनरत है। अत: इन शालाओं का चयन किया गया है। इस प्रकार 200 विद्यार्थियों का चयन किया गया है।

विश्लेषण एवं व्याख्या–

परिकल्पना क्रंमाक–1 सामाजिक अध्ययन में छात्र–छात्राओं की रूचि में सार्थक अंतर नहीं है।

तालिका क्रंमाक 10

छात्र व छात्राओं की सामाजिक अध्ययन में रूचि दर्शाने वाली 'टी' मूल्य की सार्थकता

चर	लिंग	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	स्वंतत्रता अंश	टी का
रूचि	छात्र	100	91.10	7.56	1.98	1.37
	छात्राएं	100	88.12	5.39		

सार्थकता स्तर 0.05 स्तर पर = 1.97 df = .198

तालिका क्रंमाक 4.2.1 से ज्ञात होता है कि छात्र व छात्राओं की रूचि का मध्यमान प्राप्तांक क्रंमाक 91.10 एवं 88.12 इसमें अधिक अंतर नहीं

* अटल बिहारी वाजपेयी हिन्दी विश्वविद्यालय, भोपाल (म.प्र.) भारत

पाया गया। प्राप्त टी परीक्षण का मान 1.37 है जो कि विश्वास स्तर 0.05 स्तर के मूल्य से कम हैं। अत: यह 0.05 स्तर पर सार्थक नहीं है।

अत: यह परिकल्पना स्वीकृत की जाती है। निष्कर्षत: यह बताया जा सकता है कि छात्र व छात्राओं की सामाजिक अध्ययन में रूचि में सार्थक अंतर नहीं पाया गया।

परिकल्पना क्रंमाक - 2

छात्र व छात्राओं की सामाजिक अध्ययन की शैक्षिक उपलब्धि में कोई सार्थक अंतर नहीं है।

प्रस्तुत परिकल्पना की जांच के लिए 'टी' का मान निकाला गया।

तालिका क्रंमाक 2.0

छात्र व छात्राओं की सामाजिक अध्ययन में शैक्षिक उपलब्धि को दर्शाने वाली टी' मूल्य की सार्थकता

चर	लिंग	संख्या	मध्यमान	मानक विचलन	स्वंतत्रता अंश	'टी' का
शैक्षिक	छात्र	100	98.56	24.53	1.98	53.43
उपलब्धि	छात्राएं	100	103.91	26.04		

सार्थकता स्तर 001 स्तर पर = 2.60 df = .198

तालिका क्रमांक 4.2.2 से ज्ञात होता है कि छात्र व छात्राओं की सामाजिक अध्ययन में शैक्षिक उपलब्धि का मध्यमान प्राप्तांक क्रमश : 98.56 व 103.91 इसमें समानता पायी गई। प्राप्त टी परीक्षण का मान 5.343 है, जो 0.01 के मान से ज्यादा है। जो कि विश्वास स्तर 0.01 के मान से ज्यादा हैं। जो कि विश्वास स्तर 0.01 स्तर के मूल्य से अधिक हैं। अत: यह 0.01 स्तर पर सार्थक है।

इसका अर्थ यह है कि छात्र एवं छात्राओं की सामाजिक अध्ययन में शैक्षिक उपलब्धि में सार्थक अंतर है। अत: यह परिकल्पना अस्वीकृत की जाती है और निष्कर्ष निकलता है कि छात्र व छात्राओं की सामाजिक अध्ययन में शैक्षिक उपलब्धि में सार्थक अंतर है।

परिकल्पना क्रमांक-3

सामाजिक अध्ययन के अध्ययन के रूचि व विद्यार्थियों की उपलब्धि में कोई सार्थक संबंध नही हैं।

तालिका क्रमांक 3.0

सामाजिक अध्ययन में उपलिब्ध व रूचि संबंध दर्शाने का विवरण

चर	सहसंबंध गुणांक
सामाजिक अध्ययन में रूचि	0.06
सामाजिक अध्ययन में उपलब्धि	

सामाजिक अध्ययन में छात्रों की रूचि व उपलब्धि में आंकड़ों के विश्लेषण से ज्ञात हुआ कि छात्रों कि सामाजिक अध्ययन में रूचि व शैक्षिक उपलब्धि में सहसंबंध गुणांक 0.06 है। अत: यह स्पष्ट है कि विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि एवं सामाजिक अध्ययन में रूचि के बीच नगण्यात्मक सहसंबंध है। अर्थात् शैक्षिक उपलब्धि में सामाजिक अध्ययन में रूचि बढ़ने का कोई प्रभाव नहीं पड़ता हैं या उनमें कोई विशेष संबंध नहीं है। अभिभावकों व शिक्षकों का दबाव, उच्च अंक प्राप्त करने की अभिलाषा भी शैक्षिक उपलब्धि को प्रभावित करती है।

निष्कर्ष-

इस शोध के निम्न निष्कर्ष प्राप्त हुए-

1. छात्र व छात्राओं में सामाजिक अध्ययन में रूप का मध्यमान क्रमश: 91.10 व 88.12 पाया गया। अत: इससे यह निष्कर्ष निकलता है कि लिंग भेद का सामाजिक अध्ययन विषय में रूचि पर विशेष प्रभाव नहीं है।

आज समाज में लड़के व लड़कियों में अंतर कम हो रहा है। सभी को समान अवसर दिये जा रहे है। अत: उनकी रूचि भी लगभग समाज देखने को मिल रही है।

2. छात्र व छात्राओं की शैक्षिक उपलब्धि का मध्यमान क्रमश: 9856 व 103.91 है, जिससे यह निष्कर्ष निकलता है कि छात्र व छात्राओं की शैक्षिक उपलब्धि में न्यूनतम अंतर प्रदर्शित होता है।

3. सामाजिक अध्ययन में शैक्षिक उपलब्धि व सामाजिक अध्ययन में छात्रों की रूचि में सहसंबंध 0.06 है जो नगण्यात्मक है इस बात का प्रमाण है कि सामाजिक अध्ययन में विद्यार्थियों की रूचि व शैक्षिक उपलब्धि में कोई विशेष संबंध नहीं है।

सामाजिक अध्ययन में विद्यार्थियों की रूचि व शैक्षिक उपलब्धि में विशेष संबंध के अभाव से स्पष्ट है कि उपलब्धि को केवल रूचि ही प्रभावित नहीं करती बल्कि अन्य कारक तथा शिक्षक का अभिभावक का या परीक्षा में उच्च प्राप्तांक प्राप्त करने का दबाव भी प्रभावित करता है। आज के प्रतियोगिता के युग में विद्यार्थी को हर विषय पढ़ना ही पढ़ता है। वह उच्च अंक प्राप्त करने के लिए अध्ययन करता है। आज बालक उच्च अंक प्राप्त किये बिना आगे के अध्ययन हेतु वांछित विषय प्राप्त नहीं कर सकते। अत: वे उच्च अंक प्राप्ति हेतु कठोर परिश्रम करते हैं। किसी एक या दो विषय की वजह से विद्यार्थी, अपनी संपूर्ण प्राप्तांक को प्रभावित नहीं करना चाहते। अत: उनमें रूचि हो न हो वो उच्च अंक प्राप्त करना चाहते हैं।

निष्कर्ष के आधार पर विश्लेषण-

1. विद्यार्थियों की रूचि उनकी उपलब्धि की अधिक प्रभावित नहीं करती है। अत: छात्रों की रूचि कम हो तो भी परेशान नहीं होना चाहिए।
2. शैक्षिक उपलब्धि को प्रभावित करने वाले कारकों को पता लगाकर कम करने वाले को घटना व शैक्षिक उपलब्धि बढ़ाने वाले कारकों को बढाने का प्रयास करना चाहिए।
3. कुछ बातों जो विद्यार्थियों को पसंद नहीं हैं, जैसे किताब का मोटा होना आदि को कम करने का प्रयास करना चाहिए।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. अग्रवाल जे.सी. (1994), सामाजिक अध्ययन शिक्षण, नई दिल्ली : विकास पब्लिशिंग हाउस प्रा0 लि0।
2. भोंडे, नीलम (2003), पढ़ाने का तरीका स्कूल टुडे, अक्टूबर 2003, एम.पी.नगर भोपाल।
3. बोंद किरण, समूजा (2004), शिक्षा एक विवेचन, नई दिल्ली : रवि बु स यमुना बिहार।
4. गैरेट, ई.एच. (1667), शिक्षा और मनोविज्ञान में सांख्यिकी, लुधियाना:कल्याण प्रकाशन।
5. खरे, अंजलि (1993-94), सामाजिक अध्ययन विषय में पर्याचरण के प्रभाव से शैक्षिक उपलब्धि में पड़ने वाले अंतर का अध्ययन, अप्रकाशित शोध, भोपाल बरकतउल्ला विश्वविद्यालय।
6. कौल, लोकश (1998), शैक्षिक अनुसंधान की कार्यप्रणाली , नई दिल्ली, विकास पब्लिशिंग हाउस प्रा0 लि0।

7. Marlo, Edigeer (2007), `Developing appereciation for the social studies' Edutracks Vol.7 No. 1 Neek janak publication Pnt. Hyderabad A.P. India.
8. राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा (2005-2006), राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद-2006 प्रकाशन विभाग के कार्यालय नई दिल्ली।
9. पाठक पीडी.(1995), शिक्षा मनोविज्ञान, आगरा : विनोद पुस्तक मंदिर।
10. राजौरिया , एम.(1998), कक्षा पांच में अध्ययनरत विद्यार्थियों की पर्यावरण संबंधी कठिन अवधारणाओं का अध्ययन, भोपाल बरकतउल्ला विश्वविद्यालय एम.एड.अप्रकाशित शोध प्रबंध।
11. राय पी.(1989), अनुसंधान परिचय, आगरा : विनोद प्रकाशन।
12. शर्मा आर.ए.(1986), शिक्षा अनुसंधान, मेरठ, लायल बुक डिपो।
13. तोमर गीता (2002), ग्रामीण तथा शहरी क्षेत्रों में कक्षा आठवीं के सामाजिक अध्ययन की भूगोल विषयांश कठिन शिक्षण बिन्दुओं का तुलनात्मक अध्ययन, अप्रकाशित शोध, भोपाल बरकतउल्ला विश्वविद्यालय।
14. त्यागी, गुरशरण दास (2007), सामाजिक अध्ययन शिक्षण, आगरा विनोद पुस्तक मंदिर।
15. वर्मा, प्रीति व श्रीवास्तव डी.एन.(1989) मनोविज्ञान एवं शिक्षा में सांख्यिकी, आगरा विनोद पुस्तक भंडार।

****

मंदसौर शहर के शासकीय विद्यालय के कक्षा 7 वीं की 'हिन्दी' बाल भारती पुस्तक में अंकित नैतिक मूल्यों का विद्यार्थियों के दैनिक जीवन पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन

डॉ. निशा महाराणा * निशा शर्मा **

शोध सारांश – प्रस्तुत शोध में मंदसौर जिले के माध्यमिक स्तर के दो शासकीय विद्यालयों के विद्यार्थियों के नैतिक मूल्यों का अध्ययन किया गया है। शोध के लिये मंदसौर जिले के दो शासकीय विद्यालय के 50–50 (कुल 100) विद्यार्थियों को न्यादर्श के रूप में चयनित किया गया है। प्रदत्तों के संकलन के लिये शोधकर्ता द्वारा हिन्दी बालभारती पाठ्य पुस्तक में अंकित मूल्यों पर आधारित स्वनिर्मित निर्धारण मापनी का उपयोग किया गया। इस उपकरण में 25 बहुविकल्पीय कथन निहित है। शोध परिणामों से प्राप्त हुआ है, कि विद्यार्थियों के दैनिक जीवन में नैतिक मूल्यों का अवमूल्यन हुआ है।

प्रस्तावना – वे मूल्य जिनके विकसित होने पर हमारे मन की चंचलता खत्म होती है, हमारी इच्छा शक्ति दृढ होती है। हमारे चित्त की एकाग्रता बढती है। जिसके फलस्वरूप हम सत्य तथा असत्य, पाप तथा पुण्य, बुरे तथा भले में अंतर समझते हुये जीवन में सुख व शांति की प्राप्ति करते हैं, नैतिक मूल्य कहलाते हैं।

नैतिक मूल्यों से ही मनुष्य सभ्य व संस्कारी बनते हैं। हमारे मूल्यों का विकास घर, परिवार, विद्यालय, समाज इत्यादि से होता है। नैतिक मूल्यों से परिपूर्ण व्यक्ति अपने कार्यो को सफलतापूर्वक करता है तथा जीवन में आत्मविश्वास, क्षमताओं और विभिन्न गुणों का विकास करता है।

एन. एन. दत्ता ने 1925 में 12 किशोरों पर सत्य के गुण के विकास का अध्ययन किया था।

परिभाषा – सी. पी. गुड – 'मूल्य वह चारित्रिक विशेषता है जो मनोवैज्ञानिक, सामाजिक और सौन्दर्यबोध की दृष्टि से महत्वपूर्ण मानी जाती है।'

समस्या कथन – 'मंदसौर शहर के शासकीय विद्यालय के कक्षा 7 वीं की हिन्दी बाल भारती पुस्तक में अंकित नैतिक मूल्यों का विद्यार्थियों के दैनिक जीवन पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन करना।

उद्देश्य –

1. पुस्तक में अंकित मूल्यों का दैनिक जीवन पर विद्यार्थियों की वरीयता प्रतिशत का अध्ययन करना।
2. शासकीय विद्यालय के विद्यार्थियों पर हिन्दी बाल भारती पाठ्य पुस्तक में अंकित नैतिक मूल्यों का उनके दैनिक जीवन पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन करना।

प्रविधि

न्यादर्श – प्रस्तुत शोध कार्य में जनसंख्या के रूप में मंदसौर शहर के दो शासकीय माध्यमिक विद्यालय के कक्षा 7 वीं के विद्यार्थी थे। शोध हेतु न्यादर्श के लिये यादृच्छिक न्यादर्श चयनित तकनीक अपनाई गई। शोध में दो शासकीय विद्यालयों के कक्षा 7 वीं के 50–50 (कुल 100) विद्यार्थियों को न्यादर्श के रूप में चयनित किया गया।

उपरोक्त सभी न्यादर्श माध्यमिक शिक्षा मंडल भोपाल से संबद्धता प्राप्त शासकीय विद्यालय के सत्र 2014–15 के नियमित तथा हिन्दी माध्यम के विद्यार्थी थे। जिनकी आयु 11–13 वर्ष के मध्य थी।

उपकरण – नैतिक मूल्य के मापन हेतु शोधकर्ता द्वारा निर्मित नैतिक मूल्य से संबंधित निर्धारण मापनी का उपयोग किया गया। जिसमें मुख्यत: 5 नैतिक मूल्यों जैसे – सामाजिक कर्तव्य बोध , स्वावलंबन, दृढ संकल्प, सत्यवादिता, देश प्रेम से संबंधित नैतिक मूल्यों को शामिल किया गया था।

प्रदत्त संकलन की विधि – शोधार्थी द्वारा प्रदत्तों के संकलन हेतु प्राचार्यो से अनुमति प्राप्त कर विद्यालयों के कक्षा 7 वीं के विद्यार्थियों से सोहार्दपूर्ण वातावरण में नैतिक मूल्यों से संबंधित निर्धारण मापनी भरवायी गई।

परिणाम एवं विवेचना – प्रस्तुत शोध अध्ययन का प्रथम उद्देश्य था– 'पुस्तक में अंकित मूल्यों का दैनिक जीवन में प्रयोग के लिये विद्यार्थियों की वरीयता प्रतिशत का अध्ययन करना।' इससे संबंधित प्रदत्तों का विश्लेषण निर्धारण मापनी के द्वारा किया गया। इसके परिणाम सारणी क्रमांक 1 में प्रस्तुत किये गये हैं।

सारणी क्रमांक 1 (देखे अन्तिम पृष्ठ पर)

विवेचना – प्रस्तुत शोध में प्रथम उद्देश्य के निष्कर्ष से यह परिणाम प्राप्त होते हैं कि नैतिक मूल्यों से संबंधित कथनो में सामाजिक कर्तव्य बोध के प्रति 55.8 % ऐसे विद्यार्थी है जिन्होंने दैनिक जीवन में सामाजिक कर्तव्य बोध की उपेक्षा की और स्वावलंबन के प्रति 56.4 विद्यार्थियों के दैनिक जीवन में कम रूचि रही। दृढ संकल्प के प्रति 58.8 विद्यार्थियों के दैनिक जीवन में अरूचि रही। सत्यवादिता के प्रति 62.8 विद्यार्थियों के दैनिक जीवन में सत्य की अवहेलना की। देश प्रेम के प्रति 66.6 विद्यार्थियों ने अपने देश के प्रति प्रतिबद्धता व्यक्त करते हुए देश प्रेम जैसे मूल्यों को अपने दैनिक जीवन में वरीयता प्रदान की।

इस प्रकार इस अध्ययन से यह निष्कर्ष प्राप्त हुए कि देश प्रेम के अतिरिक्त सामाजिक कर्तव्य बोध, स्वावलंबन, दृढ संकल्प, और सत्यवादिता के प्रति विद्यार्थियों का दैनिक जीवन में नैतिक मूल्यों का हनन पाया गया।

* प्राचार्य, सरस्वती शिक्षा महाविद्यालय, संजीत मार्ग, मंदसौर (म.प्र.) भारत
** सहायक प्राध्यापक , सरस्वती शिक्षा महाविद्यालय, संजीत मार्ग, मंदसौर (म.प्र.) भारत

प्रस्तुत शोध में द्वितीय उद्देश्य के निष्कर्ष से यह परिणाम प्राप्त हुए कि भौतिक सुख सुविधा की इस अंधी दौड व गला काट प्रतियोगिता एवं आडंबर के कारण विद्यार्थियों के दैनिक जीवन में नैतिक मूल्यों का अवमूल्यन हुआ है।

निष्कर्ष –

1. प्रथम उद्देश्य के परिणाम वरीयता प्रतिशत के आधार पर विद्यार्थियों में देश प्रेम के अतिरिक्त हिन्दी 'बाल–भारती' पुस्तक में अंकित अन्य नैतिक मूल्य जैसे– सामाजिक कर्त्तव्यबोध 'स्वावलम्बन' 'दृढ़ संकल्प' सत्यवादिता आदी का ह्रास हुआ है।
2. द्वितीय उद्देश्य में विद्यार्थियों पर हिन्दी 'बाल–भारती' पुस्तक में अंकित नैतिक मूल्यों का उनके दैनिक जीवन पर सकारात्मक प्रभाव रहा।

शैक्षिक निहितार्थ – प्रस्तुत शोध से यह प्राप्त हुआ है, कि पुस्तकों में अंकित नैतिक मूल्यों से विद्यार्थियों के व्यवहार में परिवर्तन आ सकते हैं। इसके लिये परिवार, समाज एवं विद्यालय को प्रयत्न करने चाहिये। परिवार में उनसे स्वयं का काम करना एवं सत्य बोलना इत्यादि सिखाना चाहिये और विद्यालय में सत्य पर आधारित कर्तव्यनिष्ठ, महान व वीर पुरूषों की गाथायें सुनानी चाहिये।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. वर्मा एवं यादव, मधुलिका एवं दीपमाला, भारतीय आधुनिक शिक्षा , अंक–1, जुलाई 2012
2. राठौड एवं महाराणा, मीना बुद्धिसागर एवं निशा, पर्यावरण शिक्षा एवं जागरूकता, अग्रवाल पब्लिकेशन्स, आगरा 2013–14
3. सूरती, डॉ. उर्वशी, नैतिक शिक्षा और बाल विकास, आत्माराम एण्ड संस, दिल्ली 1963।
4. माध्यमिक शिक्षा मण्डल द्वारा प्रकाशित कक्षा 8 वीं की हिन्दी पाठ्य पुस्तक 'बाल भारती'
5. कृष्णकांता, नैतिक शिक्षा , प्रभात प्रकाशन प्रथम संस्करण, दिल्ली 1997
6. शर्मा, निशा, कक्षा 8 वीं की हिन्दी पुस्तक 'बाल भारती' के माध्यम से पढायें जाने वाले पाठों में अंकित नैतिक मूल्यों का छात्र–छात्राओं के व्यावहारिक जीवन पर पडने वाले प्रभाव का अध्ययन करना, अप्रकाशित एम0 एड0 लघु शोध, विक्रम विश्वविद्यालय उज्जैन 2010–11
7. प्रेरणा –दीप, आत्मवत सर्वभूतेषु संकलन दीनानाथ बत्रा, प्रकाशक विद्या भारती संस्कृति शिक्षा संस्थान , संस्कृति भवन , कुरूक्षैत्र खण्ड 2 चतुर्थ संस्करण जून 2006.
8. शर्मा, सुनिल, हितोपदेश, सुबोध पब्लिकेशन्स।
9. समाजिक समरसता और हमारे संत विद्या भारती संस्कृति शिक्षा संस्थान, संस्कृति भवन , कुरूक्षैत्र, वैशाख पूर्णिमा 2065 विक्रमी, युगास्व 5110

सारणी क्रमांक 1 (अगले पृष्ठ पर देखे)

सारणी क्रमांक 1

विद्यार्थियों की नैतिक मूल्यों के प्रति वरीयता का प्रतिशत मान

क्र.	कथन	पूर्णत: सहमत	अनिश्चित	पूर्णत: असहमत
	सामाजिक कर्तव्य बोध से संबंधित कथनों पर विद्यार्थियों का अभिमत	प्रतिशत में	प्रतिशत में	प्रतिशत में
1	आपके मित्र के बचाव में आप झूठ बोलकर उसे बचा लेते हैं।	64	20	16
2	कक्षा को गंदा देखकर आप कक्षा की सफाई करवाने में मदद करते हैं।	36	18	46
3	परीक्षा में किसी प्रश्न का उत्तर नहीं आने पर आप नकल करने का प्रयास करते हैं।	59	27	14
4	अपने मित्र के द्वारा दोषारोपण करने पर उससे बदला लेने की भावना रखते हैं।	54	28	18
5	अपने मित्रों के साथ घूमने जाने पर आप बिना टिकिट यात्रा करना पसंद करते हैं।	66	22	12
	स्वावलंबन से संबंधित कथनों पर विद्यार्थियों का अभिमत			
6	टी वी देखते समय आपको प्यास लगने पर आप अपनी मॉ से पानी मांगते है।	57	24	19
7	पैसों की आवश्यकता होने पर आप बिना पूछे रखे हुए पैसे ले लेते हैं।	53	22	25
8	खाना खाने के पश्चात झूठे बर्तन सदैव उचित स्थान पर रखते हैं।	21	16	63
9	आप कुछ खाने के बाद पेपर या पॉलीथिन सदैव डस्टबीन में डालते हैं।	27	18	55
10	बालों में कंघा करने के बाद कंघा साफ करके उचित स्थान पर रखते हैं।	25	21	54
	दृढ संकल्प से संबंधित कथनों पर विद्यार्थियों का अभिमत			
11	साइकिल खराब हो जाने पर आप स्कूल नहीं जाते हैं।	61	19	20
12	स्कूल से अधिक गृहकार्य मिलने पर आप उसे पूरा न होने पर बहाना बनाते हैं।	66	20	14
13	आप कक्षा में प्रथम आना चाहते है,लेकिन गणित विषय में आप कमजोर है तो आप मेहनत करेगें।	24	20	56
14	आपको एक घंटे बाद स्कूल जाना है ओर आपको बाजार से सामान लाने को कहा जाता है तो आप मना कर देते है।	52	26	20
15	एक आवश्यक किंतु जोखिम पूर्ण कार्य दिये जाने पर आप उस कार्य को करने से मना कर देते हैं।	59	18	23
	सत्यवादिता से संबंधित कथनों पर विद्यार्थियों का अभिमत			
16	विद्यालय में 15 अगस्त पर मिठाई मिल चुकी है, चपरासी द्वारा पूछने पर नहीं मिली है, ऐसा कह देते हैं।	66	14	20
17	आपके मित्र ने अपने शिक्षक का पेन उठाया है, शिक्षक द्वारा पूछे जाने पर उसका नाम बता देते है।	24	18	58
18	आपसे आपके मित्र की पुस्तक खो गई है, आपके मित्र के द्वारा पूछे जाने पर आप झूठ बोल देते है।	61	19	30
19	स्कूल से जल्दी भागकर घर पहुॅचनें पर मॉ से पूछे जाने पर आप झूठ बोल देते हैं।	62	18	20
20	आपको पिक्चर के लिये पैसे चाहिये, और पिताजी से कारण पूछने पर आप सही कारण बता देते है।	20	13	67
	देश प्रेम से संबंधित कथनों पर विद्यार्थियों का अभिमत			
21	किसी कार्यक्रम की समाप्ति पर गाये जाने वाले 'जन-गण-मन' के समय आप सदैव सावधान की मुद्रा में खडे होकर राष्ट्रीय गान गाते है।	72	10	18
22	एक व्यापारी समय पर पूरा आयकर देश प्रेम की भावना के कारण जमा करते है।	7	20	73
23	सरकारी संपत्ति की, अपनी संपत्ति के समान सुरक्षा करते हो।	53	20	27
24	यदि कोई विदेशी आपके सामने देश की बुराई करता है, तो आप उसे अपने देश की महान बातों से अवगत करवाते हो।	75	5	20
25	देश भक्ति का अर्थ आप व्यक्तिगत रूप से सेना में भर्ती होना समझते है।	27	13	60

****

बच्चों के अकादमिक उन्नयन पर संशोधित गतिविधि आधारित शिक्षण सामग्री का प्रभाव – एक शोध अध्ययन

प्रमोद कुमार सेठिया * डॉ. महेश कुमार तिवारी **

प्रस्तावना – शिक्षा समाज का दर्पण है। बच्चों के विकास में शिक्षा की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। अत: प्रत्येक समाज का यह दायित्व होता है कि वह अपने बच्चों के लिए अच्छी प्राथमिक शिक्षा की व्यवस्था करे। संविधान के अनुच्छेद 45 एवं 86 वां संविधान संशोधन के तहत 6 से 14 आयु वर्ग के बच्चों की नि:शुल्क अनिवार्य शिक्षा का प्रावधान सामाजिक जागरूकता का परिचायक माना जा सकता है।

समता, ममता व क्षमता बच्चों की शिक्षा के आधारभूत बिंदु होना चाहिए। इसके लिए विद्यालयों का वातावरण समाज का सहयोग, बच्चों के प्रति लोगों व समाज की संवेदना और बच्चों के अधिकारों का सम्मान आवश्यक है । समाज व राज्य का दायित्व है कि हर बच्चा शाला में आये, स्वच्छ पर्यावरण में सीखे, सीखने का आनन्द अनुभव करें। उसकी जिज्ञासा को समाधान मिलें, सृजनात्मकता को बढ़ावा मिले। विद्यालय ऐसा हो जहाँ गतिविधि आधारित शिक्षण हो, हर बच्चा व अध्यापक प्रसन्नतापूर्वक सहभागिता से सीख रहा हो, वातावरण ऐसा हो कि छुट्टी की घण्टी बजने पर भी बच्चा विद्यालय में रूकना चाहे। यह एक स्वप्न जैसा लगता है।

बच्चों की गुणवत्तापूर्ण, समतामूलक, समुदाय आधारित शिक्षा के स्वप्न को सार्वभौमिकता द्वारा सर्वशिक्षा अभियान अन्तर्गत गतिविधि आधारित शिक्षण (ABL) द्वारा पूर्ण करने के प्रयास किये जा रहे हैं।

मध्यप्रदेश में गुणात्मक शिक्षा स्थापित करने हेतु एक सुनियोजित सीखने की प्रणाली के रूप में म.प्र. गतिविधि आधारित शिक्षण कार्यक्रम 2008–09 से प्रारंभ किया गया । RTE–2009 के प्रावधानों एवं NCF-2005 की अनुशंसाओं को पूरा करने के साथ यह कार्यक्रम बहुकक्षा बहुस्तरीय शिक्षण परिस्थिति का सकारात्मक हल प्रस्तुत करता है।

यह कार्यक्रम बच्चों के मनोविज्ञान पर आधारित है एवं आनन्ददायी, भयमुक्त वातावरण द्वारा सीखने सिखाने की प्रक्रिया को सुदृढ़ करता है।

शोध समस्या का चयन – विगत कुछ वर्षो के अनुभव, फीड बैक व शोध अध्ययनों के निष्कर्षो के आधार पर शिक्षण प्रक्रिया में संशोधन कर उसे सरलीकृत किया गया । वर्ष 2014–15 से कक्षा 1, 2 में सरलीकृत ए.बी.एल कार्यक्रम लागू किया गया।

यद्यपि प्रचलित ABL कार्यक्रम बाल मनोविज्ञान के अनुरूप है फिर भी विगत 5 वर्ष के शिक्षकों के शिक्षण अनुभवों, सुझावों, शोध निष्कर्षो एवं आर.टी.ई. 2009 के परिप्रेक्ष्य में प्रचलित ABL कार्यक्रम में बदलाव किये गये है जिसे सरलीकृत ABL कार्यक्रम नाम दिया गया है। सरलीकृत ABL कार्यक्रम में किये गये महत्वपूर्ण बदलाव इस प्रकार हैं –

1. शिक्षण सामग्री में बदलाव –
   - अभ्यास पुस्तिका व मेरी किताब को समेकित किया गया है।
   - पाठ्य पुस्तक सह अभ्यास पुस्तिका का उपयोग अभ्यास गृहकार्य, अवधारणा, आकलन हेतु किया जा सकेगा।
   - लोगो की संख्या कम की गई है।
   - कार्ड की संख्या कम की गई है।
   - लेडर भागवार न होकर कक्षावार है।
   - माइल स्टोन के दिन निर्धारित नहीं है, मासिक विभाजन कर दिया गया है।
   - लेडर में डिकोडिंग किया गया है।
2. शिक्षण प्रक्रिया में बदलाव –
   - समूह निर्धारण की प्रक्रिया नहीं की जाती है।
   - मूल्यांकन व अभिलेखीकरण कार्य सरल किया गया है।
   - कक्षा के लिये निर्धारित माइलस्टोन को उसी सत्र में पूर्ण किया जावेगा।
   - सतत व्यापक मूल्यांकन समाहित किया गया है।
   - गृह कार्य/प्रोजेक्ट कार्य का समावेष किया गया है।
   - सामग्री के रखरखाव व उपयोग को सरल किया गया है।
   - पाठ्यक्रम में माहवार लक्ष्य दिया गया है।
   - पुनर्शिक्षण की व्यवस्था की गई है।

परन्तु क्या वास्तविक रूप से इस बिन्दुओं का ABL में पालन हो रहा है? संशोधित बदलावों में विद्यार्थियों अकादमिक उन्नयन पर क्या प्रभाव हो रहा है। इन सब बातों का ध्यान में रखकर इन विषय पर शोध की अत्यन्त आवश्यकता प्रतीत होती है।

सरलीकृत ए.बी.एल सामग्री का कक्षा 1, 2 के बच्चों के अकादमिक उन्नयन पर पड़ने वाले प्रभावों को जानने हेतु प्रस्तुत लघु अवधि शोध किया गया है। इस शोध के परिणामों से ए.बी.एल. कार्यक्रम के बारे में महत्वपूर्ण तथ्य प्राप्त हुए हैं जो आगामी योजना के निर्माण में सहायक होंगे।

शोध शीर्षक– 'संशोधित ABL सामग्री की बच्चों के अकादमिक उन्नयन पर प्रभावशीलता का अध्ययन। (कक्षा 1 व 2 के सन्दर्भ में)'

उद्देश्य – चयन किए गए लघु शोध विषय हेतु निम्न उद्देश्यों को नियोजित किया गया है एवं इन्हीं के आधार पर परिकल्पनाएँ तय की गई है।

1. संशोधित ABL सामग्री का कक्षावार विषयवार विश्लेषण करना।
2. संशोधित ABL सामग्री से छात्रों के अकादमिक उन्नयन पर पड़ने वाले प्रभावों को शिक्षकों से जानना ।
3. संशोधित विषयवार ABL सामग्री का कक्षा 1 के विद्यार्थियों के अकादमिक उन्नयन पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन करना।

* शोधार्थी, पेसिफिक (PAHER) विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.) व सम्प्रति, वरिष्ठ व्याख्याता, डाइट, मन्दसौर (म.प्र.) भारत
** प्राचार्य, मेवाड़ गर्ल्स कॉलेज ऑफ टीचर्स ट्रेनिंग, चित्तौड़गढ़ (राज.) भारत

4. संशोधित विषयवार ABL सामग्री का कक्षा 2 के विद्यार्थियों के अकादमिक उन्नयन पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन करना।

शोध प्रविधि – जिले के एक विकासखण्ड मन्दसौर का चयन किया गया एवं 10 प्राथमिक विद्यालयों का पुन: यादृच्छिक चयन किया गया। प्रत्येक विद्यालय के कक्षा 1ली व 2री कक्षा के 10–10 बच्चों का परीक्षण किया गया। प्रत्येक विद्यालय की कक्षा 1ली व 2री का अध्यापन करने वाले शिक्षक तथा संशोधित ABL सामग्री में प्रशिक्षित शिक्षकों को प्रश्नावली देकर प्राप्त प्रदत्तों के आधार पर शोध के निष्कर्षों तक पहुँचा गया।

न्यादर्श – मन्दसौर जिले के दो विकासखण्डों की 362 शालाओं में ABL संचालित है । मन्दसौर विकासखण्ड की 322 एवं मल्हारगढ़ विकासखण्ड की 40 शालायें हैं। मन्दसौर विकासखण्ड का यादृच्छिक चयन किया गया। प्रस्तुत शोध हेतु 10 प्राथमिक विद्यालयों के 200 बच्चे तथा 34 शिक्षक न्यादर्श लिये गये।

उपकरण – प्रस्तुत शोध हेतु निम्नांकित उपकरणों का निर्माण किया गया।

1. शाला अवलोकन प्रपत्र एवं ABL कार्यक्रम के उन्नयन हेतु सुझाव प्रपत्र।
2. शिक्षकों हेतु स्वनिर्मित प्रश्नावली/साक्षात्कार अनुसूची का प्रयोग किया गया।
3. कक्षावार, विषयवार बच्चों के अकादमिक उन्नयन जानने हेतु परीक्षण लिया गया। कक्षा 1 व 2 में हिन्दी, गणित, अंग्रेजी विषय का परीक्षण लिया।

प्रदत्तों का संकलन – संशोधित ए.बी.एल. सामग्री की बच्चों के अकादमिक उन्नयन पर प्रभावषीलता ज्ञात करने हेतु उद्देश्य तय किये गये। उद्देश्यों के अनुरूप अध्ययन हेतु परिकल्पनाओं का निर्माण किया गया। संशोधित ए.बी.एल. सामग्री की उपयोगिता एवं उससे अध्यापन करने में आने वाली कठिनाइयों व अच्छाइयों को जानने हेतु एक शिक्षक प्रश्नावली बनाई गई इसमें 10 प्रश्न रखे गये। संशोधित ए.बी.एल. सामग्री एवं ए.बी.एल. पद्धति से कक्षागत शिक्षण प्रक्रिया को देखने हेतु एक अवलोकन प्रपत्र जिसमें 15 प्रश्न रखे गये एवं शिक्षकों के सुझाव जानने हेतु भी 12 प्रश्न की एक प्रश्नावली बनाई गई।

कक्षा एक व दो के बच्चों की गणित, हिन्दी व अंग्रेजी में अकादमिक उपलब्धि जानने हेतु बहुविकल्पीय परीक्षण बनाया गया। तीनों विषय के परीक्षण के आधार पर बच्चों की विषयवार औसत उपलब्धि के प्रदत्त प्राप्त किये गये।

संशोधित ए.बी.एल. सामग्री की कक्षा शिक्षण में उपयोगिता, सुदृढ़ता व शिक्षण प्रक्रिया के प्रति अभिमत शिक्षक प्रश्नावली के माध्यम से जाने गये। शिक्षक प्रश्नावली का प्रश्नवार विश्लेषण किया गया।

मुख्य सम्प्राप्तियाँ एवं निष्कर्ष – प्रस्तुत लघु अवधि शोध 'कक्षा एक व दो के संदर्भ में संशोधित ए.बी.एल. सामग्री की बच्चों अकादमिक उन्नयन पर प्रभावशीलता अध्ययन' को पूर्ण करने हेतु ए.बी.एल. कार्यक्रम में किये गये संशोधनों एवं बदलावों की पहचान की गई। संशोधित कार्यक्रम में किये गये बदलावों के अनुरूप शोध के उद्देश्य व परिकल्पना को निर्धारित किया गया। शोध के उद्देश्यों के अनुरूप शिक्षक प्रश्नावली, शाला अवलोकन प्रपत्र एवं बच्चों के अकादमिक उन्नयन को जानने हेतु विषयवार परीक्षण का निर्माण किया गया। स्वनिर्मित उपकरणों को यादृच्छिक रूप से चयनित न्यादर्श पर परीक्षण कर प्रदत्त प्राप्त किये गए। परिकल्पनाओं की जाँच हेतु सामान्य सांख्यिकी तकनीक का प्रयोग किया गया एवं उनका सत्यापन किया गया। उद्देश्यवार और परिकल्पना के अनुसार मुख्य संप्राप्तियाँ इस प्रकार हैं –

उद्देश्य 1 – संशोधित ए.बी.एल. सामग्री का कक्षावार विषयवार विश्लेषण करना।

संशोधित ए.बी.एल. सामग्री में अभ्यास पुस्तिका व 'मेरी किताब' को समाप्त कर 'पाठ्यपुस्तक सह अभ्यास पुस्तिका' तैयार की गई है 94.11 प्रतिशत शिक्षको के अभिमतानुसार यह परिवर्तन पूर्व से बेहतर है।

न्यादर्श के 97.05 प्रतिशत शिक्षकों के अभिमतानुसार सभी विषयों में कार्ड व लोगों की संख्या कम की गई है यह परिवर्तन पूर्व से बेहतर है।

न्यादर्श के 91.17 प्रतिशत शिक्षकों के अभिमतानुसार अध्यापन प्रक्रिया में प्रत्येक माइलस्टोन में रिक्त लोगों का रखा जाना पूर्व से बेहतर परिवर्तन है।

न्यादर्श के 91.17 प्रतिशत शिक्षकों के अभिमतानुसार मासिक मूल्यांकन हेतु 'कप' व अर्द्धवार्षिक, वार्षिक मूल्यांकन के लिए 'मेडल' का प्रयोग सभी विषयों में किया जाना पूर्व से बेहतर परिवर्तन है।

उद्देश्य 2 – संशोधित ए.बी.एल. सामग्री से छात्रों के अकादमिक उन्नयन पर पड़ने वाले प्रभावों को शिक्षकों से जानना।

न्यादर्श के 44.11 प्रतिशत शिक्षकों के अभिमतानुसार सभी बच्चों के माइलस्टोन समयावधि में एक साथ पूरा करने की व्यवस्था पूर्व से बेहतर है।

न्यादर्श के 91.17 प्रतिशत शिक्षकों के अभिमतानुसार संशोधित ए.बी.एल. में अभिलेखीकरण कम किया जाना पूर्व से बेहतर व्यवस्था है।

न्यादर्श के 73.52 प्रतिशत शिक्षकों के अभिमतानुसार 'पाठ्यपुस्तक सह अभ्यास पुस्तिका को गृहकार्य हेतु घर ले जाने का बच्चों व पालकों पर सकारात्मक प्रभाव है।'

न्यादर्श के 67.64 प्रतिशत शिक्षकों के अभिमतानुसार समूह निर्धारण प्रक्रिया में बदलाव पूर्व से बेहतर है।

न्यादर्श के 58.82 प्रतिशत शिक्षकों के अभिमतानुसार वर्तमान सामुदायिक सहभागिता में बदलाव पूर्ववत है या विशेष प्रभावित नहीं करता है। इसका कारण पालकों की बच्चों की शिक्षा के प्रति उदासीनता है।

शोधकर्ता द्वारा क्षेत्र भ्रमण के दौरान शाला अवलोकन भी किया गया। शाला अवलोकन प्रपत्र के आधार पर ए.बी.एल. शिक्षण प्रक्रिया, कक्षा गत शिक्षण प्रक्रिया, छात्र शिक्षक सम्बंध, छात्र–छात्रा संबंध, कक्षा के भयमुक्त, आनन्ददायी वातावरण के बारे में सकारात्मक फीडबैक मिला है।

शोधकर्ता द्वारा शाला अवलोकन के दौरान ए.बी.एल. कार्यक्रम के उन्नयन हेतु न्यादर्श शिक्षकों से एक प्रश्नावली के आधार पर सुझाव लिये गये। प्राप्त महत्वपूर्ण सुझाव इस प्रकार है।

ए.बी.एल. कार्यक्रम बहुकक्षा बहुस्तरीय शिक्षण की चुनौतियों का सकारात्मक हल प्रस्तुत करता है।

ए.बी.एल. कार्यक्रम कक्षा में बाल केन्द्रित गतिविधियों को बढ़ावा देने, भयमुक्त आनन्ददायी शैक्षिक वातावरण तैयार करने, स्वयं करके सीखने, स्वतंत्र अभिव्यक्ति के अवसर प्रदान करने में सहायक है।

ए.बी.एल. कार्यक्रम की मूल्यांकन प्रणाली बच्चों में परीक्षा के भय को समाप्त करती है।

उद्देश्य 3 – संशोधित विषयवार ए.बी.एल. सामग्री का कक्षा एक के विद्यार्थियों के अकादमिक उन्नयन पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन करना।

कक्षा एक के विद्यार्थियों की हिन्दी विषय के परीक्षण में औसत उपलब्धि 61.20 प्रतिशत प्राप्त हुई है।

कक्षा एक के विद्यार्थियों की गणित विषय के परीक्षण में औसत उपलब्धि 71.40 प्राप्त हुई है।

कक्षा एक के विद्यार्थियों की अंग्रेजी विषय के परीक्षण में औसत उपलब्धि 62.75 प्रतिशत प्राप्त हुई है।

कक्षा एक के तीनों विषय के परीक्षण में विद्यार्थियों की समेकित औसत उपलब्धि 65.10 प्रतिशत प्राप्त हुई है।

कक्षा एक के तीनों विषय के परीक्षण में न्यादर्श में ए व बी ग्रेड के विद्यार्थियों की संख्या अधिक होना अकादमिक उन्नयन को प्रदर्शित करता है।

इससे स्पष्ट है कि संशोधित विषयवार ए.बी.एल. सामग्री का कक्षा एक के विद्यार्थियों के शैक्षणिक स्तर पर प्रभाव सकारात्मक व बेहतर है। यह विद्यार्थियों के अकादमिक उन्नयन को प्रदर्शित करता है।

उद्देश्य 4 – संशोधित विषयवार ए.बी.एल. सामग्री का कक्षा दो के विद्यार्थियों के अकादमिक उन्नयन पर पड़ने वाले प्रभाव का अध्ययन करना।

कक्षा दो के विद्यार्थियों की हिन्दी विषय के परीक्षण में औसत उपलब्धि 62.00 प्रतिशत प्राप्त हुई है।

कक्षा दो के विद्यार्थियों की गणित विषय के परीक्षण में औसत उपलब्धि 67.55 प्रतिशत प्राप्त हुई है।

कक्षा दो के विद्यार्थियों की अंग्रेजी विषय के परीक्षण में औसत उपलब्धि 59.40 प्रतिशत प्राप्त हुई है।

कक्षा दो के तीनों विषय के परीक्षण में विद्यार्थियों की समेकित औसत उपलब्धि 62.98 प्रतिशत प्राप्त हुई है।

कक्षा दो के तीनों विषय के परीक्षण से न्यादर्श में ए व बी ग्रेड के विद्यार्थियों की संख्या अधिक होना अकादमिक उन्नयन को प्रदर्शित करता है।

इससे स्पष्ट है कि संशोधित विषयवार ए.बी.एल. सामग्री का कक्षा दो के विद्यार्थियों के शैक्षणिक स्तर पर प्रभाव सकारात्मक व बेहतर है। यह विद्यार्थियों के अकादमिक उन्नयन को प्रदर्शित करता है।

निष्कर्ष – शोध के उद्देश्यवार परिकल्पनाओं के विश्लेषण एवं सत्यापन के उपरान्त निष्कर्ष स्वरूप हम कह सकते हैं कि –

1. संशोधित ए.बी.एल. सामग्री पूर्व से बेहतर है। शिक्षकों द्वारा पसंद की गई है। संशोधित सामग्री एवं व्यवस्था में अभ्यास पुस्तिका मेरी किताब को समेकित करना, कार्ड व लोगों की संख्या कम करना, मूल्यांकन प्रक्रिया को सरल किया जाना, सभी विषयों में एक समान लोगों का रखा जाना महत्वपूर्ण पूर्व से बेहतर परिवर्तन है।
2. संशोधित ए.बी.एल. प्रक्रिया में सभी बच्चों का माइलस्टोन समयावधि में एक साथ पूर्व किया जाना, अभिलेखीकरण कम किया जाना, गृह कार्य की व्यवस्था होना, समूह निर्धारण प्रक्रिया सरल होना पूर्व से बेहतर परिवर्तन है।
3. कक्षा 1 व 2 में विद्यार्थियों के विषयवार परीक्षण के प्राप्त उपलब्धि सकारात्मक व बेहतर है यह संशोधित ए.बी.एल. सामग्री का कक्षा शिक्षण में बेहतर प्रभाव को परिलक्षित करता है।

निष्कर्षत: संशोधित ए.बी.एल. सामग्री से एवं प्रक्रिया से बच्चों के शैक्षणिक स्तर पर सकारात्मक बेहतर प्रभाव हुआ है और बच्चों का अकादमिक उन्नयन हुआ है।

सुझाव – शोधकर्ता द्वारा क्षेत्र भ्रमण के दौरान शाला अवलोकन किया, ए.बी.एल. शिक्षण प्रक्रिया को कक्षा में करीब से अनुभव किया, शिक्षकों से सार्थक चर्चा की। इस प्रक्रिया में जो सुझाव निकलकर आये है वे इस प्रकार है –

1. प्राथमिक शाला के साथ शिशु शिक्षा केन्द्र या नर्सरी/बालवाड़ी कक्षा प्रारंभ हो।
2. अभ्यास पुस्तिका व मूल्यांकन पुस्तिका अलग–अलग होनी चाहिए। तीन भागों में (प्रत्येक त्रैमास की अलग) होनी चाहिए।
3. शिक्षकों को ए.बी.एल. पद्धति का सघन प्रशिक्षण हो।
4. पालकों को बच्चों की शिक्षा के प्रति अभिप्रेरित करने की योजना हो।
5. शालाओं में शिक्षक पर्याप्त हो और उन्हें गैर शैक्षणिक कार्यों में न लगाया जावे।
6. जनशिक्षक की मॉनिटरिंग सक्रिय, नियमित व अकादमिक हो। शिक्षकों को वास्तविक रूप में अकादमिक सपोर्ट दिया जावे।
7. लैडर विषयवार व कक्षानुसार हो।
8. शाला में बच्चों की संख्या अधिक होने पर सामग्री के दो सेट दिये जावे।
9. सहायक शिक्षण सामग्री हेतु शिक्षकों को राशि दी जावे।
10. शाला में बच्चों की उपस्थिति सुनिश्चित करने हेतु एस.एम.सी. को अधिकार दिया जावे। पालकों के विरूद्ध भी कार्यवाही करने का अधिकार हो। पालकों को मिलने वाली सुविधाओं को शाला में बच्चे की उपस्थिति से जोड़ा जावे।
11. कक्षा 2 के पाठ्यक्रम में कठिन विषयवस्तु सम्मिलित कर दी गई है। इसे कम किया जावे।
12. कुछ शिक्षकों की ए.बी.एल. पद्धति के प्रति अरूचि भी बच्चों के अकादमिक उन्नयन को प्रभावित करती है।
13. शाला में सामुदायिक सहभागिता को बढ़ावा देने के प्रयास होने चाहिए।

संदर्भ ग्रन्थ सूची :–

1. ए.बी.एल. शिक्षक मार्गदर्शिका 2014, राज्य शिक्षा केन्द्र, भोपाल (म.प्र.)।
2. गतिविधि आधारित शिक्षण अभ्यास पुस्तिका कक्षा 1 व 2, राज्य शिक्षा केन्द्र, भोपाल (म.प्र.)।

****

नैतिक शिक्षा - एक राष्ट्रीय आवश्यकता

कृष्णा घोष *

शोध सारांश – मनुष्य सामाजिक प्राणी है, समाज के नियम, कायदों का पालन करते हुए जीवन यापन करने वाले मनुष्य को ही मानव कहा जाता है, अन्यथा वह असभ्य, बर्बर और अमानुष कहलाता है, मानव कहलाने के लिये मानवीय गुण होना आवश्यक है, मानवीय गुणों को ही नैतिक मूल्य कहते हैं, इन नैतिक मूल्यों का पालन करना आधुनिक वैश्वीकरण के युग की प्रथम आवश्यकता है, क्योंकि स्वार्थ के वशीभूत होकर मनुष्य एक दूसरे के प्रति भाई-चारे की भावना से दूर होता जा रहा है, एकता, सद्भावना, भाई-चारे की भावना, ईमानदारी आदि अनेकानेक गुणों को विकसित करने के लिये इन गुणों को अपने जीवन में उतारने के लिये आज नैतिक शिक्षा हमारे राष्ट्र की प्रथम आवश्यकता बन गई है।

प्रस्तावना – जब भी मूल्यों की बात होती है, कई शब्द अलग-अलग संदर्भ में उपयोग में लाये जाते हैं, जैसे जीवन मूल्य, नैतिक मूल्य और मानवीय मूल्य। संभवत: इन सभी शब्दों के अर्थ और अभिप्राय एक ही है। मूल्य को किसी भी नाम से क्यों न पुकारा जाये वे उन गुणों की ओर इंगित करते हैं जिन्हें व्यक्ति महत्वपूर्ण और उपयोगी मानता है, तथा जिन मूल्यों के पालन करने से व्यक्ति अपने लिये सामाजिक मान्यता प्राप्त करता है और इन मूल्यों को अपने जीवन में उतारना अर्थात् अपने जीवन संचालन में इन मूल्यों का प्रयोग करना ही नैतिक शिक्षा है, जिसकी आज महती आवश्यकता है।

भारतीय संस्कृति के अनुसार जीवन में मूल्य ही सत्य होते हैं। जीवन की शुद्ध क्रियायें धर्म कहलाती हैं। धर्म में शांति, प्रेम और अहिंसा समाहित रहते हैं। ये पाँच तत्व सत्य, धर्म, शांति, प्रेम और अहिंसा मानव मूल्य माने जाते हैं। यह भी माना जाता है कि इन मूल्यों का निर्धारण धर्म करता है।

मूल्यों को परिभाषित करना चिंतकों और दार्शनिकों के लिये एक प्रिय विषय रहा है। अपनी-अपनी आस्था, परिकल्पना और अवधारणा के आधार पर विद्धानों ने मूल्यों को अलग-अलग परिभाषित किया है। श्री राधाकमल मुकर्जी के अनुसार 'मूल्य समाज द्धारा अनुमोदित उन इच्छाओं और लक्ष्यों के रूप में परिभाषित किये जा सकते हैं, जिन्हें अनुबंधन, अधिगम या सामाजीकरण की प्रक्रिया द्धारा आत्मसात किया जाता है और जो व्यक्तिगत मानकों तथा आकांक्षाओं के रूप में परिवर्तित हो जाते हैं।'

राधाकमल मुकर्जी ने अपनी इस परिभाषा में मूल्यों को समाज द्धारा अनुमोदित इच्छाओं एवं लक्ष्यों के रूप में विवेचित किया है।

राष्ट्र का निर्माण उस राष्ट्र में रहने वाले जनसमूह से होता है, सुसभ्य, विकसित राष्ट्र के निर्माण के लिये जनसमूह का नैतिक मूल्यों से सुसंस्कृत होना अनिवार्य है। हमारा भारत राष्ट्र तो सुसभ्य और सुसंस्कृत राष्ट्रों में से एक है, हमारी भारतीय संस्कृति सनातन है, अमर है, इस दृष्टि से हम भारत वासियों को सुसंस्कृत होना अतिआवश्यक है, वैज्ञानिक आपा-धापी की दौड़ में हम अपने नैतिक मूल्यों से अनजाने में ही दूर होते जा रहे हैं, अत: नैतिक मूल्यों की प्रतिस्थापना के लिये नैतिक शिक्षा की अति आवश्यकता है, नैतिक शिक्षा के महत्व एवं उसकी आवश्यकता का प्रतिपादन ही इस शोध पत्र का उद्देश्य है।

नैतिक शिक्षा - एक राष्ट्रीय आवश्यकता – एक सशक्त राष्ट्र का निर्माण उस राष्ट्र में रहने वाले लोगों के माध्यम से ही संभव है। राष्ट्र के प्रति निष्ठा और प्रेम, आपसी सद्भाव, अनुशासन और स्थापित नियमों के अनुसार अपना आचरण रखना अच्छे नागरिक की पहचान है। देश के लोगों में अच्छी नागरिकता की भावना उत्पन्न करना और ऐसे नागरिकों को तैयार करना जो देश की बागडोर को पूरी क्षमता के साथ अपने हाथों में ले सकें। यह प्रत्येक राष्ट्र का प्रथम कर्त्तव्य है। इस संदर्भ में देश की युवा पीढ़ी के लिये नैतिक शिक्षा की व्यवस्था करना राष्ट्रीय आवश्यकता है। कमजोर नागरिक और रुग्ण मानसिकता किसी भी राष्ट्र को पतन की ओर ले जाने के लिये पर्याप्त साधन है। भारत अपने भौतिक संसाधनों, नैसर्गिक सौंदर्य और ऐतिहासिक विरासत के लिये संपूर्ण विश्व में जाना जाता है, लेकिन हमारी आंतरिक नैतिक कमजोरी के कारण समर्थ नागरिकता के अभाव में अन्य राष्ट्रों से शोषित होने का खतरा भी सदैव बना रहता है। अत: लोगों को सशक्त करना और देश को किसी भी अप्रत्याशित गंभीर सामाजिक-राजनैतिक संकट से मुक्त रखना हमारी प्राथमिकता होनी चाहिये।

संपूर्ण विश्व में शिक्षा को राष्ट्र निर्माण की चारित्रिक गतिविधि के रूप में मान्यता प्रदान की गई है। शिक्षाविदों का मानना है कि शिक्षा ज्ञान रूपी आलोक और आध्यात्मिक शक्ति का एक स्रोत है, जो हमारे शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक और आध्यात्मिक विकास यात्रा के लिये हमारी अर्न्तहित प्रकृति में आवश्यक परिवर्तन लाती है इसके लिये समाज में शिक्षा का स्तर उसकी गुणवत्ता और व्यवस्था का उत्तम होना अपरिहार्य है।

अच्छी शिक्षा केवल ज्ञान और हूनर ही प्रदान नहीं करती अपितु मूल्यों को प्रतिस्थापित भी करती है। शिक्षार्थी की नैसर्गिक प्रवृत्तियों को प्रशिक्षित करते हुए सही दृष्टिकोण और आदतों का निर्माण करती है, प्लेटो के अनुसार सही शिक्षा चाहे वह किसी भी स्वरूप में क्यों न हो, शिक्षार्थी में सभ्यता और मानवीयता को प्रतिपादित करेगी।

हमारे देश में शिक्षा को हमेशा मूल्यों को प्रतिष्ठापित करने की प्रक्रिया के रूप में मान्यता दी गई है। इसीलिये नैतिक और मानवीय शिक्षा हमारी शिक्षा व्यवस्था का एक अभिनव अंग होना चाहिये। आज के बदलते परिवेश में वैश्विक अर्थव्यवस्था ज्ञान पर आधारित है। इसी संदर्भ में ज्ञान प्रदान

* ग्रंथपाल, शासकीय ओ.एफ.के. महाविद्यालय, जबलपुर (म.प्र.) भारत

करने वाली इकाई के रूप में शिक्षा किसी देश के विकास की मुख्य धारा से जुड़ी हुई एक महत्वपूर्ण कड़ी है।

शिक्षा मनुष्य के सामाजीकरण और नागरिकों के निर्माण की सशक्त आधारशिला है। शिक्षा समुदाय के आत्मसातीकरण, समाकलश और विकास का ठोस माध्यम भी है। ऐसा समुदाय ही देश में मूल्य और संस्कृति को सहेज कर रख पाता है। सही शिक्षा जीवन के प्रत्येक पहलू तक पहुंच रखती है। अच्छी शिक्षा वह होगी जो हमारे भूतकाल से उत्तम बातों को निर्धारित कर सके। यदि शिक्षा के उद्देश्यों की व्याख्या की जाये तो यह व्यक्ति को मुक्त करती है, जीवन को परिपूर्णता प्रदान करती है, सबके प्रति समभाव जगाते हुए व्यक्ति को उत्कृष्टता प्रदान करती है, साथ ही सामूहिक आत्मनिर्भरता के साथ राष्ट्रीय सुसंगतता स्थापित करती है।

यदि हम इन अवधारणाओं को मानते हैं और नैतिक मूल्यों की स्थापना को एक राष्ट्रीय आवश्यकता निरूपित करते हैं तो सर्वप्रथम हमें अपनी शिक्षा व्यवस्था पर ध्यान देना होगा और इसमें अधिकतम निवेश करना होगा। राजनैतिक इच्छा शक्ति के बिना कोई भी नीति सही रूप से क्रियान्वित नहीं हो पाती, चाहे नीति कितनी ही अच्छी क्यों न हो। देश के राजनैतिक व्यवस्थापकों के लिये शिक्षा के महत्व को समझना बहुत जरूरी है। शिक्षा का तात्पर्य केवल देश में शिक्षित लोगों का प्रतिशत बढ़ाना नहीं है। मात्र कुछ आंकड़ों के घटने बढ़ने को शिक्षा के प्रचार-प्रसार और उपयोगिता का सार्वभौम पैमाना नहीं माना जा सकता। बल्कि शिक्षा में सही समय पर पर्याप्त निवेश करना और संपूर्ण व्यवस्था को सुनियोजित करना देश की प्राथमिकता होनी चाहिये। शिक्षा का उद्देश्य सुस्पष्ट और सार्थक होने चाहिये। चरित्र निर्माण के सतत् प्रक्रिया के रूप में चलने वाली मनुष्य जीवन की महत्वपूर्ण गतिविधि शिक्षा ही है - इसे जानना नीति निर्धारकों के लिये बहुत आवश्यक है। शिक्षा व्यवस्था के संचालन में पर्याप्त संवेदनशील तंत्र का होना व्यवस्था के उद्देश्यों की पूर्ति के लिये अपरिहार्य है।

नैतिकता देगी व्यक्तित्व को उजास - सर्वप्रथम हमें समझना चाहिये कि व्यक्तित्व का अर्थ क्या होता है। क्या सुंदर और स्वस्थ शरीर देखकर व्यक्तित्व का आंकलन संभव है? क्या व्यवस्थित कपड़े पहनकर व्यक्तित्व संवर जाता है? क्या लच्छेदार बातचीत के द्वारा प्रभावशाली व्यक्तित्व की कल्पना की जा सकती है? व्यक्तित्व का यह आंकलन एकांगी और खंडित है। वैसे तो कहा जाता रहा है कि आगे बढ़ने की लालसा, भूषा और संवाद मिलकर व्यक्तित्व का निर्माण करते हैं। इन तीनों तत्वों में व्यक्तित्व को बाह्य अलंकरणों से आंका जा रहा है।

आत्मिक विकास के साथ ही बौद्धिक विकास भी जरूरी होता है। बौद्धिक विकास होता है व्यापक अध्ययन से। अपने आस-पास के भूगोल इतिहास परम्परा का ज्ञान जितना ज्यादा होगा उसमें आत्म विश्वास बढ़ेगा। बौद्धिक विकास का इतना ही अर्थ नहीं होता कि आपके पास जानकारी का कितना बड़ा भंडार है। जब व्यक्ति अपने क्षेत्र की परम्पराओं, रीति-रिवाजों और घटनाओं को समझने और उसका विश्लेषण करने की क्षमता हासिल कर लेता है, तब वह बौद्धिक रूप से संपन्न होता है। इस तरह व्यक्ति में मौलिक सोच की क्षमता आ जाती है। यह मौलिकता ही व्यक्तित्व को प्रभावशाली बनाती है।

यदि हमारे पास चरित्र बल है तो हम एक दिव्य आभा से युक्त होंगे जो आत्मशक्ति का प्रतिबिम्ब होगा। हमारा स्वास्थ्य तो अच्छा रहेगा ही और अपनी कर्म शक्ति से उतना अर्जित करने में सक्षम रहेंगे जितनी आवश्यकता है। अत: व्यक्तित्व विकास की बुनियाद भारतीय जीवन मूल्यों के आधार पर खड़ी की जाए। यदि ऐसा न हो पाया तो भोगवादी संस्कृति भारत को भारत नहीं रहने देगी। सांस्कृतिक मूल्य ही हमें नैतिकता की ओर लौटायेंगे। स्मरण रखें जो नैतिक मूल्यों का आग्रही है उसका व्यक्तित्व अपने चरम उत्कर्ष को प्राप्त करता है क्योंकि 'अर्थ' और काम को पुरुषार्थ बनाने वाले ऋषि ने धर्म और मोक्ष की परिधि में इसे बांध दिया था।

आत्मावलोकन एवं आत्मबोध व्यक्तित्व विकास का अभिन्न अवयव है। आत्मबोध का विकास जीवन के हर पहलू पर प्रभाव डालता है। यदि हमें इन बातों का बेहतर ज्ञान हो कि स्वयं के व्यवहार या दूसरों के प्रतिक्रियाओं से किस प्रकार प्रभावित होते हैं, तो निश्चित ही हम अपने व्यवहार को सकारात्मक रूप से बदलकर बेहतर परिणाम पा सकते हैं। यदि हम इस बात को समझ सकें कि हमें कौन सी बातें उद्वेलित करती हैं, तो हम स्वयं के व्यवहार और प्रतिक्रियाओं को नियमित और नियंत्रित कर सकते हैं। यह आत्म नियमन ही व्यक्ति विकास का आधार है।

निष्कर्ष - देश को संस्कारित, सभ्य, संवेदनशील और सशक्त नागरिक प्रदान करना शिक्षण संस्थाओं का मुख्य कर्त्तव्य है। यदि युवाओं में राष्ट्र के प्रति प्रेम ही न हो, देश भक्ति का जज्बा न हो, समाज के प्रति दायित्वबोध न हो और उनका अपना व्यक्तिगत आचरण व्यवहार संयमित न हो, तो वे किस प्रकार अपना और राष्ट्र का हित कर पायेंगे। यह गंभीरता से सोचने की बात है। यदि अब हमने अधिक विलंब किया और युवाओं को कर्त्तव्यबोध कराने में सफल नहीं हुये तो शायद इतिहास भी हमें क्षमा नहीं कर पायेगा।

संदर्भ ग्रंथ सूची :-

1. नैतिक मूल्य और भाषा - म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी।
2. रचना, म.प्र. उच्च शिक्षा विभाग एवं म.प्र. हिन्दी ग्रंथ अकादमी, अंक 109, जु.-अगस्त 2014
3. कृष्ण कपूर, हिन्दी व्याकरण तथा रचना, हेलीफेथ इण्टरनेशनल लिमिटेड, नई दिल्ली, 2002

****

Sports & Physical Education In India - An Theoretical Analysis

Dr. B. K. Choudhary * Sheikh Sharik Ahmed **

Abstract - Physical Education & Sports forms an important part of educational system even when it never received the importance it deserves. Even though it is included as part of the curriculum from the early stages of education, it has never been taken seriously by the educational administrators, the academicians and the students. Physical Education is the only profession where you talk as well as play / perform. The concept of Physical Education in the mind of general public is big round, play & play and no work. Abraham Lincoln quoted in one of his address, "Sportsman is the best Ambassador of the Nation." Hence, the Physical Education Director/Teacher can also be the best Ambassador of our Institution / University. At present compare to earlier years and now we can come across the decline of physical education in education compare to present is one needs to overcome the hurdles and battles to improve the structure and infrastructure status in around to develop the overall discipline in physical education and sports.
Keywords - Sports training, Physical fitness, Leg strength and Resistance training.

Introduction - Physical Education and Sports is one of the important yardsticks and also integral part of education for any country at any point of time. Thus each country should try to set out a framework of action plan for promotion and development of Physical Education and Sports. Paradoxically, a sport is witnessing a spectacular boom in the media spotlight all over the world, including India while it is being seriously neglected within the educational system. Physical Education act as well as the provision of resources for the nation and in the construction of evaluation system in education developments and it proms the development physical education in a country.

At present compare to earlier years and now we can come across the decline of physical education in education compare to present is one needs to overcome the hurdles and battles to improve the structure and infrastructure status in around to develop the overall discipline in physical education and sports.

Present Status - Despites efforts by member state to promote and develop Physical Education and Sports with international cooperation; its distinctive nature and importance to education remain a constant source of concern. Physical Education and Sports proved alarming (particularly within educational system), which given the social importance and media- coverage of sports. Its impact may be seen in the shift by Physical Education and Sport Public authorities towards high performance and high media friendly sports (at a national level, across the public and private system). A significant example in the absence of clear separation between the Ministries of Youth Affairs and Sports and Ministries of Education.

The status of Physical Education and Sports convened the Physical Education World Summit in Berlin this initiative was promoted by reports revealing the increasing critical situation of Physical Education and Sports in many countries. A world wide comparative study collect data and literature for nearly 120 countries came out with following significant findings.

a. Reduced time devoted to Physical Education in Educational Programmed.
b. Reduced budgets plus inadequate financial, material and staff resources.
c. The subject suffers from low status.
d. In many countries teachers are not properly trained.
e. Existing Physical Education guidelines are not properly applied.

Physical Education & Sports In Indian Society - Physical Education & Sports forms an important part of educational system even when it never received the importance it deserves. Even though it is included as part of the curriculum from the early stages of education, it has never been taken seriously by the educational administrators, the academicians and the students. Physical Education is the only profession where you talk as well as play / perform. The concept of Physical Education in the mind of general public is big round, play& play and no work. Abraham Lincoln quoted in one of his address,"Sportsman is the best Ambassador of the Nation." Hence, the PhysicalEducation Director/Teacher can also be the best Ambassador of ourInstitution / University.

Physical Education Defined - The problem of defining Physical Education is not only that the term is broad based and complex, including so many kinds of phenomena, but also it means different things to different people. Someone has suggested that Physical Education is whatever Physical Educators do. J P Thomas sums up that Physical Education

*Asst. Professor, Pacific University, Udaipur (Raj.) INDIA
** Research Scholar, Pacific University, Udaipur (Raj.) INDIA

is education through physical activities for the development of total personality of the child and its fulfillment and perfection in body, mind and spirit. Even though these definitions differ significantly with regards to emphasis on different aspects, they still have many common elements. Some of them may be noted as: Physical Education is a phase of total Education process. It is sum of total experience and their related responses. Experience grown and responses developed out of participation in big muscular activities. All-round development of individual' – physical, mental, social, moral is the real aim of Physical Education. It is the same as in General Education.

In the Indian context, Physical Education is perhaps the only aspect of education which has not been given due attention. That is due, most probably to the fact that we have remained satisfied with that the British have handed over to us, with no sincere efforts on our part to prepare any concrete and far-reaching programmed for Physical Education specially suited to our conditions. We have ever-stressed the academic aspects, the physical one being relatively untouched. This has resulted in an increasingly large number of Indians who are neglecting their bodies, to whom Physical Education is similar to physical training, whose physical fitness is not what it should be they are getting 'soft'. One of the main objectives of any Physical Education activity is to maintain and improve the health of the youngsters in our school and colleges. And the School has the responsibility to see that all students achieve and maintain optimum health, not only from a moral point of view, but from the standard point that educational experience will be much more meaningful if optimum health exists.

Why Study Physical Education And Sports? - To study Physical Education and sports is not merely to discuss performance, technique or records journalistic-ally but to look at some of the implicit assumptions held by the general population about Physical Education and Sports. Despite the significance of sports, it has been primarily a vehicle of 'escape' more than an avenue of education. A sport has been viewed as a distraction from the trials of everyday life. Ask some friends why they are involved in sports. The response will probably have something to do with "fun" or "enjoyment".

Research Analysis - Every College / University should have an Elective Subject of Physical Education, if not compulsory, where 60% stress should be given to theory and 40% to practical. Another viewpoint is that all the first year students should undergo a minimum Physical Education programmed like National Physical Fitness Test, otherwise they will not be given the degree. We should have colleges of Physical Education with 4 to 5 years degree course, like Indian Institute of Physical Education and Sports Science (IIPESS). Physical Education and Sports are seen not merely as a playground but also as a laboratory in which the theories of each discipline may be tested and/or as a phenomenon whose worthiness value, and effect on people and society must be continually scrutinized.

Suggestions & Recommendations -

- Revision & Reconstruction of Physical Education syllabus in context with need of Society.
- Periodical Refresher course for Physical Educational personnel by an unified agency.
- Updating and Upgrading of the subject and related area in collaboration with top Educational &Physical Education bodies. Strict implementation and follow-up of the prescribed Physical Education standard.
- An honest and sincere appraisal system for total evaluation and feedback.
- The academic study of Physical Education and Sports may be as stimulating and fun as experience as one's actual participation in sports.
- Once the rule, subject matter, and 'spirit' of both games are understood, they may be equally rewarding. General Education is for the masses, so also Physical Education.

Conclusions - In our profession we should follow the concept of 3 'D' Discipline, Dedication & Determination. Young people are the real wealth of the nation. No programmed is successful without the participation of youth. Therefore, to enable an individual to lead happy, enjoyable and healthy life as a member of society, he should regularly engage in games and sports and different exercise programmers to ensure development of Physical Fitness and learn skills in sports and games, which have a carryover value. Society on the other hand should provide enough opportunities to its members so that they may engage themselves in activities of their own choice and thus develop or maintain the level of Physical Fitness. Unless there is improvement in the 'General Standard of Health', excellence in sports cannot improve. Physical Education andSports activities in educational institution should aim at 'Health Related' and 'Performance Related' areas so as to ensure 'enhancement of performance in competitive sports'. Physical Education thus consists in promoting a systematic all-round development of human body by scientific technique and thereby maintaining extraordinary Physical Fitnessto achieve one's cherished goals in life. Hence any organization of Physical Education should start with developing a positive attitude and self-confidence among Physical Educators themselves and make them feel, Physical Education need not exist in the periphery of the schools / colleges, but should extend itself to the classrooms and become the focus or central point of Educational System.

References :-

1. Kales M. L. & Sangria M. S. "Physical and History of Physical Education", Parkas Brothers, Ludhiana 1988.
2. Chu Donald, "Dimension of Sports Studies", John Wiley & Sons, New York Chic ester Brisbane Toronto Singapore 1982
3. Sethumadhava Rao V. S. "Brand Image of Physical Education", HPE Forum 2(2)(October 2002):1-3.
4. Grewal C. S. "Why Physical Education", Vyayam Vidnyam 22 (4)(November 1989):15-19
5. Shephard, R. J., Jequier, J. C., LaBarre, R., and Rajie, M. (1980). Habitual physical activity.
6. Gail Brenner (2003) Webster's New World American Idioms Handbook. Webster's New World.Nathan M. Murata(2003)Language Augmentation Strategies in Physical Education The Journal of Physical Education,Recreation& Dance, Vol. 74.

खेलकूद गतिविधियां(बड़वानी जिले के सन्दर्भ में)

अंजुबाला ठाकरे * डॉ. विनिता भालसे **

शोध सारांश – वर्तमान युग में प्रतिस्पर्धा का युग है। समय परिवर्तन के साथ खेलकुद के क्षेत्र में बहुत अधिक परिवर्तन हुए। आमतौर पर जिसे हम विकास कि उपमा देते है। देश की वास्तविक स्थिति से हम भलीभांति परिचित है। आाज यदि ग्रामीण क्षेत्रों में भी खेलकुद गतिविधियों की तरफ सही मार्गदर्शन मिल जाये तो हमारा देश खेलकुद के क्षेत्र में और अच्छी तरह से उन्नति कर सकता है।

प्रस्तावना –आज हम यदि अपनी लाइफ में थोड़ा सा भी समय ए सरसाइज का रखा जाये जैसे योग करना ,दौड़ना,जिम में मसल्स का मजबुत बनाना या कोई भी गतिविधी जिससे की हमारे शरीर की कसरत हो जाए, करना चाहिये। हमारे शरीर के लिए बहुत लाभदायी है। ये फिजिकल एक्टिविटीज शरीर में रक्त संचार को बेहतर बनाती है और इनको करने से एंडार्फिन हॉर्मोन रिलीज होता है जो आपको एनर्जेटिक और हैप्पी फील कराने के साथ–साथ मेटाबॉलिज्म सुधारता है और ब्रेन फं शनिंग भी बेहतर बनाता है।

इन सब फायदे के साथ यदि कोई विद्यार्थी या व्यक्ति खेलकुद गतिविधियों में अधिक रूचि रखता है तो वह खेल के क्षेत्र में अपना रोजगार प्राप्त कर सकता है। जैसे–सब इन्स्पेक्टर, खेल अधिकारी, कोच, खेल प्रशिक्षक, रेलवे में, पुलिस विभाग आदि में अपना उज्जवल भविष्य बना सकते है।

परिभाषा – भारत गाँवों का देश है। भारत का समुचित विकास गाँवों के विकास पर ही निर्भर है। हमारी कुल जनसंख्या का 34 भाग (75 % जन संख्या)गॉवो में निवास करती है। ग्रामीण इलाको में बसी है।

'ग्रामीण' – ग्रामीण से अभिप्राय है 'ग्रामीण से संबंधित' । ग्रामीण पर्यावरण,ग्रामीण जनसंख्या, ग्रामीण जनजीवन , ग्रामीण सामाजिक व्यवस्था, ग्रामीण व्यवसाय तथा ग्रामीण समस्याएँ आदि अनेक अर्थो में नगरीय व्यवस्था से भिन्न है।

'खेल' – हरलॉक के अनुसार – अंतिम परिणाम का विचार किये बिना कोई भी क्रिया जो उससे प्राप्त होने वाले आनन्द के लिए की जाती है,खेल है।

'शारीरिक शिक्षा' – शारीरिक शिक्षा के संदर्भ में सामान्य लोगो की ऐसी अवधारणा है कि शारीरिक शिक्षा विभिन्न विश्वद्यिालयों द्वारा प्रदान की जाने वाली उपलब्धियों से संबंधित है। जबकि अन्य समुदायों की ऐसी अवधारणा है की शारीरिक शिक्षा एक व्यवहारिक प्रक्रिया है। जिसका प्रयोग स्कुल व कॉलेज स्तर पर विभिन्न उद्देश्यों की पुर्ति के लिये किया जाता है।

उद्देश्य –

1. ग्रामीण क्षेत्र के विधार्थियो का खेलो के प्रति जागरूक करना व रोजगार से जोड़ना है।
2. खेलकुद के माध्यम से विधार्थी का सर्वांगीण विकास हो सके एवं आत्मीयता तथा नैतिक गुणों का विकास हो सके।
3. खेलो के क्षेत्र में ग्रामीण क्षेत्र के विधार्थियो की वास्तविक स्थिति क्या है। जानकारी प्राप्त करना।

शोध प्रविधि एवं क्षेत्र – शोध कार्य हेतु शहीद भीमा नायक स्नातकोत्तर महाविधलय बड़वानी के क्रीड़ा विभाग से जानकारी प्राप्त कर ऑकलन किया गया है।

शोध व्याख्या – बड़वानी जिले के कॉलेज अंजड़, निवाली, पानसेमल, सेंधवा, राजपुर में स्थापित है। इन महाविधालयों में अधिकांश विद्यार्थी ग्रामीण क्षेत्र से आते है। यहा तक की महाविद्यालय बडवानी में भी ग्रामीण क्षेत्र के ही विधार्थी अध्ययनरत है। अत: हम खेलों की टीम चयन की बात करे तो यह ग्रामीण क्षेत्र के विद्यार्थी टीम में जगह बना पाने में असमर्थ रहते है। यदि इनका चयन भी होता है, तो केवल संभाग स्तर की टीम चयन की बात करे तो यह ग्रामीण क्षेत्र के विद्यार्थी टीम तक ही हो पाता है वह भी कोई कम से कम ही पाते है। और यदि इसके बाद भी कोई विधार्थी चयनित होता है तो बहुत कम होता है

निम्नलिखित तालिका में हम देखेंगे कि इन महाविधालयों के कितने विद्यार्थी जिले व संभाग व राज्य स्तर की टीम में चयनित हो पाये है।(तालिका क्रमांक 01 देखे)

तालिका क्रमांक 01 (देखे अगले पृष्ठ पर)

खेलो में पिछडेपन के कारण –

1. व्यक्तिगत रुझान में कमी
2. गरीबी व बेरोजगारी
3. निर्धनता व पौष्टिक आहार में कमी
4. उच्च प्रतिभावान खेल प्रशिक्षकों की कमी
5 राजनीतिक व राज नेता के हस्तक्षेप
6. प्रोत्साहन की कमी
7. प्राकृतिक कारण
8. लोगों में खेल भावना की कमी
9. कुछ ही खेलों को महत्व दिया जाना

* अतिथि विद्वान (राजनीति विज्ञान) शासकीय महाविद्यालय, निवाली जिला – बड़वानी(म.प्र.)भारत
** अतिथि विद्वान (राजनीति विज्ञान) शासकीय महाविद्यालय, निवाली जिला – बड़वानी(म.प्र.)भारत

10. भाई–भतीजावाद एवं भ्रष्टाचार का बोलबाला
11. अधिकतम जनजाति जनसंख्या

पिछड़ेपन को दुर करने के उपाय व सुझाव –

1. जनजाति क्षेत्रों में खेल के मैदान,स्टेडियम व अखाड़ो का निर्माण किया जाना ।
2. खिलाड़ियों को प्रोत्साहित करने के साथ–साथ उनको जीविकोपार्जन के साधन उपलब्ध कराये जाना।
3. खेल प्रशिक्षको की भर्ती की जाए।
4. खिलाड़ियों के चयन में राजनैतिक हस्तक्षेप को कम किया जाए।
5. क्षेत्रीयता की भावना के आधार पर भेदभाव को कम किया जाए।
6. स्कूलों में खेलो के लिए कालखण्ड निर्धारित किए जाए।

सुझाव के तौर पर यह कहा जा सकता है अध्ययन यह साबित करता है कि अभी भी खेलकूद व्यवस्था की दिशा में ठोस प्रयास की आवश्यकता है। ऐसे अल्पकालिन एवं दीर्घकालीन कोर्सेस संचालित किए जाए जिससे कि ग्रामीण क्षेत्रो के विद्यार्थियों में खेलो के प्रति रुझान लाया जा सकता है। समय–समय पर खेलकुद से संबंधित विशेषज्ञ को आमंत्रित करके खेलकुद से संबंधित संभावनाओं, विभिन्न कोर्सेस एवं रोजगार की जानकारी प्रदान की जाए। वर्तमान में कॅरियर गाइडेन्स सेल के द्वारा यह कार्य सम्पन्न किए जा रहे है, किन्तु अभी भी ठोस धरातल की कमी दिखाई देती है।

निष्कर्ष – प्रस्तुत शोध अध्ययन में हमने पाया कि ग्रामीण क्षेत्र महाविद्यालय के विद्यार्थियों की संख्या जिले व संभाग स्तर की टीम में कम से कम है। इसके कई कारण है। यदि इन कारणों को दुर कर सही मागदर्शन देकर विद्यार्थियो को आगे बढ़ाया जाए तो यही विद्यार्थी अपने भविष्य को सवार कर एक अच्छा खिलाड़ी, अच्छा व्यक्ति बन सकता है।

संदर्भ ग्रंथ सूची :–

1. सामान्य अध्ययन, आंनद कुमार पाण्डेय एवं श्रीमती अर्चना पाण्डेय, म.प्र.हिन्दी ग्रंथ आकादमी ,भोपाल।
2. ISSN2320-8767 अक्टूबर से दिसम्बर 2014 पृ.क्र.32
3. दैनिक भास्कर।
4. विभाग से प्राप्त जानकारी ।

तालिका क्रमांक 01

बड़वानी जिले के समस्त शास.महाविद्यालयों के विद्यार्थियों की खेलकुद में जिला ,संभाग एवं राज्य स्तर पर स्थिति

क्र.	महाविद्यालय	जिला स्तर	संभाग स्तर	राज्य स्तर
1.	श.भी.ना.शास.स्नातकोत्तर महाविद्यालय बड़वानी	क्रिकेट,फुटबॉल,वॉलीवाल,खो–खो, कबडडी,हॉकी,चेस,बैडमिंटन,एथलेटिक्स,आदि	–	बैडमिंटन, एथलेटिक्स, खो–खो,,
2.	शास.स्नातकोत्तर महाविद्यालय सेंधवा	क्रिकेट,फुटबॉल,वॉलीवाल,खो–खो,कबडडी,हॉकी, चेस,बैडमिंटन,एथलेक्सि, आदि	–	बैडमिंटन,एथलेटिक्स वॉलीवाल, क्रिकेट,
3.	शास.महाविद्यालय निवाली	क्रिकेट, खो–खो	क्रिकेट	–
4.	शास.महाविद्यालय राजपुर	क्रिकेट, खो–खो,कबडडी	क्रिकेट, कबडडी	–
5.	शास.महाविद्यालय पानसेमल	क्रिकेट, चेस	–	–
6.	शास.महाविद्यालयअंजड़	–	–	–

****

Managing The Causes Of Work-Related Stress

Namita Sethi * Mansi Sethi ** Pragya Tiwari ***

Introduction - Stress is a fact of life, wherever you are and whatever you are doing.You cannot avoid stress, but you can learn to manage it so it doesn't manage you.Changes in our lives—such as going to college, getting married, changing jobs, or Illness—is frequent sources of stress. Keep in mind that changes that cause stress can also benefit you. Moving away from home to attend college, for example, creates Personal-development opportunities—new challeng- es, friends, and living arrangements.That is why it's important to know yourself and carefully consider the causes of stress.Learning to do this takes time, and although you cannot avoid stress, the good news is that you can minimize the harmful effects of stress, such as depression or hypertension. The key is to develop an awareness of how you interpret, and react to, circumstances.This awareness will help you develop coping techniques for managing stress.

What is Stress?

Stress is defined as a response to a demand that is placed upon you. Stress in a normal reaction when your brain recognizes a threat. When the threat is perceived, your body releases hormones that activate your "fight or flight" response. This fight or flight response is not limited to perceiving a threat, but in less severe cases, is triggered when we encounter unexpected events. Psychologist Richard S. Lazarus best described stress as "a condition or feeling that a person experiences when they perceive that the demands exceed the personal and social resources the individual is able to mobilize."

Causes of Stress - Stress is created by the demands and pressures we feel. Their effects can be physical, mental and emotional. Although we may try to compartmentalize our lives, we are whole beings. What happens at work, may affect what happens at home—or vice versa.

How Stress Develops and the Types of Stress - People react differently when exposed to a stressor. Reactions differ because people process and interpret information differently. How a person processes information can greatly affect what type of stress he or she experiences.

The transactional model of stress - The first thing that a person automatically does when faced with a stressful event is to appraise the situation. The appraisal and stress process is outlined below in the model of stress developed by Lazarus and Folkman.

One conducts a primary appraisal to determine the level of danger, the potential pain, loss or discomfort and the amount of effort that will have to be exerted to handle the situation. If no

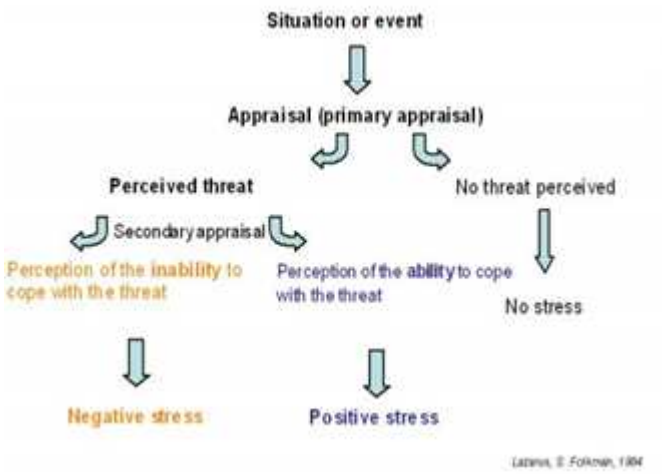

Figure:- Transactional model of stress (Lazarus and Folkman, 1984).

A pilot's reaction to stress is dependent on the interaction between the capabilities of the person involved and the external situation being faced. Factors include:

1. Pilot's physiological state at the time - health, fatigue, lack of sleep, etc.
2. Stressor itself - Intensity (strength), duration and predictability (the less predictable the more stressful it becomes)
3. Personal evaluation of the stressor
4. Ability and willingness of others to give support, both social and practical - confidence in the other crewmember's abilities reduces stress levels.

Types of stress

Several types of stress have been identified. The primary types of stress are:

1. Eustress (positive stress) motivates a person to cope with stressors and allows a person to perform effectively and

* Research Scholar, A.P.S. University, Rewa (M.P.) INDIA
** Research Scholar, A.P.S. University, Rewa (M.P.) INDIA
*** Research Scholar, A.P.S. University, Rewa (M.P.) INDIA

may even increase performance. Eustress generally occurs when an individual perceives that he or she has the ability to effectively cope with a stressor.

2. Distress (negative stress) occurs when stimulation is excessive and causes fear of the situation, panic, anxiety or agitation. Distress usually results in poorer performance and can be dangerous for flight safety.
3. Anxiety is stress related to an unforeseen or imagined threat. It is caused by the anticipation or perception that something dangerous, unpleasant or harmful may be about to occur, and the individual is fearful that he or she will not be able to cope with the event.

Stress Management Strategy

1: Avoid unnecessary stress - Not all stress can be avoided, and it's not healthy to avoid a situation that needs to be addressed. You may be surprised, however, by the number of stressors in your life that you can eliminate.

1. **Learn how to say "no"** – Know your limits and stick to them. Whether in your personal or professional life, refuse to accept added responsibilities when you're close to reaching them. Taking on more than you can handle is a surefire recipe for stress.
2. **Avoid people who stress you out** – If someone consistently causes stress in your life and you can't turn the relationship around, limit the amount of time you spend with that person or end the relationship entirely.
3. **Take control of your environment** – If the evening news makes you anxious, turn the TV off. If traffic's got you tense, take a longer but less-traveled route. If going to the market is an unpleasant chore, do your grocery shopping online.

2 : Alter the situation - If you can't avoid a stressful situation, try to alter it. Figure out what you can do to change things so the problem doesn't present itself in the future. Often, this involves changing the way you communicate and operate in your daily life.

1. **Express your feelings instead of bottling them up.** If something or someone is bothering you, communicate your concerns in an open and respectful way. If you don't voice your feelings, resentment will build and the situation will likely remain the same.
2. **Be willing to compromise.** When you ask someone to change their behavior, be willing to do the same. If you both are willing to bend at least a little, you'll have a good chance of finding a happy middle ground.

3 : Adapt to the stressor - If you can't change the stressor, change yourself. You can adapt to stressful situations and regain your sense of control by changing your expectations and attitude.

1. **Reframe problems.** Try to view stressful situations from a more positive perspective. Rather than fuming about a traffic jam, look at it as an opportunity to pause and regroup, listen to your favorite radio station, or enjoy some alone time.
2. **Look at the big picture.** Take perspective of the stressful situation. Ask yourself how important it will be in the long run. Will it matter in a month? A year? Is it really worth getting upset over? If the answer is no, focus your time and energy elsewhere.

4 : Accept the things you can't change - Some sources of stress are unavoidable. You can't prevent or change stressors such as the death of a loved one, a serious illness, or a national recession. In such cases, the best way to cope with stress is to accept things as they are. Acceptance may be difficult, but in the long run, it's easier than railing against a situation you can't change.

1. **Don't try to control the uncontrollable.** Many things in life are beyond our control— particularly the behavior of other people. Rather than stressing out over them, focus on the things you can control such as the way you choose to react to problems. .
2. **Share your feelings.** Talk to a trusted friend or make an appointment with a therapist. Expressing what you're going through can be very cathartic, even if there's nothing you can do to alter the stressful situation.

5 : Make time for fun and relaxation - Beyond a take-charge approach and a positive attitude, you can reduce stress in your life by nurturing yourself. If you regularly make time for fun and relaxation, you'll be in a better place to handle life's stressors when they inevitably come.

1. **Set aside relaxation time.** Include rest and relaxation in your daily schedule. Don't allow other obligations to encroach. This is your time to take a break from all responsibilities and recharge your batteries.
2. **Connect with others.** Spend time with positive people who enhance your life. A strong support system will buffer you from the negative effects of stress.

6 : Adopt a healthy lifestyle - You can increase your resistance to stress by strengthening your physical health.

1. **Exercise regularly.** Physical activity plays a key role in reducing and preventing the effects of stress. Make time for at least 30 minutes of exercise, three times per week. Nothing beats aerobic exercise for releasing pent-up stress and tension.
2. **Avoid alcohol, cigarettes, and drugs.** Self-medicating with alcohol or drugs may provide an easy escape from stress, but the relief is only temporary. Don't avoid or mask the issue at hand; deal with problems head on and with a clear mind.
3. **Get enough sleep.** Adequate sleep fuels your mind, as well as your body. Feeling tired will increase your stress because it may cause you to think irrationally.

Stress SWOT Analysis

- Useful technique for understanding an organization's strategic position
- **Strengths** : Capabilities, resources and advantages of an organization

1. personal strengths (things you are good at & people respect you for; areasof good experience).
2. support network (family, friends, professional or other networks, gov't services, powerful contacts, co-workers, team).

- **Weaknesses** : Things the organization is not good at, areas of resource scarcity and areas where the organization is vulnerable

1. personal weaknesses (areas where you are aware that you are not strong, or things that people fairly criticize you for).
2. Lack of resources (where other people at your level have access to these resources or where the absence of resources is impacting your situation).

- **Opportunities** : Good opportunities open to the organization, which perhaps exploit its strengths or eliminate its weaknesses

1. work your way through the strengths you have identified (how can you draw on these strengths to help you manage stress).
2. work through the weaknesses you have identified (these are opportunities for positive change & development of new skills).

- **Threats** : Things that can damage the organization, perhaps as people exploit its limitations or as its environment changes

1. consider the consequences of leaving your weaknesses uncovered.
2. consider the damage to relationships, career and happiness that would come from failing to manage stress.

Conclusion - Stress can have consequences far beyond temporary feelings of pressure. While you can't avoid stress, you can learn to manage it and develop skills to cope with the events or situations you find stressful. By learning to cope with stress, and by recognizing the symptoms of depression and the warning signs of suicide, you'll be better prepared to help not only yourself, but also friends, fellow students, and the Soldiers you will someday lead. Stress management can be used for both acute and chronic stressors.

I also identified some of the stressors that may be affecting your life and causing harmful stress. Although you may not be able to make the necessary lifestyle changes to remove the stressors, at least you can change your reaction with a different, more appropriate response. Negative thinking habits can also trigger stress. We have learned that thoughts are not truths but simply a gamut of ideas, suggestions, perceptions, etc., that can sometimes be imposed on others thus causing inappropriate behavior and intentions toward them. Managing stress can help you have less pain and feel healthier. It can also help you cope with the extra demands made on you by your Scleroderma.

References :-

1. Albrecht K (1979), "Stress and the Manager". Englewood Cliffs, Prentice-Hall, NJ.
2. Badar, M. R. (2011). Factors Causing Stress and Impact on Job Performance,. European Journal of Business and Management, Vol 3.
3. Srivastava, A.K. (1997). Self-management of occupational stress: Cognitive – behavioural approach. Indian Journal of Industrial Relations, 32, 487-95.
4. L. Levi (1990). Occupational stress: Spice of life or kiss of death?. American Psychologist, 45, 10, 1142-1145.
5. Grippa, A.I. and D. Durbin (1986), 'Worker's compensation occupational disease claims', National Council Compensation Insurance Digest, 1, 5–23

****

Transcending self and benefactions to Indian writing in English: A significant contribution by Kamala Das

Haroon Bashir Kar*

Abstract - Kamala Das (1934-2009) has been a unique literary phenomenon in India. Frank, bold and controversial in life and literature, Kamala Das made enormous contribution to the growth of Indian poetry in English. Although she sporadically ventured into the realms of fiction, she will be primarily remembered for her poetry because it is as a poet that she excels herself and shows real talent. Kamala Das's poetry has her autobiography written into it. She is not any woman or the incarnation of 'essential womanhood': she is an Indian poet, writing in English when Indian poetry in English is breaking free from the rhetorical and romantic traditions. She is women poet, acutely conscious of her feminity with all the contradictory demands made on it by the family, society and her radical companions.
Key words - Bold, Controversial, Poetry, Feminity.

Introduction - Literature represents the traditional, cultural, social, economic, political circumstances of the society. Literature has been affecting the way of life of the people where it gets evolved.

Journey of Indian English poetryis nearly 200yrs old. We can define poetry as the expression of human life from times eternal.

Poetry is the oldest form of literature. Being a creative and aesthetic activity having three major components-experience, beauty and emotion. Poetry is an art of communication experience. Poetry appeals to our heart, as such the communication must be in a language that is close to the poet and the experience must be genuine. India is a vast sub-continent. Many languages found in India has its own literature, some very rich. Each writer wishes his creation to be reached to all the corners of the globe. That is why, a writer writing in his mother tongue wants his creation to be translated into English as English is nationally understood and appreciated.

The first ever Indian English poet was Henry Louis Vivan Derozio (1809-1831), the son of an Indo-Portuguese father and an English mother. His two volumes of poetry,Poems (1827) and The Fakeer of Jungheera: A Metrical Tale and Other Poems(1828) shows a strong influence of British romantic poets in theme.

Post-Independence Indian English poetry has witnessed so many female voices. Kamala Das does not need any introduction who is firmly rooted in the Indian soil. Born in Kerala and brought up in Calcutta, she has also lived in Delhi.

Kamala Das made enormous contribution to the growth of Indian poetry in English. The modern Indian-English poetry with all its aggressiveness and boldness begins and culminates in Kamala Das. No other feminist poet in India could achieve the absolute rebellious dimensions of Kamala Das in their poetry. In fact, Kamala Das makes a poetic revolt by way of introspectively pondering upon the unfortunate state of existence in which Indian women conduct themselves. Like a seasonal artist she penetrates her imaginative potential to sympathetically understand the possible average grievances of Indian woman as extremely exploited agent in the social, domestic circumstances.

She belonged to a literary aristocracy. Her father V.M. Nair was managing director of the popular Kerala based publication 'Mathrubhumi'. Her mother Nalapatt Balamani has always been cited as a better poet in Malayalam.

Kamala Das had her early education at Calcutta where her father worked with a car firm. In her autobiography My Story she tells us about the discrimination that was part of the culture of the missionary school where she studied in Calcutta. As a child, Kamala Das experienced a life of neglect from her parents. Her married life also offered her no escape from the neglected life she underwent before marriage. It could offer her only disillusionment because she found that her husband was an utter failure in providing the kind of a romantic life any recently married girl would yearn for. Like her father, he was also a rather busy person with his official work and could not spare much time for romance and home. Even in their most intimate moments his attitude was no different. The uncompromising attitude of her husband also shaped her attitude towards love and sex. She felt, "I was a misfit everywhere. I brooded long, stifling my sobs" (My Story, p.97) lying alone in the house while the husband and everyone else slept soundly.

Kamala Das lived alone in her world with feelings of loneliness and yet maintained her tradition, the security of

*Ph.D Scholar (English) Devi Ahilya Vishwavidyalaya, Indore (M.P.) INDIA

her home. She always felt that poetry meant studying life and its objectivity in a very realistic way. Kamala Das died at the age of 75 in Pune, where she had lived since 2007 near the family of her youngest son, Jaisurya.

Kamala Das gained recognition as a poet of considerable talent in the sixties with the publication of her collection *Summer in Calcutta* (1965) was a breath of fresh air in Indian English poetry. She wrote in it chiefly of love, its betrayal, and the consequent anguish. However, her subsequent volumes such as *The Descendants* (1967) was even more explicit, urging women to:

Gift him what makes u woman, the scent of
Long hair, the musk of sweat between the breasts,
The warm shock of menstrual blood, and all youir
Endless female hungers….

(The Looking Glass)

The Old Play House and Other Poems (1973) have enlarged the thematic range of Indian English Poetry, bringing within its ambit, the hitherto unexplored areas of personal conflicts and power relations in the society

At the age of 42, she published a daring autobiography, *My Story* which was originally written in Malayam (titled Ente Kantha) and later she translated it into English, contains descriptions of some of these cities and the kind of life she lived there. Her impressions of Calcutta may be gathered from her collection, *Summer in Calcutta* (1965). The title poem of this collection evokes an anxious passionate state of mind where memory and desire mingle.

Kamala Das wrote on diverse range of topics and in the sphere of Indian poetry Kamala Das blazed a new trail as she created the ambience for revelatory confessional poetry. There is certain awareness retrospection a looking in and delving deep into the recesses of her soul. Her poems are about desire, love and emotional involvement. Her first collected poems created a minor storm when it was released but won her instant recognition with her uninhibited treatment of sex, pain, anguish and despair are women into the fabric of her poetry

The heart,
An empty cistern, waiting
Through long hours, fills itself.
With, coiling snakes of silence (“The Freaks” 8)

Along with English poetry, memoirs and newspaper columns, Das wrote in Malayalam (the language of southwest India) stories, novels and plays under the pen name Madhavikutty.

Kamala Das’s first collection of poems *Summer in Calcutta* appeared when Indo-Anglian poets had shifted from the themes belonging to the colonial past to personal themes. One of Kamala Das’ best-known stories, “A Doll for the Child Prostitute”, was inspired by a visit to a brothel. In it, two girls, barely even teenagers, play hopscotch.

Another novel, *Alphabet of Lust*, appeared in 1977, and in 1992 a collection of short stories, *Padmavati the Harlot and Other Stories*, was published. Two collections of poetry, *Only the Soul Knows How to Sing* and *Yaa Allah*, appeared in 1996 and 2001 respectively.

Her poems were like were like parcels of dynamite. It could explode on your face, specially its contents all around bringing to naked eye the oppression and enslavement of women in our own Modern age. Kamala Das is pre-eminently a poet of love and pain, one stalking the other through a near neurotic world.

She wrote her poetry, on her own self discovering and expressing the different layers of hypocrisy, which got over-coated in our day today life. But she was bitterly criticized for that by the high priests of social morality.

She feels repelled against the existence under the burden of sickening experiences of her later life. But life is always interesting and it has to be lived. Her recollections from childhood affords a soothing effect. Bijay Kumar Das says in this connection,

Apart from writing in English, Das also wrote under the pen name Madhavikutty in Malayalam before her conversion to Islam ten years ago. She had not only established herself as an English writer. Kamala Das originated a vigorous and poignant feminine confessional poetry, in which the underlying theme was the exploration of the man-woman relationship.

Kamala Das was awarded a P.E.N. prize in 1964 the Kerala Sahitya Akademi Award for journalism in 1971, the Asian world Prize for Literature in 1985, and the Indira Priyadarshini Vrikshamitra Award in 1988. She was awarded an Honorary Doctor all by the World Academy of Arts Culture, Taiwan in 1984. She was awarded a P.E.N. prize in 1964 the Kerala Sahitya Akademi Award for journalism in 1971, the Asian world Prize for Literature in 1985, and the Indira Priyadarshini Vrikshamitra Award in 1988. She was awarded an Honorary Doctor all by the World Academy of Arts Culture, Taiwan in 1984. In 1984 was short-listed and nominated for the award of Nobel Prize for Literature.

References :-

1. Kamala Das, *My Story*, New Delhi, Sterling Publishers, 2004 (also its First edition of 1988)
2. Kamala Das. “Larger than life.”
3. K. R. Srinivas Iyengar*, Indian Writing in English,* New Delhi, Sterling Publishers, 1987
4. M. K. Naik, “Echo and Voices in Indian Poetry in English,” Chirantan Kulshrestha (ed), *Contemporary Indian English Verse,* New Delhi, Arnold Heinemann, 1987
5. M. K. Naik*, A History of Indian English Literature,* New Delhi, Sahitya Akademi, 2003]
6. William Walsh, *Indian Literature in English,* Longman and Company, 1990

****

Lift Irrigation in Samrat Ashok Sagar Project Command Area

R.N. Shrivastava *

Introduction - Water is prime requirement for all aspects of life . it is imperative to make certain that adequate supplies of water of good quality are maintained for all the needs of entire population. While preserving the hydrological and biological functions of ecosystems.

Water is a very improvements and valuable community resource and irrigation ssector being the main user of the resource it is essential to modernize the irrigation system for optimal use of water resources by economizing water consumption per unit yield of agriculture products.

Rainfall is the major source of water over the country barring a limited quantity of Snow that occur in the Himalayan region in the north. the rainfall over India is characterized by wide spatial and temporal variations the annual rainfall varies from a about 310 mm in western Rajasthan to over 11400 mm in Meghalaya with an average value of 1170 mm for the entire country. about 85% of this rainfall occur during 4-5 months of the year. The annual precipitation occurring over the geographical area of 329 m hectare of the country amount to 4000 Billion Cubic Meters(BCM).

Due to the large spatial and temporal variability in the rainfall water resource distribution in the country is highly skewed in space, and time .the average annual runoff in the river of the country is a assessed as 1869 BCM of which only 690 BCM of surface water and can be beneficially harnessed through the presently available technology, while the total renewable groundwater resource is estimated to be about four 431.8 BCM . Thus the total annual renewal utilizable water resource of the country are put at 1122 BCM. In addition about 200 to 250 BCM of water can be utilised through interbasin transfers .on completing all the ongoing and contemplated new projects, total storage capacity excluding minor storage of the country is likely to reach 382 BCM.

So scare and essential resource is utilized for all aspects of life and amongst all , agriculture has the largest share (80-85%) using water for irrigation. Irrigation is done through surface and ground water both. Surface water is applied through canal system constructing dams on streams, which we call "***Irrigation Projects"***. These projects are classified as major, medium and minor according to their command area. At present there are about 471 ongoing major and medium irrigation projects in the country besides about 231 in pipeline. Thus, a huge amount of water is distributed through these projects but in most of them irrigation efficiency ranges between 35- 50%, ie half of the resource is wasted. Besides this a major area of concern regarding the water use in irrigation sector is the large gap between the irrigation potential created and its utilisation over the time, the percent of utilisation of created potential has reduced considerably from about 94.8% at the end of 4th plan to 84.5% by the year 2003- 04 the gap is as much as 14.5 million hectares and is closely related to the issue of improper canal system and distribution of water which has been discussed by many researchers.

Water allocation in an irrigation system should be done with due regard to equity and social Justice disparities in the availability of water between head-reach and tail-end farms and between large and small farms should be obviated by adoption of an appropriate rotation water distribution system and supply of water on a volumetric basis subject to certain ceilings and rational pricing. This has always been a dream and likely to be a dream only. "Lifting of water" by needy farmers through their pumping systems emerged as a practical solution. This practice has been considered as un-authorised for long time but looking to its efficacy it is made legal and Government of MadhyaPradesh published the notification in "***MadhyaPradesh Rapatra"*** which is given here

MadhyaPradesh Rapatra (see in last page)

Materilas and Methods - Keeping above facts in view a study of pumped irrigation was undertaken in the command area of Samrat Ashok Sagar Proect Vidisha to observe effects of pumping irrigation. Samrat Ashok Sagar Irrigation Project is a major irrigation project constructed on the river Halali near Bhopal, Command area of the project lies between Longitude 77^0 33' E and Latitude 23^0 13' N at an altitude of 426m. The command is spread in parts of Vidisha and Raisen district, Catchment area of the project is 699 square kilometer. Area receives an avg. annual rainfall of 1108 mm. The reservoir capacity at FTL is 252.13 mcum. It has a dead storage capacity of 25.90 mcum. Project has a

*Asso. Professor, Department Of soil & Water Engineering College of Agriculture, Ganj Basoda (M.P.) INDIA

main canal of 3.24 kms further it is divided in left bank canal of 1.716km and Right bank canal of 2.

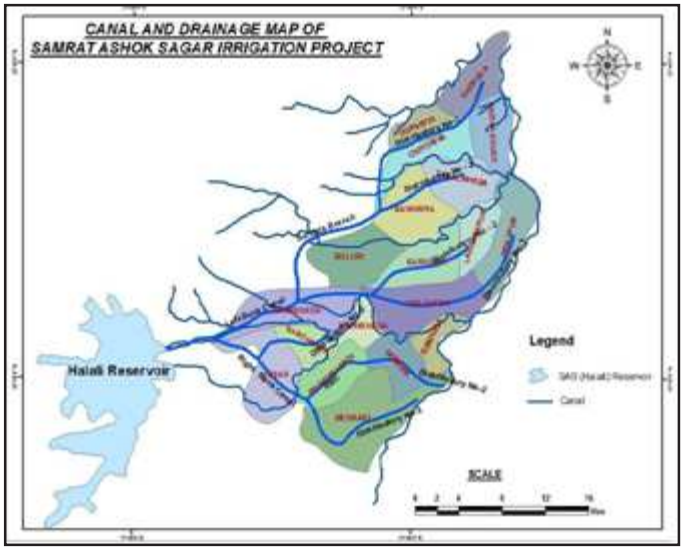

Fig. 1 Command area of samrat ashok sagar irrigation proect vidisha

This project is working since long and 2011 it could never achieve the target as clearly depicted from table 1. On the other side from2011-12 irrigation season more then designed area is irrigated as pumping from canal is allowed from 2 Feb 2012. Pumping made it feasible to irrigate submergence area Initially it was started with a small area of 152 ha in 2012 , later in 2012-13 an area of 4121 ha against a target of 2921 ha, in 2013-14 and 2014-15 4600 ha against the target of 4161 ha could be irrigated Similarly 1576 ha excess area was irrigated from canal.

Table 1 and 2 (see below)

Table 3 (See in next page)

It is clear from the table that pumped irrigation has a share of 8.4% to 48.93% IN Canal command area while in submergence area entire irrigation is done through pumped irrigation only.

Conclusions :

1. Out of command area can also be irrigated by lift irrigation from the canal.
2. More revenue can be generated with the same infrastructure.

Reference :-

1. Personal Research.

Table 1 Year wise irrigation in Samrat Ashok Sagar Project

S.	Name of the constituency	Year-2009-10		Year 2010-11		Year 2011-12		Year 2012-13		Year 2013-14		Year 2014-15	
		Target	Actual Irrigation	Target	Actual Irrigation	Target	Actual Irrigation	Target	Actual Irrigation	Target	Actual Irrigation	Taret	Actual Irrigation
1.	Vidisha	4574	2102	4030	2870	8131	7850	8400	8722	9100	9328	9100	9400
2.	Shamshabad	10780	3268	9170	5841	17682	17885	22071	21362	21709	23285	21709	23285
3.	Raisen/ Sanchi	On the 2127	1488	1800	908	4187	4220	5508	4941	5030	5417	5030	5322
4.	Submerged Area	0	929	0	827	0	152	2921	4121	4161	4600	4161	4600
	Total	17481	7787	15000	10446	30000	30107	38900	39146	40000	42630	40000	42647

Table 2 : Legislative Assembly wise Actual Irrigation in Samrat Ashok Sagar Division no. 2 Vidisha in Year 2013-14

S.	Name of the Project	Designed Command (ha)	Legislative -Constituency			Submergence Area	Total Irrigation
			Vidisha	Shamshabad	Sanchi		
1.	Samrat Ashok Sagar Project	27924	9328	19205	5417	4600	38550
2.	Samrat Ashok Sagar Project(Phase 2)	3054	0	3030	0	0	3030
3.	Barrho Irrigation Project	1968	0	1050	0	0	1050
	Total	32946	9328	23285	5417	4600	42630

Table 3 WUA wise irrigated area in the year 2014-15

S.	District	Name of the WUA	Name of the Canal	CCA -	Actual Irrigation Year 2014-15		Total	% of pumped area to total area
					Canal	Pump		
1	Vidisha	Khamheda	LBC	2648	2648	475	3123	15.20
2		Bilori	SBC	2009	2009	1026	3035	33.80
3		Bamuria	D-1 SBC	1975	1975	210	2185	9.61
4		Sankalkheda	D1-SBC	1803	1803	332	2135	15.55
5		Kararia	D-2 LBC	2028	1995	525	2520	20.83
6		Lashkpur	D-2 LBC	1294	1240	130	1370	9.48
7		Jivajipur	D-3 LBC	2134	1897	845	2742	30.81
8		Kshirkheda	D- LBC	1483	1407	643	2050	31.36
9		Chitoria	D-4 SBC	1557	1557	329	1886	17.44
10		Duparia	D-4 SBC	1117	1258	592	1850	32.00
11		Gadhla	D-4 SBC	940	948	162	1110	14.50
12		Andiya	D-4 SBC	1675	1675	155	1830	8.47
13		Neemkheda	LM-6 RBC	440	399	285	684	41.66
14		SAyar	RBC	1250	1215	680	1895	35.88
15		Sunpura	D-2 RBC	1000	271	295	566	52.12
16	TotalWUA			**23353**	**22297**	**6684**	**28981**	**23.06**
17	vidisha	Pipalkheda Disty		2400	2244	450	2694	16.71
18	Vidisha	Barroh Minor Irr.		1968	0	1050	1050	100
19	Total Vidisha			**27721**	**24541**	**8184**	**32725**	**25..00**
20	Raisen	Sarchampa	D-1,RBC	787	910	177	1087	16.28
21		Medhki	D-3,RBC	1735	556	452	1008	44.85
22		Ucher	RBC	789	717	687	1404	48.93
23		DhaniyaKhedi	RBC	1260	1161	662	1823	36.31
24	Total Raisen			4571	3344	1978	5322	37.17
25	**Total Vidisha +Raisen**			**32232**	**27885**	**10162**	**38047**	**26.71**
26	Submerg.Khoa			0	3190	3190	100	
27	Submer.Salpur			0	1410	1410	100	
28	Total Submerg.			0	4600	4600	100	
29	**Grand Total**				**27885**	**14762**	**42647**	**34. 35**

इसे वेबसाईट www.govtpressmp.nic.in से भी डाउन लोड किया जा सकता है.

मध्यप्रदेश राजपत्र

(असाधारण)

प्राधिकार से प्रकाशित

क्रमांक 54] भोपाल, गुरुवार, दिनांक 2 फरवरी 2012—माघ 13, शक 1933

जल संसाधन विभाग

मंत्रालय, वल्लभ भवन, भोपाल

भोपाल, दिनांक 2 फरवरी 2012

सूचना

क्र. 32-18-2012-म-इकत्तीस-11.—मध्यप्रदेश सिंचाई नियम, 1974 में संशोधन का निम्नलिखित प्रारूप, जिसे राज्य सरकार, मध्यप्रदेश सिंचाई अधिनियम, 1931 (क्रमांक 3 सन् 1931) की धारा 92 तथा 93 द्वारा प्रदत्त शक्तियों को प्रयोग में लाते हुए बनाना प्रस्तावित करती है, एतद्द्वारा, उक्त अधिनियम की धारा 92 की उपधारा (3) द्वारा अपेक्षित किए गए अनुसार, उन समस्त व्यक्तियों की, जिनके कि उससे प्रभावित होने की संभावना है, जानकारी के लिये प्रकाशित किया गया है और एतद्द्वारा यह सूचना दी जाती है कि मध्यप्रदेश राजपत्र में इस सूचना के प्रकाशन होने की तारीख से 30 दिन के अवसान हो जाने पर उक्त प्रारूप पर विचार किया जाएगा.

किसी भी ऐसी आपत्ति या सुझाव पर, जो नियमों के उक्त प्रारूप के संबंध में, किसी भी व्यक्ति से उपर विनिर्दिष्ट कालावधि के अवसान होने पर या उसके पूर्व प्राप्त हो, राज्य सरकार द्वारा विचार किया जाएगा.

संशोधन प्रारूप

उक्त नियमों में, नियम 120 के स्थान पर, निम्नलिखित नियम स्थापित किया जाए, अर्थात् :—

7 कोई भूमि जो सींचे जा सकने वाले क्षेत्र में हो अथवा नहीं हो, किन्तु जिसे उद्‌वहन सिंचाई द्वारा प्रभावी रूप से सिंचित किया जा सकता हो तथा जिसके लिए नहर अधिकारी से लिखित अनुज्ञा प्राप्त कर ली की गई हो, पर देय जल दर वही होगी जो कि ऐसे सींचे जा सकने वाले क्षेत्र की भूमि पर उगाई गई उसी फसल पर, निम्नलिखित शर्तों के अधीन नहर से प्रवाह सिंचाई किये जाने पर देय हो, अर्थात् :—

(क) ऐसी भूमि जो सींचे जा सकने वाले क्षेत्र की भूमि न हो, के स्थाई धारक के आवेदन पर, सिर्फ जल की उपलब्धता के आधार पर, नहर अधिकारी द्वारा विचार इस शर्त के अध्यधीन किया जाएगा कि आवेदक द्वारा सिंचाई राजस्व बकाया एवं शास्ति, यदि कोई हो, का पूर्ण भुगतान कर दिया गया हो,

(ख) अधिकतम 10 अश्व शक्ति की क्षमता के एक डीजल अथवा विद्युत् पम्प को नहर से जल उद्वहन के लिये अभिनियोजित किया जाएगा.

(ग) सायफन तथा ट्रेक्टर पर रखे गए पंप के माध्यम से सिंचाई की अनुज्ञा नहीं दी जाएगी.

(घ) प्रत्येक फसल के लिये जल का पूर्ण भुगतान, सिंचाई करार के अधीन फसल, क्षेत्र एवं पानी की संख्या के लिये अग्रिम में जमा किया जाएगा तथा आवेदक को नहर अधिकारी से लिखित अनुज्ञा अभिप्राप्त करनी होगी.

(ङ) सिंचाई करार, केवल अल्प कालावधि के लिये है.

(च) लिखित अनुज्ञा के बिना पंप द्वारा उद्वहन सिंचाई को अपराधिकृत माना जाएगा तथा विधिक कार्रवाई की जाएगी.".

NOTICE

No. 32-18-2012-M-XXXI.—The following draft of amendment in Madhya Pradesh Irrigation Rules, 1974, which the State Government proposes to make in exercise of the powers conferred by Section 92 and Section 93 of the Madhya Pradesh Irrigation Act, 1931 (No. III of 1931), is hereby, published as required under sub-section (3) of Section 92 of the said Act, for the information of all persons likely to be affected and the notice is hereby given that the said draft will be taken into consideration on the expiry of 30 days from the date of publication of this notice in "Madhya Pradesh Gazette."

Any objection or suggestion which may received from any person with respect to the said draft of rules on or before the expiry of the period specified above will be considered by the State Government.

DRAFT OF AMENDMENT

In the said rules, for rule 120, the following rule shall be substituted, namely:—

"120. The Water rate payable on land, which is in command or not in command but could be irrigated effectively by lift irrigation and have written permission from canal officer, shall be same as the rates payable on command land, which is sown with the same crop with flow irrigation by canal under following condition, namely:—

(a) the application of the permanent holder of land which is not in command is considered only on availability or water by canal officer subjected that the applicant has remitted the arrears and penalties of irrigation revenue in full if any.

(b) one pump of Diesel or Electric having maximum 10 HP, shall be deployed for lifting water from canal.

(c) irrigation through syphon and tractor mounted pump shall not be permitted.

(d) the full payment of water to each crop season shall be deposited in advance for crop, area and number of watering under irrigation agreement and applicant have to obtain written permission from canal officer.

(e) the irrigation agreement is only for a short term period.

(f) Without written permission lift irrigation by pump shall be considered un-authorized and legal action shall be taken.".

मध्यप्रदेश के राज्यपाल के नाम से तथा आदेशानुसार,
मनीष सिंह, अपर सचिव.

नियंत्रक, शासकीय मुद्रण तथा लेखन सामग्री, मध्यप्रदेश द्वारा शासकीय केन्द्रीय मुद्रणालय, भोपाल से मुद्रित तथा प्रकाशित—2012.

****